संयम स्वर्ण महोत्सव (२०१७-१८) की विनम्र प्रस्तुति क्र० १८

महाकविधनञ्जयप्रणीता

नाममाला

अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

अनेकार्थनिघण्टुः एकाक्षरीकोशश्च

पूर्व सम्पादक

पं० शम्भुनाथ त्रिपाठी, व्याकरणाचार्य

हिन्दी अनुवाद

मुनि प्रणम्यसागर

प्रकाशक

जैन विद्यापीठ

सागर (म० प्र०)

नाममाला

कृतिकार	:	महाकवि धनञ्जय
भाष्यकार	:	अमरकीर्ति
सम्पादक	:	पं० शम्भुनाथ त्रिपाठी, व्याकरणाचार्य
अनुवादक	:	मुनि प्रणम्यसागर
प्रस्तावना	:	पण्डित महेन्द्रकुमार जैन
संस्करण	:	२८ जून, २०१७ (आषाढ़ सुदी पंचमी, वीर निर्वाण संवत् २५४३)
आवृत्ति	:	११००
वेबसाइट	:	www.vidyasagar.guru

प्रकाशक एवं प्राप्तिस्थान

जैन विद्यापीठ

भाग्योदय तीर्थ, सागर (म० प्र०) चलित दूरभाष ७५८२-९८६-२२२

ईमेल : jainvidyapeeth@gmail.com

मुद्रक

विकास ऑफसेट प्रिंटर्स एण्ड पब्लिसर्स

प्लाट नं. ४५, सेक्टर एफ, इन्डस्ट्रीयल एरिया गोविन्दपुरा, भोपाल (म० प्र०) ९४२५००५६२४

आद्य वक्तव्य

युग बीतते हैं, सृष्टियाँ बदलती हैं, दृष्टियों में भी परिवर्तन आता है। कई युगदृष्टा जन्म लेते हैं। अनेकों की सिर्फ स्मृतियाँ शेष रहती हैं, लेकिन कुछ व्यक्तित्व अपनी अमर गाथाओं को चिरस्थाई बना देते हैं। उन्हीं महापुरुषों का जीवन स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जाता है, जो असंख्य जनमानस के जीवन को घने तिमिर से निकालकर उज्ज्वल प्रकाश से प्रकाशित कर देते हैं। ऐसे ही निरीह, निर्लिप्त, निरपेक्ष, अनियत विहारी एवं स्वावलम्बी जीवन जीने वाले युगपुरुषों की सर्वोच्च श्रेणी में नाम आता है दिगम्बर जैनाचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज का, जिन्होंने स्वेच्छा से अपने जीवन को पूर्ण वीतरागमय बनाया। त्याग और तपस्या से स्वयं को श्रृंगारित किया। स्वयं के रूप को संयम के ढाँचे में ढाला। अनुशासन को अपनी ढाल बनाया और तैयार कर दी हजारों संयमी युवाओं की सुगठित धर्मसेना। सैकड़ों मुनिराज, आर्यिकाएँ, ब्रह्मचारी भाई-बहिनें। जो उनकी छवि मात्र को निहार-निहार कर चल पड़े घर-द्वार छोड़ उनके जैसा बनने के लिए। स्वयं चिद्रूप, चिन्मय स्वरूप बने और अनेक चैतन्य कृतियों का सृजन करते चले गए जो आज भी अनवरत जारी है। इतना ही नहीं अनेक भव्य श्रावकों की सल्लेखना कराकर हमेशा-हमेशा के लिए भव-भ्रमण से मुक्ति का सोपान भी प्रदान किया है।

महामनीषी, प्रज्ञासम्पन्न गुरुवर की कलम से मूकमाटी जैसे क्रान्तिकारी-आध्यात्मिक-महाकाव्य का सृजन हुआ। जो अनेक भाषाओं में अनुदित हुआ साथ ही अनेक साहित्यकारों ने अपनी कलम चलायी परिणामतः मूकमाटी मीमांसा के तीन खण्ड प्रकाशित हुए। आपके व्यक्तित्व और कर्तृत्व पर लगभग ५० शोधार्थियों ने डी॰ लिट्॰, पी-एच॰ डी॰ की उपाधि प्राप्त की।

अनेक भाषाओं के ज्ञाता आचार्य भगवन् की कलम से जहाँ अनेक ग्रन्थों के पद्यानुवाद किए गए तो वहीं नवीन संस्कृत और हिन्दी भाषा में छन्दोबद्ध रचनायें भी सृजित की गई। सम्पूर्ण विद्वत्जगत् आपके साहित्य का वाचन कर अचंभित हो जाता है। एक ओर अत्यन्त निस्पृही, वीतरागी छवि तो दूसरी ओर मुख से निर्झरित होती अमृतध्वनि को शब्दों की बजाय हृदय से ही समझना श्रेयस्कर होता है।

प्राचीन जीर्ण-शीर्ण पड़े उपेक्षित तीर्थक्षेत्रों पर वर्षायोग, शीतकाल एवं ग्रीष्मकाल में प्रवास करने से समस्त तीर्थक्षेत्र पुनर्जागृत हो गए। श्रावकवृन्द अब आये दिन तीर्थों की वंदनार्थ घरों से निकलने लगे और प्रारम्भ हो गई जीर्णोद्धार की महती परम्परा। प्रतिभास्थलियों जैसे शैक्षणिक संस्थान, भाग्योदय तीर्थ जैसा चिकित्सा सेवा संस्थान, मूकप्राणियों के संरक्षणार्थ सैकड़ों गौशालाएँ, भारत को इण्डिया नहीं 'भारत' ही कहो का नारा, स्वरोजगार के तहत 'पूरी मैत्री' और 'हथकरघा' जैसे वस्त्रोद्योग की प्रेरणा देने वाले सम्पूर्ण जगत् के आप इकलौते और अलबेले संत हैं। कितना लिखा जाये आपके बारे में शब्द बौने और कलम पंगु हो जाती है, लेकिन भाव विश्राम लेने का नाम

ही नहीं लेते।

यह वर्ष आपका मुनि दीक्षा का स्वर्णिम पचासवाँ वर्ष है। भारतीय समुदाय का स्वर्णिम काल है यह। आपके स्वर्णिम आभामण्डल तले यह वसुधा भी स्वयं को स्वर्णमयी बना लेना चाहती है। आपकी एक-एक पदचाप उसे धन्य कर रही है। आपका एक-एक शब्द कृतकृत्य कर रहा है। एक नई रोशनी और ऊर्जा से भर गया है हर वह व्यक्ति जिसने क्षणभर को भी आपकी पावन निश्रा में श्वांसें ली हैं।

आपकी प्रज्ञा से प्रस्फुटित साहित्य आचार्य परम्परा की महान् धरोहर है। आचार्य धरसेनस्वामी, समन्तभद्र स्वामी, आचार्य अकलंकदेव, स्वामी विद्यानंदीजी, आचार्य पूज्यपाद महाराज जैसे श्रुतपारगी मुनियों की शृंखला को ही गुरुनाम गुरु आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज, तदुपरांत आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज ने यथावत् प्रतिपादित करते हुए श्रमण संस्कृति की इस पावन धरोहर को चिरस्थायी बना दिया है।

यही कारण है कि आज भारतवर्षीय विद्वतवर्ग, श्रेष्ठीवर्ग एवं श्रावकसमूह आचार्यप्रवर की साहित्यिक कृतियों को प्रकाशित कर श्रावकों के हाथों में पहुँचाने का संकल्प ले चुका है। केवल आचार्य भगवन् द्वारा सृजित कृतियाँ ही नहीं बल्कि संयम स्वर्ण महोत्सव २०१७-१८ के इस पावन निमित्त को पाकर प्राचीन आचार्यों द्वारा प्रणीत अनेक ग्रन्थों का भी प्रकाशन जैन विद्यापीठ द्वारा किया जा रहा है।

पूर्व में यह ग्रन्थ भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली से प्रकाशित था। महाकवि धनञ्जय विरचित यह 'नाममाला' ग्रन्थ शब्द ज्ञान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों के लिए बहुत उपयोगी है। समस्त संस्कृत अध्येयताओं के लिए यह कृति बहुत चर्चित रही है, इस कृति पर अमरकीर्ति का एक भाष्य भी उपलब्ध है, जिसका विद्वत्तापूर्ण सम्पादन पं० शम्भुनाथ त्रिपाठी व्याकरणाचार्य ने किया है। अभी तक इस भाष्य का हिन्दी अनुवाद प्राप्त नहीं था। इस कार्य को मुनि प्रणम्यसागरजी ने हिन्दी अनुवाद के साथ सम्पादित किया। पं० महेन्द्रकुमारजी ने पूर्व प्रकाशित ग्रन्थ में जो प्रस्तावना लिखी थी वह भी इस ग्रन्थ में ज्यों की त्यों समायोजित की है। एतदर्थ पूर्व प्रकाशक, सम्पादक, प्रस्तावनाकार एवं अनुवादक, इन सभी का आभार व्यक्त करते हैं।

समस्त ग्रन्थों का शुद्ध रीति से प्रकाशन अत्यन्त दुरूह कार्य है। इस संशोधन आदि के कार्य को पूर्ण करने में संघस्थ मुनिराज, आर्यिका माताजी, ब्रह्मचारी भाई-बहिनों ने अपना अमूल्य सहयोग दिया। उन्हें जिनवाणी माँ की सेवा का अपूर्व अवसर मिला, जो सातिशय पुण्यार्जन तथा कर्मनिर्जरा का साधन बना। जैन विद्यापीठ आप सभी के प्रति कृतज्ञता से ओतप्रोत है और आभार व्यक्त करने के लिए उपयुक्त शब्द खोजने में असमर्थ है।

गुरुचरणचंचरीक

प्रस्तावना

''शब्दब्रह्मणि निष्णातः परब्रह्माधिगच्छति''—ब्रह्मबिन्दु०

शब्दब्रह्म में पारंगत व्यक्ति परब्रह्म की प्राप्ति कर सकता हैं। यह सिद्धान्त इस बात की सूचना देता है कि साधक को पहिले शब्दशक्ति और उसकी मर्यादा तथा भाव का ज्ञान आवश्यक है। यदि उसे शब्द के वाच्यार्थ भावार्थ और तात्पर्यार्थ की प्रक्रिया का बोध नहीं है तो वह भटक सकता है। वस्तुतः शब्द भावों के ढोने का एक लंगड़ा वाहन है। जब तक संकेतग्रहण न हो तब तक उसकी कोई उपयोगिता ही नहीं है। एक ही शब्द संकेतभेद से भिन्न भिन्न अर्थों का वाचक होता है। इसीलिए दर्शनशास्त्रों में एक पक्ष यह भी उपलब्ध होता है कि शब्द केवल वक्ता की विवक्षा को सूचित करते हैं, पदार्थ के वाचक नहीं हैं। 'घट' शब्द का संकेत वक्ता ने जिस रूप में जिस श्रोता को ग्रहण करा दिया है, उसी अभिप्राय का द्योतन वह शब्द उस श्रोता को करा देगा। शब्द विद्यमान अर्थ को भी कहता है और अविद्यमान को। एक खरविषाण भी शब्द है जिसका अखंड वाच्य पदार्थ इस संसार में नहीं है और घट शब्द भी है जिसका वाच्य घड़ा मौजूद है। अतः शब्द के सम्बन्ध में यह निश्चय करना कि—यह शब्द अर्थवाची है और यह अनर्थवाची—टेड़ी खीर हैं। फिर भी शाब्दिकों ने यह प्रयत्न किया है शब्द के सार्थकत्व और अनर्थकत्व का विवेक हो जाय।

उसका मुख्य उपाय है शक्तिग्रह या संकेतग्रहण। जिस अर्थ में जिस शब्द का संकेतग्रहण होता है वह उस अर्थ का वाचक हो जाता है। यह संकेत कब किसने ग्रहण कराया इसका निर्णय कठिन हैं। ईश्वर को संकेत ग्रहण कराने के लिए घसीटना श्रद्धा की वस्तु है। इसका इतना ही अर्थ है कि वृद्धपरम्परा से शब्द संकेत का ग्रहण बराबर होता आया है और वह अनादि है। उसमें विशेष हेरफेर होकर भी सामान्यतया संकेत की परम्परा अनादि है। जब से यह जीव है तभी से शब्द संकेत है। इस संकेतग्रहण के उपाय निम्न लिखित हैं—

''शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोशाप्तवाक्याद् व्यवहारतश्च।
वाक्यस्य शेषाद् विवृतेर्वदन्ति सान्निध्यतः सिद्धपदस्य वृद्धाः॥''

अर्थात्—व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवाक्य, व्यवहार, वाक्यशेष, विवरण और प्रसिद्ध शब्द के सान्निध्य से संकेत ग्रहण होता है। इसमें व्याकरण से यौगिक शब्दों का व्युत्पत्ति द्वारा संकेत ग्रहण हो भी जाय पर रूढ़ और योगरूढ़ शब्दों का संकेत ग्रहण व्याकरण से नहीं हो सकता। अन्ततः कोश ही एक ऐसा उपाय बचता है जिससे सभी प्रकार के शब्दों का संकेत-ग्रहण हो जाता है।

कोश अर्थात् खजाना या भंडार। व्याकरण से सिद्ध या वृद्धपरम्परा से प्रसिद्ध कैसे भी यौगिक रूढ़ या योगरूढ़ आदि शब्दों का अनेकार्थ के साथ संग्रह कोश में होता है। भाषा वही समृद्ध और जीवित समझी जाती है जिसका शब्द भंडार पर्याप्त हो और जिसमें व्यवहार और परमार्थ के लिए उपयोगी सभी शब्द विद्यमान हों। जिसमें अन्य भाषाओं के या विदेशी शब्दों के पचाने की या उन्हें स्व-स्वरूप करने की

सामर्थ्य हो। इस दृष्टि से संस्कृत भाषा उतनी समृद्ध नहीं बन सकी। इसका कारण यह रहा है कि इस भाषा पर एक वर्ग का प्रभुत्व रहा और उसने इसकी पाचन शक्ति को धर्म–अधर्म के कल्पित बन्धन से जकड़ दिया था। उस वर्ग ने उस युग में प्रचलित अपभ्रंश और प्राकृत बोलियों का जो उस समय की जनबोलियाँ थीं उच्चारण करना पाप घोषित किया था। फिर भी संस्कृत की जो प्रकृति प्रत्यय उपसर्ग आदि के योग से शब्दोत्पादन शक्ति थी उसी के कारण यह बन्धनबद्ध होकर भी विद्वद्भोग्य अवश्य बनी रही। संस्कृत को लोकभाषा का पद या सबकी बोली होने का सौभाग्य नहीं मिल सका। इस भाषा सम्बन्धी धर्माधर्म विचार ने संस्कृत के कोशागार को भी सीमित कर दिया।

भाषा के एकाधिकारियों ने तो यहाँ तक कह डाला है कि अपभ्रंश या अन्य लोकभाषा के शब्दों में वाचक शक्ति ही नहीं है। यष्टि का अपभ्रंश लट्ठी या लाठी है। ये लट्ठी या लाठी शब्द में वाचकशक्ति स्वीकार नहीं करना चाहते। इनका कहना है कि वाचकशक्ति तो 'यष्टि' शब्द में ही है। लट्ठी या लाठी शब्द सुनकर जो श्रोता को लाठी पदार्थ का ज्ञान होता है उसकी विधि इस प्रकार है–प्रथम ही श्रोता लाठी शब्द को सुनकर संस्कृत 'यष्टि' शब्द का स्मरण करता है और फिर उस 'यष्टि' शब्द से पदार्थबोध होता है अर्थात् ऐसे श्रोता को जिसने स्वप्न में भी 'यष्टि' शब्द नहीं सुना उसे भी लाठी शब्द से पदार्थ बोध के लिए संस्कृत 'यष्टि' शब्द का स्मरण आवश्यक है।

इस भाषाधारित वर्गप्रभुत्व से संस्कृत भाषा एक विशिष्ट वर्ग की भाषा बन कर रह गई। पा० महाभाष्य के पस्पशा आह्निक में लिखा है कि–''तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छितं वै, नापभाषितं वै, म्लेच्छो ह वा एष अपशब्दः'' अर्थात् ब्राह्मण को न तो म्लेच्छ शब्दों का व्यवहार करना चाहिए और न अपभ्रंश का ही। अपशब्द म्लेच्छ हैं। अपशब्द का विवरण भी वहीं यह दिया है–''यदि तावच्छब्दोपदेशः क्रियते, गौरित्येतस्मिन्नुपदिष्टे गम्यत एतद् गाव्यादयोऽपशब्दा इति।'' अर्थात् गौ शब्द है और गावी गैया आदि अपशब्द हैं।

यद्यपि भाषा को संस्कृत रखने के लिए व्याकरण का संस्कार आवश्यक है तभी वह एक अपने निश्चित रूप में रह सकती है, लिंग और वचन का अनुशासन भी इसीलिए आवश्यक होता है, परन्तु उसके उच्चारण में किसी जाति विशेष का या वर्ग विशेष का अधिकार मानने से उसकी व्यापकता तो रुक ही जाती है। नाटकों में स्त्री, शूद्रों तथा दासों से प्राकृत भाषा का बुलवाया जाना उक्त रूढ़ि का ही साक्षी है।

इतना ही नहीं, धर्मक्षेत्र में साधु शब्द अर्थात् संस्कृत शब्द का उच्चारण ही पुण्य माना गया। इसका यह सहज परिणाम था कि धर्म का ठेका भी भाषा प्रभुत्व के द्वारा एक वर्ग विशेष को मिला। हुआ भी यही धर्म का अधिकार और उससे आर्थिक सम्बन्ध एक वर्ग का हो गया।

इस सम्बन्ध में मौलिक क्रान्ति महाश्रमण महावीर और बुद्ध ने की। उनने भाषा के इस कल्पित बन्धन को तोड़ कर जनभाषा में धर्म का उपदेश दिया और स्त्री शूद्र तथा पामर से पामर व्यक्तियों के लिए धर्म का क्षेत्र खोला। धर्म के उच्च पद के लिए जाति का कोई बन्धन इनने स्वीकार नहीं किया। इस भाषाक्रान्ति से प्राकृत भाषाओं का विकास हुआ। यह नहीं है कि प्राकृत भाषाएँ व्याकरण और लिंगानुशासन

से मुक्त हों। उनके अपने व्याकरण हैं, अपने नियम हैं, जिनके अनुसार वे पल्लवित पुष्पित और फलित होती रही हैं।

महावीर और बुद्ध के काल से लेकर ईसा की तीसरी सदी तक प्राकृत भाषाओं को गति मिलती रही। अशोक के शिलालेख प्राकृत भाषा में उपलब्ध होते हैं। शासनादेश प्राकृत भाषा में चलते रहे हैं। पुनः संस्कृत युग में इन भाषाओं की गति मन्द पड़ी। इस युग में जैन और बौद्ध आचार्यों ने भी ग्रन्थरचना संस्कृत में ही की। यही कारण है कि दोनों के विपुल साहित्य से संस्कृत का कोशागार भरा हुआ है। दार्शनिक क्षेत्र में उथल पुथल तो नागार्जुन, दिग्नाग, समन्तभद्र, सिद्धसेन, अकलंक आदि के ग्रन्थों से ही मची। तात्पर्य यह कि श्रमण परम्परा ने मध्यकाल में संस्कृत भाषा के विकास में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान किया।

प्रस्तुत ग्रन्थ–

नाममाला कोश का एक सुन्दर और व्यवहारोपयोगी आवश्यक शब्दों से समृद्ध ग्रन्थ हैं। महाकवि धनञ्जय ने २०० श्लोकों में ही संस्कृत भाषा के प्रमुख शब्दों का चयन कर गागर में सागर भर दिया है। शब्द से शब्दान्तर बनाने की इनकी अपनी निराली पद्धति है। जैसे पृथिवी के नामों के आगे 'धर' शब्द जोड़ देने से पर्वत के नाम, 'मनुष्य' के नामों के आगे 'पति' शब्द जोड़ देने से राजा के नाम, 'वृक्ष' के नामों के आगे 'चर' शब्द जोड़ने पर बन्दर के नामों का बन जाना आदि।

इस पर अमरकीर्ति विरचित भाष्य सर्वप्रथम प्रकाशित किया जा रहा है। इस भाष्य में प्रत्येक शब्द की व्याकरणसिद्ध व्युत्पत्ति सूत्रनिर्देश पूर्वक बताई गई है। उणादि से सिद्ध हो या अन्य रीति से पर कोई भी शब्द निर्व्युत्पत्ति नहीं रह पाया हैं। इन व्युत्पत्तियों की प्रामाणिकता के लिए महापुराण, पद्मनन्दि शास्त्र, यशस्तिलक चम्पू, नीतिवाक्यामृत, द्विसन्धानकाव्य, बृहत्प्रतिक्रमण भाष्य, महाभारत, सूक्तिमुक्तावली, शब्दभेद, अनेकार्थध्वनिमञ्जरी, अमरसिंह भाष्य, आशाधर महाभिषेक, नीतिसार, शाश्वत, हैमीनाममाला आदि ग्रंथों तथा यशकीर्ति, अमरसिंह, आशाधार, इन्द्रनन्दि, क्षीरस्वामी, पद्मनन्दि, श्रीभोज, हलायुध आदि ग्रन्थकारों को नाम निर्देशपूर्वक प्रमाणकोटि में उपस्थित किया है। अनेक व्युत्पत्तियाँ तो अमरकीर्ति की कल्पना के अच्छे उदाहरण हैं। यथा–

'म्रियन्ते क्षुद्रजन्तवोऽस्य स्पर्शेनेति मरुत्' अर्थात् जिसके स्पर्श से क्षुद्र जन्तु मर जाय वह मरुत् हैं।

'न नन्दति भ्रातृजाया यस्यां सत्यां सा ननान्दा' जिसकी मौजूदगी में भौजाई खुश न हो वह ननांदा–ननद है।

'यज्ञानां पशुकारणलक्षणानामरिः यज्ञारिः' अर्थात् पशुयज्ञ का विरोधी महादेव हैं। आदि।

इसके साथ ही एक अनेकार्थ निघण्टु भी मुद्रित किया गया है। इसके अन्त में निम्नलिखित पुष्पिका लेख हैः– ''इति महाकविधनञ्जयकृते निघण्टुसमये शब्दसंकीर्णे अनेकार्थप्ररूपणो द्वितीयपरिच्छेदः।'' इसकी एक मात्र अशुद्धतम प्रति पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार अधिष्ठाता वीरसेवा मंदिर से प्राप्त हुई थी। रचना शैली आदि से यह निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि यह उन्हीं धनञ्जय की कृति है, यद्यपि पुष्पिका वाक्य में स्पष्ट रूप से धनञ्जय का उल्लेख है। इसके साथ ही एक अज्ञातकर्तृक एकाक्षरी कोष

का भी मुद्रण किया है। इसकी हस्तलिखित प्रति भी वीर-सेवा-मन्दिर से ही प्राप्त हुई थी।

प्रस्तुत संस्करण–

अमरकीर्तिकृत भाष्य की एकमात्र अशुद्ध प्रति ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन झालरापाटन से प्राप्त हुई थी। इसी के आधार से इसका सम्पादन पं॰ शम्भुनाथजी त्रिपाठी ने किया है। संस्करण में जो अनेक परिशिष्ट हैं वे सब पं॰ महादेवजी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने तैयार किये हैं। टिप्पणियाँ पं॰ शंभुनाथ जी त्रिपाठी ने बड़े परिश्रम से लिखी है। मुझे यह लिखते हुए आनन्द होता है कि उनके सर्वतोमुखी अगाध पाण्डित्य का परिचय टिप्पणों में पद-पद पर मिलता हैं।

ग्रन्थकार

[महाकवि धनञ्जय]

नाममाला के कर्त्ता महाकवि धनञ्जय हैं। इन्होंने स्वयं अपने किसी ग्रन्थ में अपने समय आदि के बारे में निर्देश नहीं किया है। ये गृहस्थ थे। द्विसन्धानकाव्य के अन्तिम श्लोक की व्याख्या में उसके टीकाकार ने धनञ्जय के पिता का नाम वसुदेव, माता का नाम श्रीदेवी और गुरु का नाम दशरथ सूचित किया हैं। इनकी ख्याति 'द्विसन्धानकवि' के नाम से थी। नाममाला के अन्त में पाया जाने वाला यह श्लोक स्वयं इसका साक्षी है–

''प्रमाणमकलङ्कस्य पूज्यपादस्य लक्षणम्।
द्विसन्धानकवेः काव्यं रत्नत्रयमपश्चिमम्॥''

अर्थात्-अकलङ्कदेव का प्रमाण शास्त्र, पूज्यपाद का लक्षण-व्याकरण शास्त्र और द्विसन्धानकवि का द्विसन्धानकाव्य ये तीनों अपूर्व रत्नत्रय है। यह श्लोक नाममाला के भाष्यकार अमरकीर्ति के सामने था, उनने इसकी व्याख्या भी की है। इसमें इनका उप-नाम 'द्विसन्धानकवि' सूचित किया गया है। ठीक भी है, क्योंकि महाकवि धनञ्जय की सर्वश्रेष्ठ चमत्कारिणी कृति द्विसन्धानकाव्य ही है। वादिराज सूरि ने पार्श्वनाथ चरित के प्रारंभ में द्विसन्धान काव्य की प्रशंसा करते हुए लिखा है–

''अनेकभेदसन्धानाः खनन्तो हृदये मुहुः।
बाणा धनञ्जयोन्मुक्ताः कर्णस्येव प्रियाः कथम्।''

अर्थात्-धनञ्जय के द्वारा कहे गए अनेक सन्धान-अर्थभेद वाले और हृदयस्पर्शी वचन कानों को ही प्रिय कैसे लगेंगे जैसे कि अर्जुन के द्वारा छोड़े जाने वाले अनेक लक्ष्यों के भेदक मर्मभेदी बाण कर्ण को प्रिय नहीं लगते ?

द्विसन्धान काव्य अपने समय में पर्याप्त प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था। इसका उल्लेख धाराधीश भोजराज के समकालीन आचार्य प्रभाचन्द्र ने अपने प्रमेयकमलमार्त्तण्ड (पृ॰ ४०२) में किया है।

जल्हण (१२वीं सदी) विरचित सूक्ति मुक्तावली के राजशेखर के नाम से धनञ्जय की प्रशंसा में निम्नलिखित पद्य उद्धृत है–

''द्विसन्धाने निपुणतां स तां चक्रे धनञ्जयः।
यया जातं फलं तस्य सतां चक्रे धनञ्जयः॥''

इस श्लोक में राजशेखर ने धनञ्जय के द्विसन्धानकाव्य का मनोमुग्धकर सरणि से उल्लेख किया है।

धनञ्जय कवि के द्वारा एक विषापहार स्तोत्र भी बनाया गया है। यह अपने प्रसाद ओज और गाम्भीर्य के लिए प्रसिद्ध है। कहते हैं कि यह स्तोत्र कवि ने अपने सर्पदष्ट पुत्र का विष उतारने के लिए बनाया था।

समयविचार–

इनके समय निर्णय के लिए निम्नलिखित प्रमाण हैं–

१. प्रमेयकमलमार्तण्ड आदि के रचयिता प्रभाचन्द्र (ई.११वीं सदी) ने इनके द्विसन्धानकाव्य का उल्लेख किया है अतः ये ११वीं सदी के बाद के विद्वान् तो नहीं है।

२. इसी तरह वादिराज सूरि (सन् १०३५) ने पार्श्वनाथ चरित में धनञ्जय और द्विसन्धान का निर्देश किया है अतः ये ११वीं सदी के बाद के नहीं है।

३. जल्हण (१२वीं सदी) ने राजशेखर के नाम से सूक्तिमुक्तावली में जो पद्य उद्धृत किया है, वह राजशेखर काव्यमीमांसाकार राजशेखर है। इनका उल्लेख सोमदेव (ई. ९६०) के यशस्तिलक चम्पू में पाया जाता है अतः राजशेखर का समय ई. १० वीं सदी सुनिश्चित हैं। राजशेखर के द्वारा प्रशंसित होने के कारण धनञ्जय का समय १०वीं सदी के बाद का नहीं हो सकता।

४. डॉ० हीरालालजी ने षट्खंडागम प्रथम भाग की प्रस्तावना (पृ० ६२) में यह सूचित किया है कि जिनसेन के गुरु वीरसेन स्वामी ने धवला टीका (पृ० ३८७) में अनेकार्थ नाममाला का निम्नलिखित श्लोक प्रमाणरुप में उद्धृत किया है–

''हेतावेव प्रकाराद्यैः व्यवच्छेदे विपर्यये।
प्रादुर्भावे समाप्तौ च इतिशब्दं विदुर्बुधाः॥''

यह श्लोक अनेकार्थ नाममाला का है। धवलाटीका वि. सं. ८७३ सन् ८१६ में समाप्त हुई थी अतः धनञ्जय का समय ९वीं सदी के बाद नहीं हो सकता।

५. धनञ्जय ने अकलंक देव का उल्लेख 'प्रमाणमकलङ्कस्य' श्लोक में किया है। अकलंक का समय ई. ७ वीं सदी निश्चित है, अतः धनञ्जय ७वीं सदी से पूर्व के नहीं हो सकते।

संस्कृत साहित्य का संक्षिप्त इतिहास के लेखकद्वय ने धनञ्जय का समय ई. १२वाँ शतक का मध्य निर्धारित किया है। (पृ० १७४) उनने अपने इस मत की पुष्टि के लिए डॉ. के० बी० पाठक महाशय का यह मत (१. इसी के आधार से कल्पद्रुमकोश की प्रस्तावना (P.XXXii) में श्री रामावतार शर्मा ने भी धनञ्जय का समय १२वीं सदी लिखा है।)भी उद्धृत किया है कि–''धनञ्जय ने द्विसन्धान महाकाव्य की रचना ई. ११२३ और ११४० के मध्य में की है।'' पर उपरोक्त प्रमाणों के आधार से धनञ्जय का समय ई. ८वीं सदी का अन्त और नवीं का पूर्वार्ध सिद्ध होता हैं। जल्हण की सूक्तिमुक्तावली में जो ई. १२वीं सदी की रचना है,

राजशेखर के नाम से उद्धृत 'द्विसन्धाने निपुणतां' श्लोक काव्यमीमांसाकार राजशेखर का ही हो सकता है, न कि प्रबन्धकोश के कर्त्ता राजशेखर का। संस्कृत साहित्य के इतिहास के लेखकद्वय यहाँ भ्रान्त कर बैठे हैं, वे स्वयं जल्हण को १२वीं सदी का विद्वान लिखकर भी उसमें उद्धृत राजशेखर को १४वीं सदी का जैन राजशेखर बताते हैं।

अतः धनञ्जय का समय उपर्युक्त प्रमाणों के आधार से ई. ८वीं का उत्तर भाग और नवीं का पूर्व भाग प्रमाणित होता है।

भाष्यकार अमरकीर्ति–

महापण्डित अमरकीर्ति ने नाममाला के भाष्य के अन्त में यह पुष्पिका वाक्य लिखा हैं– ''इति महापण्डितश्रीमदमरकीर्तिना त्रैविद्येन श्री ऐन्द्रवंशोत्पन्नेन शब्दवेधसा कृतायां धनञ्जयनाममालायां प्रथमकाण्डं व्याख्यातम्'' इससे इतना ही ज्ञात होता है कि अमरकीर्ति 'त्रैविद्य' उपाधि से विभूषित थे और वे सेन्द्रवंश (सेनवंश) में उत्पन्न हुए थे।

इन्होंने अपने को 'शब्दवेधा' उपाधि से अलंकृत किया है।

मंगल श्लोकों में पूज्य अकलङ्क विद्यानन्दि और समन्तभद्र के साथ ही साथ एक कल्याणकीर्ति को भी नमस्कार किया है। इन्होंने ग्रन्थ के बीच में जहाँ आवश्यकता भी नहीं है वहाँ भी अपना नाम देने में संकोच नहीं किया हैं। कई स्थानों पर धनञ्जय के श्लोकों की उत्थानिका में भी ''सम्प्रति मनुष्यवर्ग आरभ्यते अमरकीर्तिना'' (पृ० १३) आदि लिखा है। जो स्पष्टतः भ्रम उत्पन्न करता हैं। एक जगह तो धनञ्जय के इस श्लोकांश की व्याख्या करते हुए स्वयं अपना ही नाम लिख दिया है–''वारिधिर्वर्ण्यतेऽधुना। अधुना इदानीं वारिधिर्वर्ण्यते कथ्यते। केन भाष्यकर्त्रा श्रीमदमरकीर्तिना। स्पष्टतया यहाँ 'केन' का उत्तर 'धनञ्जय' होना चाहिए था।''

अमरकीर्ति नाम के तीन विद्वानों का पता लगता हैं–

१. 'छक्कम्मोवएस' आदि ग्रंथों के रचयिता अमरकीर्ति १ (१. देखो डा. हीरालाल का 'अमरकीर्तिगणि और उनका षट्कर्मोपदेश' लेख। जैन सि० भास्कर भाग २ अंक ३।)। इन्होंने वि० सं० १२४७ भादों सुदी १४ के दिन छक्कमोवएस ग्रन्थ समाप्त किया था अर्थात् ये ईसवीय १२वीं सदी के अन्तिम भाग और तेरहवीं के प्रारम्भ में विद्यमान थे। ये अमितगति आचार्य की परम्परा में हुए है। इनकी गुरू परम्परा यह है– अमितगति, शान्तिषेण, अमरसेन, श्रीषेण, चन्द्रकीर्ति और चन्द्रकीति के शिष्य अमरकीर्ति।

२. वर्धमान के प्रगुरु अमरकीर्ति। इनकी परम्परा इस प्रकार है[२]। (जैन शिलालेख संग्रह का १११वाँ शिलालेख)...देवेन्द्र विशालकीर्ति, शुभकीर्ति, धर्मभूषण, अमरकीर्ति,....धर्मभूषण वर्धमान। वर्धमान ने शक संवत् १२९५ वैशाख सुदी ३ बुधवार को धर्मभूषण की निषधा बनवाई थी। इस शिलालेख के अनुसार अमरकीर्ति का समय शक १२५० के आसपास सिद्ध होता है। ये ईसवीय १४ वीं सदी के विद्वान थे। इनके इस समय का समर्थन शक १३०७ में उत्कीर्ण विजयनगर के शिलालेख से भी होता है।

३. दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकीर्ति के

सधर्मा अमरकीर्ति। इनके सम्बन्ध में दशभक्त्यादिशास्त्र में लिखा है–

> **''जीयादमरकीर्त्याख्यभट्टारकशिरोमणिः।**
> **विशालकीर्तियोगीन्द्रसधर्मा शास्त्रकोविदः॥**
> **अमरकीर्तिमुनिर्विमलाशयः कुसुमचापमदाचलवज्रभृत्।**
> **जिनमतापहृतारितमाश्च यो जयति निर्मलधर्मगुणाश्रयः॥''**

अर्थात्–शास्त्रकोविद, विमलाशय, कामजेता, निर्मलगुण और धर्म के आश्रय तथा जिनमत के प्रकाशक अमरकीर्ति भट्टारक विशालकीर्ति के सधर्मी थे।

विशालकीर्ति के पिता विद्यानन्द का स्वर्गवास शक १४०३ सन् १४८१ में हुआ था। यह उल्लेख दशभक्त्यादि महाशास्त्र में विद्यमान है। (प्रशस्तिसंग्रह के सम्पादक पं० के० भुजबली शास्त्री ने 'शाके वह्निखराब्धिचन्द्रकलिते संवत्सरे' का अर्थ शक १४६३ किया है। जब कि दशभक्त्यादि शास्त्र की समाप्ति सूचक 'शाके वेदखराब्धिचन्द्रकलिते' का अर्थ १४०४ शक किया है। दोनों जगह ख का शून्य लेना चाहिए। यदि दशभक्त्यादि शास्त्र शक १४०४ में समाप्त हुआ है तो उसमें शक १४६३ में हुई विद्यानन्द की मृत्यु की चर्चा कैसे आ सकती है ?) अतः उनके पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति का समय करीब सन् १४५० अर्थात् ईसवीय १५वीं शताब्दी सिद्ध होता है (देखो प्रशस्तिसंग्रह, पृ० १२८)। दशभक्त्यादि शास्त्र का समाप्तिकाल १४०४ शक अर्थात् १४८२ ई० है।

इन तीन अमरकीर्ति में प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता छक्कम्मोवएस के रचयिता नहीं हो सकते, क्योंकि उनका काल वि० १२४७ के आसपास है, जब कि नाममाला के भाष्य (पृ० ६२) में आशाधर के महाभिषेक से उद्धरण दिया है। आशाधर ने अपना अनागरधर्मामृत वि० १३०० में समाप्त किया था। अतः प्रथम अमरकीर्ति इस ग्रन्थ के रचयिता नहीं हो सकते।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रस्तुत ग्रन्थ के भाष्यकर्ता अमरकीर्ति वि० १३०० अर्थात् ईसवीय १२४३ तेरहवीं सदी के पहिले के विद्वान् तो नहीं है। इन्होंने भाष्य में भोज (११वीं सदी), इन्द्रनन्दि (१०वीं सदी), पद्मनन्दि (१२वीं सदी), सोमप्रभ (१२वीं सदी), हेमचन्द्र (१२.१३वीं सदी) आदि के ग्रन्थों से भी नामोल्लेख पूर्वक अवतरण लिए हैं। शेष दो अमरकीर्ति पृथक् व्यक्ति तो है। द्वितीय अमरकीर्ति की प्रशंसा में विजयपुर के शिलालेख में निम्नलिखित पद्य मिलते हैं–

> **''शिष्यस्तस्य गुरोरासीदनर्गलतपोनिधिः।**
> **श्रीमानमरकीर्त्यार्यो देशिकाग्रेसरः शमी॥**
> **निजपक्षपुटकवाटं घटयित्वानलरोधतो हृदये।**
> **अविचलितबोधदीपं तममरकीर्तिं भजे तमोहरणम्॥''**

अर्थात्–अमरकीर्ति महान् तपस्वी शान्त और लम्बी समाधि लगाने वाले योगी थे। इस वर्णन से ज्ञात होता है कि ये अमरकीर्ति शास्त्रकार की अपेक्षा योगी और तपस्वी ही विशेष रूप से थे। नाममाला भाष्य में जिस प्रकार की यशोलिप्सा टपकती है वह एक योगी और तपस्वी में नहीं हो सकती। अतः मेरे विचार से

द्वितीय अमरकीर्ति भी प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता नहीं है।

तृतीय अमरकीर्ति के वर्णन में 'शास्त्रकोविद' विशेषण उनके पाण्डित्य का निर्देश कर रहा है। अतः हमारे प्रकृत ग्रन्थकार दशभक्त्यादि महाशास्त्र के रचयिता वर्धमान के समकालीन, विद्यानन्द के पुत्र विशालकीर्ति के सधर्मा अमरकीर्ति हैं। ये सन् १४५० के आसपास अर्थात् पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् थे। इस समय का साधक एक प्रमाण यह भी हो सकता है कि इनने कल्याणकीर्ति को नमस्कार किया है। कल्याणकीर्ति का एक जिनयज्ञफलोदय ग्रन्थ मिलता है। (देखो प्रशस्ति संग्रह पृ० १६) उसकी प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि ये भट्टारक ललितकीर्ति के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति ने जेठ सुदी ५ शक संवत् १३५० में जिनयज्ञफलोदय समाप्त किया था। अर्थात् सन् १४२८ में यह ग्रन्थ समाप्त हुआ था। यदि यही कल्याणकीर्ति अमरकीर्ति के द्वारा स्मृत हुए है, तो मानना होगा कि अमरकीर्ति पन्द्रहवीं सदी के विद्वान् हैं।

आभार—

इस ग्रन्थ के सम्पादक पं० शम्भुनाथजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य सप्ततीर्थ अनेक शास्त्रों के गंभीर विद्वान् हैं। वर्षों तक उनने जैन विद्यालय इन्दौर में साहित्य और व्याकरण का अध्यापन कराया है। वे जैन परम्परा से पूरी तरह परिचित हैं। उनके जैसे अगाध ज्ञानी निरहङ्कारी और विद्याजीवी विद्वान् विरल है। उनके तलस्पर्शी गंभीर पाण्डित्य का निदर्शक यह संस्करण है। ज्ञानपीठ इस ग्रन्थ के सम्पादक के रूप में उन्हें पाकर गौरवान्वित हैं।

डॉ० पी० एल० वैद्य ने इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखकर हमें उपकृत किया है। पं० हरगोविन्दजी शास्त्री व्याकरणाचार्य ने अनेकार्थ निघण्टु का सम्पादन किया है। पं० महादेव चतुर्वेदी ने सम्पादन परिशिष्टनिर्माण और प्रूफ संशोधन में पूरा योग दिया है। पं० व्रजनन्दनजी मिश्र व्याकरणाचार्य ने भी प्रेस कापी आदि में पूरा सहयोग दिया है। गुलाबचन्द्रजी व्याकरणाचार्य एम० ए० ने प्राक्कथन का हिन्दी अनुवाद किया है। पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार ने अनेकार्थनिघण्टु और एकाक्षरी कोश की प्रति भेजी। पं० श्रीनिवासजी शास्त्री ने भाष्य की प्रति भेजकर अनुगृहीत किया है।

भारतीय ज्ञानपीठ के संस्थापक सेठ शान्तिप्रसादजी तथा अध्यक्षा सौ० रमारानीजी की संस्कृतिनिष्ठा, उदार दृष्टि, ज्ञानानुराग और सौजन्य इस संस्था के जीवन है। अपनी स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवी के स्मरणार्थ मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला के संस्कृत विभाग का यह छठवाँ ग्रन्थ प्रकाशित हो रहा है। इस भद्र दम्पत्ति से ऐसे ही अनेक लोकोदयकारी सांस्कृतिक कार्यों की आशा है।

इस संस्था के कर्मनिष्ठ मन्त्री श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीय की कार्यदृष्टि, सत्प्रेरणा और प्रयत्न से इस संस्था का इस रूप में संचालन हो रहा है। मैं इन सब का आभार मानता हूँ।

भारतीय ज्ञानपीठ काशी
पौष शुक्ल १५
वी सं. २४७६ ३/१/५०

महेन्द्रकुमार जैन
ग्रन्थमाला सम्पादक

अन्तर्भाव

किसी पदार्थ या वस्तु को कहने का सबसे प्रथम माध्यम उसका नाम है। बिना नाम के किसी भी पदार्थ के बारे में उसकी जानकारी देना असंभव है, इसीलिए तत्त्वार्थसूत्र में आचार्य उमास्वामी महाराज ने ''नाम-स्थापना-द्रव्य-भावतस्तन्न्यासः'' इस सूत्र के माध्यम से सभी निक्षेपों में सर्वप्रथम नाम निक्षेप का कथन किया है। नाम के अनेक भेद हैं। इन नामों का विस्तार से वर्णन श्री जयधवल आदि सिद्धान्त ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। वहाँ इन नामों के छह भेद कहे हैं–

१. गौण्यपद नाम—जो नाम गुणों की अपेक्षा से होते हैं वे गौण्यपद नाम हैं। जैसे सूरज की तपन, प्रकाश आदि गुणों के कारण सूरज की तपन, भास्कर, आदित्य, रवि आदि नामों से कहा जाता है।

२. नो गौण्यपद नाम—ऐसे नाम जिनमें गुणों की मुख्यता नहीं होती है। जैसे–चन्द्रस्वामी, सूर्यस्वामी, इन्द्रगोप इत्यादि। इन नाम वाले पुरुषों को उन-उन नामों से कहा जाता है। जबकि उनमें न तो चन्द्र और सूर्य का स्वामीपना पाया जाता है और न इन्द्र उनका रक्षक है इसलिए इन्द्रगोप कहा जाए।

३. आदानपद नाम—''यह इसका है'' इस प्रकार की विवक्षा के निमित्त से जो संज्ञाएँ व्यवहार में आती है, वे आदानपद हैं। जैसे छत्र के संयोग से छत्री कहना। दण्ड के कारण किसी को दण्डी कहना, गर्भ सहित महिला को गर्भिणी कहना, पति सहित महिला को अविधवा कहना इत्यादि।

४. प्रतिपक्षपद नाम—''यह इसका नहीं है।'' इस प्रकार की विवक्षा के निमित्त से जो संज्ञाएँ व्यवहार में आती हैं, वे संज्ञाएँ प्रतिपक्षपद हैं। जैसे पति मर जाने के कारण स्त्री को विधवा, दुराचार करने के कारण रंड, विवाह न होने के कारण कुमारी इत्यादि नाम कहे जाते हैं।

५. उपचयपद नाम—शरीर में उपचित (इकट्ठे) हुए अवयवों की अपेक्षा से इन नामों की प्रवृत्ति होती है। जैसे–श्लीपद रोग से जिसका पैर फूल जाता है, उसे 'श्लीपदी' कहते हैं। इसी तरह जिसके गले में गण्डमाला हो उसे गलगण्ड, लम्बी नाक वाले को दीर्घनासा, पीठ पर कूबड़ होने के कारण कुबड़ा इत्यादि।

६. अपचयपद नाम—शरीर के अवयवों की विकलता के कारण से जो संज्ञाएँ व्यवहार में आती हैं, उन्हें इस अपचयपद नाम से कहा जाता है। जैसे कान छिदा होने के कारण कनछिदा, नाक कट जाने से नकटा, पैर टूट जाने से लंगडा, लूला आदि नाम होते हैं।

इन नामों का महत्त्व और उनका छह प्रकारों से विभाजन जैनाचार्यों की अपूर्व देन है। इन नामों में बहुत से नामों के पर्यायवाची अनेक नाम होते हैं। वे नाम भिन्न-भिन्न लिंगों (पुंलिंग इत्यादि) के भी होते हैं। उन सबका समायोजन एक साथ करना नामों की माला या समूह कहा जाता है इसलिए 'नाममाला' इस

ग्रन्थ का सार्थक नाम है। पूर्वाचार्यों के द्वारा रचित भी अनेक शब्द संग्रह के ग्रन्थ रहे हैं। उनमें आचार्य धरसेन विरचित 'विश्वलोचन कोश' की विधा सभी कोशों से भिन्न होने के कारण उसका अपना एक विशिष्ट स्थान है। किन्तु उससे भी सरलता से धनंजय कवि ने जो नाममाला की रचना की वह शब्द साहित्य पढ़ने वाले एवं प्रारम्भिक ज्ञान अर्जित करने वाले विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त ग्राह्य एवं सरल है। इस ग्रन्थ के ऊपर 'अमरकीर्ति' विरचित एक बृहद् भाष्य उपलब्ध होता है जिसका अद्यावधि हिन्दी में अनुवाद उपलब्ध नहीं था। हिन्दी अनुवाद न होने के कारण बहुसंख्यक जन इन नामों की व्युत्पत्ति की विशेषता से परिचित नहीं हो पाते हैं। इसी बात को ध्यान में रखकर इस भाष्य का हिन्दी अनुवाद किया है। प्रत्येक शब्द की उत्पत्ति के लिए मूलधातु और व्युत्पत्ति करके जो भाष्य लिखा है वह शब्द की गहराई को समझने वाले अध्येताओं के लिए बहुत उपयोगी और आनन्ददायक है। इसका अनुवाद करते हुए जो कुछ विशेषताएँ टिप्पण में सम्पादक महोदय ने दी हैं उनका भी हिन्दी अर्थ विशेषार्थ में रखा है ताकि यथासम्भव अन्य संभावित अर्थों का भी पाठकों को ज्ञान हो सके। 'परिशिष्ट' में सभी शब्दों की 'अकारादि' क्रम से सूची दी गई है। पूर्व सम्पादक का कार्य यथावत् समायोजित किया गया है। प्रत्येक शब्द की व्युत्पत्ति क्रियापद के माध्यम से संस्कृत में लिखना सरल होता है उसका हिन्दी अनुवाद पाठकों को समझ में आ जाये, ऐसा अर्थ प्रतिभासित करा पाना कठिन कार्य है, यह जानते हुए भी इस कार्य को 'यथाबुद्धि' गुरु के आशीर्वाद से करने का प्रयास किया है। सभी के लिए लाभ मिले। इन्हीं भावनाओं के साथ।

दिनांक २४.०८.२०१६

बिजौलिया

मुनि प्रणम्यसागर

अनुक्रमणिका

महाकविधनञ्जयप्रणीता

नाममाला

अमरकीर्तिविरचितभाष्योपेता

श्रीपूज्यपादमकलङ्कमनन्तबोधं विद्यादिनन्दिनमिनं च समन्तभद्रम्।
कल्याणकीर्तिममलं प्रणिपत्य वीरं भाष्यं करोमि परमं बुधबुद्धिसिद्ध्यै ॥१॥

सरस्वत्याः प्रसादेन रच्यतेऽमरकीर्तिना।
भाष्यं धनञ्जयस्येदं बालानां धीविवृद्धये ॥२॥

यद्यपि धनञ्जयो (येनो) क्तो भावो वक्तुं न शक्यते।
तथाऽप्यहं प्रवक्ष्यामि वाग्देव्याश्च प्रसादतः ॥३॥

पूर्वाचार्यकृता प्रायो व्युत्पत्तिरुपदिश्यते।
क्वापि क्वापि स्वबुद्ध्याऽपि क्षम्यतामत्र मे बुधैः ॥४॥

अनुवादक का मंगलाचरण

शब्द ब्रह्म शक्ति अतुल, श्रुत चिन्तन का मूल।
अर्थ भाव की गन्ध से, देय हर्ष श्रुत फूल ॥१॥
क्या व्युत्पत्ति शब्द की, क्या उसका है अर्थ।
क्या था अब क्या हो रहा, व्यर्थ शब्द का अर्थ ॥२॥
यह जानन के अर्थ ही, नाम भाष्य का अर्थ।
हिन्दी भाषा में लिखूँ, मानस बने समर्थ ॥३॥
नमन करूँ उस ज्योति को, जो मन वचन अतीत।
नाश अविद्या का करे, विद्या से हो प्रीति ॥४॥

भाष्यकार का मंगलाचरण

परम निर्मल अनन्तज्ञान को धारण करने वाले श्री वीर भगवान्, श्री पूज्यपाद महाराज, अकलंक देव, समन्तभद्र, विद्यानन्दिस्वामी, कल्याण कीर्ति को प्रणाम करके विद्वानों की बुद्धि की प्राप्ति के लिए भाष्य लिखता हूँ ॥१॥

धनञ्जय की नाममाला का यह भाष्य सरस्वती के प्रसाद से मुझ अमरकीर्ति ने बालों की बुद्धि बढ़ाने के लिए रची है ॥२॥

यद्यपि धनञ्जय ने जो भाव (शब्द के माध्यम से) कहे हैं उन्हें कहने में मैं समर्थ नहीं हूँ फिर भी वाग्देवी के प्रसाद से मैं कहने का अभ्यास करूँगा ॥३॥

प्रायः यहाँ शब्द की व्युत्पत्ति पूर्वाचार्यों के द्वारा ही कहेंगे, कहीं-कहीं अपनी बुद्धि से भी कहूँगा। इस पर विद्वान् मुझे क्षमा करें ॥४॥

शिष्टसमाचार (ष्टाचार) परिपालनार्थं नमस्कारसमुद्‌गतधर्मद्वारेण निर्विघ्नशास्त्रसमाप्त्यर्थं च धनञ्जयबुधः इष्टाधिकृतदेवतानमस्कारार्थं श्लोकमाह–

तन्नामामि परं ज्योतिरवाङ्‌मनसगोचरम्।
उन्मूलयत्यविद्यां यद् विद्यामुन्मीलयत्यपि॥१॥

तत्परं ज्योतिः–

''**णमो** अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं। **णमो** उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहुणं॥'' ईदृग्विधम्। **नमामि** नमस्करोमि। किंविशिष्टम्? **अवाङ्‌मनसगोचरम्** वाक् च वाणी मनसं च चित्तं वाङ्‌मनसे तयोर्वाङ्‌मनसयोर्न गोचरं न प्रत्यक्षीभूतम् अवाङ्‌मनसगोचरम् अलक्ष्यस्वरूपत्वात्। तथा चोक्तं शब्दभेदे–

''**नभन्तु नभसा सार्धं मनसं मनसाऽपि च। तमसेन तमः प्रोक्तं तपन्तु तपसा सह ॥**''

तथा च पद्मनन्दिशास्त्रे–

''**स्वानुभूत्यै भवेद् गम्यं रम्यं यच्चात्मवेदिनाम्।**
जाने तत्परं ज्योतिरवाङ्‌मनसगोचरम्॥''

शिष्टाचार का परिपालन करने के लिए नमस्कार से प्राप्त धर्म के द्वारा और निर्विघ्न शास्त्र की समाप्ति के लिए पण्डित धनञ्जय इष्ट, अधिकृत देवता को नमस्कार करने के लिए श्लोक कहते हैं–

नाममाला का मंगलाचरण

श्लोकार्थ–मैं उस परम ज्योति (केवलज्ञान) को नमस्कार करता हूँ जो वचन और मन का विषय नहीं है तथा जो अविद्या का नाश करती है और विद्या को प्रकाशित भी करती है ॥१॥

भाष्यार्थ–वह उत्कृष्ट ज्योति इस प्रकार है–

णमो अरिहंताणं इत्यादि अर्थात अरहंतों को नमस्कार हो, सिद्धों को नमस्कार हो, आचार्यों को नमस्कार हो, उपाध्यायों को नमस्कार हो और लोक के सर्व साधुओं को नमस्कार हो। इस प्रकार इस पञ्च नमस्कार मन्त्र में कहे गये अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधु यहाँ ज्योति शब्द से कहे गये हैं। उनको मैं नमस्कार करता हूँ। इस ज्योति की क्या विशेषता है ? अवाङ्‌मनसगोचरम्–वचन अर्थात् वाणी, मन अर्थात् चित्त जो वचन और मन के द्वारा प्रत्यक्ष नहीं हैं क्योंकि वचन और मन से इस ज्योति का स्वरूप दिखाई नहीं देता है।

शब्दभेद प्रकाशग्रन्थ में भी कहा गया है–नभस् के साथ नभं (नपुं. लिंग) शब्द, मनस् के साथ मनसम् शब्द तमस के साथ तमस् शब्द और तपस् के साथ तपम् शब्द भी कहे गये हैं।

पद्मनन्दिपञ्चविंशतिका में भी कहा है–वचन और मन के अगोचर वह परम ज्योति आत्मज्ञानियों को स्वानुभूति के लिए जानने योग्य और रम्य है, ऐसा मैं जानता हूँ ? (प॰पं॰ २२१)

यत् अविद्यां पापविद्याम् चाटुकारसूत्रम् वैद्यकसूत्रम् चित्रकर्मादिसूत्रम् नृत्यसूत्रम् गन्धर्वसूत्रम्, पटहसूत्रम् अगदसूत्रम् यौद्धसूत्रम् मद्यसूत्रम् द्यूतसूत्रम् राजनीतिसूत्रम् चतुरङ्गसूत्रञ्च। गजतुरगपुरुष-स्त्रीछत्र-गोखड्गदण्डाञ्जनानां [च विद्या पापविद्या] कथ्यते, ताम् **उन्मूलयति** मूलादुच्छेदयति। यत् **विद्यामपि उन्मीलयति** स्थापयतीत्यर्थः।

द्वयं द्वितयमुभयं यमलं युगलं युगम्।
युग्मं द्वन्द्वं यमं द्वैतं पादयोः पातु जैनयोः ॥२॥

दश युग्मे। द्वौ अवयवौ यस्य तद् **द्वयम्** , ''द्वित्रिम्यामयङ् वा।'' **द्वितयम्** द्वौ अवयवौ यस्य तद् द्वितयम्। **उभयम्** उभौ अवयवौ यस्य ''द्वित्रिभ्यामट्'' इत्यनुवर्तमाने ''उभाभ्यां नित्यम्'' इत्ययट् न तु

विशेषार्थ—यहाँ उक्त दोनों उद्धरणों से भाष्यकार ने मनस यह अकारान्त शब्द को उचित बताया है। वर्तमान में मनस् सकारान्त शब्द ही प्रचलित है। टिप्पण में सम्पादक ने लिखा है कि मनस शब्द काल की वजह से छूट गया है फिर भी इस मूल पुस्तक में सुरक्षित है। मनसम् यह नपुं.लिंग का शब्द है। साथ ही यह भी लिखा है कि वर्तमान में निर्णयसागर यंत्रालय से मुद्रित शब्द-भेदप्रकाश ग्रन्थ में यह पद्य कुछ अन्य रूप में उपलब्ध है वह इस प्रकार है-''कुमदं कुमुदा चापि योषित्स्याद् योषिता सह। तमस्तु तमसा प्रोक्तं रजसापि रजः स्मृतम्॥''

अविद्या पाप विद्या-चाटुकार सूत्र, वैद्यक सूत्र, चित्रकर्म आदि सूत्र, नृत्य सूत्र, गन्धर्व सूत्र, पटह सूत्र, अगद सूत्र, यौद्ध सूत्र, मद्य सूत्र, द्यूत सूत्र, राजनीति सूत्र, चतुरङ्ग सूत्र तथा हाथी, घोड़ा, पुरुष, स्त्री, गाय (पशु), तलवार, दण्ड, अञ्जन की विद्या भी पाप विद्या कही जाती है।

उस अविद्या को जो समूल नष्ट कर देती है तथा विद्या को स्थापित कर देती है, वह परम ज्योति है।

युगल के नाम

श्लोकार्थ—द्वय, द्वितय, उभय, यमल, युगल, युग, युग्म, द्वन्द्व, यम, द्वैत जिनेन्द्रभगवान् के चरण रक्षा करें ॥२॥

भाष्यार्थ—दश शब्द युग्म (दो) के अर्थ में हैं।

१. द्वयम् (नपुं०)—जिसके दो अवयव (भेद) होते हैं, वह द्वय है।'द्वित्रिभ्यामयङ्' वा इस सूत्र से द्वि में अयड् प्रत्यय से यह शब्द बना है। यह सूत्र हेमचन्द्र शब्दानुशासन ७-१-१५१ का है।

२. द्वितयम् (नपुं०)—दो अवयव जिसके हों वह द्वितय कहलाता है।

३. उभयम् (नपुं०)—दो अवयव जिसके हों वह उभय कहलाता है।'द्वित्रिभ्यामयट्' इसी सूत्र की वृत्ति से 'उभाभ्यां नित्यम्' इस सूत्र से उभ शब्द में अयट् प्रत्यय हो जाता है, तयट् नहीं।

विशेष—यद्यपि उभाभ्यां नित्यम् यह सूत्र शब्दानुशासन में नहीं है फिर भी इस टीका से यह सूत्र उसी का है, ऐसा ज्ञात होता है।

तयट्। **यमलं** यमं लातीति यमलम्। **युगलं** युगं लातीति युगलम्। युगडं युगडकं च। **युगं** युज्यते धर्मवृत्त्या युगम्। समाश्रयत्यन्यं युगम्। **युग्मम्** युनक्ति द्वितीयेन युज्यते श्लिष्यते युग्मम्। ''युजिरुचितिजां घ्मक्।'' **द्वन्द्वम्** द्वौ द्वावित्यर्थः द्वन्द्वम्। यच्छत्युपरमत्येकत्वात् **यमम्**। द्वाभ्यामितं द्वीतम्, द्वीतमेव **द्वैतम्**। **पातु** रक्षतु।

ऋषिर्मुनिर्यतिर्भिक्षुस्तापसः संशितो व्रती।
तपस्वी संयमी योगी वर्णी साधुश्च पातु वः॥३॥

द्वादश मुनौ। ऋषति कालत्रयं जानातीति **ऋषिः**।''रिषिशुचिगृनाम्युपधात्किः''। तथा च यशस्तिलके-

''रेषणात्क्लेशराशीनामृषिमाहुर्मनीषिणः।''

यतिः यो देहमात्रारामः सम्यग्विद्यानौलाभेन तृष्णासरित्तरणाय योगाय शुक्लध्यानधर्मध्यानाय यतते स यतिः। तथा च यशस्तिलके-**''यः पापपाशनाशाय यतते स यतिर्भवेत्।''**

---

४. यमलम् (नपुं०)—जो यम को लाता है, वह यमल है। यम शब्द नियंत्रण करने और जोड़ने के अर्थ में आता है। इसलिए जो नियंत्रण में लाये या जोड़ दे वह यमल है।

५. युगलम् (नपुं०)—जो युग को लाता है, वह युगल है। युगडम् और युगडकम्-यह शब्द भी दो संख्या के वाचक हैं।

६. युगम् (नपुं०)—जो धर्मवृत्ति से जोड़ता है, वह युग है अर्थात् यह कालवाची युग चतुर्थ, पञ्चम काल में धर्म होता है, आत्मा को धर्म से जोडता है, इसलिए युग कहा है। तथा जो अन्य को आश्रय देता है, इसलिए भी युग है।

७. युग्मम् (नपुं०)—जो दो के साथ मिलता है, या दो से जुड़ा, चिपका हुआ युग्म कहलाता है। युजिरुचितिजां घ्मक् (का० ऊ० १ ५७) सूत्र से यह सिद्ध है।

८. द्वन्द्वम् (नपुं०)—दो-दो का जोड़ा द्वन्द्व कहा जाता है।

९. यमम् (नपुं०)—एकपन से दूर करता है, इसलिए यम है।

१०. द्वैतम् (नपुं०)—दो को प्राप्त हो वह द्वीत, द्वीत ही द्वैत है।

मुनि के नाम

श्लोकार्थ—ऋषि, मुनि, यति, भिक्षु, तापस, संशित, व्रती, तपस्वी, संयमी, योगी, वर्णी और साधु हम सब की रक्षा करें॥३॥

भाष्यार्थ—बारह शब्द मुनि के वाचक हैं।

१. ऋषिः (पुं०)—जो तीनों काल की बात जानते हैं, वह ऋषि हैं। यशस्तिलक चम्पू में भी कहा है—क्लेश समूह का नाश कर देने से विद्वान् उन्हें ऋषि कहते हैं।

२. यतिः (पुं०)—देह मात्र ही जिनका उद्यान है, तृष्णा नदी को तैरने के लिए सम्यग्ज्ञान रूपी नौका के लाभ से शुक्लध्यान और धर्मध्यानरूपी योग के लिए जो यत्न करते हैं, वह यति हैं।

यशस्तिलक चम्पू में भी कहा है- जो पाप-जाल के नाश के लिए प्रयत्न करता है, वह यति है।

मुनिः, तपःप्रभावात् सर्वैर्मन्यते मुनिः। ''मन्यतेः किरत उच्च।'' तथा च-

''मान्यत्वादाप्तविद्यानां महद्भिः कीर्त्यते मुनिः।''

भिक्षुः भिक्षते इत्येवंशीलो भिक्षुः। ''सन्नन्ताशंसिभिक्षामुः।'' **तापसः**, तपो विद्यते यस्य स तापसः। ''अण् च।'' तपःसहस्राभ्यां न केवलमस्त्यर्थे विनीनौ अण् च, वृद्धिः। **संशितः** संशायतेस्म संशितः। ''श्यतेर्व्रते नित्यम्।'' व्यवस्थितविभाषया शो तनूकरणे इत्यस्य व्रतेऽर्थे नित्यमिकारो भवति, विकल्पो नास्ति। **व्रती**, ''हिंसाऽनृतस्येताऽब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्।'' व्रतं विद्यतेऽस्य व्रती। **तपस्वी ''अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्य तपः।'' ''प्रायश्चित्तविनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम्।''** तपश्च विद्यते यस्येति तपस्वी। **संयमी**, सयमनं संयमः इन्द्रियप्राणलक्षणः। संयमो विद्यते यस्येति संयमी। **योगी**, युजिर् योगे, युज समाधौ पर० युज् समाधौ वा० दि०। आत्म० युज् रुधादौ। पर० युज समाधौ वा दि०। आत्म० युनक्ति युज्यते वा इत्येवंशीलः योगी।

---

३. मुनिः (पुं०)—तप के प्रभाव के कारण सभी लोगों से जो माने जाते हैं अर्थात् सम्मान प्राप्त करते हैं, वह मुनि हैं। यशस्तिलक चम्पू में भी कहा है—आप्त विद्याओं को मान्य होने से महान पुरुष इन्हें मुनि कहते हैं।

४. भिक्षुः (पुं०)—जो भिक्षा चर्या करता है वह भिक्षु है।

५. तापसः (पुं०)—जिसके पास तप होता है। वह तापस है। तप में अण् प्रत्यय लगाकर वृद्धि करने से तापस बनता है।

६. संशितः (पुं०)—श्यति धातु व्रत अर्थ में होती है। इसलिए जिसने व्रतों को धारण किया है वह संशित है। शो तनुकरणे इस धातु को व्रत अर्थ में नित्य इकार होता है, विकल्प नहीं है, जिससे भी संशित शब्द बनता है।

७. व्रती (पुं०)—हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्म और परिग्रह से विरति व्रत है। वह व्रत जिनके होता है वह व्रती है।

८. तपस्वी (पुं०)—अनशन, अवमौदर्य, वृत्ति परिसंख्यान, रस परित्याग, विविक्त शय्यासन, कायक्लेश यह बाह्य तप हैं। प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्ति, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान यह अन्तरङ्ग तप हैं। वह तप जिनके होता है वह तपस्वी है।

९. संयमी (पुं०)—इन्द्रिय और प्राणों का संयमन(नियन्त्रण) संयम है। जिनके पास संयम है, वह संयमी है।

१०. योगी (पुं०)—युजिर् योग में, युज समाधि अर्थ में परस्मैपदी है, युज समाधि अर्थ में दिवादि गण में है। युज् रुधादि गण में आत्मने पदी है। दिवादि गण में युज समाधि अर्थ में परस्मैपदी भी है। मन, वचन, काय योगों को जोड़ने, मिलने का स्वभाव जिसका है, वह योगी है। युज् में विनिण् प्रत्यय से योगी बनता है।

युजभजेत्यादिना विनिण्। **वर्णी**, वर्णो ब्रह्मचर्यमस्त्यस्य वर्णी। **साधुः**, शिष्याणां दीक्षादिदानाध्यापनपराङ्मुखः सकलकर्मोन्मूलनसमर्थो मोक्षमार्गाऽनुष्ठानपरो यः स साधुः। सिद्धिं साधयति साधययिष्यति वा साधुः।

''स [यो] व्याख्याति न शास्त्रं न ददाति दीक्षादिकं च शिष्याणाम्।
कर्मोन्मूलनशक्तो [धर्म] ध्यानः स चात्र साधुर्ज्ञेयः॥''

''कृवापाजिमीस्वदिसाध्यशूदृषणिजनिचरिचटिभ्य उण्''। **वो** युष्मान् **पातु** रक्षतु।

दीक्षितं मौण्ड्यं शिष्यं च तमन्तेवासिनं विदुः।
कृतान्ताऽगमसिद्धान्ताः ग्रन्थः शास्त्रमतः परम्॥४॥

चत्वारः शिष्ये। **दीक्षितम्** दीक्षा संजाताऽस्येति। तारकितादिदर्शनात्संजातेऽर्थ इतच्। **मौण्ड्यम्** मुण्डे मस्तके भवं वपनादिकं मौण्ड्यम्। **शिष्यम्,** शिष्यते व्युत्पाद्यते गुरुणा शिष्यः। ''वृञ्दृजुषीण्शासुस्तुगुहां क्यप्।'' गुरोरन्ते वसत्यन्तेवासी तम्। **विदुः** कथयन्ति। त्रयः सिद्धान्ते। लोकानां सन्देहस्य कृतः अन्तो

---

११. वर्णी (पुं॰)—वर्ण ब्रह्मचर्य को कहते हैं, वह जिसके पास होता है वह वर्णी है।

१२. साधुः (पुं॰)—शिष्यों को दीक्षा आदि प्रदान करना, अध्ययन कराना इन कार्यों से जो रहित है तथा समस्त कर्मों के नाश करने में समर्थ मोक्ष-मार्ग के अनुष्ठान में तत्पर रहने वाला हो वह साधु है।

अथवा जो मोक्ष सिद्धि की साधना करते हैं अथवा सिद्धि को प्राप्त होंगे वह साधु है। कहा भी है–जो शास्त्र का व्याख्यान नहीं करता है और शिष्यों को दीक्षा आदि भी नहीं देता है, कर्म के नाश में समर्थ और धर्मध्यान करने वाला है, वह साधु जानना चाहिए। ये ऋषि आदि आप सभी की रक्षा करें।

शिष्य और सिद्धान्त के नाम

श्लोकार्थ—शिष्य को दीक्षित, मौण्ड्य, शिष्य और अन्तेवासिन् भी कहते हैं। कृतान्त, आगम, सिद्धान्त ये सिद्धान्त के नाम हैं। ग्रन्थ, शास्त्र ग्रन्थ के नाम हैं॥४॥

भाष्यार्थ—चार शब्द शिष्य के वाचक हैं।

१. दीक्षितम् (नपुं॰)—जिसकी दीक्षा हुई है वह दीक्षित कहलाता है। दीक्षा में इतच् प्रत्यय करने से दीक्षित शब्द की व्युत्पत्ति होती है।

२. मौण्ड्यम् (नपुं॰)—मुण्ड मस्तक को कहते हैं। उस पर वपन आदि (मुण्डन आदि) होना मौण्ड्य कहलाता है।

३. शिष्यम् (नपुं॰)—गुरु के द्वारा जो सीखता है या जिसे समझाया जाता है, वह शिष्य है। शास् + क्यप्।

४. अन्तेवासिन् (पुं॰)—गुरु के जो निकट रहता है वह अन्तेवासी होता है।

'सिद्धान्त' के वाचक तीन शब्द हैं।

विनाशो येन सः **कृतान्तः**। आगच्छतीत्**यागमः**, आगमन**मागमो** वा। **सिद्धान्तो** [सिद्धोऽन्तो] निश्चयो यस्य स **सिद्धान्तः**, समयोऽपि। सर्वे पुंसि।

ग्रथ्नाति रचयतीति **ग्रन्थः**। शास्ति **शास्त्रम्**।

भुमिर्भूः पृथिवी पृथ्वी गह्वरी मेदिनी मही।
धरा वसुमती धात्री क्षमा विश्वम्भराऽवनिः ॥५॥
वसुधा धरणी क्षोणी क्ष्मा धरित्री क्षितिश्च कुः।
कुम्भिनीलोर्वरा चोर्वी जगती गौर्वसुन्धरा ॥६॥

सप्तविंशतिर्भूमौ। भवति सर्वमत्र **भूमिः**। ''ऊर्मिभूमिरश्मयः।'' भवत्यस्मात्सर्वं **भूः**। रेफान्तञ्चाव्ययम्। प्रथते **पृथिवी पृथ्वी** च। गुहयतीति **गह्वरी**। रुह्वरीति पाठः। न्याये मेद्यति स्निह्यति मधुकैटभमेदोयोगाद् वा

---

१. कृतान्तः (पुं०)—लोगों के सन्देह का अन्त-विनाश जिससे किया जाय वह सिद्धान्त है। इस व्युत्पत्ति से तर्क शास्त्र आदि कृतान्त हैं।

२. आगमः (पुं०)—जो आता है अथवा आना मात्र आगम है अर्थात् जो तीर्थंकरों के द्वारा उपदिष्ट ज्ञान आचार्य परम्परा से हमें प्राप्त हुआ है, वह आगम है।

३. सिद्धान्तः (पुं०)—जिसके अन्त में सिद्धों का निश्चय हो वह सिद्धान्त है। उसे समय भी कहते हैं। अर्थात् जिन ग्रन्थों में अन्त में सिद्धों, सिद्धगति का वर्णन होता है वह सिद्धान्त ग्रन्थ है। जैसे कषायपाहुड, लब्धिसार आदि।

यहाँ तक सभी शब्द पुंलिंग में हैं।

१. ग्रन्थः (पुं०)—जो गूंथा जाये, रचा जाए वह ग्रन्थ है।

२. शास्त्रम् (नपुं०)—जो कहा जाता है, उपदिष्ट होता है वह शास्त्र है।

भूमि के नाम

श्लोकार्थ—भूमि, भू, पृथिवी, पृथ्वी, गह्वरी, मेदनी, मही, धरा, वसुमती, धात्री, क्षमा, विश्वम्भरा, अवनि, वसुधा, धरणी, क्षोणी, क्ष्मा, धरित्री, क्षिति, कु, कुम्भिनी, इला, उर्वरा, उर्वी, जगती, गौ, वसुन्धरा ये भूमि के नाम हैं ॥५-६॥

भाष्यार्थ—भूमि के वाचक शब्द सत्ताईस (२७) हैं।

१. भूमिः (स्त्री०)—जो यहाँ सर्वत्र रहती है, वह भूमि है।

२. भूः (स्त्री०)—इससे ही सब होते हैं, इसलिए भू है। अर्थात् जल, वायु आदि भूमि से ही होते हैं, इसलिए समस्त पर्यावरण की उत्पत्ति इसी से होती है, इसलिए इसे भू कहते हैं। भूर् यह अव्ययवाची है।

३.४. पृथिवी, पृथ्वी (स्त्री०)—जो विस्तार को प्राप्त है अर्थात् सर्वत्र फैली है, इसलिए पृथिवी नाम पाती है।

मेदिनी। मह्यते **मही**। मह पूजायाम्। धरत्यगान् **धरा**। वस्वस्त्यस्याः **वसुमती**। दधाति संगृह्णाति भेषजार्थं वैद्यो यामिति **धात्री**। ''कर्मणि धेटः ष्ट्रन्।'' केचिद्व(द्द)धातेरपीच्छन्ति। क्षमणं **क्षमा**। ''षाऽनुबन्धभिदादि-भ्यस्त्वङ्।'' **विश्वं** बिभर्त्ति **विश्वम्भरा**। ''नाम्नि तृभृवृजिधारितपिदमिसहां संज्ञायाम्।'' खप्रत्ययः। भूतानवति **अवनिः**। स्त्रियामीः। ''ऋतृसृधृञ्धम्यश्यविवृतिग्रहिभ्योऽनिः।'' अनिः प्रत्ययः। वसु दधातीति **वसुधा**। धरति पर्वतानिति **धरणिः**। ''धृञोऽनिः।'' क्षौति क्षुपम् **क्षोणिः**। स्त्रियामीः। क्षोणी। ''टु क्षु रु कु शब्दे''। क्षमते भारं **क्ष्मा क्षमा** च। धरति सर्वे **धरित्री**। क्षयति क्षयं प्राप्नोति प्रलयकाले **क्षितिः**। कायति

---

५. गह्वरी (स्त्री०)—जो छिपाती है अर्थात् अपने भीतर बहुत कुछ रखती है वह गह्वरी है। रुह्वरी, पाठ भी आता है।

६. मेदिनी (स्त्री०)—मधु कैटभ राक्षस के योग से अथवा न्याय में जो जोड़ने का काम करती है वह मेदिनी है।

७. मही (स्त्री०)—जो पूजी जाती है, वह मही है। मह-पूजा अर्थ में धातु है।

८. धरा (स्त्री०)—जो पर्वतों को धारण करती है, वह धरा है।

९. वसुमती (स्त्री०)—जिसके पास धन-सम्पदा रहती है, वह वसुमती है।

१०. धात्री (स्त्री०)—वैद्य जिसको औषधि के लिए रखता है या संग्रह करता है इसलिए धात्री कहलाती है अर्थात् जड़ी बूटियों के लिए वैद्य भूमि का संग्रह करता है, सभी का पालन-पोषण औषधि के माध्यम से पृथ्वी करती है, इसलिए धात्री है।

११. क्षमा (स्त्री०)—सहनशील होने से क्षमा है अर्थात् कूटने, पीटने, खोदने आदि अहितकारी कृत्य करने पर भी इच्छित वस्तु प्रदान करती है, इसलिए क्षमा नाम पाती है।

१२. विश्वंभरा (स्त्री०)—जो विश्व संसार का पालन पोषण करती है, इसलिए विश्वंभरा है।

१३. अवनिः (स्त्री०)—भूतों की रक्षा करती है, इसलिए अवनि है।

विशेष—दो, तीन, चार, इन्द्रिय जीव प्राण, वृक्ष भूत, पंचेन्द्रिय जीव और शेष सत्त्व कहलाते हैं। इस परिभाषा से जो वृक्षों, वनस्पति की रक्षा करती है या पालन करती है वह अवनि है।

१४. वसुधा (स्त्री०)—वसु अर्थात् धन-स्वर्ण आदि खनिज पदार्थों को धारण करने से वसुधा है।

१५. धरणिः (स्त्री०)—पर्वतों को धारण करती है इसलिए धरणि है।

१६. क्षोणिः, क्षोणी (स्त्री०)—झाड़ी झाड़ उत्पन्न करती है इसलिए क्षोणि है।

१७. क्ष्मा (स्त्री०)—भार सहन करती है इसलिए क्ष्मा या क्षमा है।

१८. धरित्री (स्त्री०)—सभी को धारण करती है इसलिए धरित्री है।

१९. क्षितिः (स्त्री०)—प्रलय काल के समय क्षय को प्राप्त होती है इसलिए क्षिति है।

कूयते वा **कुः**। कुम्भो रत्नोत्पत्तिद्वीपोऽस्त्यस्याः **कुम्भिनी**। एति जन इमाम् **इला**। ''इरासुराक-पिलिकादिदर्शनाल्लत्वम्।'' शूद्रादयः - ''शूद्रोग्रवज्रविप्रभद्रगौरभेरीराः'' एते रक्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। क्लेशमुर्वति हिनस्ति फलेन **उर्वरा**। **उर्वी**। उर्वी थुर्वी दुर्वी धर्वी हिंसार्थाः। सर्वमूर्वति व्याप्नोति **उर्विः**। स्त्रियामीः **उर्वी**। राजान्तरं गच्छति **जगतिः**। स्त्रियामीः, **जगती**। पूजां गच्छति **गौः**। स्त्रीनोः। गमेर्डोः। ''गोरौ धुटि'' इत्यौत्वम्। धृञ् धारणे। धृः। धरति धरते। इञ्। अस्य वृद्धिः। धारि जातम्। वसु वसूनि वा धारयति **वसुन्धरा**। नाम्नि तृभृ० खप्रत्ययः। कारितस्या० कारितलोपः। अभिधानात् ह्रस्वः। ''ह्रस्वा रुषोर्मोऽन्तः।'' ''स्त्रिया मादा'' भूतधात्री, रत्नगर्भा, विपुला, सागराम्बरा, रत्नवती, रसा, अचला, अनन्ता ङ्याम् काश्यपी, गोत्रा, स्थिरा, सर्वंसहा।

तत्पर्य्यायधरः शैलस्तत्पर्य्यायपतिर्नृपः।
तत्पर्य्यायरुहो वृक्षः शब्दमन्यं च योजयेत् ॥७॥

---

२०. कुः (स्त्री०)—काय की तरह जो आचरण करती है अर्थात् जहाँ कोई भी पदार्थ समूह रूप में रहता है अथवा जिसके संपर्क से आवाज आती है वह कुः–पृथ्वी है।

२१. कुम्भिनी (स्त्री०)—रत्नों की उत्पत्ति का द्वीप कुम्भ कहलाता है। वह कुम्भ जिसके पास है इसलिए वह कुम्भिनी है।

२२. इला (स्त्री०)—लोग जिस पर चलते हैं इसलिए वह इला कहलाती है।

२३. उर्वरा (स्त्री०)—फल प्रदान करके जो क्लेश, दुःखों का नाश करती है इसलिए उर्वरा है।

२४. उर्विः, उर्वी (स्त्री०)— सबको व्याप्त करती है अर्थात् सबमें समाहित है इसलिए उर्वी है।

२५. जगतिः, जगती (स्त्री०)—एक राजा को छोड़कर दूसरे राजा की हो जाती है इसलिए जगति है।

२६. गौः (स्त्री०)—पूजा, प्रतिष्ठा, सम्मान को प्राप्त है इसलिए गौ है।

२७. वसुन्धरा (स्त्री०)—धन सम्पदा को धारण करती है इसलिए वसुन्धरा है।

भूतधात्री, रत्नगर्भा, विपुला, सागराम्बरा, रत्नवती, रसा, अचला, अनन्ता, काश्यपी, गोत्रा, स्थिरा, सर्वंसहा—ये भी पृथ्वी के नाम हैं।

पर्वत, राजा, वृक्ष के नाम

श्लोकार्थ एवं भाष्यार्थ—पृथ्वी के नामों के अन्त में 'धर' शब्द जोड़ देने से पर्वत के नाम बन जाते हैं—भूमिधर, भूधर, पृथिवीधर, पृथ्वीधर, गह्वरीधर, मेदिनीधर, महीधर, धराधर, वसुमतीधर, धात्रीधर, विश्वम्भराधर, अवनीधर, वसुधाधर, धरणीधर, क्षोणीधर, क्ष्माधर, धरित्रीधर, क्षितिधर, कुधर, कुम्भिनीधर, इलाधर, उर्वराधर, उर्वीधर, जगतीधर, गोधर, वसुन्धराधर। ये सत्ताईस नाम पृथ्वी के जानना चाहिए ॥७॥

पृथ्वी के नामों के अन्त में 'पति' शब्द जोड़ देने से राजा के नाम बन जाते हैं—भूमिपति, भूपति,

योजयेत् योटयेत् **अन्यं** शब्दं च। **तत्पर्य्यायधरः शैलः**। भूमिधरः, भूधरः, पृथिवीधरः, पृथ्वीधरः, गह्वरीधरः, मेदिनीधरः, महीधरः, धराधरः, वसुमतीधरः, धात्रीधरः, विश्वम्भराधरः, अवनीधरः, वसुधाधरः, धरणीधरः, क्षोणीधरः, क्ष्माधरः, धरित्रीधरः, क्षितिधरः, कुधरः, कुम्भिनीधरः, इलाधरः, उर्वराधरः, उर्वीधरः, जगतीधरः, गोधरः, वसुन्धराधरः। सप्तविंशति नामानि शैलस्य ज्ञेयानि।

तत्पर्य्यायपतिर्नृपः। भूमिपतिः, भूपतिः, पृथिवीपतिः, पृथ्वीपतिः, गह्वरीपतिः, मेदिनीपतिः, महीपतिः, धरापतिः, वसुमतीपतिः, धात्रीपतिः, क्षमापतिः, विश्वम्भरापतिः, अवनीपतिः, वसुधापतिः, धरणीपतिः, क्षोणीपतिः, क्ष्मापतिः, धरित्रीपतिः, क्षितिपतिः, कुपतिः, कुम्भिनीपतिः, इलापतिः, उर्वरापतिः, उर्वीपतिः, जगतीपतिः, गोपतिः, वसुन्धरापतिः। सप्तविंशति नामानि नृपस्येति ज्ञातव्यानि।

तत्पर्य्यायरुहो वृक्षः। भूमिरुहः, भूरुहः, पृथिवीरुहः, पृथ्वीरुहः, गह्वरीरुहः, मेदिनीरुहः, महीरुहः, धरारुहः, वसुमतीरुहः, धात्रीरुहः, क्षमारुहः, विश्वम्भरारुहः, अवनीरुहः, वसुधारुहः, धरणीरुहः, क्षोणीरुहः, क्ष्मारुहः, धरित्रीरुहः, क्षितिरुहः, कुरुहः, कुम्भिनीरुहः, इलारुहः, उर्वरारुहः, उर्वीरुहः, जगतीरुहः, गोरुहः, वसुन्धरारुहः। सप्तविंशतिपर्य्यायनामानि वृक्षस्येति ज्ञातव्यानि।

दरीभृदचलः शृङ्गी पर्वतः सानुमान् गिरिः।
नगः शिलोच्चयोऽद्रिश्च शिखरी त्रिककुन्मरुत्॥ ८॥

पृथिवीपति, पृथ्वीपति, गह्वरीपति, मेदिनीपति, महीपति, धरापति, वसुमतीपति, धात्रीपति, क्षमापति, विश्वम्भरापति, अवनीपति, वसुधापति, धरणीपति, क्षोणीपति, क्ष्मापति, धरित्रीपति, क्षितिपति, कुपति, कुम्भिनीपति, इलापति, उर्वरापति, उर्वीपति, जगतीपति, गोपति, वसुन्धरापति। ये सत्ताईस नाम राजा के जानना चाहिए।

पृथ्वी के नामों के अन्त में 'रुह' जोड़ देने से वृक्ष के नाम बन जाते हैं—भूमिरुह, भूरुह, पृथिवीरुह, पृथ्वीरुह, गह्वरीरुह, मेदिनीरुह, महीरुह, धरारुह, वसुमतीरुह, धात्रीरुह, क्षमारुह, विश्वम्भरारुह, अवनीरुह, वसुधारुह, धरणीरुह, क्षोणीरुह, क्ष्मारुह, धरित्रीरुह, क्षितिरुह, कुरुह, कुम्भिनीरुह, इलारुह, उर्वरारुह, उर्वीरुह, जगतीरुह, गोरुह, वसुन्धरारुह। ये सत्ताईस नाम वृक्ष के जानना चाहिए।

''शब्दमन्यं च योजयेत्'' से अन्य शब्द जोड़कर भी पर्वत, राजा, वृक्ष के नाम बन जाते हैं। जैसे भृत्, ध्र शब्द जोड़ देने से पर्वत के नाम भूमिभृत, भूमिध्र आदि। स्वामी, पाल आदि शब्द जोड़ देने से राजा के नाम एवं चर आदि शब्द जोड़कर मनुष्य आदि के नाम बन जाते हैं।

पर्वत के नाम

श्लोकार्थ—दरीभृत्, अचल, शृङ्गी, पर्वत, सानुमान्, गिरि, नग, शिलोच्चय, अद्रि, शिखरी, त्रिककुत्, मरुत् ये पर्वत के नाम हैं ॥८॥

द्वादश पर्वते। दरीं बिभर्त्तीति **दरीभृत्**। स्वस्थानात् न चलति **अचलः**। शृङ्गमस्यास्तीति **शृङ्गी**। पर्वाणि सन्त्यस्य **पर्वतः**। ''पर्वमरुभ्यां तः।'' सानुरस्त्यस्य **सानुमान्**। जलं गिरतीति **गिरिः**। ''गृनाम्युपधात्किः।'' न गच्छतीति **नगः**। ''डोऽसंज्ञायामपि''। नाम्न्युपपदे गमेर्डो भवति। शिला उच्चीयन्तेऽत्र, **शिलोच्चयः**। खम् आकाशम् अत्तीति **अद्रिः**। ''भूस्वदिभ्यः क्रिः।'' शिखरमस्त्यस्य **शिखरी**। त्रिकं पृष्ठाधरं स्कुभ्नाति विस्तारयतीति **त्रिककुत्**। वर्णविकारत्वाद् भकारस्य तकारः। स्तम्भु स्तुम्भुस्कम्भुस्कुम्भुस्कुञ्भ्यः श्नुश्चेति वक्तव्यमत्रास्य धातोः प्रयोगः। म्रियन्ते क्षुद्रजन्तवोऽस्य स्पर्शेनेति **मरुत्**। ''मृग्रोरुतिः''। शैलः, क्षितिधरः, गोत्रः, आहार्यः, कुध्रः, ग्रावा।

प्रस्थं पार्श्वं तटं सानुर्मेखलोपत्यका तटी।
नितम्बमन्तो दन्तश्च तद्वानपि गिरिः स्मृतः॥९॥

पर्वतमेखलायां दश। प्रस्थीयते जनेनात्र **प्रस्थम्**। ''नाम्निस्थश्च कः। उभयम्। पाति रक्षति जनान्

भाष्यार्थ—पर्वत के यह बारह नाम हैं–

१. **दरीभृत् (पुं०)**—गुफा, कन्दराओं को धारण करने से दरीभृत् कहलाता है।
२. **अचलः (पुं०)**—अपने स्थान से चलायमान नहीं होता है इसलिए अचल है।
३. **शृङ्गिन् (पुं०)**— इसके शृङ्ग अर्थात् शिखर होता है इसलिए शृङ्गी है।
४. **पर्वतः (पुं०)**—इसके पर्व अर्थात् मध्यभाग होता है इसलिए पर्वत है।
५. **सानुमान् (पुं०)**—इसकी चोटी होती है इसलिए सानुमान् है।
६. **गिरिः (पुं०)**—जल को निगल लेता है इसलिए गिरि है।
७. **नगः (पुं०)**—चलता नहीं है, स्थानान्तरित नहीं होता है, इसलिए नग है।
८. **शिलोच्चयः (पुं०)**—शिलाएँ इसमें खूब उठती हैं, इसलिए शिलोच्चय है।
९. **अद्रिः (पुं०)**—आकाश को खाता है अर्थात् घेर लेता है इसलिए अद्रि है।
१०. **शिखरिन् (पुं०)**—इसका शिखर होता है इसलिए शिखरी है।
११. **त्रिककुत् (पुं०)**—पिछले अधर भाग को फैलाता है इसलिए त्रिककुत् है।
१२. **मरुत् (पुं०)**—इसके स्पर्श से क्षुद्र जन्तु मर जाते हैं इसलिए मरुत् है।

शैल, क्षितिधर, गोत्र, आहार्य, कुध्र, ग्रावा आदि भी पर्वत के नाम हैं।

पर्वत मेखला के नाम

श्लोकार्थ—प्रस्थ, पार्श्व, तट, सानु, मेखला, उपत्यका, तटी, नितम्ब, अन्त, दन्त ये पर्वत की मेखला के नाम हैं। इनके साथ मतुप् प्रत्यय का वान् जुड़ जाने से पर्वत के नाम बन जाते हैं ॥९॥

भाष्यार्थ—पर्वत की मेखला के दश नाम हैं। (मेखला अर्थात् किनारा, दलान या मध्यभाग करधनी की तरह)।

१. **प्रस्थम् (नपुं०)**—लोग यहाँ ठहरते हैं, इसलिए प्रस्थ है। उभयम् से यह शब्द दोनों लिंग (पुं०

पार्श्वम्। तटति उच्छायं गच्छति **तटम्**। त्रिषु लिङ्गेषु। सनोतीति **सानुः**। ''कृवापाजिमीस्वदिसाध्य-शूदृषणिजनिचरिचटिभ्य उण्।'' ''षण दाने'' अस्य धातोः प्रयोगः। मेहनस्य खं तस्य मां लातीति निरुक्तिः। मिनोति प्रक्षिपति कामिचित्तानिति वा **मेखला**। **उपत्यका** उप समीपे भवा उपत्यका। ''उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढयोः।'' तटमस्यास्ति **तटी**। क्रीडार्थं जनस्ताम्यतीति **नितम्बः**। अमतीत्**यन्तः**। ''मृगृवाहस्य-मिदमिलूपूभ्यस्तः।'' ''एभ्यस्तप्रत्ययो'' भवति। दम्यतेऽ (भ) क्ष्यतेऽनेन **दन्तः**। ''मृगृवाहस्यमिद-मिलूपूभ्यस्तः''। तप्रत्ययः। **तद्वानपि गिरिः स्मृतः**। प्रस्थवान्, पार्श्ववान्, तटवान्, सानुमान्, मेखलावान्, उपत्यकावान्, तटीमान्, नितम्बवान्, अन्तवान्, दन्तवान्।

राजाधिपः पतिः स्वामी नाथः परिवृढः प्रभुः।
ईश्वरो विभुरीशानो भर्तेन्द्र इन ईशिता ॥१०॥

चतुर्दश राज्ञि। न्यायमार्गेण राजते इति **राजा**। ''वृषितक्षिराजिधन्विप्रदिवियुभ्यः कनिः।'' '' को यण्वद्भावार्थः।'' एभ्यः कनिः प्रत्ययो भवति। अधि ऐश्वर्य्ये पाति रक्षतीति **अधिपः**। तथा च उपसर्गवृत्तौ-

---

एवं नपुं०) का है।

२. पार्श्वम् (पुं०, नपुं०)—लोगों की जो रक्षा करता है इसलिए पार्श्व है।

३. तटम् (पुं०, नपुं०, स्त्री०)—किनारेदार जो होता है, जो ऊँचाई की ओर जाता है इसलिए तट है। यह शब्द तीनों लिंगों में है।

४. सानुः (पुं०, नपुं०)—ऊँचाई देती है, चोटी है इसलिए सानु है।

५. मेखला (स्त्री०)—कामी जन के मन को विचलित करती है इसलिए मेखला है।

६. उपत्यका (स्त्री०)—पर्वत के निकट रहती है इसलिए उपत्यका है।

७. तटी (स्त्री०)—किनारे इसके होते हैं इसलिए तटी है।

८. नितम्बम् (पुं०, नपुं०)—क्रीड़ा के लिए जहाँ मनुष्य कष्ट पाता है इसलिए नितम्ब है।

९. अन्तः ()—जिससे सम्मान, मान्यता बढ़ती है इसलिए अन्त है।

१०. दन्तः ()—जिससे मद का दमन होता है इसलिए दन्त है अर्थात् चोटी पर चढ़ना कठिन होता है जिससे मद नाश होता है। इस कारण से मेखला को दन्त भी कहते हैं।

इनसे सहित जो है वह पर्वत है। जैसे प्रस्थवान्, पार्श्ववान् आदि पर्वत के नाम हैं। देखें भाष्य।

राजा के नाम

श्लोकार्थ—राजा, अधिप, पति, स्वामी, नाथ, परिवृढ, प्रभु, ईश्वर, विभु, ईशान, भर्ता, इन्द्र, इन, ईशिता ये राजा के नाम हैं॥१०॥

भाष्यार्थ—राजा के वाचक चौदह शब्द हैं।

१. राजन् (पुं०)(एकव० में राजा)—न्यायमार्ग के द्वारा सुशोभित होता है, इसलिए राजा कहा जाता है।

२. अधिपः (पुं०)—ऐश्वर्य को अपने अधीन रखता है इसलिए अधिप है। 'अधि' उपसर्ग का

अधि वशीकरणाधिष्ठानाध्ययनैश्वर्यस्मरणाधिकेषु।'' पात्यवति **पतिः**। पातेर्डतिः। अस्माड्डतिप्रत्ययो भवति।'अमु गतौ' सुपूर्वः। शोभनममतीति **स्वामी**।''सावमेरिन् दीर्घश्च''। सावुपपदे अमेर्धातोरिन् प्रत्ययो भवति। नाथयति रिपुं **नाथः**।''तृहि वृहि वृद्धौ''। ढो वृढः। अत एव वृंहः परिपूर्वात् परिवृंहति परिवर्हति स्म वा **परिवृढः**।''गत्यर्था०'' इति क्तः।''परिवृढदृढौ प्रभुबलवतोः'' एतौ प्रभुबलवतोरर्थयोर्यथासंख्यं निपात्येते। परिपूर्वस्य वृंहेरिडभावो नलोपश्च। वृहतृहोः प्रकृत्यन्तरयोरपीत्यन्ये। ये तु प्रकृत्यन्तरयोरिच्छन्ति, तेषाम्मते ''तृह तृहि वृह वृहि दृह वृद्धौ'' इति पाठान्तरं वर्तते। तेन पाठान्तरेण दृहस्य वृहस्य वा ''तृढः वृढः'' इति निपातः। तत्र वर्हति स्म दर्हति स्म इति वाक्यं क्रियते। प्रभवतीति **प्रभुः**।''भुवो डुर्विशम्प्रेषु च।''''डानुबन्ध० '' ऊकारलोपः। ''ईश ऐश्वर्ये'' ईष्टे इत्येवंशील **ईश्वरः**। ''कशिपिसिभासीशस्थाप्रमदां च।'' एषां वरो भवति तच्छीलादिषु। विभवतीति **विभुः**। डुप्रत्ययः। ईष्टे शक्नोति सृष्टिस्थितिप्रलयान् कर्तुम् **ईशानः**। आश्रितजनान् बिभर्ति पोषयति **भर्ता**। इन्दति परमैश्वर्ययुक्तो भवतीति **इन्द्रः**। ''स्फायितञ्चिवञ्चि-शकिक्षिपिक्षुदिरुदिमदिमन्दिचन्द्युन्दीन्दिभ्योरक्।'' एतीति **इनः**। ''इण्‌जिकृषिभ्यो नक्।'' ईष्टे **ईशिता**।

अनोकहस्तरुः शाखी विटपी फलिनो नगः।
द्रुमोऽङ्घ्रिपः फलेग्राही पादपोऽगो वनस्पतिः॥ ११॥

अर्थ–वशीकरण, अधिष्ठान, अध्ययन, ऐश्वर्य और स्मरण की अधिकता में होता है। यह सभी गुण जिसके पास अधिकता में रहते हैं वह अधिप है अर्थात् वह इन गुणों की रक्षा करता है।

३. **पतिः (पुं०)**—रक्षा करता है इसलिए पति है।
४. **स्वामिन् (पुं०)**(प्र०ए० में स्वामी)—शोभा को प्राप्त होता है इसलिए स्वामी है।
५. **नाथः (पुं०)**—जो दुष्टों का स्वामी होता है वह नाथ है।
६. **परिवृढः (पुं०)**—जो चारों ओर से अपना बल(सेना आदि) बढ़ाता है, वह परिवृढ है।
७. **प्रभुः (पुं०)**—शक्तिमान होता है, समर्थ होता है, इसलिए प्रभु है।
८. **ईश्वरः (पुं०)**—ऐश्वर्यवान होता है, इसलिए ईश्वर है।
९. **विभुः (पुं०)**—सबको देखता है, जानता है इसलिए विभु है।
१०. **ईशानः (पुं०)**—सृष्टि करना, बनाये रखना और प्रलय करने में समर्थ होता है इसलिए ईशान है।
११. **भर्तृ (पुं० एकव० में भर्ता)**—आश्रित जनों का पालन-पोषण करता है इसलिए भर्ता है।
१२. **इन्द्रः (पुं०)**—परम ऐश्वर्य से युक्त रहता है, क्रीड़ा करता है इसलिए इन्द्र है।
१३. **इनः (पुं०)**—सर्वत्र जाता है इसलिए इन है।
१४. **ईशिता (पुं०)**—पूजा-सम्मान को प्राप्त है इसलिए ईशिता है।

वृक्ष के नाम

श्लोकार्थ—अनोकह, तरु, शाखी, विटपी, फलिन, नग, द्रुम, अङ्घ्रिप, फलेग्राही, पादप, अग और वनस्पति ये वृक्ष के नाम हैं॥११॥

द्वादश वृक्षे। अनसः शकटस्य अकं गतिं हन्तीति **अनोकहः**। ओकहप्रत्ययेन वा **अनोकहः**। तरन्त्यनेनातपं **तरुः।** ''भृमृतृचरित्सरितनिमस्जिशीङ्भ्य उः।'' शाखाः सन्त्यस्य **शाखी**। विटपो विस्तारोऽस्त्यस्य **विटपी।** फलानि सन्त्यस्य **फलिनः**। ''फलवर्हाभ्यामिनच्।'' न गच्छतीति **नगः**। ''डोऽसंज्ञायामपि''। द्रवति वृद्धिं गच्छति अथवा द्रुर्वृक्षैकदेशोऽस्यास्तीति **द्रुमः**। अङ्घ्रिभिश्चरणैः पिबति पाति वा **अङ्घ्रिपः।** अङ्ग्रिपश्च। फलानि गृह्णातीति **फलेग्राही**। अभिधानाद्दीर्घः। ''फलमलरजःसुग्रहेः।'' पादैः पिबति पानीयं **पादपः**। न गच्छतीत्यगः। ''नगस्याऽप्राणिनि वा'' विकल्पेन नकारलोपः। वनस्य पतिः **वनस्पतिः**। पारस्करादित्वात्सुट्। महीरुहः, कुटः, शालः, पलाशी, द्रुः, वृक्षः, कुजः, विष्टरः, अगश्चापि।

तत्पर्य्यायचरो ज्ञेयो हरिर्वलिमुखः कपिः।
वानरः प्लवगश्चैव गोलाङ्गूलोऽथ मर्कटः ॥१२॥

भाष्यार्थ—बारह वृक्ष के नाम हैं।

१. अनोकहः (पुं०)—अनस् शकट (गाड़ी) को कहते हैं। उस गाड़ी की गति जो रोकता है इसलिए अनोकह है।

२. तरुः (पुं०)—जिससे आतप अर्थात् सूर्य की गर्मी दूर होती है इसलिए तरु है।

३. शाखिन् (पुं० एकव० में शाखी)—शाखाएँ इसके होती हैं इसलिए शाखी है।

४. विटपिन् (पुं० एकव० में विटपी)—विटप अर्थात् विस्तार, फैलाव इसका होता है इसलिए विटपी है।

५. फलिन (पुं० बहुव० में फलिनः)—इसके फल होते हैं, इसलिए फलिन है।

६. नगः (पुं०)—चलता नहीं है, स्थिर रहता है इसलिए नग है।

७. द्रुमः (पुं०)—वृद्धि को प्राप्त करता है, बढ़ता रहता है इसलिए द्रुम है। द्रुः वृक्ष का एक भाग अथवा पौधा कहलाता है। वह पौधा इसके होता है इसलिए द्रुम है।

८. अङ्घ्रिपः (पुं०)—अङ्घ्रि चरण को कहते हैं। चरण अर्थात् वृक्ष का अधोभाग। जिससे वह जल आदि पीता है और पूरे वृक्ष को पोषण देकर उसकी रक्षा करता है, इसलिए अङ्घ्रिप है। एक नाम अङ्ग्रिप भी है।

९. फलेग्राहिन् (पुं० एकव० फलेग्राही)—फलों को ग्रहण करता है अर्थात् रखता है इसलिए फलेग्राही है।

१०. पादपः (पुं०)—अपने पाद अर्थात् जड़ों से जल पीता है, इसलिए पादप है।

११.अग (पुं.)—गमन नहीं करता है, स्थिर रहता है, इसलिए अग है।

१२. वनस्पतिः (पुं०)—वन का पति वनस्पति है।

महीरुह, कुट, शाल आदि भी वृक्ष के नाम हैं देखें भाष्य।

बन्दर के नाम

श्लोकार्थ—वृक्ष के नाम के अन्त में 'चर' जोड़ देने से बन्दर के नाम बन जाते हैं। जैसे अनोकहचर आदि। हरि, वलिमुख, कपि, वानर, प्लवग, गोलांगूल और मर्कट (पुं०) ये वानर के नाम हैं ॥१२॥

एकोनविंशति नामानि हरौ। अनोकहचरः, तरुचरः, शाखिचरः, विटपिचरः, फलिनचरः, नगचरः, द्रुमचरः, अङ्घ्रिपचरः, फलेग्राहिचरः, पादपचरः, अगचरः, वनस्पतिचरः। इत्यादिद्वादशनामानि मर्कटस्य ज्ञेयानि। हरतीति **हरिः**। ''इः सर्वधातुभ्यः।'' वलयो मुखेऽस्य **वलिमुखः**। कम्पते वायुना शरीरे **कपिः**। ''अंहिकम्प्योर्न लोपश्च।'' आभ्यां किः प्रत्ययो भवति नलोश्च। वनं वनति सम्भजते **वानरः** नरोऽपि। प्लवेन उत्फालेन गच्छति **प्लवगः**। ''डोऽसंज्ञायामपि'' च। गां भूमिं लङ्गतीति **गोलाङ्गूलम्**। गोलाङ्गूलमत्यासौ गोलाङ्गूलः उणादित्वात् ''लंगे दीर्घश्च''। ''मृङ् प्राणत्यागे।'' म्रियते **मर्कटः**। ''जटा मर्कटौ'' एतावटप्रत्ययान्तौ निपात्येते। वनौकाः। प्लवङ्गमः। कीशः। शाखामृगः।

विपिनं गहनं कक्षमरण्यं काननं वनम्।
कान्तारमटवी दुर्गं तच्चरः स्याद् वनेचरः ॥१३॥

नव वने। वेप्यते कम्प्यते भयेनात्र **विपिनम्**। ''वेपितुह्योर्ह्रस्वश्च'' इतीनच्। उणादौ उप्यते। ''वृजिनाऽजिनेरिणविपिनतुहिनमहिनानि।'' एतानि इनप्रत्ययान्तानि निपात्यन्ते। गाह्यते मृगादिभि**र्गहनम्**।

भाष्यार्थ—उन्नीस (१९) नाम बन्दर के हैं। अनोकहचर आदि बारह नाम मर्कट के बन जाते हैं। देखें भाष्य।

१. **हरिः** (पुं०)—हरण करता है, चुराता है इसलिए बन्दर को हरि कहते हैं।

२. **वलिमुखः** (पुं०)—मुख में वलय(घुमाव) होता है इसलिए उसे वलिमुख कहते हैं।

३. **कपिः** (पुं०)—हवा से जिसके शरीर में कम्पन होता है, इसलिए कपि है।

४. **वानरः** (पुं०)—वन में रहता है, वन का ही सेवन करता है इसलिए वानर है। नर भी कहते हैं।

५. **प्लवगः** (पुं०)—उछल कूंद कर चलता है, इसलिए प्लवग है।

६. **गोलाङ्गूलः** (पुं०)—भूमि पर लगती है इसलिए पूंछ को गोलाङ्गूल कहते हैं। यह पूंछ इसके होती है इसलिए बन्दर को गोलाङ्गूल कहते हैं।

७. **मर्कटः** (पुं०)—लोगों के द्वारा मारा जाता है, भगाया जाता है, इसलिए मर्कट है। निपात सिद्ध यह शब्द है।

इसके अतिरिक्त वनौका आदि भी बन्दर के नाम हैं। देखें भाष्य।

जंगल और भील के नाम

श्लोकार्थ—विपिन, गहन, कक्ष, अरण्य, कानन, वन, कान्तार, अटवी और दुर्ग ये वन के नाम हैं। इन नामों में 'चर' शब्द जोड़ देने पर शवर के नाम हो जाते हैं ॥१३॥

भाष्यार्थ—नौ शब्द वन के वाचक हैं।

१. **विपिनम्** (नपुं०)—इसमें रहकर लोग भय से कांप जाते हैं इसलिए विपिन है।

२. **गहनम्** (नपुं०, पुं०)—मृग आदि वन्य पशु इसमें रहते हैं इसलिए गहन कहलाता है। दोनों

उभयम्। कषति घर्षति **कक्षम्**। अर्यते गम्यते श्वापदैः **अरण्यम्**। प्रतिभ्राम्यन्ति अत्र वा **अरण्यम्**। ''अर्तेरन्यः'' अस्मादन्यः प्रत्ययो भवति। उभयम्। कन्यते गम्यतेऽस्मिन् **काननम्**। वन्यते सेव्यते **वनम्**। कान्तम् जलान्तम् गच्छति इच्छति वा **कान्तारम्**। अटन्त्यस्यामटविः। स्त्रियामीः। **अटवी**। दुःखेन महता कष्टेन गम्यते **दुर्गम्**। नानाऽर्थे। सत्रम्, हव्यम्, दावम्, अरण्यानी, फलम् (अफलम्)।

चरशब्देन युक्ते शवरस्य नव नामानि। विपिनचरः, गहनचरः, कक्षचरः, अरण्यचरः, काननचरः, वनचरः, कान्तारचरः, अटवीचरः, दुर्गचरः।

पुलिन्दः शवरो दस्युर्निषादो व्याधलुब्धकौ।
धानुष्कोऽथ किरातश्च सोऽरण्यानीचरः स्मृतः॥ १४॥

पोलति भ्रमति महत्त्वं याति गच्छति **पुलिन्दः**। पुलीन्दश्च। शवति निर्दयत्वं गच्छतीति **शवरः**।

लिंगों (नपुं०, पुं०) में यह शब्द है।

३. कक्षम् (नपुं०)—कसा रहता है, घर्षण होता है इसलिए कक्ष है अर्थात् घना होने के कारण जहाँ सर्वत्र कषाव दिखता है और परस्पर घर्षण होता है इसलिए कक्ष है।

४. अरण्यम् (नपुं०, पुं०)—श्वापद (सिंह आदि जंगली जानवर) के द्वारा ही जो जाना जाता है अर्थात् वहाँ के रास्ते जंगली पशु ही जानते हैं, उसमें चलते हैं इसलिए अरण्य है अथवा लोग रास्ता भूलने के कारण बार-बार भ्रमण करते रहते हैं इसलिए अरण्य है। दोनों लिंगों में यह शब्द है।

५. काननम् (नपुं०)—इसमें चला जाता है, घूमा जाता है इसलिए कानन है।

६. वनम् (नपुं०)—सेवन किया जाता है अर्थात् पशु पक्षी जिसमें रहते हैं इसलिए वन है।

७. कान्तारम् (नपुं०)—यहाँ जल अन्त में मिलता है अथवा इसमें घूमने वाला जल की इच्छा करने लगता है इसलिए कान्तार है।

८. अटविः, अटवी (स्त्री०)—इसमें वन्य पशु घूमते हैं इसलिए अटवी है।

९. दुर्गम् (नपुं०)—दुःख से अर्थात् बड़े कष्ट से इसमें से गुजरा जाता है या पार लगाया जाता है इसलिए दुर्ग है।

इसके अतिरिक्त सत्र, हव्य, दाव, अरण्यानी, फल शब्द भी वन के नाम हैं।

इस वन में चर शब्द लगा देने से विपिनचर आदि नौ नाम शबर (भील) के बन जाते हैं। नाम के लिए देखें भाष्य।

भील के नाम

श्लोकार्थ—पुलिन्द, शवर, दस्यु, निषाद, व्याध, लुब्धक, धानुष्क, किरात, अरण्यानीचर यह भील के नाम हैं ॥१४॥

भाष्यार्थ—१. पुलिन्दः, पुलीन्दः (पुं०)—वन में भ्रमण करता है और महत्त्व को अर्थात् स्वामित्व को पाता है इसलिए पुलिन्द है। पुलीन्द नाम भी है।

तालव्यः। शवति अरण्यं शवरः। दस्यति अन्यमुपक्षिणोति **दस्युः**। ''जनिमनिदसिभ्यो युः।'' एभ्यो युः प्रत्ययो भवति। निषीदति पापकर्मात्र **निषादः**। निषदश्च। वा ज्वलादिदुनीभुवो णः। ''व्यध ताडने'' व्यध विध्यतीति **व्याधः**। ''दिहि लिहिश्लिषिश्वसिविध्यतीण्श्यातां च।'' एषां णो भवति। लुभ्यते गृध्यते मांसे **लुब्धः**। स्वार्थे कः **लुब्धकः** । धनुषा सह वर्त्तते इति **धानुष्कः**। किरति शरान् **किरातः**। अरण्यस्य अरण्यानी (तत्र) चरतीति **अरण्यानीचरः**। इन्द्र वरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमयमारण्ययवयवनमातुलाचार्य्याणामानुक् ईश्च। अरण्यानीति।

वार्वारि कं पयोऽम्भोऽम्बु पाथोऽर्णः सलिलं जलम्।
सरं वनं कुशं नीरं तोयं जीवनमब्विषम् ॥१५॥

अष्टादश पानीये। वारयति तृषामिदम् **वारि**, वृणोति वा **वारि**। ''शृवसिवपिराजिहबृहनिनभेरिञ्।'' एभ्य इञ् प्रत्ययो भवति। ञकार इञ्वद्भावार्थः। रान्तम् **वार्**। स्त्रीक्लीबे। काम्यते इष्यते **कम्**, कायतीति

---

२. शवरः (पुं०)—'शवति' अर्थात् निर्दयपने को प्राप्त होता है इसलिए शवर है। अर्थात् जंगली पशु का घात कर देते हैं इसलिए निर्दयी होने के कारण शवर हैं।

३. दस्युः (पुं०)—अन्य को लूटता है, मारता है इसलिए दस्यु है।

४. निषादः, निषदः (पुं०)—पाप कर्म वाले जीव इसमें रहते हैं इसलिए भील निषाद कहलाते हैं।

५. व्याधः (पुं०)—'व्यध' धातु ताड़न अर्थ में हैं। भेद देता है, पीड़ा पहुँचाता है इसलिए व्याध है अर्थात् भील जंगली पशुओं को बाणों से बींध देता है इसलिए व्याध कहलाता है।

६. लुब्धः, लुब्धकः (पुं०)—मांस खाने में लुब्ध रहता है, मांस में गृद्धता रखता है इसलिए लुब्ध है। स्वार्थ में 'क' प्रत्यय लग जाने से 'लुब्धक' बन जाता है।

७. धानुष्कः (पुं०)—धनुष के साथ रहता है इसलिए धानुष्क है।

८. किरातः (पुं०)—बाणों को फेंकता है इसलिए किरात है।

९. अरण्यानीचरः (पुं०)—अरण्य को ही अरण्यानी कहते हैं। उसमें जो रहता है, घूमता है वह अरण्यानीचर है। अरण्य में 'आनुक' प्रत्यय लगाकर 'ई' लगाने से अरण्यानी बनता है।

जल के नाम

श्लोकार्थ—वार् वारि, क, पय, अम्भस्, अम्बु, पाथ, अर्ण, सलिल, जल, सर, वन, कुश, नीर, तोय, जीवन, अप् और विष ये जल के नाम हैं ॥१५॥

भाष्यार्थ—अठारह जल के नाम हैं।

१. वारि (नपुं०)—तृषा (प्यास) को दूर करता है इसलिए वारि है अथवा लोग जिसका सेवन वरण करते हैं इसलिए वारि है।

२. रान्त 'वार्' शब्द (स्त्री०, नपुं०) में हैं।

३. कम् (नपुं०)—लोग जिसे चाहते हैं इसलिए कम् कहते हैं।

(वा)।''कायतेर्डतिडमौ'' प्रत्ययौ भवतः। पीयते पयते वा **पयः**।''पीङ् पाने।'' '' सर्व धातुभ्योऽसुन्।'' अमति गच्छति स्वादुत्वं सान्तम् **अम्भस्।** ''अम गतौ।'' ''अमे र्म्भोऽन्तश्च।'' अकार उच्चारणार्थः। ''अबि शब्दे'' ''**अम्बु**'' इति सौत्रो वा ''सेवायाम्।'' अम्ब्यते तृष्णार्तैरि**त्यम्बु**।''अम्बिकम्बिभ्यामुः।'' आभ्यामुः प्रत्ययो भवति। पीयते पाति वा **पाथः**। ''रमिकासिकुषिपातृवचिरिचिसिचिगुभ्य- स्थक्।'' एभ्यस्थक् प्रत्ययो भवति। को यण्वद् भावार्थः। ऋणोत्यर्णः। गम्यते स्नानपानार्थैः सान्तम् **अर्णस्**। सरति गच्छति **सलिलम्।** उणादौ ''षच सेचने।'' ''धात्वादेः षः सः।''''सचते इति **सलिलम्।**'' ''सचेर्लिलश्च चस्य लुक्।'' सचेर्लिलः प्रत्ययो भवति चस्य लुक् च। जडति नीचं गच्छति **जलम्**। जडं च। शृणाति हिनस्ति तृष्णाम् इति **शरम्**। वन्यते सेव्यते एनत् **वनम्**। कोशते **कुशम्।** प्राणिचेष्टां वृद्धिं नयतीति **नीरम्।** मीयते हिनस्ति तृषां मीरम् च। तुदति तृषाम् **तोयम्**।''तुः'' सौत्र आवरणार्थो वा। जीव्यतेऽनेन **जीवनम्**। जीवनीयम् च। आप्नुवन्ति समुद्रमि**त्यापः**। आप्नोतेः क्विप् प्रत्ययो भवति। ह्रस्वश्च। अप् स्त्रियां बह्वर्थः।

---

४. पयस् (नपुं॰)—पिया जाता है अथवा तरल होता है इसलिए पय है।

५. अम्भस् (नपुं॰)—स्वादुपने को प्राप्त है इसलिए अम्भस् है।

६. अम्बु (पुं॰)—तृष्णा-प्यास से दुःखी लोगों से इसका सेवन होता है अथवा उनसे पानी मांगा जाता है इसलिए अम्बु है।

७. पाथः(पु॰)—पिया जाता है अथवा रक्षा करता है इसलिए पाथ है अर्थात् इसे पीने से जन्तु की प्राण रक्षा होती है। सकारान्त पाथस्(नपुं.) शब्द भी पाया जाता है।

८. अर्णस् (नपुं॰)—नहाने और पीने के इच्छुक लोग इसे जानते हैं इसलिए अर्णस् है।

९. सलिलम् (नपुं॰)—चलता है, बहता है इसलिए सलिल है या नीचे की ओर बहता है इसलिए सलिल है।

१०. जलम् (नपुं॰)—जड़ की ओर, नीचे की ओर जाता है इसलिए जल है। जडम् भी कहते हैं।

११. शरम् (नपुं॰)—तृष्णा को नष्ट करता है इसलिए शर है।

१२. वनम् (नपुं॰)—सेवन किया जाता है इसलिए वन है।

१३. कुशम् (नपुं॰)—तरल होता है इसलिए वह कुश-जल है।

१४. नीरम् (नपुं॰)—प्राणियों की चेष्टा को बढ़ाता है इसलिए नीर है अर्थात् इसे पीते प्राणी की चेष्टाएँ होने लगती हैं इसके अभाव में निश्चेष्ट हो जाता है। तृषा/प्यास को नष्ट करता है इसलिए नीर कहते हैं। 'नीरम्' नपुं॰ में है।

१५. तोयम् (नपुं॰)—तृषा को दूर करता है, इसलिए तोय है।

१६. जीवनम् (नपुं॰)—इससे प्राणी जीता है इसलिए जीवन है। 'जीवनीयम्' यह शब्द भी है।

१७. आपः (स्त्री॰, बहुव॰)—समुद्र को प्राप्त करता है इसलिए आप है।

क्वचित् एकव॰ नपुं॰ में भी है।

क्व-चिदेकत्वम्। क्लीबत्वम्। अपशब्दो बहुवचनान्तः। ''अपश्च'' इति घुटि: दीर्घः। आपः। अघुट्स्वरत्वात् शसादेर्न दीर्घः। अपः। ''अपां भेदः।'' इति विभक्तिभे पस्य दः। अद्भिः। अद्भ्यः। अपाम्। अप्सु। ''वर्गादेः शषसेषु द्वितीयो वा।'' अफ्सु। अपसु। आमन्त्रणे- हे आपः। वेवेष्टि देहं शैत्येन व्याप्नोतीती **विषम्**। उभयम्। घनरसः, पुष्करम्, मेघपुष्पम्, पानीयम्, उदकम्, क्षीरम्, भुवनम्, दकम्, कमलम्, कीलालम्, अमृतम्, कबन्धम्, सर्वतोमुखम्, आनर्त इति नानार्थे।

तत्पर्य्यायचरो मत्स्यस्तत्पर्य्यायप्रदो घनः।
तत्पर्य्यायोद्भवं पद्मं तत्पर्यायधिरम्बुधिः ॥१६॥

तस्य पर्य्यायस्तत्पर्य्यायः, तत्परं चरशब्दे प्रयुज्यमाने मत्स्यनामानि भवन्ति। वार्चरः, वारिचरः, कञ्चरः, पयश्चरः, अम्भश्चरः, अम्बुचरः, पाथश्चरः, अर्णश्चरः, सलिलचरः, जलचरः, शरचरः, वनचरः, कुशचरः, नीरचरः, तोयचरः, जीवनचरः, अप्चरः, विषचरः। प्रदप्रयोगे वारिपर्यायशब्दाग्रे घनस्य नामानि भवन्ति।

वार्प्रदः, वारिप्रदः, कम्प्रदः, पयःप्रदः, अम्भःप्रदः, अम्बुप्रदः, पाथःप्रदः, अर्णःप्रदः, सलिलप्रदः, जलप्रदः, शरप्रदः, वनप्रदः, कुशप्रदः, नीरप्रदः, तोयप्रदः, जीवनप्रदः, अप्प्रदः, विषप्रदः। इत्यादीनि घननामानि। तत्पर्य्यायोद्भवं पद्मम्। वारिपर्य्यायशब्दाग्रे उद्भवं प्रयुज्ये उद्भवशब्दप्रयोगे कमलनामानि भवन्ति। वारुद्भवम्, वार्युद्भवम्, कमुद्भवम्, पयउद्भवम्, अम्भउद्भवम्, अम्बूद्भवम्, पाथउद्भवम्, अर्णउद्भवम्, सलिलोद्भवम्,

---

इसके रूप बहुवचन में इस प्रकार हैं—आपः (प्र० ब०), अपः (द्वि.ब.), अद्भिः (तृ० ब०), अद्भ्यः (च० ब०), अद्भ्यः (पं० ब०), अपाम् (ष० ब०), अप्सु (स० ब०), हे आपः (आमन्त्रणे)।

१८. विषम् (नपुं०),**विषः** (पुं०)—शरीर को शीत से-ठण्डक से व्याप्त कर लेता है इसलिए विष है। दोनों (नपुं०, पुं०) लिंग में है।

इसके अलावा घनरस, पुष्कर आदि शब्द भी जल के लिए हैं। देखें भाष्य।

मछली, मेघ, कमल और समुद्र के नाम

श्लोकार्थ—जल के पर्यायवाची शब्दों में 'चर' जोड़ने से मछली के नाम, 'प्रद' जोड़ने से मेघ के नाम, 'उद्भव' जोड़ने से कमल के नाम, 'धिः' जोड़ देने से समुद्र के नाम बन जाते हैं ॥१६॥

भाष्यार्थ—जल वाचक शब्द में चर लगा देने पर मछली के नाम बन जाते हैं—वार्चर, वारिचर, कञ्चर, पयश्चर, अम्भश्चर, अम्बुचर, पाथश्चर, अर्णश्चर, सलिलचर, जलचर, शरचर, वनचर, कुशचर, नीरचर, तोयचर, जीवनचर, अप्चर, विषचर।

'प्रद' शब्द लगा देने से 'घन' के नाम बन जाते हैं—वार्प्रद, वारिप्रद, कम्प्रद, पयःप्रद, अम्भःप्रद, अम्बुप्रद, पाथःप्रद, अर्णःप्रद, सलिलप्रद, जलप्रद, शरप्रद, वनप्रद, कुशप्रद, नीरप्रद, तोयप्रद, जीवनप्रद, अप्प्रद, विषप्रद ये घन के नाम हैं। पर्यायवाची शब्दों में 'उद्भव' जोड़ देने पर कमल के नाम बन जाते हैं—वारुद्भव, वार्युद्भव, कमुद्भव, पयउद्भव, अम्भउद्भव, अम्बूद्भव, पाथउद्भव, अर्णउद्भव, सलिलोद्भव, जलोद्भव, शरोद्भव, वनोद्भव, कुशोद्भव, नीरोद्भव, तोयोद्भव,

जलोद्भवम्, शरोद्भवम्, वनोद्भवम्, कुशोद्भवम्, नीरोद्भवम्, तोयोद्भवम्, जीवनोद्भवम्, अबुद्भवम्, विषोद्भवम्। **तत्पर्य्यायधिरम्बुधिः**। वाः शब्दा (शब्दपर्याया) ग्रे धिप्रयुज्ये धिशब्दप्रयोगे अम्बुधिनामानि ज्ञेयानि। वार्धिः, वारिधिः, कन्धिः, पयोधिः, अम्भोधिः, अम्बुधिः, पाथोधिः, अर्णोधिः, सलिलधिः, जलधिः, शरधिः, वनधिः, कुशधिः, नीरधिः, तोयधिः, जीवनधिः, अब्धिः, विषधिः।

पृथुरोमा षडक्षीणो यादो वैसारिणो झषः।
विसारी शफरी मीनः पाठीनो (ऽ) निमिषस्तिमिः ॥१७॥

एकादश मत्स्ये। पृथूनि विस्तीर्णानि रोमाण्यस्य **पृथुरोमा**। षट् अक्षीणि स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोत्र-मनांसि यस्य सः **षडक्षीणः**। याति गच्छति जले, **यादः**। विसरति ''ग्रहादेर्णिन्'' **विसारी** मत्स्य इति। स्वार्थेऽण्। **वैसारिणः**। झषति जन्तून् हिनस्ति **झषः**। ''सृगतौ''। सृशृऋगतौ वा। सृ विपूर्वा० विसरति विससर्त्ति वा इत्येवंशीलः, **विसारी**।''विप्रतिभ्यामाङः सत्तेर्णिन् प्रत्ययः।'' अस्यो० (स्य) वृद्धिः। **विसारिन्** इति जाते सिः।''इन्हन् [पूर्ववत्] (पूषार्यम्णां शौ च)''। शफिति शफरः। शफाः (न्) त्रायन्ते (राति) शीघ्रगतित्वाच्**छफरी**। मीयते हिंस्यतेऽन्योऽन्यतः, **मीनः**। बहुद्रंष्ट्रत्वात् पाठयति भक्ष्यत्वेन पाटयते वा

जीवनोद्भव, अबुद्भव, विषोद्भव । जल के पर्यायवाची शब्दों में 'धि' शब्द जोड़ देने पर समुद्र के नाम बन जाते हैं—वार्धि, वारिधि, कन्धि, पयोधि, अम्भोधि, अम्बुधि, पाथोधि, अर्णोधि, सलिलधि, जलधि, शरधि, वनधि, कुशधि, नीरधि, तोयधि, जीवनधि, अब्धि, विषधि।

मछली के नाम

श्लोकार्थ—पृथुरोमा, षडक्षीण, याद, वैसारिण, झष, विसारी, शफरी, मीन, पाठीन, अनिमिष और तिमि यह मछली के नाम हैं ॥१७॥

भाष्यार्थ—ग्यारह शब्द मछली के पर्यायवाची हैं।

१. **पृथुरोमन्** (पुं०)—मछली के रोम बहुत विस्तीर्ण अर्थात् फैले हुए रहते हैं इसलिए पृथुरोमा है।

२. **षडक्षीण** (पुं०)—स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र और मन यह छह इन्द्रियाँ इसके होने से षडक्षीण है।

३. **यादस्** (नपुं०)—जल में चलती है इसलिए यादः है।

४. **वैसारिणः** (पुं.)—विसारिन् शब्द से स्वार्थ में अण् प्रत्यय लगाने से वैसारिण बनता है।

५. **झषः** (पुं०)—जलीय जन्तुओं की हिंसा करती है इसलिए झष है।

६. **विसारिन्** (पुं०)—विशेष रूप से चलती है, दौड़ती है इसलिए विसारी है।

७. **शफरी** ()-शीघ्र गति वाली होने से शफरी कहलाती है।

८. **मीनः** (पुं०)—अन्य मछली अन्य की हिंसा करती है अर्थात् एक दूसरे से मरण को प्राप्त होने से मीन है।

पाठीनः। निमिषति परस्परं हिनस्ति हन्तीति वा **निमिषः**। ''नाम्युपध (धात्) पृकृगृज्ञां कः''। तिम्यति जलेनार्द्रो भवति **तिमिः**। मत्स्यः, अण्डजः, शकली, विसारः, जलचरः, शल्की।

घनाघनो घनो मेघो जीमूतोऽभ्रं बलाहकः।
पर्जन्यो मिहिरो नभ्राट्शम्पा सौदामि (म) नी तडित्॥ १८॥

नव मेघे। हन हिंसागत्योः। हन्तीति **घनाघनः**। ''अच् घनाघनः'' इति सूत्रेण घनाघन इति निपातः। अथवा ''चिक्लिदचक्नसचराचरचलाचलपतापतवदावदघनाघनपाटूपटा वा'' इति नामभूता संज्ञा रूढाः। तत्र क्लिदेः ''नाम्युपधात्'' कः। क्नसिचरिचिलिपतिवदिहनिपाटयतिभ्योऽच्प्रत्ययो द्विवचननिपातनं चेति। वाशब्दात् क्लिदः, क्नसः, चरः, चलः, पतः, वदः, घनः, पटः इत्यपि भवति। हन्यते वायुना **घनः।** ''मूर्तौ घनिश्च।'' अल्। मिह सेचने। मेहति सिञ्चति भूमिमिति **मेघः। ''अच्य** चाम् (दिभ्यश्च)'' अच्। नामिनो गुणः। ''न्यङ् कुः'' इत्येवमादीनां चजोः कगौ भवतः। हश्च (हस्य च) घो भवति। जीवनस्य जलस्य मूतः पुटबन्ध इति निरुक्त्या **जीमूतः**। जीवन्त्यनेन भूतानि वा जीमूतः। जीव प्राणने। अभ्रन्त्यपो राति वा **अभ्रम्।** अभ्र

---

९. **पाठीनः** (पुं०)—बड़ी दाढ़ वाली होने से अन्य को भक्षण कर लेती है इसलिए पाठीन है।

१०. **निमिषः** (पुं०)—आपस में एक दूसरे की हिंसा करती हैं इसलिए निमिष है।

११. **तिमिः** (पुं०)—तिम्यति अर्थात् जल के कारण आर्द्र रहती है इसलिए तिमि है।

मत्स्य आदि भी मछली के नाम हैं। देखें भाष्य।

बादल, बिजली के नाम

श्लोकार्थ—घनाघन, घन, मेघ, जीमूत, अभ्र, बलाहक, पर्जन्य, मिहिर, नभ्राट् यह बादल के नाम हैं। शम्पा, सौदामिनी, तडित् यह बिजली के नाम हैं ॥१८॥

भाष्यार्थ—नौ बादल के नाम हैं।

१. **घनाघनः** (पुं०)—यह शब्द निपात सिद्ध है। हन धातु हिंसा और गति अर्थ में है। जिससे आपस में घात होता है इसलिए घनाघन है अथवा 'चिक्लिद...' आदि सूत्र से यह नाम वाली संज्ञा रूढ़ है, ऐसा समझना। 'क्नसिचरि...' से अच् प्रत्यय से द्विवचन में निपातन से 'घनाघन' सिद्ध होता है।

२. **घनः** (पुं०)—वायु से ताडित होता है इसलिए घन है।

३. **मेघः** (पुं०)—'मिह' धातु सिंचन अर्थ में है। भूमि का सिंचन करता है इसलिए मेघ कहलाता है।

४. **जीमूतः** (पुं०)—जीवन जल को कहते हैं। जल का मूत अर्थात् पुटबन्ध अर्थात् बन्ध कर रिसना। निरन्तर जल को बहाता है इसलिए जीमूत है अथवा 'जीव' धातु प्राण के अर्थ में है। इससे प्राणी जीवित रहते हैं इसलिए जीमूत है।

५. **अभ्रः** (पुं०)—इससे जल गिरता है अथवा यह जल लाता है इसलिए अभ्र है। जिससे तप भ्रष्ट नहीं होता है वह अभ्र है, इस प्रकार कोई कहते हैं अथवा सभी दिशाओं को व्याप्त करता है इसलिए अभ्र है। अभ्रम् यह नपुं० लिंग में भी है।

गत्यर्थः। न भ्रश्यति तपो यस्मादित्येके। आप्नोति सर्वा दिशो वा अभ्रं क्लीबे। बलाकादिभिर्हीयते **बलाहकः।** वारिवाहको वा। प्रवर्षति जलं **पर्जन्यः।** उणादौ ''पृजी सम्पर्के'' पृङ्क्ते पृणक्ति वा **पर्जन्यः**। ''पर्जन्यपुण्ये'' इति अन्यप्रत्ययान्तो निपात्यते। मेहति सिञ्चति विश्वं **मिहिरः**। महिरः मुहिरश्च। न भ्राजते न शोभते **नभ्राट्।** ''क्विब्भ्राजिपृधुर्विभासाम्'' एषां क्विब् भवति। अब्दः, स्तनयित्नुः, पयोधरः, धाराधरः, धूमयोनिः, तडित्वान्, वारिदः, अम्बुभृत्, मुदिरः, जलमुच्।

आकालिकी क्षणरुचिर्विद्युत् तत्पतिरम्बुदः।
निर्घातमशनिर्वज्रमुल्काशब्दं च योजयेत् ॥१९॥

षट् शम्पायाम्। शाम्यति शीघ्रं **शम्पा।** शम्बा च। शम्पिबति वा शम्पा। सुदाम्ना अद्रिणा एकदिक् **सौदामि (म) नी।** तेनेकदिगित्यण्। शोभनस्य दाम्नो बन्धनरज्जोरियं सदृशी **सौदामि (म) नी।** सौदाम्नी। सौदामिनी च। ताडयति **तडित्।** ताडयतेर्णिलुक्। ताडयति मेघं ताड्यतेऽसौ वेति तडित्। तान्तम्। आकलयति स्तोककालं रोचते वा **आकालिकी।** ''आङ् मर्य्यादाऽभिविध्योः।'' क्षणे क्षणे रोचते शालते **क्षणरुचिः।**

---

६. बलाहकः (पुं०)—बलाका (बगुला) आदि को चलाता है इसलिए बलाहक है अर्थात् बगुला आदि मेघों को देखते हुए नीचे चलते हैं अथवा 'वारिवाहकः' यह नाम भी है।

७. पर्जन्यः (पुं०)—जल की वर्षा करता है वह पर्जन्य है अथवा उणादि गण में 'पृजी सम्पर्के' धातु से सम्पर्क, मेल करता है अर्थात् अन्य बादलों से मिलकर बरसता है इसलिए पर्जन्य है। निपात से भी अन्य प्रत्ययान्त पर्जन्य बनता है।

८. मिहिरः (पुं०)—विश्व को सिंचित करता है इसलिए मिहिर है। महिर और मुहिर भी कहते हैं।

९. नभ्राट् (पुं०)—शोभित नहीं होता है इसलिए नभ्राट् है।

अब्द आदि शब्द भी बादल के हैं। देखें भाष्य।

श्लोकार्थ—आकालिकी, क्षणरुचि और विद्युत ये बिजली के नाम हैं। बिजली का स्वामी अम्बुद (बादल) है। निर्घात, अशनि, वज्र और उल्का ये वज्र के नाम हैं॥१९॥

भाष्यार्थ—छह बिजली के नाम हैं।

१. शम्पा, शम्बा (स्त्री०)—शीघ्र ही शमन हो जाती है अर्थात् विलीन हो जाती है शम्पा है। शम्बा भी कहते हैं अथवा शम्-सुख को पी लेती है इसलिए शम्पा है।

२. सौदामिनी (स्त्री०)—पर्वत के साथ एक दिशा में गिरती है इसलिए सौदामिनी है। सुशोभित पर्वत को बांधने की रज्जु के समान यह रहती है इसलिए सौदामिनी है। सौदाम्नी, सौदामनी भी कहते हैं।

३. तडित् (स्त्री०)—बादल को ताडित करता है अथवा जो ताडित होती है इसलिए तडित् है।

४. आकालिकी (स्त्री०)—थोड़े काल तक ही जो जानी जाती है अथवा शोभित होती है इसलिए आकालिकी है।

विद्योतते **विद्युत्**। चपला, क्षणिका, शतह्रदा, ह्रादिनी, अचिरांशुः, ऐरावती, चञ्चला, चटुला, दिश्या।

विद्युच्छब्दाग्रे पतिशब्दे प्रयुज्यमाने **अम्बुद**नामानि भवन्ति। शम्पापतिः, सौदामनीपतिः, तडित्पतिः, आकालिकीपतिः, क्षणरुचिपतिः, विद्युत्पतिः, निर्घातपतिः, अशनिपतिः, वज्रपतिः, उल्कापतिः इत्यादिमेघनामानि स्युः।

चत्वारो वज्रे। निर्हन्यतेऽनेनेति **निर्घातम्।** पर्वतादीनश्नाति, **अशनिः।**

''ऋतृसृधृञ्घम्यश्यविवृतिग्रहिभ्योऽनिः।'' एभ्योऽनिः प्रत्ययो भवति। ''टु उ स्फूर्जा वज्रनिर्घोषे'' स्फूर्जतीति **वज्रम्**। शूद्रादयः– ''शूद्रोग्रवज्रविप्रभद्रगौरभेरीराः'' एते रक् प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। पर्वतेष्वपि वजति **वज्रम्**। उषति ज्वलति **उल्का।** उल् इति सौत्रोऽयं धातुर्वा।

परिषत्कर्दमः पङ्कस् तज्जं तामरसं विदुः।
कमलं नलिनं पद्मं सरोजं सरसीरुहम् ॥२०॥

त्रयः कर्दमे। परि समन्ताद् भाराक्रान्तः सीदति गन्तुं न शक्नोतीति **परिषत्।** ''सत्सू द्विषद्रुहदुह-

---

५. क्षणरुचिः (स्त्री०)—क्षण-क्षण में रुचती है, क्षण-क्षण में जो अच्छी लगती है इसलिए क्षणरुचि है।

६. विद्युत् (स्त्री०)—प्रकाशित होती है इसलिए विद्युत् है।

चपला, क्षणिका आदि बिजली के नाम हैं। देखें भाष्य।

विद्युत् शब्द के आगे पति शब्द जोड़ देने पर अम्बुद के नाम बन जाते हैं। शम्पापतिः-आदि मेघ के नाम देखें भाष्य में।

वज्र के नाम

भाष्यार्थ—वज्र के चार नाम हैं।

१. निर्घातम् (नपुं०)—इससे घात होता है इसलिए निर्घात है।

२. अशनिः (पुं०)—पर्वत आदि को खा लेती है, नष्ट कर देती है, इसलिए अशनि है।

३. वज्रम् (नपुं०)—स्फूर्जा धातु वज्र का घोष करने में है। वज्र के समान घोष करता है इसलिए वज्र है। 'शूद्रादयः–' इस सूत्र से रक् प्रत्यय से निपात से यह शब्द सिद्ध होता है। पर्वतों पर भी गिरता है इसलिए भी वज्र है।

४. उल्का (स्त्री०)— ज्वलनशील है, जलती है इसलिए उल्का है।

कीचड़ और कमल के नाम

श्लोकार्थ—परिषत्, कर्दम, पङ्क ये कीचड़ के नाम हैं। उससे उत्पन्न होने वाले को कमल कहते हैं। तामरस, कमल, नलिन, पद्म, सरोज, सरसीरुह यह कमल के नाम हैं ॥२०॥

भाष्यार्थ—तीन कीचड़ के नाम हैं।

१. परिषत् (स्त्री०)—चारों ओर से भार के कारण आक्रान्त हो जाने से इसमें फसने से कष्ट होता

युजविदभिदच्छि-दजिनीराजामुपसर्गे'' एषामुपसर्गेऽनुपसर्गेऽपि नाम्युपधात्क्वि प्। कृणोति चेष्टां हिनस्तीति **कर्दम:**। ''पृष्ठथिचरिकर्दिम्योऽम:''। पञ्च्यते विस्तार्यते वर्षाकालेन **पङ्क:।** उभयम्। उणादौ 'पन च' पनायते पन्यते वा **पङ्क:**। ''पसिपनिभ्यां क:'' आभ्यां क: प्रत्ययो भवति। तथा चामरसिंह:-

''**निषद्वरस्तु जम्बाल: पङ्कोऽस्त्री शादकर्दमौ।**''

तस्मात् जम् उद्भवम् पङ्कजम्, कर्दमजम्, परिषज्जम् इत्यादीनि कमलनामानि भवन्ति।

दश कमलनामानि भवन्ति। ताम्यति जलं काङ्क्षति **तामरसम्।** अमरसिंहभाष्ये- ''ताम: प्रकर्षो रसोऽस्य **तामरसम्**। **तम:** प्रकर्षाऽथस्तारतम्यवत्।'' केन मस्तकेन मल्यते धार्यते **कमलम्**। श्रिया वासाऽर्थे काम्यते वा। पटिकमिमुशिकुशिभ्य: कल:। एभ्य: कल: प्रत्ययो भवति। कम्मलं च। नला: सन्त्यस्य **नलिनम्**। नलति आकर्षति श्रियं वा **नलिनम्।** ''पुलिनलितलिमलिद्रुहिभ्य: किन:''। नलं च पद्यते पाति लक्ष्मीरत्र **पद्मम्**। ''अर्तिघृहुसुधृक्षिणीपदभायास्तुभ्यो म:।'' उभयम्। सरसि तडागे जातम् **सरोजम्**। सरस्यां

है, इसमें चलना शक्य नहीं है इसलिए परिषत् है।

२. कर्दम: (पुं॰)—चेष्टा को जो रोक देता है इसलिए कर्दम है।

३. पङ्क:, पङ्कम् (पुं॰, नपुं॰)—वर्षाकाल के कारण फैल जाता है, चारों ओर मच जाता है, इसलिए पङ्क है। दोनों लिंग में यह शब्द है। उणादि गण में 'पन च' इस धातु से क: प्रत्यय होकर पङ्क शब्द बनता है।

अमरसिंह ने भी अमरकोष में कहा है-'निषद्वर, जम्बाल, पङ्क(पुं॰, नपुं॰), शाद, कर्दम ये कीचड़ के नाम हैं।'

अनेकार्थ कोष में—निषद्वर, जम्बाल, शाद, इचिकिल, चिकित्स ये नाम भी कीचड़ के हैं।

उससे उत्पन्न होने वाले कमल के नाम होते हैं। जैसे—पङ्कज, कर्दमज, परिषज्ज इत्यादि। सभी नपुं॰ लिंग में हैं।

भाष्यार्थ—दश कमल के नाम हैं।

१. तामरसम् (नपुं॰)—जल की कांक्षा करता है इसलिए तामरस है। अमरसिंह भाष्य में ताम उत्कृष्ट रस को कहा है। यह रस कमल के पास है इसलिए तामरस है।

२. कमलम् (नपुं॰)—कम् मस्तक को कहते हैं। मस्तक पर धारण किया जाता है इसलिए कमल है। लक्ष्मी का जिसमें वास है, अथवा लक्ष्मी से चाहा जाता है, वह कमल है। 'पटि---आदि' सूत्र से कम् में कल् प्रत्यय से कमल बनता है। कम्मलम् भी बनता है।

३. नलिनम् (नपुं॰)—इसके नल(नाल) होते हैं इसलिए नलिन होता है अथवा लक्ष्मी को आकर्षित करता है इसलिए नलिन है। नलम् भी कहते हैं।

४. पद्म:, पद्मम् (पुं॰, नपुं॰)—इसकी रक्षा की जाती है या लक्ष्मी इसमें शरण पाती है इसलिए पद्म है। दोनों लिंग में यह शब्द है।

५. सरोजम् (नपुं॰)—सर तालाब को कहते हैं। इसमें उत्पन्न होता है इसलिए सरोज है।

रोहति प्रादुर्भवति **सरसीरुहम्**।

खरदण्डं कोकनदं पुण्डरीकं महोत्पलम्।
इन्दीवरं चारविन्दं शतपत्रं च पुष्करम् ॥२१॥

खरञ्च तद्दण्डञ्च **खरदण्डम्।** कोकाश्चचक्रवाका नदन्त्यत्र **कोकनदम्**। क्लीबे। [रक्त] कुमुदम्। रक्तकमलञ्च। विशेषणम् [कुमुदकमलविशेषे]। पुणति माङ्गल्यात्वात्**पुण्डरीकम्**। मट (मुट) प्रमर्दने स्थाने। पुण्डिरित्येके। पुण्डति **पुण्डरीकम्**। भाष्यकर्तृमते पुण शोभे। पुणति जल्पति शोभां **पुण्डरीकः**। ''अनुनासिकान्ताड्डः'' अनुनासिकान्ताद्धातोर्डः प्रत्ययो भवति। महच्च तदुत्पलं च **महोत्पलम्**। तथा च हुलायुधः- ''पुण्डरीकं सिताम्बुजम्।''

विशेषमाह-

स्यादुत्पलं कुवलयमथ नीलाम्बुजन्म च।
इन्दीवरं च नीलेऽस्मिन् सिते कुमुदकैरवे ॥२२॥

सप्त नीलोत्पले। इन्दति शोभैश्वर्य प्राप्नोति **इन्दीवरम्**। अरान् राजीः विन्दति इति **अरविन्दम्**। विद्लृ

---

६. **सरसीरुहम्** (नपुं॰)—तालाब में उत्पन्न होता है इसलिए सरसीरुह है।

कमल के नाम

श्लोकार्थ—खरदण्ड, कोकनद, पुण्डरीक, महोत्पल, इन्दीवर, अरविन्द, शतपत्र और पुष्कर ये कमल के नाम हैं ॥२१॥

भाष्यार्थ—

७. **खरदण्डम्** (नपुं॰)—जिसका दण्ड(नाल) कठोर होता है इसलिए खरदण्ड है।

८. **कोकनदम्** (नपुं॰)—कोक चकवा को कहते हैं। वे यहाँ शब्द करते हैं, शोर करते हैं इसलिए कोकनद है। नपुं॰ लिंग में है। रक्तकुमुद, रक्तकमल भी इसके विशेषण हैं। कुमुदकमल विशेष है।

९. **पुण्डरीकम्** (नपुं॰)—मांगल्य स्वरूप होने से शोभित होता है इसलिए पुण्डरीक है। कोई 'पुण्डिः' भी कहते हैं। भाष्यकर्ता के अभिप्राय से 'शब्द' शोभा अर्थ में है। कहीं कहने अर्थ में भी—शोभा को कहता है, अर्थात् सुन्दरता बतलाता है वह पुण्डरीक है।

१०. **महोत्पलम्** (नपुं॰)—महान अर्थात् विशाल वह कमल है इसलिए महोत्पल है।

हलायुध कोश में कहा है—श्वेत कमल को पुण्डरीक कहते हैं।

श्लोकार्थ—उत्पल, कुवलय ये कमल के नाम हैं। नीलाम्बुजन्म, इन्दीवर यह विशेष नीलकमल के नाम हैं। कुमुद, कैरव श्वेत कमल के नाम हैं ॥२२॥

भाष्यार्थ—नीलकमल के सात नाम हैं—

१. **इन्दीवरम्** (नपुं॰)—शोभा ऐश्वर्य को प्राप्त है इसलिए इन्दीवर है। यहाँ सामान्य से नीलकमल में विशेष वृत्ति होने से इन्दीवर को नीलकमल के नाम में लिया है।

लाभे, विद् अरपूर्वः। अरान् विन्दतीति **अरविन्दः**। ''कर्मणि च विदः'' शप्रत्ययो भवति। इति परसूत्रम्। स्वमते-अन्यत्रापि चेति [कर्मण्यण्] अण् बाधकः। ''साहिसातिवेद्युदेजिचेति- धारिपारिलिपि(म्पि)विन्दां त्वनुपसर्गे'' एषामनुपसर्गे शो भवति। चक्रस्याऽवयवः **अरविन्दम्**। पिण्डी (पुण्डरीक) कमलेऽर्थे तु (अपि) **अरविन्दम्**। राजविशेषस्तु **अरविन्दः**। केचित्कमलेऽपि पुंस्त्वं मन्यन्ते। शतं पत्राण्यस्य **शतपत्रम्**। क्लीबे शोभां पोषयति पुष्यति वा **पुष्करम्**। शोभामुत्कर्षेण पलति गच्छतीत्यु**त्पलम्**। कौ वलते प्राणिति कुवलयम्। कुक्षितो बहिर्वलयः पत्रवेष्टनमस्येति श्रीभोजः।

नीलाम्बुजन्म। इन्दतीन्**दीवरम्।** कुवलय [दलनीलेति] सामान्यस्य [**नीले**] विशेषवृत्तिः। **अस्मिन्** सिते। रात्रौ विकासं करोति चन्द्रेण काम्यते वा कौ मोदते वा **कुमुदम्**। दान्तञ्च। के उदके जले रौति केरवो हंसः, तस्येदं प्रियं **कैरवम्**। क्लीबे।

तद्वती विसिनी ज्ञेया व्रततीर्वल्लरी लता।
वल्ली नामानि योज्यानि- वारिधिर्वर्ण्यतेऽधुना ॥२३॥

---

२. अरविन्दम् (नपुं०)—चक्र के आरे या रेखा, धारियों को दिखलाता है, इसलिए अरविन्द है। 'विदलृ' धातु लाभ अर्थ में है जिससे चक्र के आरे की तरह जो प्राप्त या उपलब्ध होता है इसलिए अरविन्द है। चक्र के अवयव होने से अरविन्द है। पुण्डरीक कमल के अर्थ में भी अरविन्द शब्द है। राजा विशेष भी अरविन्द है। कितने ही लोग कमल में भी पुंलिङ्ग मानते हैं।

३. शतपत्रम् (नपुं०)—सौ पत्ते इसके होते हैं इसलिए शतपत्र है।

४. पुष्करम् (नपुं०)—शोभा को बढ़ाता है अथवा पुष्ट करता है इसलिए पुष्कर है।

५. उत्पलम् (नपुं०)—इसकी शोभा उत्कृष्ट रूप से होती है इसलिए उत्पल है।

६. कुवलयम् (नपुं०)—'कु' पृथ्वी को कहते हैं। उस पर जीवित रहता है, श्वास लेता है इसलिए कुवलय है। इसकी कुक्षि, पेट, नाल से बाहर वलय होता है अर्थात् पत्तों से घिरा रहता है इसलिए उत्पल है, ऐसा श्री भोज ने कहा है।

७. नीलाम्बुजन्म (नपुं०)—नीलकमल का नाम।

९. कुमुदम् (नपुं०)—रात्रि में खिलता है, चन्द्रमा को चाहता है अथवा पृथ्वी पर खिलता है, हर्षित होता है इसलिए कुमुद है।

इसका दान्त नाम भी है।

१०. कैरवम् (नपुं०)—क जल को कहते हैं। उस जल में रोता है, शब्द करता है वह कैरव अर्थात् हंस कहलाता है। उस हंस को यह कमल प्रिय होने से कैरव कहलाता है।

कमलिनी और लता के नाम

श्लोकार्थ—कमल के नामों के अन्त में मतुप् प्रत्यय का स्त्रीलिङ्ग में 'वती' जोड़ देने पर विसिनी अर्थात् कमलिनी के नाम जानना। व्रतती, वल्लरी, लता, वल्ली के नाम हैं। अब समुद्र के नामों का वर्णन करते हैं ॥२३॥

तस्य कमलस्य पर्य्याये '**वती**' इति प्रयुज्यमाने कमलिनीनामानि भवन्ति। तामरसवती, कमलवती, नलिनवती, पद्मवती, सरोजवती, सरसीरुहवती, कोकनदवती, पुण्डरीकवती, महोत्पलवती, अरविन्दवती, शतपत्रवती।

दिनविकासिन्यामेकः। विसमस्त्यस्या **विसिनी**। नलिनी। पुटकिनी। मृणालिनी।

चतुर्व (चत्वारो व) ल्ल्यार्म्। वृणोतीति **व्रतती**। प्रकृष्टा ततिरस्या **व्रतती**:, व्रततिश्च। जपादित्वाद्वत्त्वम्। वल्लते **वल्लरी**। लाति ललति चित्तं वा **लता**। वल्लते वेष्टते **वल्ली**। वल्लादीः। वल्लिरिदन्तोऽपि। स्त्रियामीः। वल्ली। व्रातश्च। वीरुक् (ध्) गुल्मिनी प्रतानिनी शारिवा किर्मी च। वृक्षशाखायामपि।

अधुना इदानीं **वारिधिर्वर्ण्यते** कथ्यते। केन ? भाष्यकर्त्रा मुनिश्रीमदमरकीर्तिना।

साम्प्रतं समुद्रनामानि प्रारभ्यन्ते-

स्त्रोतस्विनी धुनी सिन्धुः स्त्रवन्ती निम्नगाऽपगा।
नदी नदो द्विरेफश्च सरिन्नामा तरङ्गिणी ॥२४॥

भाष्यार्थ—उन कमल के पर्यायवाची नामों में 'वती' यह प्रत्यय लगा देने पर कमलिनी के नाम होते हैं। तामरसवती, कमलवती नलिनवती, पद्मवती, सरोजवती, सरसीरुहवती, कोकनदवती, पुण्डरीकवती, महोत्पलवती, अरविन्दवती, शतपत्रवती।

एक **विसिनी** शब्द दिनविकासिनी कमलिनी के अर्थ में है। कमल की तन्तु (नाल) इसके होती है इसलिए विसिनी है। नलिनी, पुटकिनी, मृणालिनी भी इसी के नाम हैं।

वल्ली के चार नाम हैं।

व्रतती, व्रतती:, व्रतति: (स्त्री०)—वरण करती है, आलिंगन करती है इसलिए व्रतती है अर्थात् लता पौधे का आलिंगन करते हुए बढ़ती है इसलिए व्रतती है।

१. व्रतती: (स्त्री०)—इसका विस्तार बहुत रहता है इसलिए व्रतती है।

२. वल्लरी (स्त्री०)—धीरे-धीरे बढ़ती है, सरकती है इसलिए वल्लरी है।

३. लता (स्त्री०)—चित्त को खींचती है अथवा चित्त इसमें क्रीड़ा करता है इसलिए लता है।

४. वल्ली (स्त्री०)—बढ़ती है, वेष्टित करती है इसलिए वल्ली है। 'वल्लिः' शब्द भी बनता है।

व्रात, वीरुक् (या वीरुध्), गुल्मिनी, प्रतानिनी, शारिवा (सारिवा), किर्मी भी लता के नाम हैं। वृक्ष की शाखा में भी यह नाम प्रयुक्त होते हैं।

अब भाष्यकर्ता श्रीमान् मुनि अमरकीर्ति समुद्र का वर्णन करते हैं।

नदी के नाम

श्लोकार्थ—स्त्रोतस्विनी, धुनी, सिन्धु, स्त्रवन्ती, निम्नगा, आपगा, नदी, नद, द्विरेफ, सरित्, तरङ्गिणी ये नदी के नाम हैं ॥२४॥

एकादश नद्याम्। स्रोतः प्रवाहोऽस्त्यस्याः **स्रोतस्विनी**। धुनोति कम्पते **धुनिः**। स्त्रियामीः। **धुनी**। स्यन्दति जले चलति **सिन्धुः**। त्रिषु। ''स्यन्देः सम्प्रसारणं धश्च।'' तटेभ्यो जलं स्रवती **स्रवन्ती**। निम्नं गच्छति निम्नगा। आ समन्तादाप्नोति अद्भिरगति वा **आपगा**। आपेन वा गच्छति **आपगा**। नदत्यव्यक्तं शब्दं करोति **नदी**। नदति **नदः**। ''अच् पचादिभ्यश्च'' अच्। द्वौ रेफौ तटौ यस्य **द्विरेफः**। सरति समुद्रं गच्छति **सरित्**। तान्तम्। तरङ्गा सन्त्यस्यां **तरङ्गिणी**। तटिनी, निर्झरिणी, कूलङ्कषा, शेवलिनी, सरस्वती, समुद्रकान्ता, ह्लादिनी, स्रोतः, कर्षुः, कुल्या, द्वीपवती, रोधोवक्त्रा।

तत्पतिश्च भवत्यब्धिः,पारावारोऽमृतोद्भवः।
अपारवारकूपारौ रत्नमीनाऽभिधाऽकरः ॥२५॥

तस्या धुन्याः **पति**र्धुनीपतिरित्यादिसमुद्रनामानि भवन्ति। स्रोतस्विनीपतिः, धुनीपतिः, सिन्धुपतिः, स्रवन्तीपतिः, निम्नगापतिः, आपगापतिः, नदीपतिः, नदपतिः, द्विरेफपतिः, सरित्पतिः, तरङ्गिणीपतिः।

भाष्यार्थ—ग्यारह नदी के नाम हैं।

१. स्रोतस्विनी (स्त्री०)—स्रोत प्रवाह को कहते हैं। इसके स्रोत है इसलिए स्रोतस्विनी है।

२. धुनिः, धुनी (स्त्री०)—कम्पित करते हैं इसलिए धुनी है अर्थात् बहते समय बांस आदि के वृक्ष को हिलाती है इसलिए धुनी है।

३. सिन्धुः (पुं०, नपुं०, स्त्री०)—जल में अथवा जल के लिए बहती है, चलती है इसलिए सिन्धु है। तीनों लिंगों में यह शब्द है।

४. प्रवन्ती (स्त्री०)—किनारों से बहता है इसलिए स्रवन्ती है।

५. निम्नगा (स्त्री०)—नीचे की ओर जाती है इसलिए निम्नगा है।

६. आपगा (स्त्री०)—चारों ओर से जल से व्याप्त रहती है अथवा जल के साथ चलती है इसलिए आपगा है।

७. नदी (स्त्री०)—अस्पष्ट शब्द करती है इसलिए नदी है।

८. नदः (पुं०)—नाद करती है इसलिए नद है।

९. द्विरेफः (पुं०)—रेफ तट को कहते हैं। इसके दो तट होते हैं इसलिए द्विरेफ है।

१०. सरित् (स्त्री०)—दौड़ती है, समुद्र में जाती है इसलिए सरित् है।

११. तरङ्गिणी (स्त्री०)—इसकी तरंगें होती हैं इसलिए तरङ्गिणी है।

इसके अलावा तटिनी, निर्झरणी आदि शब्द भी हैं देखें भाष्य।

समुद्र के नाम

श्लोकार्थ—नदी का पति समुद्र है। पारावार, अमृतोद्भव, अपारवा, अकूपार, रत्नाकर, मीनाकर–समुद्र के नाम हैं ॥२५॥

भाष्यार्थ—उस धुनी का पति धुनीपतिः इत्यादि प्रकार से नदी के नामों के अन्त में 'पति' शब्द

समुद्रो वारिराशिश्च सरस्वान् सागरोऽर्णवः।
सीमोपकण्ठं तीरश्च पारं रोधोऽवधिस्तटम् ॥२६॥

नव समुद्रे। पारमावृणोति **पारावारः**। अमृतस्योद्भवः **अमृतोद्भवः**। अपारं वार् जलं यत्राऽसौ **अपारवाः**। न कुं पृणोति मर्यादापालनादकूपारः। हलायुधे- ''न कुं पृथिवीं **पिपर्त्ति** व्याप्नोतीति अकूपारः।'' अकूवारोऽपि। **रत्नमीन**शब्दयोरग्रे **आकरे** प्रयुज्यमाने समुद्रनामानि भवन्ति। रत्नाकरः, पृथुरोमाकरः, षडक्षीणाकरः, यादाकरः, वैसारिणाकरः, झषाकरः, विसार्य्याकरः, शफराकरः, मीनाकरः, पाठीनाकरः, निमिषाकरः, तिम्याकरः। 'उन्दी क्लेदने' सम्पूर्वः। समन्तादुनत्त्यस्मादिति **समुद्रः**। ''स्फायितञ्चिवञ्चि चशकिक्षिपिक्षुदिरुदिमदिमन्दि-चन्द्युन्दीन्दिभ्यो रक्'' ''अनिदनुबन्धानाम-गुणेऽनुषङ्गः''। तथा च हलायुधे-''मुदन्ति मिश्रीभवन्ति

जोड़ देने से समुद्र के नाम होते हैं—स्रोतस्विनीपति, धुनीपति, सिन्धुपति, प्रवन्तीपति, निम्नगापति, आपगापति, नदीपति, नदपति, द्विरेफपति, सरित्पति, तरङ्गिणीपति।

समुद्र के तथा तट के नाम

श्लोकार्थ—समुद्र, वारिराशि, सरस्वान्, सागर, अर्णव ये भी समुद्र के नाम हैं। सीमा, उपकण्ठ, तीर, पार, रोध, अवधि, तट-किनारे के नाम हैं ॥२६॥

भाष्यार्थ—नौ नाम समुद्र के हैं-

१. **पारावारः** (पुं॰)—दूसरे किनारे तक व्याप्त है इसलिए पारावार है।

२. **अमृतोद्भवः** (पुं॰)—अमृत की उत्पत्ति इससे होती है इसलिए अमृतोद्भव है।

३. **अपारवार्** (पुं॰ एकव॰ में अपारवाः)—अपार अर्थात् सीमातीत जल इसमें होता है इसलिए अपारवार् है।

४. **अकूपारः** (पुं॰)—अपनी मर्यादा का पालन करने से पृथ्वी का पालन नहीं करता है इसलिए अकूपार है। हलायुध कोश में पृथिवी को व्याप्त नहीं करता है अर्थात् पूरी पृथ्वी पर नहीं फैलता है इसलिए अकूपार है। 'अकूवारः' शब्द भी बनता है। रत्न और मीन शब्द के आगे 'आकर' जोड़ देने पर समुद्र के नाम हो जाते हैं। रत्नाकर, पृथुरोमाकर, षडक्षीणाकर, यादाकर, वैसारिणाकर, झषाकर, विसार्य्याकर, शफराकर, मीनाकर, पाठीनाकर, निमिषाकर, तिम्याकर।

५. **समुद्रः** (पुं॰)—इसके कारण चारों ओर वातावरण में नमी, आर्द्रता या तरावट रहती है इसलिए समुद्र है। सम् उपसर्ग पूर्वक 'उन्दी क्लेदने' धातु से यह शब्द बनता है।

सम्पादकीय टिप्पण के अनुसार—जलचर जीव इसमें मुद्रा अर्थात् मर्यादा के साथ रहते हैं इसलिए समुद्र है।

हलायुध कोश के अनुसार—इसमें भौम (भूमि का), अन्तरीक्ष (आकाश का) और नादेय (नदी का) जल आकर मिलता है इसलिए समुद्र है।

भौमाऽन्तरीक्षनादेयजलान्यत्र **समुद्रः**।'' अमरसिंहे- समुनत्ति **समुद्रः**। वारीणां जलानां राशि**र्वारिराशिः।** सरांसि जलप्रसारणानि सन्त्यस्य **सरस्वान्।** **सगर**स्यापत्यं सागरः, सगरतनयैः, खातत्वात्। अर्णांसि सन्त्यस्य **अर्णवः**। तथा च क्षीरस्वामिभाष्ये- ''अर्णोऽस्यास्त्यर्णवः।'अर्णसो लोपश्च' इति वः सलोपश्च।'' उदधिः, उदन्वान्, तोयनिधिः, जलराशिः, वीचिमाली, शशध्वजः। तद्भेदाः सप्त-लवणोदः, क्षीरोदः, सुरोदः, इक्षूदः, स्वादूदः, दध्युदः, घृतोदः।

सप्त समीपे। षिञ् बन्धने। सिनोति बध्नातीति **सीमा।** ''घर्मसीमाग्रीष्माऽधमाः'' एते मक्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। कण्ठस्य समीपे **उपकण्ठम्**। तरन्त्य**स्मात्तीरम्।** तरति प्लवते इव के **तीरं वा।** पिपर्ति वृणोति

अमरसिंह के अनुसार—आर्द्र करता है इसलिए समुद्र है।

६. वारिराशिः ()—वारि अर्थात् जल का समूह इसमें है इसलिए वारिराशि है।

७. सरस्वान् (पुं० एकव०)—जल फैलाने वाले तालाब इसके होते हैं इसलिए सरस्वान् (सरस्वत् मूल शब्द) है।

८. सागरः (पुं०)—सगर का पुत्र सागर है। चूँकि चक्री सगर के पुत्रों ने खाई बनाई थी तब सागर बना था इसलिए सागर है।

९. अर्णवः (पुं०)—अर्ण अर्थात् जल इसके पास है इसलिए अर्णव है। क्षीर स्वामि के भाष्य में भी यही है।

इसके अतिरिक्त उदधि, उदन्वान् तोयनिधि, जलराशि, वीचिमाली, शशध्वज। उसके सात भेद- लवणोद, क्षीरोद, सुरोद, इक्षूद, स्वादूद, दध्युद, घृतोद आदि शब्द भी बनते हैं।

शशध्वजः—इस शब्द के विषय में सम्पादक का अभिप्राय है कि यह शब्द किसी कोश में भी समुद्र के लिए नहीं मिलता है। फिर भी समाधान के लिए—शशी चन्द्रमा है। उसकी ध्वजा अर्थात् चिह्न उसके वंश को कहने वाला होने से शशिध्वज है क्योंकि चन्द्रमा की उत्पत्ति समुद्र से हुई है, यह पुराण प्रसिद्ध बात है।

समुद्र के सात भेद हैं। लवण समुद्र, क्षीर समुद्र, सुर समुद्र, इक्षु समुद्र, स्वादु समुद्र, दधि समुद्र, घृत समुद्र।

विशेष—काव्य ख्याति के अनुसार ये सात समुद्र कहे हैं। जैन दर्शन के अनुसार तो असंख्यात समुद्र होते हैं।

सात नाम 'समीप'(तट) के हैं।

१. सीमा (स्त्री० एकव०) मूल शब्द सीमन्-सीं देती है, बाँध देती है इसलिए सीमा है। मक् प्रत्ययान्त यह शब्द निपात सिद्ध है।

२. उपकण्ठम् (नपुं०)—कण्ठ (गले) के समीप में होता है इसलिए उपकण्ठ है।

जलेनेति **पारम्।** पार्यते समाप्यतेऽस्मिन्निति वा। रुणद्धि जलं वेगेन **रोधस्।** सान्तम्। उभयम्। अवधानम् **अवधिः**। "उपसर्गे दः किः"। तट्यते आहन्यतेऽम्भसा **तटम्।** त्रिषु। तटः। तटी। इदन्तो वा। तटिः। स्त्रियामीः, तटी। कूलम्, कच्छः, प्रपातः, तीरम्।

भङ्गस्तरङ्गः कल्लोलो वीचिरुत्कलिकाऽवलिः।
पाली वेला तटोच्छ्वासौ विभ्रमोऽयमुदन्वतः ॥२७॥

एकादश तरङ्गे। भज्यते जले स्वयमेव **भङ्गः**। तरति प्लवते **तरङ्गः**। "तृपतिभ्यामङ्गः" आभ्यामङ्गप्रत्ययो भवति। कल्ल्यन्तेऽनेन नद्यः **कल्लोलः**। कुत्सितं लोडति **कल्लोल** इत्येकः। याति (वयति) गच्छति **वीचिः**। स्त्रियामीः, वीची। वृद्धिमुत्कर्षेण कलयति **उत्कलिका।** स्त्रियाम्। आ समन्ताद् वलते **आवलिः**।

---

३. तीरम् (नपुं०)—इससे पार लग जाते हैं, तैर जाते हैं इसलिए तीर है अथवा जहाँ गोता लगाता है, तैरता है वह तीर है।

४. पारम् (नपुं०)—जल से पूर्ण रहता है इसलिए पार है। जल के साथ वरण करता है इसलिए पार है।

विशेष—सम्पादक ने वृणोति क्रिया से पार शब्द की व्युत्पत्ति उचित नहीं ठहराई है। क्षीर स्वामी के अनुसार पर अर्थात् पार्श्व, समीप। पार्श्व में होता है इसलिए कूल है, पार है अथवा यहाँ पर आकर पार लग जाते हैं, नदी समाप्त हो जाती है इसलिए पार है।

५. रोधस् (नपुं०, पुं०)—जल के वेग, प्रवाह को रोकता है इसलिए रोध है। यह सान्त शब्द है।

६. अवधिः (पुं०)—मर्यादा बनी रहती है इसलिए अवधि है।

७. तटम् (नपुं०, पुं०, स्त्री०)—जल से ताडित होता है, घात को प्राप्त होता है इसलिए तट है। यह शब्द तीनों लिंगों में है। तटः, तटी, तटिः रूप भी बनता है। कूल, कच्छ, प्रपात, तीरम् भी किनारे के नाम हैं।

लहर के नाम

श्लोकार्थ—भंग, तरंग, कल्लोल, वीचि, उत्कलिका, आवलि, पाली, वेला, तट, उच्छ्वास, विभ्रम उदन्व ये तरंग के नाम हैं ॥२७॥

भाष्यार्थ—ग्यारह तरंग के नाम हैं।

१. भङ्ग (पुं०)—जल में स्वयं ही विभाजित होती है इसलिए भंग है।

२. तरङ्ग (पुं०)—उछलती है इसलिए तरङ्ग है। 'तृ०' इस सूत्र से अङ्ग प्रत्यय लगने से तरंग बनता है।

३. कल्लोल (पुं०)—इससे नदियाँ शब्द करती हैं इसलिए कल्लोल है। बुरे तरीके से, यद्वा तद्वा लोटती रहती है इसलिए कल्लोल है। ऐसा कोई मानता है।

सम्पादक के अनुसार—कम् जल है। उसकी चञ्चलता, अवयव तरंग है।

४. वीचिः, वीची (स्त्री०, पुं०)—जाती है, चलती है इसलिए वीचि है।

पाल्यते पालिः। स्त्रियामीः। **पाली**। वेलयति पूर्णिमादिकालमुपदिशति **वेला**। स्त्रियाम्। तटश्च उच्छ्वासश्च तटोच्छ्वासौ। तटति **तटः**। उच्छ्वसनम् **उच्छ्वासः**। विभ्रमति **विभ्रमः** विकारः। कस्य ? **उदन्वतः** समुद्रस्य। **ऊर्मिः**, लहरी।

सम्प्रति **मनुष्यवर्ग** आरभ्यते श्रीमदमरकीर्तिना–

मनुष्यो मानुषो मर्त्यो मनुजो मानवो नरः।
ना पुमान् पुरुषो गोधा धवः स्यात्तत्पतिर्नृपः ॥२८॥

एकादश मनुष्ये। मनोरपत्यं **मनुष्यः**। कुरुनिषादेभ्यः प्रथमाऽपत्येऽपि। कुरुनिषादाभ्यामणीपि मनोः सान्तश्च। क्व चिद्द्विस्वरस्य न वृद्धिः। अण्वा। मनुष्यः। **मानुषः**। उणादौ च। मन्यते सुखदुःखादिकमिति **मनुष्यः**। ''मनेरुस्यः'' उस्यप्रत्ययः। मानयति मान्यते इति वा **मानुषः**। ''मानेरुसः'' उस्प्रत्ययः। उभयम्।

---

५. उत्कलिका (स्त्री॰)—उत्कृष्टता से वृद्धि को प्राप्त होती है इसलिए उत्कलिका है।

६. आवलिः (स्त्री॰)—चारों ओर से जो घूमती है इसलिए आवलि है।

७. पालिः, पाली (स्त्री॰)—पालन, रक्षण किया जाता है इसलिए पालि है।

८. वेला (स्त्री॰)—पूर्णिमा आदि के काल को बता देती है इसलिए वेला है अर्थात् पूर्णिमा के दिन तरङ्गों का उफान अधिक होता है जिसे देखकर पूर्णिमा आदि तिथि का अनुमान लग जाता है।

९. तट (पुं॰)—तट पर, किनारे पर रहती है इसलिए तट है।

१०. उच्छ्वासः (पुं॰)—उदलती है, बाहर निकलती है इसलिए उच्छ्वास है।

११. विभ्रमः (पुं॰)—विशेष रूप से इसका भ्रमण, गमन होता है इसलिए विभ्रम, विकार है। ये समुद्र के विकार हैं, लहर हैं। उर्मिः, लहरी भी इसी के नाम हैं।

विशेष—भाष्य से तट, उच्छ्वास ये दो नाम अलग-अलग प्रतीत होते हैं। तभी मूल श्लोक में द्विवचन में उसका प्रयोग है और संख्या भी ग्यारह बताई है।

अब श्रीमान् अमरकीर्ति मनुष्य वर्ग का प्रारम्भ करते हैं–

मनुष्य के नाम

श्लोकार्थ—मनुष्य, मानुष, मर्त्य, मनुज, मानव, नर, नृ, पुमान, पुरुष, गोधा ये मनुष्य के नाम हैं। इनके साथ धव और पति शब्द जोड़ देने से राजा के नाम हो जाते हैं ॥२८॥

भाष्यार्थ—ग्यारह मनुष्य के नाम हैं।

१. मनुष्यः (पुं॰)—मनु का पुत्र मनुष्य है। अण् प्रत्यय से मानुषः भी है। उणादि गण से भी इस शब्द की सिद्धि होती है। सुख-दुःख आदि को मानता है इसलिए मनुष्य है। 'मनेरुस्यः' इस सूत्र से मन् धातु से उस्य प्रत्यय होता है।

२. मानुषः (पुं॰)—मान, सम्मान प्राप्त करता है अथवा मान्य होता है इसलिए मानुष है। यह शब्द उभयलिंगी है–मानुषः, मानुषम् 'ये सर्प श्रेष्ठ हैं जो उड़कर अपने अभिलाषित अर्थ को प्राप्त कर

''उड्डीय वाञ्छितं यान्तो वरमेते भुजङ्गमाः।
न पुनः पक्षहीनत्वात् पङ्गुप्रायन्तु मानुषम्॥''

म्रियते **मर्त्यः**।''मृङस्त्यः''। स्वार्थे त्यो वा। मनोर्जातः **मनुजः।** मनोरपत्यं **मानवः।** नृणाति विनयति **नरः**।'णीञ् प्रापणे' नयतीति वा ना।''नियो डाऽनुबन्धश्च''। अस्मात् ऋन् प्रत्ययो भवति, स च डाऽनुबन्ध इष्यतेऽन्त्यस्वरादिलोपार्थः। पूर्य्यते कुलमनेन सान्तः- **पुमान्**। उणादौ पूङः पवते पुनातीति वा **पुमान्**। ''सिर्मनन्तश्च।'' अस्मात्सिः प्रत्ययो भवति, अस्य च मन् अन्तः चकाराद् ह्रस्वत्वं च। इकार उच्चारणार्थः। पुरि पुरि शयनात् पूरणाद्वा **पुरुषः**। पृणाति पूरयति वा स्त्रीणामुदरं गर्भेणेति **पुरुषः**। ''पृणातेः कुषः''। अस्मात्कुषः प्रत्ययो भवति। कोऽनुबन्धः। अन्येषामपीति वा दार्घः। पूरुषः। लत्वे पुरुषः, पुलुषश्च।''गुध परिवेष्टने''। गुध्यति **गोधा**।

तस्य मनुष्यशब्दस्याग्रे **धव-पति**शब्दप्रयोगे **नृप**नामानि भवन्ति। मनुष्यधवः, मानुषधवः, मर्त्यधवः, मनुजधवः, मानवधवः, नरधवः, नृधवः, पुन्धवः, पुरुषधवः, गोधाधवः। मनुष्यपतिः, मानुषपतिः, मर्त्यपतिः, मनुजपतिः, मानवपतिः, नरपतिः, नृपतिः, पुंस्पतिः, पुरुषपतिः, गोधापतिः।

लेते हैं। मानुष तो पंख रहित होने से प्रायः पङ्गु हैं।' जिस कारण अपने इच्छित पदार्थ को प्राप्त नहीं कर कर पाता। यहाँ मर्त्य शब्द नपुं० लिंग में है।

३. मर्त्यः (पुं०)—मरता है इसलिए मर्त्य है।

४. मनुजः (पुं०)—मनु से उत्पन्न हुआ है इसलिए मनुज है।

५. मानवः (पुं०)—मनु का पुत्र है इसलिए मानव है।

६. नरः (पुं०)—विनय करता है इसलिए नर है।

७. नृ (ना-प्र० ए०) (पुं०)—विशेषपने की ओर जिसको ले जाया जाता है वह नृ-मनुष्य है।

८. पुमान् (एकव०), **पुंस्** (सकारान्त मूल शब्द)—जिससे कुल की पूर्ति हो, पूर्णता हो वह पुमान् है। रक्षा करता है, पवित्र होता है इसलिए पुमान् है।

९. पुरुषः (पुं०)—शरीर में बार-बार शयन करने से अथवा देह में पूर्ति करते रहने से पुरुष है। यह निरुक्ति से व्याख्या हुई। विग्रह से—स्त्री के उदर को गर्भ से प्रसन्न करता है अथवा पूरता है इसलिए पुरुष है।'पृण' धातु से कुष प्रत्यय होने पर क अनुबन्ध होने से लोप हो जाता है जिससे 'पुरुष' बनता है। क्वचित् दीर्घ होकर 'पूरुषः' भी प्रयुक्त होता है। पुलुषः भी है।

१०. गोधा (स्त्री०)—प्राणिविशेष पुरुष है। यह शब्द पुरुष अर्थ में अन्य कोश में नहीं हैं।

११. धवः (पुं०)—यह शब्द भी मनुष्य के लिए है। तभी ११ शब्द होंगे। उस मनुष्य शब्द के आगे धव/पति शब्द जोड़ देने पर नृप के नाम होते हैं। मनुष्यधव, मानुषधव, मर्त्यधव, मनुजधव, मानवधव, नरधव, नृधव, पुन्धव, पुरुषधव, गोधाधव। मनुष्यपति, मानुषपति, मर्त्यपति, मनुजपति, मानवपति, नरपति, नृपति, पुंस्पति, पुरुषपति, गोधापति।

भृत्योऽथ भृतकः पत्तिः पदातिः पदगोऽनुगः।
भटोऽनुजीव्यनुचरः शस्त्रजीवी च किङ्करः ॥२९॥

एकादश सेवके। भ्रियते इति **भृत्यः**। ''भृञोऽसंज्ञायाम्''। भ्रियते राज्ञा भृतः। स्वार्थे कः। **भृतकः**। पतति अधो गच्छति **पत्तिः**, पतनं वा। [पादाभ्याम्] अतति [**पदातिः**]। पादातिकः। औणादिक इकः। विनयादित्वात्स्वार्थे ठण्। पद्भ्यां गच्छतीति **पदगः**। अनु पश्चाद् गच्छति **अनुगः**। भटति युद्धं बिभर्ति **भटः**। अनुजीवतीत्येवंशीलः **अनुजीवी**। अनु पश्चाच्चरतीत्य**नुचरः**। शस्त्रेण आयुधेन जीवतीत्येवंशीलः **शस्त्रजीवी**। किं कुत्सितं कार्यं विदधाति **किङ्करः**। सहायः, सेवकः, पदजेयः, पद्गः, पदिकश्च। तथा च यशस्तिलके-(श्लो. १३०)

नौकर के नाम

श्लोकार्थ—भृत्य, भृतक, पत्ति, पदाति, पदग, अनुग, भट, अनुजीवी, अनुचर, शस्त्रजीवी और किङ्कर ये नौकर के नाम हैं ॥२९॥

भाष्यार्थ—ग्यारह शब्द सेवक के हैं।

१. भृत्यः (पुं॰)—भरण-पोषण किया जाता है इसलिए भृत्य है।

२. भृतकः (पुं॰)—राजा के द्वारा पाला जाता है इसलिए भृतक है। स्वार्थे 'क' प्रत्यय।

३. पत्तिः (स्त्री॰)—गिरता है, नीचे, निम्नता की ओर रहता है इसलिए पत्ति है। 'पतन' भी कहते हैं।

४. पदातिः (पुं॰)—पैदल(पदों से) चलता है इसलिए पदाति है। 'ठण् (इक)' प्रत्यय से 'पादातिकः' भी बनता है।

५. पदगः (पुं॰)—पैरों से चलता है इसलिए पदग है।

६. अनुगः (पुं॰)—पीछे-पीछे चलता है इसलिए अनुग है।

७. भटः (पुं॰)—योद्धा का काम करता है, युद्ध करता है इसलिए भट है।

८. अनुजीविन्ः (पुं॰ एकव॰ में अनुजीवी)—मालिक के ऊपर जीवित रहता है इसलिए अनुजीवी है।

९. अनुचरः (पुं॰)—बाद में या पीछे चलता है इसलिए अनुचर है।

१०. शस्त्रजीविन्ः (पुं॰ एकव॰ में शस्त्रजीवी)—शस्त्र से आजीविका चलाता है इसलिए शस्त्रजीवी है।

११. किङ्करः (पुं॰)—किम् अर्थात् कुत्सित-बुरे कार्य करता है इसलिए किङ्कर है।

इसके अलावा सहाय, सेवक आदि नाम भी हैं देखें भाष्य।

यशस्तिलक में भी कहा है–

**''सत्यं दूरे विहरति समं साधुभावेन पुंसां धर्मश्चित्तात्सह करुणया याति देशान्तराणि।
पापं शापादिव च तनुते नीचवृत्तेन सार्धं सेवावृत्तेः परमिह परं पातकं नास्ति किञ्चित्॥''**

**स्त्री नारी वनिता मुग्धा भामिनी भीरुरङ्गना।
ललना कामिनी योषिद् योषा सीमन्तिनी (वधूः) ॥३०॥
नितम्बिन्यबला बाला कामुकी वामलोचना।
भामा तनूदरी रामा सुन्दरी युवती चला ॥३१॥**

द्वाविंशतिः? स्त्रियाम्। ''स्तृञ् आच्छादने'' स्तृणात्याच्छादयति स्वदोषान् परगुणानिति **स्त्री**। उणादौ। स्तृणात्याच्छादयति लज्जयाऽत्मानमिति **स्त्री**। स्तृणातेष्टत् प्रत्ययो भवति। अकारमात्रः। ''रमृवर्णः''। अथवा ड्रट्पाठः। डाऽनुबन्धोऽन्त्यस्वरादिलोपार्थः। डकारोनदाद्यर्थः। रकारमात्र एव। अमरसिंहभाष्ये- ''**स्त्यायत्य (तेऽ) स्यां गर्भः स्त्री**।'' तथा च हलायुधे- ''स्तृणाति विवेकमाच्छि**नत्ति स्त्री**''। नरस्य स्त्री जातिश्चेत् **नारी**। नरं वनति भजते **वनिता**। मुह वैचित्ये कार्येषु मुह्यति **मुग्धा**। ''मुहेर्धक् हस्य गः।'' भामते कुप्यते

''सेवा करने वाले मानवों का सत्य गुण सज्जनता के साथ दूर चला जाता है और उनके मन से प्राणिरक्षा रूप धर्म करुणा के साथ दूसरे देशों में कूच कर जाता है। एवं जिस प्रकार महामुनि द्वारा दिया गया शाप सैकड़ों व हजारों गुणा बढ़ता चला जाता है। उसी प्रकार सेवावृत्ति करने वालों का पाप भी क्षुद्र कर्मों के साथ-साथ सैकड़ों व हजारों गुणा बढ़ता चला जाता है, इसलिए सेवावृत्ति के समान संसार में कोई महान् पाप नहीं है।''(१/१३०)

स्त्री के नाम

श्लोकार्थ—स्त्री, नारी, वनिता, मुग्धा, भामिनी, भीरु, अङ्गना, ललना, कामिनी, योषित्, योषा, सीमन्तिनी, वधू नितम्बिनी, अबला, बाला, कामुकी, वामलोचना, भामा, तनूदरी, रामा, सुन्दरी, युवती, चला ये स्त्री के नाम हैं ॥३०-३१॥

भाष्यार्थ—स्त्री के लिए २४ नाम हैं।

१. स्त्री (स्त्री०)—'स्तृञ्' धातु आच्छादन अर्थ में है। अपने दोषों को जो ढकती है और दूसरों के गुणों को भी ढकती है वह स्त्री है। उणादि से विग्रह करके—जो लज्जा से अपने को ढाके रखती है, वह स्त्री है अर्थात् हमेशा लज्जा युक्त रहती है।

अमरसिंह के भाष्य में—इसमें गर्भ धारण किया जाता है इसलिए स्त्री है।

हलायुध कोश में—विवेक को आच्छादित (लुप्त) करती है, वह स्त्री है।

२. नारी (स्त्री०)—नर की स्त्री या उत्पत्ति यदि है तो वह नारी है।

३. वनिता (स्त्री०)—नर का सेवन करती है इसलिए वनिता है।

४. मुग्धा (स्त्री०)—कार्यों में मोहित करती है इसलिए मुग्धा है।

५. भामिनी (स्त्री०)—कोप करती है इसलिए भामिनी है अथवा भाम क्रोध को कहते हैं। क्रोध

(ति) भामिनी। [भामः] क्रोधोऽस्त्यस्याः **वा भामिनी**। बिभेत्यस्माद् (त्यसौ) **भीरुः**। ''भियो रुग्लुकौ च।'' भीरुः। प्रशस्तान्यङ्गान्यस्या **अङ्गना।** लाडयति, (लडति) विलसति, ललयति (ललति) नरमीप्सते वा **ललना**। ''लल ईप्सायाम्''। भोगान् कामयते **कामिनी**। युषः सौत्रोऽयं धातुः सेवाऽर्थे। योषति पुरुषं गच्छति रतेच्छया आत्मनो **योषा**। ''कष शिष जष झष दष मष रुष रिष यूष जृष हिंसार्थाः''। योषति हिनस्ति हन्तीति **योषित्**। ''हसृतडिरुहियुषिभ्य इतिः'' एभ्य इतिप्रत्ययो भवति। इकार उच्चारणार्थः। अमरसिंहे- ''**यौति पुंसा योषित्।**'' अजादित्वादाप्प्रत्यये योषिता च। सीमन्तोऽस्त्स्याः **सीमन्तिनी**। बध्नाति चित्तं **वधूः**। नितम्बोऽस्त्यस्या **नितम्बिनी**। न विद्यते बलमस्या **अबला**। 'बा' सौभाग्यं लाति गृह्णातीति **बाला**। ''कमु कान्तौ'' कम्। ''कमेरिनिङ्कारितम्'' इन्। ''अस्योप॰'' दीर्घः। कामयते इत्येवंशीला **कामुकी।** ''शृकमगमहनकृषभूस्थालष-पतपदामुकञ्।'' कारितलोपः। ''निमि॰'' दीर्घाभावः। ञकाराऽनु-बन्धत्वात्पूर्वस्योप॰ दीर्घः। वामे सुन्दरे लोचने नेत्रे यस्याः सा **वामलोचना।** ''भाम क्रोधे'' चुरादौ। भामयति। ''भाम क्रोधे'' भ्वादावकाराऽनुबन्ध आत्मनेपदी। भामते **भामा**। चक्षुर्दोषादिदर्शनात्। तनु सूक्ष्ममुदरं

इसके पास होता है इसलिए भामिनी है।

६. भीरुः (स्त्री॰)—डरती है इसलिए भीरु है।

७. अङ्गना (स्त्री॰)—इसके अङ्ग प्रशस्त(शुभ) होते हैं इसलिए अङ्गना है।

८. ललना (स्त्री॰)—पुरुष को लुभाती है, विलास पैदा करती है, मनोहर लगती है अथवा चाहती है इसलिए ललना है।

९. कामिनी (स्त्री॰)—भोगों की कामना रखती है इसलिए कामिनी है।

१०. योषा (स्त्री॰)—रति की इच्छा से स्वयं पुरुष के पास जाती है इसलिए योषा है।

११. योषित् (स्त्री॰)—हिंसा करती है, नाश करती है इसलिए योषित् है। अमरसिंह के अनुसार— पुरुष के साथ जुड़ती है इसलिए योषित् है। आप् प्रत्यय से 'योषिता' भी बनता है।

१२. सीमन्तिनी (स्त्री॰)—सीमन्त मांग (बालों के बीच की रेखा) को कहते हैं। इसके मांग होती है इसलिए सीमन्तिनी है।

१३. वधूः (स्त्री॰)—चित्त को बांधती है इसलिए वधु है।

१४. नितम्बिनी (स्त्री॰)—इसके नितम्ब होते हैं इसलिए नितम्बिनी है।

१५. अबला (स्त्री॰)—इसके पास बल नहीं होता है इसलिए अबला है।

१६. बाला (स्त्री॰)—'बा' अर्थात् सौभाग्य। सौभाग्य लाती है, ग्रहण करती है इसलिए बाला है।

१७. कामुकी (स्त्री॰)—कामना स्वभाव वाली होती है इसलिए कामुकी है।

१८. वामलोचना (स्त्री॰)—जिसके दोनों नेत्र वाम(सुन्दर) हों वह वामलोचना है।

१९. भामा (स्त्री॰)—चुरादि गण में 'भाम' धातु क्रोध अर्थ में है। कुपित होती है इसलिए भामा है। आत्मनेपद में भी यह धातु है। आँखों में दोष आदि देखा जाता है इसलिए क्रोध करती है अतः भामा है।

यस्याः सा **तनूदरी**। नरेषु रमते, मनांसि रमयति वा **रामा।** सुष्ठु द्रियते आद्रियते जनोऽत्र, शोभनो दरो वराङ्गच्छिद्रमस्या वा **सुन्दरी**। अथवा 'सुन्दर' इति सौत्रोऽयं धातुः। युवत्शब्दान्नदादिविहितस्तिः, युवतिः। यु मिश्रणे यौति नरान् मिश्रयति औणादिको वा अतिः **युवतिः**। स्त्रियामीः। **युवती**। यूनीत्यन्यः। तथाहि प्रयोगः-

''भर्ता संगर एव मृत्युवसतिं प्राप्तः समं बन्धुभिः,
यूनी काममयं दुनोति च मनो वैधव्यदुःखाद् वधूः।
बालो दुस्त्यज एक एव च शिशुः कष्टं कृतं वेधसा,
जीवामीति महीपते प्रलपति यद्वैरिसीमन्तिनी॥''

चलचित्तान्पुरुषान् चालयतीति **चला**। वामनेत्रा पुरन्ध्री वासिता वर्णिनी प्रमदा रमणी दयिता प्रतीपदर्शिनी कान्ता वशा महिला महेला च।

भार्या जाया जनिः कुल्या कलत्रं गेहिनी गृहम्।
महिला मानिनी पत्नी तथा दाराः पुरन्ध्रयः ॥३२॥

दश कलत्रे। डुभृञ् धारणपोषणयोः। भ्रियते पुष्यते गर्भेण **भार्या**। ''ऋवर्णव्यञ्जनान्तात्घ्यण्''।

---

२०. तनूदरी (स्त्री०)—जिसका उदर, पेट सूक्ष्म (पतला) होता है वह तनुदरी है।

२१. रामा (स्त्री०)—पुरुषों में रमती है अथवा चित्त को रमा देती है इसलिए रामा है।

२२. सुन्दरी (स्त्री०)—इसमें मनुष्य बहुत आदर करता है अथवा इसके सुन्दर शरीर में शोभनीय छिद्र होता है इसलिए सुन्दरी है।

२३. युवती, युवतिः (स्त्री०)—मनुष्यों को मिलाती है, अपनों से जोड़ती है इसलिए युवती है। 'यूनी' शब्द का भी कोई प्रयोग करते हैं। देखें भाष्य।

''पति युद्ध में बन्धुओं के साथ मृत्यु शय्या को प्राप्त हुआ, काममय मन जवान वधू को वैधव्य दुःख से कष्ट देता है, एक यह बाल शिशु ही है जो बड़ी कठिनता से छोड़ने योग्य है, विधाता ने कष्ठ ही दिया है, इस प्रकार वैरियों की सेवा है। हे राजन्! फिर भी जीवित हूँ, ऐसा कोई वधू प्रलाप करती है।''

२४. चला (स्त्री०)—जिनका चित्त चंचल होता है, ऐसे पुरुषों को विचलित करा देती है इसलिए चला है।

इसके अलावा वामनेत्रा, पुरन्ध्री, वासिता, प्रमदा, रमणी, दयिता, प्रतीपदर्शिनी, कान्ता, वशा, महिला, महेला आदि भी नाम हैं।

विवाहित स्त्री के नाम

श्लोकार्थ—भार्या, जाया, जनि, कुल्या, कलत्र, गेहिनी, गृह, महिला, मानिनी, पत्नी, दारा, पुरन्ध्रयः स्त्री के नाम हैं ॥३२॥

भाष्यार्थ—कलत्र (विवाहित स्त्री) के दश नाम हैं।

१. भार्या (स्त्री०)—गर्भ धारण करती है; गर्भ से शिशु को पुष्ट करती है इसलिए भार्या है।

यकारमात्रः। अत्योपधावृद्धिः। भार्या इति जातम्। ''स्त्रियामादा''। आप्रत्ययः। प्र० सिः। ''श्रद्धायाः सिर्लोपम्।'' सिलोपः। ''ज्या वयोहानौ'' जा (जि) नाति **जाया**। 'जनी प्रादुर्भावे च'। सुखी जायते आत्माऽ**त्रजाया।** ''सन्ध्यादयः-सन्ध्या वन्ध्या जाया इत्यादयः शब्दाः यक्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। जनयति पुत्राञ्**जनिः**। इः सर्वधातुभ्यः''। कुले साधुः **कुल्या** ''यदुगवादितः''। ''कडमदे'' कड तौदादिकः। कडति माद्यति यौवनेनेति **कलत्रम्**। ''अमिनक्षिकटिभ्योऽत्रः'' अत्रप्रत्ययः। कडत्रम्। डलयोरैक्यम्। प्रथ० सि० नपुं० अका० मुरा०। मोऽनु०। गेहमस्त्यस्या **गेहिनी**। ''ग्रह उपादाने''। गृह्णाति प्रत्युपार्जितं **गृहम्**। ''गेहेत्वक्'' अक्प्रत्ययः। ''ग्रहिज्या''- सम्प्रसारणम्। मह्यते पूज्यते **महिला**। मानः प्रणयकोपोऽस्या **मानिनी**। पतिं पतति याति **पत्नी**। ''दृ विदारणे''। द्र० क्र०। दीर्यते शतखण्डी भवति पुरुष एभिरिति **दाराः**। ''भावे'' घञ्। अकारमात्रः। वृद्धिः। दार इति जातम्। प्रथमा जस्। प्रायो बहुत्वं च। पुरं धमयन्ति, नेत्रान्ते पुरं शरीरं धरन्तीति **पुरन्ध्रयः**। क्षेत्रम्, सहधर्मचारिणी, गृहाः, सहचरी, सहचरा।

---

२. जाया (स्त्री०)—'ज्या वयोहानौ' इस धातु से उम्र की हानि करती है वह जाया है। 'जनी प्रादुर्भावे' इस धातु से यहाँ (स्त्री में) आत्मा सुखी होता है इसलिए जाया है। 'सन्ध्यादयः' इस सूत्र से यक् प्रत्यय वाले शब्द निपात से सिद्ध होते हैं।

३. जनिः (स्त्री०)—पुत्रों को जन्म देती है इसलिए जनि है।

४. कुल्या (स्त्री०)—कुल में जो अच्छी है वह कुल्या है।

५. कलत्रम् (नपुं०)—यौवन से मद को प्राप्त है वह कलत्र है। 'कड' धातु शासन और मद अर्थ में है इससे अत्रन् प्रत्यय से कडत्र शब्द बना। 'डलयोरभेदः' इससे कलत्र हुआ।

६. गेहिनी (स्त्री०)—इसका गेह अर्थात् घर होता है, इसलिए गेहिनी है।

७. गृहम् (नपुं०)—कमाये हुए, अर्जित किये हुए को ग्रहण करती है इसलिए गृह है।

८. महिला (स्त्री०)—पूजी जाती है इसलिए महिला है।

९. मानिनी (स्त्री०)—मान अर्थात् प्रणय कोप इसके होता है, इसलिए मानिनी है।

१०. पत्नी (स्त्री०)—पति के पास जाती है, इसलिए पत्नी है।

१. दाराः (बहुव० स्त्री०)—इसके द्वारा पुरुष के सैकड़ों खण्ड हो जाते हैं इसलिए दारा है अर्थात् पुरुष के चित्त को खंडित करती है इसलिए दारा है।

२. पुरन्ध्रयः (बहुव० स्त्री०)—शरीर को पीड़ित करती है अथवा शरीर पर कटाक्ष करती है इसलिए पुरन्ध्री है।

इसके अलावा क्षेत्र आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

विशेष—दारा, पुरन्ध्री ये दोनों पति-पुत्र वाली विशेष सौभाग्यवती स्त्री के नाम हैं।

वल्लभा प्रेयसी प्रेष्ठा रमणी दयिता प्रिया।
इष्टा च प्रमदा कान्ता चण्डी प्रणयिनी तथा ॥३३॥

एकादश वल्लभायाम्। वल्लते पत्युश्चित्तं संवृणोतीति **वल्लभा**। ''कृशृशलिगर्दिरासिवलि-वल्लिभ्योऽभः'' अभः प्रत्ययः आप्रत्ययः। अतिशयेन प्रिया **प्रेयसी**। ''तर तमेयस्विष्ठः'' प्रकर्षाऽर्थे 'तर तम ईयसु इष्ठ' इत्येते प्रत्यया भवन्ति। अतिशयेन प्रिया **प्रेष्ठा**। रमते जनोऽत्र, मनांसि रमयति वा **रमणी**। नरेषु दयते गच्छति ईष्टे वा **दयिता**। प्रीणाति पतिचित्तं रञ्जयति **प्रिया**। इज्यते इष्यते वा **इष्टा**। प्रकृष्टो मदोऽस्याः **प्रमदा**। काम्यते नरेण **कान्ता**। चण्डते कुप्यति **चण्डी**। चण्डिका च। प्रणयोऽस्या अस्तीति **प्रणयिनी**।

सती पतिव्रता साध्वी पतिवत्येकपत्यपि।
मनस्विनी भवत्यार्या-विपरीता निरूप्यते ॥३४॥

प्रिय स्त्री के नाम

श्लोकार्थ—वल्लभा, प्रेयसी, प्रेष्ठा, रमणी, दयिता, प्रिया, इष्टा, प्रमदा, कान्ता, चण्डी, प्रणयिनी प्रिय स्त्री के नाम हैं ॥३३॥

भाष्यार्थ—वल्लभा के लिए ग्यारह नाम हैं।

१. **वल्लभा** (स्त्री०)—पति के चित्त का वरण कर लेती है अर्थात् मोह लेती है इसलिए वल्लभा है।

२. **प्रेयसी** (स्त्री०)—अत्यधिक प्रिय स्त्री प्रेयसी है।

३. **प्रेष्ठा** (स्त्री०)—अत्यधिक प्रिय है इसलिए प्रेष्ठा भी है।

४. **रमणी** (स्त्री०)—इसमें मनुष्य रमण करता है अथवा लोगों के मन को रमाती है इसलिए रमणी है।

५. **दयिता** (स्त्री०)—नरों की इच्छा करती, उनके पास जाती है इसलिए दयिता है।

६. **प्रिया** (स्त्री०)—पति के चित्त को प्रसन्न करती है इसलिए प्रिया है।

७. **इष्टा** (स्त्री०)—पूजी जाती है अथवा चाही जाती है इसलिए इष्टा है।

८. **प्रमदा** (स्त्री०)—इसका मद बहुत बढ़ा-चढ़ा रहता है इसलिए प्रमदा है।

९. **कान्ता** (स्त्री०)—मनुष्य इसकी कामना, वाञ्छा रखता है इसलिए कान्ता है।

१०. **चण्डी** (स्त्री०)—कोप करती है इसलिए चण्डी है। 'चण्डिका' भी कहते हैं।

११. **प्रणयिनी** (स्त्री०)—इसके पास प्रणय अर्थात् स्नेह होता है इसलिए प्रणयिनी है।

पतिव्रता स्त्री के नाम

श्लोकार्थ—सती, पतिव्रता, साध्वी, पतिवती, एकपती, मनस्विनी, आर्या पतिव्रता स्त्री के नाम हैं। इसके विपरीत जो हैं उसे कहते हैं ॥३४॥

भाष्यार्थ—पतिव्रता स्त्री के सात नाम हैं।

सप्त पतिव्रतायाम्। एकः पतिरस्तीति **सती**। पतिव्रतं करोति, पतिरेव व्रतं सेव्यो नान्यो यस्या इति वा **पतिव्रता**। पतिसेवैव व्रतं यस्याः **पतिव्रता**। यत्स्मृतिः– ''**नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतमिति।**'' साधयति **साध्वी**। पतिरस्या अस्तीति **पतिवती**। एकः पतिर्यस्याः सा **एकपती**। मनोऽस्या अस्तीति **मनस्विनी**। अर्यते सेव्यते **आर्या**। सुचरिता।

मया धनञ्जयेन, भाष्यकर्त्रा अमरकीर्त्तिना वा कथ्यते **विपरीता** असदृशा।

बन्धकी कुलटा मुक्ता पुनर्भूः पुंश्चली खला।
स्पर्शाऽभिसारिका दूती स्वैरिणी शम्फली तथा ॥३५॥

षड् बन्धक्याम्। बध्नाति तरुणचित्तानि **बन्धकी**। कुलमटति **कुलटा**। तथा चोणादौ ''टल ट्वल वैकल्ये'' हेताविन्। अस्योपधाया दीर्घः। कुलपूर्वः। कुलं टालयति **कुलटा**। ''कुले टालेरिलुक् डश्च''

---

१. सती (स्त्री०)—एक पति जिसका होता है वह सती है।

२. पतिव्रता (स्त्री०)—जो पतिव्रत करती है। अथवा पति ही व्रत है। उसी पति की जो सेवा करती है, अन्य की नहीं वह पतिव्रता है। पति सेवा ही जिसका व्रत है, वह पतिव्रता है। मनुस्मृति में कहा है–'स्त्रियों का कोई अलग से यज्ञ अथवा व्रत नहीं है और न उपवास है। पति की सेवा करती है इसलिए स्वर्ग में हीन दशा को प्राप्त नहीं होती है।'' दे० पूर्ण श्लोक टिप्पण में।

३. साध्वी (स्त्री०)—साधना करती है वह साध्वी है।

४. पतिवती (स्त्री०)—इसका पति होता है इसलिए पतिवती है।

५. एकपती (स्त्री०)—जिसका एक पति है वह 'एकपती' नाम पाती है।

सम्पादक के अनुसार—एकपत्नी यह पाठ होना चाहिए।

६. मनस्विनी (स्त्री०)—इसके मन होता है अर्थात् सुनती समझती है इसलिए मनस्विनी है।

७. आर्या (स्त्री०)—पूजी जाती है, सेवा को प्राप्त है इसलिए आर्या है। अच्छे चरित्र वाली स्त्री आर्या कहलाती है।

इसके विपरीत स्त्री को अब धनञ्जय और भाष्यकर्ता के द्वारा कहा जाता है।

व्यभिचारिणी स्त्री एवं दूती के नाम

श्लोकार्थ—बन्धकी, कुलटा, मुक्ता, पुनर्भू, पुंश्चली और खला ये व्यभिचारिणी स्त्री के नाम हैं। स्पर्शा, अभिसारिका, दूती, स्वैरिणी, शम्फली ये दूती के नाम हैं ॥३५॥

भाष्यार्थ—छह बन्धकी स्त्री के नाम हैं।

१. बन्धकी (स्त्री०)—तरुणों के चित्त को बांधती है इसलिए बन्धकी है।

२. कुलटा (स्त्री०)—कुल, समूह में घूमती है इसलिए कुलटा है अथवा कुल पूर्वक टल् धातु से वैकल्य अर्थ में यह शब्द बनता है। कुल की अवहेलना करती है, कुल से रहित होती है वह कुलटा है।

कुले उपपदे टालेरिन्नन्तस्य डः प्रत्ययो भवित इलुक् च। स्वाचारं मुच्यते (स्म) पत्या जनैर्वा **मुक्ता**। पुनर्भवतीति **पुनर्भूः**। पुमांसं चालयति **पुंश्चली**। खं पञ्चेन्द्रियोत्पन्नसुखं लाति गृह्णातीति **खला**, अन्यपुरुषलम्पटत्वात्। पांशुला, स्वैरिणी, असती, इत्वरी, घर्षणी, अविनीता, अभिसारिका, चपला।

पञ्च दूत्याम्। 'स्पृश संस्पर्शे'। स्पृशति स्प्रक्ष्यति, अस्प्राक्षीत्, पस्पर्श वा घञ्। स्पर्शः। ''पदरुजविशस्पृशोचां घञ्''। नामिनश्च गुणः। ''स्त्रियामादा'' **आप्रत्ययः। स्पर्शा। पुरुषान्तरमभिसरति अभिसारिका।** दूयन्तेऽस्या मौखर्यात् **दूती।** 'ईर् गतौ कम्पने च'। ईर्। ईरणम् ईरः। ''भावे'' घञ् प्रत्ययः। स्वस्य ईरः स्वैरः। स्वैरो विद्यतेऽस्या **स्वैरिणी।** ''तदास्याऽस्तीति मन्त्वन्त्वीन्'' इन्। ''नदाद्यञ्ज्विवाह्'' ई प्रत्ययः। ''रषृवर्णेभ्यः'' नस्य णत्वम्। शं सुखम् फलति निष्पादयतीति **शम्फली।** तथा तेनैव प्रकारेण।

---

३. मुक्ता (स्त्री०)—पति से अथवा लोगों के साथ अच्छा आचरण जिसका छूट चुका है वह मुक्ता है।

४. पुनर्भूः (स्त्री०)—पुनः होती है अर्थात् किसी को छोड़कर किसी की हो जाती है वह पुनर्भूः है।

५. पुंश्चली (स्त्री०)—मनुष्यों को चलायमान कर देती है इसलिए पुंश्चली है।

६. खला (स्त्री०)—पञ्चेन्द्रिय से उत्पन्न सुख को ख कहते हैं। उस सुख को लाती है, ग्रहण करती है वह खला है क्योंकि वह अन्य पुरुष में लम्पट होती है।

इसके अलावा पांशुला, स्वैरिणी, असती, इत्वरी, घर्षणी, अविनीता, अभिसारिका, चपला। आदि नाम भी हैं।

पाँच नाम दूती स्त्री के हैं।

१. स्पर्शा (स्त्री०)—स्पर्श करती है, स्पर्श करेगी, स्पर्श किया है या बहुत पहले स्पर्श कर चुकी है वह स्पर्शा है।

२. अभिसारिका (स्त्री०)—अन्य पुरुष के पास जाती है वह अभिसारिका है।

३. दूती (स्त्री०)—इसके मौखर्य (बोलने) से स्त्री पुरुष दुःखी होते हैं, परिताप को प्राप्त होते हैं इसलिए दूती है।

४. स्वैरिणी (स्त्री०) [मूल शब्द स्वैरिन्]—'ईर्' धातु गमन, कम्पन के अर्थ में है। अपनी इच्छा से स्वयं का गमन होना स्वैर है। वह स्वैर इसके पास होता है इसलिए स्वैरिणी है।

५. शम्फली (स्त्री०)—शम् अर्थात् सुख। उस सुख को देती है, उत्पन्न करती है इसलिए शम्फली है।

गणिका लञ्जिका वेश्या रूपाजीवा विलासिनी।
पण्यस्त्री दारिका दासी कामुकी सर्ववल्लभा ॥३६॥

नव वेश्यायाम्। गणः पेटकोऽस्त्यस्याः, गणयतीश्वरानीश्वरौ वा **गणिका**। 'लजि लाजि लाजा लज तर्ज भर्त्सने'। लञ्जयति निः स्वान्पुरुषान् तर्जयतीति **लञ्जिका**। वेशे वेश्यावाटे भवा **वेश्या**। रूपेण आ समन्ताज्जीवतीति **रूपाजीवा**। विलासोऽस्याऽस्तीति **विलासिनी**। तथा चोक्तम्-

'' हावो मुखविकारः स्याद् भावश्चित्तसमुद्भवः।
विलासो नेत्रजो ज्ञेयो विभ्रमोऽत्र दृगन्तयो॥''

पण्यस्य स्त्री **पण्यस्त्री**। परिमाणं कृत्वा रमयतीत्यर्थः। दृणाति विदारयति कामिनम् **दारिका**। दस्यति परिकर्मणा क्षयति, ददात्यात्मानं वा **दासी**। दाशी। तालव्यदन्त्यः। कामयते इत्येवंशीला **कामुकी**। सर्वेषां पुरुषाणां वल्लभा **सर्ववल्लभा**। सैरिन्ध्री।

वेश्या के नाम

श्लोकार्थ—गणिका, लञ्जिका, वेश्या, रूपाजीवा, विलासिनी, पण्यस्त्री, दारिका, दासी, कामुकी, सर्ववल्लभा ये एकार्थवाची हैं ॥३६॥

भाष्यार्थ—नौ (दश) शब्द वेश्या के लिए हैं।

१. गणिका (स्त्री०)—इसके गण अर्थात् पेटक (धन की गठरी) होती है या समृद्ध अथवा गरीब की जो गणना करती है वह गणिका है।

२. लञ्जिका (स्त्री०)—धन रहित पुरुषों को ताडित करती है वह लञ्जिका है।

३. वेश्या (स्त्री०)—अनेक वेश में रहती है, वेश अर्थात् नेपथ्य रंगमंच। उस पर जो शोभती है वह वेश्या है।

४. रूपाजीवा (स्त्री०)—सर्वत्र अपने रूप से जीवित रहती है अर्थात् रूप से आजीविका चलाती है इसलिए रूपाजीवा है।

५. विलासिनी (स्त्री०)—इसके पास विलास होता है इसलिए विलासिनी है। कहा भी है–''मुख के विकार को हाव कहते हैं, चित्त से उत्पन्न होता है वह भाव है , नेत्रों से उत्पन्न होता है वह विलास है और दृष्टि का अन्त, कटाक्ष विभ्रम कहलाता है।''

६. पण्यस्त्री (स्त्री०)—बाजार की स्त्री है इसलिए पण्यस्त्री है अर्थात् धन का परिमाण करके (इतना धन लूँगी ऐसा ठहराकर) रमण करती है इसलिए पण्यस्त्री है।

७. दारिका (स्त्री०)—कामी पुरुष को जो विदारित करती है अर्थात् उसका हृदय जो खण्डित करती है वह दारिका है।

८. दासी (स्त्री०)—जो सेवाकार्य से हीनता को प्राप्त होती है अथवा जो अपने को दे देती है, समर्पित कर देती है वह दासी है। 'दाशी' शब्द भी बनता है।

''चतु:षष्टिकलाभिज्ञा शीलरूपादिसेविनी।
प्रसाधनोपचारज्ञा सैरिन्ध्री कथ्यते बुधै:॥''

गन्धकारिका। पण्यस्त्री च।

कान्तेष्टौ दयित: प्रीत: प्रिय: कामी च कामुक:।
वल्लभोऽसुपति: प्रेयान् विटश्च रमणो वर: ॥३७॥

त्रयोदश कान्ते। काम्यतेऽभिलष्यते **कान्त:**। इष्टते इष्ट:। दया कृपा संजाता अस्येति **दयित:**। ''तारकितादिदर्शनात्संजातेऽर्थे इतच्।'' ''इवर्णावर्णयोर्लोप: स्वरे प्रत्यये पे च।'' आकारलोप:। सौरेफ:। प्र प्रकर्षेण इं कामसुखम् इत: प्राप्त: प्रीत:। पृषोदरादित्वात् आकारलोप:। प्रीणातिस्म **प्रीत:**। प्रीणाति प्रीणीते वा **प्रिय:**।''नाम्युपधप्रीकृगृज्ञां क:''।''स्वरादाविवर्णोवर्णान्तस्य धातोरिजुवौ।'' कामोऽस्यास्तीति **कामी**। कामयते इत्येवंशील: **कामुक:**। वल्लते **वल्लभ:**।''कृशृशलिगर्दिरासिवलिवल्लिभ्योऽभ:।'' अभ: प्रत्यय:।

---

९. कामुकी (स्त्री०)—कामना करती है अर्थात् अन्य को चाहती है वह कामुकी है।

१०. सर्ववल्लभा (स्त्री०)—सभी पुरुषों की प्रिय होती है इसलिए सर्ववल्लभा है।

सैरिन्ध्री भी इसका नाम है।

अमरकोश में **क्षीरस्वामी** ने कहा है–''चौंसठ कलाओं को जानने वाली, शील, रूप आदि का सेवन करने वाली और प्रसाधन, उपचार(साज-सज्जा, सेवा) को जानने वाली विद्वानों के द्वारा सैरिन्ध्री कही जाती है।''

गन्धकारिका, पण्यस्त्री भी इसका नाम है।

पति के नाम

श्लोकार्थ—कान्त, इष्ट, दयित, प्रीत, प्रिय, कामी, कामुक, वल्लभ, असुपति, प्रेयान्, विट, रमण और वर ये प्रिय पुरुष के नाम हैं ॥३७॥

भाष्यार्थ—तेरह शब्द कान्त पुरुष के अर्थ में हैं।

१. कान्त: (पुं०)—जो चाहा जाता है, अभिलषित है वह कान्त है।

२. इष्ट: (पुं०)—सभी को जो अच्छा लगता है, वह इष्ट है।

३. दयित: (पुं०)—दया-कृपा इसके उत्पन्न होती है इसलिए दयित है।

४. प्रीत: (पुं०)—जो उत्कृष्टता से काम सुख को प्राप्त है वह प्रीत है। जो सबको प्रिय हुआ है वह प्रीत है।

५. प्रिय: (पुं०)—प्रसन्न करता है, प्रसन्न रहता है वह प्रिय है।

६. कामिन् (पुं० एकव० में कामी)—इसके पास काम(वासना) रहता है इसलिए कामी है।

७. कामुक: (पुं०)—जिसका स्वभाव कामना करना है वह कामुक है।

८. वल्लभ: (पुं०)—प्रिय है इसलिए वल्लभ है।

असूनां प्राणानां पतिः **असुपतिः**। अतिशयेन प्रियः **प्रेयान्**। ''प्रियस्थिरस्फिरोरुबहुलगुरुवृद्धतृप्रदीर्घवृन्दारकाणां प्रस्थस्फवर्बंहिगर्वर्षित्रब्द्राघि-वृन्दाः।'' विट शब्दे विटति कामोद्रेकशब्दं करोतीति **विटः**। इगुपधेति कः। 'रमु क्रीडायाम्।' रम्। रमते कश्चित्। तं प्रयुङ्क्ते इन्। अस्योपधादीर्घः। 'मानुबन्धानां ह्रस्वः।' रमयतीति **रमणः**। 'नन्द्यादेर्यः।' 'युवुझानामनाकान्ताः' अनः। 'कारितस्यः' कारितलोपः। 'रषृ॰' नस्य णत्वम्। वृणोति वरयति वा **वरः**। कमिता। पतिः। वरयिता। भर्ता। भोक्ता। धवः। रुच्यः। अभीकः। 'अम्यनुभ्यां कामपितरि को वा दीर्घश्च' जनयति कः। अभिकः। अमुकः। प्राणाधिनाथः। सेक्ता।

सवित्री जननी माता जनकः सविता पिता।
देहापघनकायाङ्गं वपुः संहननं तनुः ॥३८॥
कलेवरं शरीरं च मूर्त्तिः अस्मिन् भवः सुतः।
पुत्रः सूनुरपत्यं च तुक् तोकं चात्मजः प्रजा ॥३९॥

त्रयः मातरि। सूते जनयति **सवित्री**। जनयति जायतेऽस्यां वा **जननी**। माति गर्भोऽत्र मानयति वा **माता**। अम्बा।

---

९. असुपतिः (पुं॰)—प्राणों का स्वामी होता है इसलिए असुपति है।

१०. प्रेयान् (पुं॰)—अत्यधिक प्रिय होता है इसलिए प्रेयान् है।

११. विटः (पुं॰)—कामोद्रेक के शब्द बोलता है इसलिए विट है।

१२. रमणः (पुं॰)—रमण करता है इसलिए रमण है।

१३. वरः (पुं॰)—वरण करता है, विवाह लेता है इसलिए वर है।

कमिता, पति इत्यादि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

माता, पिता और शरीर के नाम

श्लोकार्थ—सवित्री, जननी, माता-माँ के नाम हैं। जनक, सविता, पिता-पिता के नाम हैं। देह, अपघन, काय, अंग, वपु, संहनन, तनु-शरीर के नाम हैं। कलेवर, शरीर, मूर्ति देह को कहते हैं। देह में 'भव' जोड़ने से पुत्र के नाम होते हैं। पुत्र, सूनु, अपत्य, तुक्, तोक, आत्मज, प्रजा पुत्र के नाम हैं ॥३८-३९॥

भाष्यार्थ—माता के तीन नाम हैं।

१. सवित्री (स्त्री॰)—बच्चे को उत्पन्न करती है, जनती है इसलिए सवित्री है।

२. जननी (स्त्री॰)—पुत्र पैदा करती है अथवा इसमें बच्चा उत्पन्न होता है इसलिए जननी है।

३. मातृ (एकव॰ माता)—इसमें गर्भ आदर पाता है अथवा इसमें माँ आदर सम्मान पाती है इसलिए माता है। 'अम्बा' नाम भी है।

जनकः सविता पिता।

त्रयः पितरि। जनयति उत्पादयतीति **जनकः**। पुत्रान् सृजते (सूते) **सविता**। अहितात् पाति रक्षतीति **पिता**। 'उणादौ' पा रक्षणे, पातीति पिता। 'स्वस्रादयः'। ''स्वसृनप्तृनेष्टृत्वष्टृ क्षत्तृहोतृप्रशास्तृपितृमातृ-दुहितृजामातृभ्रातरः'' एते शब्दास्तृन्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते **देहापघनकायाङ्गं वपुः संहननं तनुः।**

कलेवरं शरीरं च मूर्त्तिः

दश देहे। देहश्च अपघनश्च कायश्च अङ्गं च। समाहारसमासत्वादेकवचनम्। दिह। देग्धीति **देहः**। ''दिहिलिहिश्लिषिश्वसिव्यध्यतीष्श्यातां च''। एषां णो भवति। अपहन्यते **अपघनः**। 'मूर्त्तौ घनिश्च' अल्। चिञ् चयने। चि। चीयतेऽसौ **कायः**। 'शरीरनिवासयोः कश्चादेः' चिनोतेः शरीरे निवासे चार्थे घञ् भवति आदेश्च को भवति। उख, णख, वख, मख, रख, लखि, इखि, वल्ग, रगि, लगि, अगि, वगि, मगि, स्वगि, इगि, रिगि, लिगि गत्यर्थाः। अङ्गति मरणं गच्छतीति **अङ्गम्**। उप्यन्ते पुरुषार्था अनेनेति **वपुः**। 'ऋपृवपिचक्षिजनितनिधनिभ्य उस्' एभ्य उस् प्रत्ययो भवति। संहन्यन्ते संपद्यन्ते धातवोऽत्र **संहननम्**। धातुभिः रसासृग्मांसमेदोऽस्थिमज्जशुक्रैस्तन्यन्ते **तनुः**। तनूः। उणादौ तनुविस्तारे। तनोतीति **तनूः**। ''कृषि

पिता के तीन नाम हैं।

१. **जनकः** (पुं॰)—शिशु उत्पन्न करता है इसलिए जनक है।

२. **सवितृ** (पुं॰ एकव॰ में सविता)—पुत्रों को उत्पन्न करता है, पैदा करता है इसलिए सविता है।

३. **पितृ** (पुं॰ एकव॰ में पिता)—अहित से रक्षा करता है इसलिए पिता है। 'उणादि' में 'पा' धातु रक्षा अर्थ में है, इसलिए रक्षा करता है वह पिता है।

दश नाम देह के हैं।

देश, अपघन, काय, अङ्ग का समाहार द्वन्द्व समास से एकवचन में पूरा पद श्लोक में बनाया है।

१. **देहः** (पुं॰)—'दिह' धातु लीपने, सानने के अर्थ में आती है जो खाये हुए भोजन से लिपती रहती है वह देह है।

२. **अपघनः** (पुं॰)—घात होता है इसलिए अपघन है अर्थात् देह मूर्तिक है इससे परस्पर जीवघात होता है इसलिए अपघन है।

३. **कायः** (पुं॰)—यह बढ़ती है इसलिए काय है अर्थात् शरीर के परमाणु इकट्ठे होते हैं, बढ़ते हैं इसलिए काय है। शरीर और निवास अर्थ में 'चि' धातु के आदि अक्षर को 'क' हो जाता है जिससे घञ् प्रत्यय से काय बनता है।

४. **अङ्गम्** (नपुं॰)—अंगति अर्थात् मरण को प्राप्त होता है इसलिए अंग है।

५. **वपुः** (नपुं॰)—इससे पुरुषार्थ किये जाते हैं इसलिए वपु है।

६. **संहननम्** (नपुं॰)—इसमें धातुएँ प्राप्त होती हैं, उत्पन्न होती हैं इसलिए संहनन नाम है।

७. **तनुः**, **तनूः** ()—रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र इन धातुओं से वृद्धिंगत

चमितनिधनिबधिसर्जिखर्जिभ्य ऊः'' एभ्य ऊप्रत्ययो भवति। कलते स्थिरत्वं गच्छति **कलेवरम्**। कडति माद्यति वा **कलेवरम्**। कडेवरं च। अमरसिंहभाष्ये '**कल्यते कलेवरम्**' शीर्यते क्षयं गच्छति रोगज्वरादिभिः **शरीरम्**। ''कृशृशौण्डृभ्य ईरः।'' एभ्य ईरप्रत्ययो भवति। उणादित्वात्। 'मूर्छा मोहसमुच्छ्राययोः' मूर्छ। मूर्छनं **मूर्तिः**। स्त्रियां क्तिः। ''घोषवत्योश्च कृति'' इति नेट्। ''राल्लोपः (प्यौ)'' इति छकारलोपः। ''नामिनार्वोदकुर्छुरोर्व्यञ्जने'' दीर्घः। व्यञ्जनम्। प्रथ० सिः। रेफ०। विग्रहः। वर्ष्म। पुरम्। पिण्डम्। क्षेत्रम्। गोत्रम्। घनः। पुद्गलः। प्रतीकः। अवयवः।

अस्मिन् भवः।

अस्मिन् काये **भवः** कायभवः। देहभवः। अपघनभवः। अङ्गभवः। वपुर्भवः। संहननभवः। तनुभवः। कलेवरभवः। शरीरभवः। मूर्तिभवः। कायजः। देहजः। अपघनजः। अङ्गजः। वपुर्जः। संहननजः। तनुजः। कलेवरजः। शरीरजः। मूर्त्तिजः। एतानि पुत्रनामानि भवन्ति। भव प्रयोगे।

सुतः।

पुत्रः सूनुरपत्यं च तुक् तोकं चात्मजः प्रजा ॥३९॥

अष्टौ पुत्रे। सूयते **सुतः**। पुनातीति **पुत्रः**। ''पूञो ह्रस्वश्च।'' अस्मात् त्रक्प्रत्ययो भवति धातोर्ह्रस्वश्च।

होता है इसलिए शरीर को तनू कहते हैं। उणादि गण में तनु धातु विस्तार अर्थ में है इसलिए जो फैलता है, विस्तार करता है वह तनु है।

शरीर और पुत्र के नाम

८. कलेवरम् (नपुं०)—कलते अर्थात् स्थिरपने को प्राप्त है इसलिए कलेवर है।

सम्पादक के अनुसार—कल शुक्र को कहते हैं। कले शुक्रे वरं श्रेष्ठम् अर्थात् शुक्र धारण में श्रेष्ठ होने से कलेवर है। सप्तमी वि० में अलुक् समास से यह शब्द निष्पन्न है अथवा मद को प्राप्त होता है इसलिए कलेवर है। 'कडेवरम्' शब्द भी बनता है। अमरसिंह भाष्य में—जाना जाता है अतः कलेवर है।

९. शरीरम् (नपुं०)—रोग, ज्वर आदि कारण से शीर्ण होता है, क्षय होता है इसलिए शरीर है। 'शृ' धातु से ईर् प्रत्यय करने उणादि गण में शरीर होता है।

१०. मूर्तिः (स्त्री०)—मूर्छा धातु मोह और ऊँचाई अर्थ में है। इसी से क्तिन् प्रत्यय से मूर्तिः शब्द बनता है। मूर्छित होता है इसलिए मूर्ति है।

इसके अलावा विग्रह, वर्ष्म आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

इन काय आदि शब्दों में 'भव' जोड़ने से पुत्र के नाम हो जाते हैं। जैसे—कायभव, देहभव इत्यादि। इसी प्रकार 'ज' प्रत्यय जोड़ देने से भी पुत्र के नाम हो जाते हैं। जैसे कायज, देहज इत्यादि। नामों के लिए देखें भाष्य। आठ पुत्र के नाम हैं–

१. सुतः (पुं०)—उत्पन्न किया जाता है इसलिए सुत है।

कोऽगुणार्थः। तथा च सोमनीत्याम्–"**य उत्पन्नः पुनाति वंशं स पुत्रः। अथ पुन्नाम्नो नरकात्त्रायते वा पुत्रः।**" सूयते **सूनुः**। "सूविषिभ्यां यण्वत्।" आभ्यां नु प्रत्ययो भवति, स च यण्वत्। षूङ् प्राणिगर्भविमोचने। पल शल पत्लृ पथे च गतौ। पत् नञ् पूर्वः। न पतन्ति येन जातेन पूर्वजा नरकादौ **तदपत्यम्।** "नञि पतेर्यः" य प्रत्ययः। नस्य तत्पु० सिः। नपुं० अका०। मोऽनु०। तोजति **तुक्**। स्तूयते **तोकम्**। आत्मनो जातः **आत्मजः**। प्रकर्षेण जाता **प्रजा**। "सप्तमीपञ्चम्यन्ते जनेर्डः।" बालः, पाकः, अर्भकः, गर्भपोतश्च। पृथुकः, शिशुः, शावः, डिम्भः, वटुः, माणवकः, भ्रूणः।

उद्वहस्तनयः पोतो दारको नन्दनोऽर्भकः।
स्तनन्धयोत्तानशयौ-स्त्री चेद् दुहितरं विदुः॥४०॥

अष्टौ बालके। उद्वहतीति **उद्वहः**। खश्। तनोति विस्तारयति वंशम्, **तनयः**। "तनेः क्यः।" पवते

---

२. पुत्रः (पुं०)—पवित्र करता है इसलिए पुत्र है। सोमदेव ने नीतिवाक्यामृत में भी कहा है–'जो उत्पन्न होकर वंश को पवित्र करता है वह पुत्र है।' तथा जो पुम् नाम के नरक से रक्षा करता है वह पुत्र है।

३. सूनुः (पुं०)—उत्पन्न किया जाता है वह सूनु है। 'सू' धातु से यण्वत् कार्य होकर नु प्रत्यय से सूनु बनता है।

४. अपत्यम् (नपुं)—जिसके उत्पन्न होने से पूर्वज नरक आदि में नहीं गिरते हैं, इसलिए अपत्य है।

५. तुक् (पुं०)—पिता के धन को ग्रहण करता है इसलिए तुक् है। चुरादि गण में 'तुज्' धातु हिंसा, बल, ग्रहण, निकेतन अर्थ में है।

६. तोकम् (नपुं०)—स्तुत होता है इसलिए तोक है। सम्पादक के अनुसार—पिता के अभाव में भी पिता के कार्यों को पूर्ण करता है इसलिए तोक है।

७. आत्मजः (पुं०)—स्वयं से उत्पन्न होता है, अर्थात् अपना होता है इसलिए आत्मज है।

८. प्रजा (स्त्री०)—प्रकर्ष अर्थात् उत्कृष्टता के साथ उत्पन्न होता है इसलिए प्रजा है।

बाल, पाक अर्भक, गर्भपोत, पृथुक, शिशु, शाव, डिम्भ, वटु, माणवक, भ्रूण आदि नाम भी हैं।

बालक के नाम

श्लोकार्थ—उद्वह, तनय, पोत, दारक, नन्दन, अर्भक, स्तनन्धय, उत्तानशय भी पुत्र के नाम हैं यदि स्त्री है तो दुहिता कहते हैं॥४०॥

भाष्यार्थ—बालक के आठ नाम हैं।

१. उद्वहः (पुं०)—धारण करता है अर्थात् पिता के भार का अच्छी तरह वहन करता है इसलिए उद्वह है।

२. तनय (पुं०)—वंश का विस्तार करता है इसलिए तनय है।

वातेन **पोतः**। दारयति दृणाति वा तरुणीनां मनांसि **दारकः**। 'टुनदि समृद्धौ।' नद्। अत एव नन्द्। नन्दति कश्चित्तमन्यः प्रयुङ्क्ते। ''धातोश्च होतो (हेतौ)'' इञ्। नन्दयतीति **नन्दनः**। ''नन्दि वासिमदिदूषि-साधिशोभिवर्धिभ्य इनन्तेभ्योऽसंज्ञायां'' यु प्रत्ययः। स्वमते ''नन्द्यादेर्युः'' यु प्रत्ययः ''युवुझानाम॰''- इति यु स्थाने अनः। कारितस्यानामि॰ कारितलोपः। 'अर्हमह पूजायाम्' अर्हत्य**र्भकः**। ''मूकादयः।'' मूकयू-काऽर्भकपृथुकवृकसृकभूकाः एते कप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। स्तनौ धयतीति **स्तनन्धयः**। ''शुनीस्तन-मुञ्जकूलास्यपुष्पेषु घेटः।'' खश्। उत्तानः शेते **उत्तानशयः**। ''उत्तानादिषु कर्तृषु'' अच्।

स्त्री चेद् दुहितरं विदुः।

पुत्र्यां दुहितरं दोग्धि मातृकुलं दुनोति वा विदुः कथयन्ति। तनया, पुत्री।

वयस्याऽली सहचरी सध्रीची सवयाः सखी।
आलीविवर्जितं मित्रं सम्बन्धो मित्रयुक् सुहृत् ॥४१॥

षट् सख्याम्। वयसा तुल्या **वयस्या**। वयसी च। आ समन्ताच्चित्तं लाति **आलिः**। स्त्रियामीः।

---

३. पोतः (पुं॰)—हवा से बहता है, चलता है इसलिए पोत है।

सम्पादक के अनुसार—यह व्युत्पत्ति तो नौका के लिए है। पुत्र अर्थ में तो जो वंश को पवित्र करता है अथवा आगे बढ़ाता है वह पुत्र है।

४. दारकः (पुं॰)—तरुणी स्त्रियों के मन को विदारित करता है, खण्डित करता है इसलिए दारक है।

सम्पादक के अनुसार—यहाँ बालक के नाम कहे हैं। इसलिए युवतियों के मन का विदारण बाल द्वारा सम्भव नहीं है अतः माता के यौवन को नष्ट करता है इसलिए दारक है अथवा माता-पिता निःसन्तान होने से उनके दुःख को नष्ट करता है इस आशय से दारक है।

५. नन्दनः (पुं॰)—समृद्धि बढ़ाता है इसलिए नन्दन है।

६. अर्भकः (पुं॰)—पूजा सम्मान को प्राप्त होता है इसलिए अर्भक है।

७. स्तनन्धयः (पुं॰)—माँ के स्तनों को पीता है इसलिए स्तनन्धय है।

८. उत्तानशयः (पुं॰)—सीधा-मुँह ऊपर करके सोता है इसलिए उत्तानशय कहते हैं।

दुहिता (स्त्री॰) (द्वि.वि॰ए.व. में दुहितरम्)—पुत्री को दुहिता कहते हैं अथवा माता के कुल को बढ़ाती है इसलिए दुहिता है। सम्पादक के अनुसार—पितृकुल को बढ़ाती है अथवा मातृकुल को समाप्त करती है इसलिए दुहिता है। तनया, पुत्री नाम भी हैं।

सखी और मित्र के नाम

श्लोकार्थ—वयस्या, आली, सहचरी, सध्रीची, सवया, सखी सहेली के नाम हैं। आली शब्द को छोड़कर स्त्रीवाची प्रत्यय हटा देने से मित्र के नाम बन जाते हैं। इसके अलावा सम्बन्ध, मित्रयुक् और सुहृत् भी मित्र के नाम हैं ॥४१॥

भाष्यार्थ—सखी के छह नाम हैं।

आली। सह सार्धं चरतीति **सहचरी**। सहाञ्चतीति सध्र्यङ्। ''सहसन्तिरसां सध्रिसमितिरयः।'' ईप्रत्यये **सध्रीची**। सह वयसा वर्तते **सवयाः**। समानं ख्यातीति सखिः (खा)। स्त्रियामीः **सखी**। ''सख्यादयः'' सखि अश्रि प्रहि इत्यादयो डिप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते।

चत्वारो मित्रे। **आली** रहितानि वयस्यादीनि नामानि **मित्रवा**च्यानि स्युरित्यर्थः। 'ञिमिदा स्नेहने '। मेद्यति स्म मेदते स्म वा स्नेहयुक्तो भवति स्म वा **मित्रम्**। ''चिमिदिभ्यां त्रक्'' आभ्यां त्रक् प्रत्ययो भवति। ककारो यण्वद्भावाऽर्थस्तेनागुणत्वम्। सम्यक् स्नेहेन बध्नातीति **सम्बन्धः**। मित्रं युनक्तीति **मित्रयुक्**। सुष्ठु हरति चित्तं **सुहृद्**। शोभनं हृदयं यस्य वा। सखा, स्निग्धः।

सहकृत्वा सहकारी सहायः सामवायिकः।
सनाभिः सगोत्रो बन्धुश्च सोदर्यः अवरजोऽनुजः ॥४२॥

---

१. वयस्या (स्त्री०)—वय-उम्र से समान होती है इसलिए वयस्या है। 'वयसी' भी बनता है।

२. आलिः (स्त्री०)—चारों ओर से चित्त, मन खींच लाती है इसलिए आलि है। 'आली' शब्द भी बनता है।

३. सहचरी (स्त्री०)—साथ-साथ चलती है, रहती है इसलिए सहचरी है।

४. सध्रीची (स्त्री०)—साथ-साथ गमन करती है इसलिए सध्रीची है।

५. सवयाः (स्त्री०)—वय से साथ-साथ बढती है इसलिए वयस्या है।

सम्पादक के अनुसार—जिसकी वय समान है वह सवया है।

६. सखिः, सखा (स्त्री०)—समान एक जैसा कहती है इसलिए सखि है। 'सखी' भी बनता है।

चार मित्र के वाचक शब्द हैं। आली शब्द को छोड़कर वयस्य आदि नाम मित्र के वाच्यभूत हैं।

१. मित्रम् (नपुं०)—जो स्नेह युक्त होता हो वह मित्र है।

२. सम्बन्धः (पुं०)—समीचीन स्नेह से बांधता है इसलिए सम्बन्ध है।

३. मित्रयुक् (पुं०)—मित्र को जोड़ता है इसलिए मित्रयुक् है।

४. सुहृत् (पुं०)—बहुत अच्छी तरह से चित्त का हरण कर लेता है इसलिए सुहृद् है।

सम्पादक के अनुसार—चित्त हरण करता है वह व्युत्पत्ति तान्त सुहृत् शब्द के लिए सम्भव है। मित्र वाचक दान्त सुहृद् शब्द में तो 'शोभनं हृदयं यस्य' अर्थात् जिसका हृदय सुन्दर है, अच्छा है वह सुहृद् है।

अथवा भाष्यकार ने 'सुहृद्'—शोभन हृदय होने से भी कहा है।

सखा, स्निग्ध भी मित्र के नाम हैं।

सहायक, सगे भाई के नाम

श्लोकार्थ—सहकृत्वा, सहकारी, सहाय, सामवायिक ये सहायक के नाम हैं। सनाभि, सगोत्र, बन्धु, सोदर्य सगे भाई के नाम हैं। अवरज, अनुज छोटे भाई के नाम हैं ॥४२॥

चत्वारः सहाये। सहकृत्वान् **सहकृत्वा**। ''कृञश्च'' क्वनिप् प्रत्ययः। प्र० सि०। ''घुटि चा०'' दीर्घः। सह समन्तात् करोतीति **सहकारी**। ''नाम्न्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये''। सह सार्धम् अयते गच्छति **सहायः**। समवाये नियुक्तः **सामवायिकः**। इकण्।

चत्वारो भ्रातरि। समाना नाभिर्यस्य **सनाभिः**। समानं गोत्रं यस्य **सगोत्रः**। बध्नाति स्नेहेन **बन्धुः**। ''पट्यसि वसिहनिमनित्रपीन्दिकन्दिबन्धिबह्याणिभ्यश्च'' एभ्य एकादशभ्य उः प्रत्ययो भवति। **सोदर्यः**। समानोदर्यः, सगर्भः, सोदरः, समानोदरः, आत्मीयः, स्वजनः, आप्तः, ज्ञातिः, सनाभेयः, सपिण्डः।

द्वौ (त्रयो) लघुभ्रातारि। अवरं पश्चाज्जातः **अवरजः**। (अनु) पश्चाज्जातः **अनुजः**। ''सप्तमी-पञ्चम्योर्ज (म्यन्ते ज) नेर्डः''।

भाष्यार्थ—चार सहायक के नाम हैं।

१. **सहकृत्वन्** (पुं० ए.व. में सहकृत्वा)—साथ-साथ कार्य करता है इसलिए सहकृत्वा है।

२. **सहकारिन्** (पुं० ए.व. में सहकारी)—हर तरफ से या सर्वत्र साथ में कार्य करता है इसलिए सहकारी है।

३. **सहायः** (पुं०)—साथ-साथ चलता है इसलिए सहाय है।

४. **सामवायिकः** (पुं०)—समुदाय में नियुक्त रहता है इसलिए सामवायिक है। समवाय + इकण् = सामवायिकः

चार नाम भाई के हैं।

१. **सनाभिः** (पुं०)—जिनकी नाभि समान हों वह सनाभि है अर्थात् एक ही माँ की नाभि से जन्मे हैं इसलिए सनाभि हैं।

२. **सगोत्रः** (पुं०)—जिनका गोत्र समान है वह सगोत्र है।

३. **बन्धुः** (पुं०)—स्नेह से बांध लेता है इसलिए बन्धु है।

४. **सोदर्यः** (पुं०)—एक ही उदर से जन्मे हैं इसलिए सोदर्य है।

समानोदर्य, सगर्भ आदि नाम भी भाई के हैं। देखें भाष्य।

तीन नाम लघु भ्राता के हैं।

१. **अवरजः** (पुं.)—अवर अर्थात् बाद में। बाद में जो उत्पन्न हुआ है इसलिए अवरज है।

२. **अनुजः** (पुं.)—पश्चात् (बाद में) उत्पन्न हुआ है इसलिए अनुज है।

तीसरा नाम आगे के श्लोक में देखें।

कनीयानग्रजो ज्येष्ठः,भ्रातृजानी स्वसाऽनुजा।
भर्त्तुः स्वसा ननान्दा स्यान्मातुलानी प्रियाम्बिका ॥४३॥

अयमनयोरतिशयेन युवा **कनीयान्।** ''युवाऽल्पयोः'' कन्वा। कनिष्ठः। अग्रे जातः **अग्रजः**। प्रकृष्टो वृद्धो **ज्येष्ठः**। ''वृद्धस्य ज्यः'' वृद्धशब्दस्य ज्य आदेशो भवति। पूर्वजः, वरिष्ठः, वर्षीयान्, अग्रियः।

त्रयो भगिन्याम्। भ्रातुर्जाता **भ्रातृजानी**। स्वस (स्य) ति क्षप्यति क्षिपति चित्तं **स्वसृ**। ऋदन्तः। अनु पश्चज्जाता **अनुजा**। भगिनी। भग्नी च। जामिः। यामिश्च।

स्यात् भवेत्। भर्तुःस्वसा भगिनी **ननान्दा**। ''टुनदि समृद्धौ''। नद्। ''अत एव०'' नञ् पूर्वः। न

भाई, नन्द, मामी के नाम

श्लोकार्थ—कनीयान् छोटे भाई का नाम है। अग्रज, ज्येष्ठ बड़े भाई के नाम हैं। भातृजानी, स्वसा बहिन के नाम हैं। अनुजा छोटी बहिन का नाम है। पति की बहिन ननान्दा (ननद) कहलाती है। मातुलानी, प्रियाम्बिका मामी के नाम हैं ॥४३॥

भाष्यार्थ—

३. **कनीयान्** (कनीयस् शब्द का पुं० में एकव० का रूप)—यह इन दोनों में अत्यधिक अल्प(छोटा) है इसलिए कनीयान् है। कनिष्ठ भी छोटे भाई को कहते हैं।

१. **अग्रजः** (पुं.)—आगे अर्थात् पहले उत्पन्न हुआ है इसलिए अग्रज है।

२. **ज्येष्ठः** (पुं.)—बहुत वृद्ध हो वह ज्येष्ठ होता है। वृद्ध शब्द ज्य आदेश होकर यह शब्द बना है। पूर्वज, वरिष्ठ, वर्षीयान् और अग्रिय भी बड़े भाई के नाम हैं।

तीन बहिन के नाम हैं।

१. **भ्रातृजानी** (स्त्री०)—भ्राता से उत्पन्न होती है इसलिए भ्रातृजानी है। सम्पादक के अनुसार—ऐसा विग्रह करके शब्द बनाना असंगत है। फिर भी भ्राता के साथ माता से उत्पन्न होती है ऐसा विग्रह करके जन् धातु से अण् प्रत्यय की प्रकल्पना करके अणन्त होने से ङीप् लगाकर भ्रातृजानी शब्द ग्रन्थकार के अनुसार कथंचित् बन जाता है।

२. **स्वसा** (स्त्री०) (मूल शब्द 'स्वसृ' है, इसका यह एकव० का रूप है)—भाई के चित्त को उचाट देती है इसलिए स्वसा है। 'असु क्षेपणे' धातु से यह अर्थ है। सम्पादक के अनुसार—'श्वस् प्राणने' इस धातु से ऋन् प्रत्यय होकर शकार का सकार होने पर श्वसितीति स्वसा है। हमारे अभिप्राय से जो भाई के साथ श्वास लेती है, अर्थात् भाई के साथ बढ़ती है वह स्वसा है।

३. **अनुजा** (स्त्री०)—अनु बाद में उत्पन्न होती है वह अनुजा है। यह छोटी बहिन का नाम होना चाहिए, बहिन का नहीं। भाष्याकार ने इसे स्पष्ट नहीं किया है।

भगिनी, भग्नी, जामि, यामि भी बहिन के नाम हैं।

ननान्दा (स्त्री०) (मूल शब्द 'ननान्दृ')—पति की बहिन ननान्दा (नन्द) है। जिसके होने पर भाई

नन्दति भ्रातृजाया यस्यां सत्यां सा ननान्दा। ''नञि च नन्देर्ऋन् दीर्घश्च'' नञि उपपदे सति नन्देर्धातोर्ऋन् प्रत्ययो भवति अकारो दीर्घश्च भवति। ननान्दा इति जातम्।

द्वौ मातुलभार्यायाम्। मातुलस्येयं भार्या **मातुलानी**। ''इन्द्र वरुणभवशर्वरुद्रहिमयमारण्य-यवयवनमातुलाचार्याणा-मानुक् ईप् च''। अम्बैव अम्बिका। ''अम्बादिभ्यो डलेकाः'' ड, ल, इक प्रत्यया भवन्ति। प्रिया चासौ अम्बिका **प्रियाम्बिका**।

वैर्यरातिरमित्रोऽरिर्द्विट् सपत्नो द्विषद्रिपुः।
भ्रातृव्यो दुर्जनः शत्रुर्दुष्टो द्वेषी खलोऽहितः ॥४४॥

पञ्चदश शत्रौ। विशिष्टाम् ईं लक्ष्मीम् ईरयति निर्गमयति वीरः, वीरस्य कर्म वैरम्। वैरमस्यास्तीति **वैरी**। वैरिपुरमियर्त्ति गच्छति **आरातिः** अरातिश्च। न मित्रम् **अमित्रम्**। अधर्मानृतादिवत्। ''**विपक्षे नञ्**'' इति सारस्वत सूत्रम्। शत्रुत्वमियर्त्ति **अरिः**। द्वेष्टीति **द्विट्**। ''सत् सूद्विष्द्रुहदुहयुजविदभिदछिदजिनी-राजामुपसर्गेऽपि'' क्विप्। एकार्थाऽभिनिवेशेन समानं पतति **सपत्नः**। द्विष्टे **द्विषन्**। निष्ठुरं रयति **रिपुः**।

की पत्नी (भाभी) आनन्दित नहीं हो पाती है। इसलिए वह ननद है।

मामा की पत्नी (मामी) के दो नाम हैं।

१. **मातुलानी** (स्त्री०)—मामा की यह पत्नी है इसलिए मातुलानी है।

२. **प्रियाम्बिका** (स्त्री०)—अम्बा को ही अम्बिका कहते हैं। प्रिय अम्बिका (माता) होने से प्रियाम्बिका है।

शत्रु के नाम

श्लोकार्थ—वैरी, अराति, अमित्र, अरि, द्विट्, सपत्न, द्विषन्, रिपु, भ्रातृव्य, दुर्जन, शत्रु, दुष्ट, द्वेषी, खल, और अहित ये शत्रु के नाम हैं ॥४४॥

भाष्यार्थ—पन्द्रह शत्रु के नाम हैं।

१. **वैरिन्** (पुं० एकव० में वैरी)—ई अर्थात् लक्ष्मी। विशिष्ट लक्ष्मी (वैभव) को दूर करा देता है वह वीर है। वीर का कर्म वैर है। वैर जिसके पास है वह वैरी है।

२. **आरातिः, अरातिः** (पुं०)—वैरी के नगर में जाता है इसलिए आराति है।

३. **अमित्रः** (पुं०)—मित्र नहीं है इसलिए अमित्र है।

४. **अरिः** (पुं०)—शत्रुपने को प्राप्त होता है इसलिए अरि है।

५. **द्विट्** (पुं०)—द्वेष करता है इसलिए द्विट् है।

६. **सपत्नः** (पुं०)—एक वस्तु के अभिप्राय से एक साथ(समान रूप से उस वस्तु को पाने के लिए) गिरता है, टूट पड़ता है इसलिए सपत्न है।

७. **द्विषन्** (पुं०)—द्वेष रखता है इसलिए द्विषन् है।

८. **रिपुः** (पुं०)—निष्ठुर होकर चलता है इसलिए रिपु है अथवा उ प्रत्ययान्त रिपु शब्द निपात सिद्ध है।

''रज्जुतर्कुवल्गुफल्गुशिशुरिपुपृथुलघवः।'' एते उ प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। निपातनमप्राप्तप्रापणार्थं प्राप्तस्य बाधनार्थम्। लक्षणेन यद्यदसिद्धं तत्सर्वं निपातनात्सिद्धम्। तथा क्षीरस्वामिनः–''**रेपयति रिपुः। रेपृ गतौ।** भ्रातरं व्ययति मारयति **भ्रातव्यः**। दुष्टजनः **दुर्जनः।**'' परमभट्टारकश्रीयशःकीर्त्तिसम्भाषितग्रन्थे–

''प्रशस्या न नमस्याऽपि दुर्जनैर्या विधीयते।
कण्टकः पादलग्नोऽपि न शुभाय प्रजायते॥''

तथा च सूक्तिमुक्तावल्याम्–

''वरं क्षिप्तः पाणिः कुपितफणिनो वक्त्रकुहरे
वरं झम्पापातो ज्वलदनलकुण्डे विरचितः।
वरं प्रासप्रान्तः सपदि जठरान्तर्विनिहितो
न जन्यं दौर्जन्यं तदपि विपदां सद्म विदुषा॥''

अत्र ये केचिद् दुर्जनाः सन्ति, तेषां मस्तकेऽशनिपातो भवतु। तथा च–

''दुज्जण सुहियउ होउ जगि सुयणु पयासिउ जेण।
अमिउ विसें वासरु तिमिण जिमि मरगउ कच्चेण॥''

अप्राप्त की प्राप्ति के लिए और प्राप्त की बाधा के लिए निपातन होता है। लक्षण से जो-जो सिद्ध नहीं होता है वह सब निपातन से सिद्ध होता है। क्षीर स्वामी के अनुसार–'रेपृ' धातु गति अर्थ में हैं उससे रिपु बनता है।

९. **भ्रातृव्यः** (पुं०)–भाई को मार देता है इसलिए भ्रातृव्य है।

१०. **दुर्जनः** (पुं०)–दुष्ट मनुष्य को दुर्जन कहते हैं।

परम भट्टारक श्री यशःकीर्ति के कहे ग्रन्थ में लिखा है–

''दुर्जन के साथ प्रशंसा और नमस्कार भी नहीं किया जाता है, वह ठीक ही है क्योंकि पैर में लगे होने पर भी कांटा कभी अच्छे के लिए नहीं होता है।''

उसी प्रकार सूक्ति मुक्तावली में कहा है–

''कुपित सर्प के अन्धे मुख में हाथ डालना ठीक है, जलते हुए अग्निकुण्ड में गिर पड़ना ठीक है, पेट में घुसे हुए भाले की नोंक से मर जाना ठीक है किन्तु विद्वान् पुरुष को कभी भी विपदाओं का घर दुर्जन संगति नहीं बनाना चाहिए।''

अब यहाँ कहते हैं कि जो कोई दुर्जन हैं उनके मस्तक पर अशनिपात होवे। सावय धम्म दोहा में कहा है–

दुर्जन संसार में सुखी होवे जिससे सज्जन प्रकाशित हुआ है। जिस प्रकार विष से अमृत, अंधकार या रात्रि से दिन एवं काँच से मरकत मणि प्रकाशित होती है।

शृणाति शीर्यते वा **शत्रुः**। दूष्यते निन्द्यते लोके **दुष्टः**। द्वेष्टि द्वेषोऽस्त्यस्य वा **द्विषन्**। खलति सज्जनगुणानाच्छादयतीति **खलः**। न मैत्रीं हिनोति गच्छति, न हितो वा, **अहितः**। अभियातिः, प्रतिपक्षः, असहनः, जिघांसु, परिपन्थी, परः, असुहृत्, अपथी, पर्यवस्थाता, शात्रवः, प्रत्यनीकः, द्वेषणः, दुर्हृद्, दस्युः, अभिमन्थी।

दीधितिर्भानुरुस्त्रोंऽशुर्गभस्तिः किरणः करः।
पादो रुचिर्मरीचिर्भास्तेजोऽर्चिर्गौर्द्युतिः प्रभा ॥४५॥

षोडश किरणे। दिधीते दीप्यते **दीधितिः**। 'दीधीङो ङितिः' दीधीङो धातोर्ङितिः प्रत्ययो भवति। 'भा दीप्तौ' भाति **भानुः**। 'दाभारिवृञ्भ्यो नुः।' एभ्यो नुः प्रत्ययः स्यात्। वसति रवौ **उस्त्रः**। पुंसि। अश्नुते जगद् व्याप्नोति **अंशुः**। स्त्री। उणादौ। अनच्। अनितीति **अंशुः**। अनेः शुः अनेर्धातोः शु प्रत्ययो भवति। ['भा दीप्तौ' भाति **भानुः**। 'दाभारी'] गां भुवं बभस्ति **गभस्तिः**।

---

११. शत्रुः (पुं०)—पीड़ा देता है अथवा नष्ट करता है वह शत्रु है। सम्पादक के अनुसार—रु प्रत्ययान्त यह शब्द निपात सिद्ध भी है।

१२. दुष्टः (पुं०)—लोक में दूषित है और निन्दा को प्राप्त है इसलिए दुष्ट है।

१३. द्वेषिन् (पुं० एकव० में द्वेषी)—इसके पास द्वेष होता है इसलिए द्वेषी है।

१४. खलः (पुं०)—सज्जनों के गुणों को आच्छादित करता है, ढकता है इसलिए वह खल है।

१५. अहितः (पुं०)—मैत्री भाव को नहीं रखता है अथवा हित नहीं करता है इसलिए अहित है।

अभियाति, प्रतिपक्ष, असहन जिघांसु, परिपन्थी, पर, असुहृत्, अपथी, पर्यवस्थाता, शात्रव, प्रत्यनीक, द्वेषण, दुर्हृद्, दस्यु, अभिमन्थीआदि नाम भी हैं।

किरण के नाम

श्लोकार्थ—दीधिति, भानु, उस्त्र, अंशु, गभस्ति, किरण, कर, पाद, रुचि, मरीचि, भा, तेज, अर्चि, गौ, द्युति और प्रभा ये किरण के नाम हैं ॥४५॥

भाष्यार्थ—सोलह किरण के नाम हैं।

१. दीधितिः (स्त्री०)—प्रकाश करती है इसलिए दीधिति है।

२. भानुः (पुं०)—'भा' धातु दीप्ति अर्थ में है। चमकती है इसलिए भानु है। भा से नु प्रत्यय होकर भानु बनता है।

३. उस्त्रः (पुं०)—सूर्य में रहती है इसलिए उस्त्र है।

४. अंशुः (पुं०) (स्त्री०)—सम्पूर्ण जगत् को व्याप्त कर लेती है इसलिए अंशु है। उणादि गण में अन् धातु से 'शु' प्रत्यय होता है इसलिए अंशु है।

सम्पादक के अनुसार—'अंश' धातु विभाजन अर्थ में है। इसमें उ प्रत्यय लगने से अंशु बनता है। विभाजन कराती है इसलिए अंशु है।

''वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिंहे वर्णविपर्य्ययः।
षोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृषोदरे॥''

कीर्य्यते **किरणः**। हलायुधे–''**किरति विक्षिपति तमांसि किरणः**।'' ''कृभूभ्यां कनः। कीर्यते **करः**। पद्यते **पादः**।'' ''पदरुजविशस्पृशोचां घञ्।'' रोचते **रुचिः**। म्रियते तमोऽनेन **मरीचिः**। स्त्रीन्रोः। उणादौ। म्रियते **मरीचिः**। 'मृकणिभ्यामीचिः' आभ्यामीचिः प्रत्ययो भवति। भासते क्विपि सान्तो **भास्**। स्त्रीन्रोः। पुंस्येवेति शब्दभेदः। भाः। भासौ। भासः। तेजयतीति **तेजस्**। अर्चयतीति अर्चिष्। अर्च्यते पूज्यते **अर्चिः**। 'अर्चि शुचिरुचिहुसृपिछदिछर्दिभ्य इसिः।' गच्छति तमोऽत्रोदिते **गौः**। स्त्रीन्रोः। द्योतनं **द्युतिः**। द्योतते (वा) **द्युतिः**। प्रभाति **प्रभा**। रोचिः अभीशुः प्रद्योतः रश्मिः घृणिः रुचिः विभा धाम वसुः केतुः प्रग्रहः उपधृतिः धृष्णिः पृश्निः मयूखः विरोकः शेकश्च।

---

५. गभस्तिः (पुं०)–पृथ्वी पर पहुँचती है इसलिए गभस्ति है। बभस्ति से गभस्ति बना है। कहा भी है–''गवेन्द्र आदि में वर्ण का आगम हुआ है, सिंह शब्द में वर्ण का विपर्यय हुआ है(अर्थात् हिंस से सिंह हुआ है),षोडश आदि शब्द में वर्ण विकार है और पृषोदर गण में वर्ण नाश होता है।'' (शाकटायन सूत्र. २/२/१७२)

६. किरणः (पुं०)–बिखरती है, फैलती है इसलिए किरण है। हलायुध के अनुसार–अन्धकार को भगा देती है इसलिए किरण है।

७. करः (पुं०)–बिखरती है इसलिए कर है।

८. पादः (पुं०)–वस्तु को प्राप्त करती है इसलिए पाद है।

९. रुचि (स्त्री०)–अच्छी लगती है, इसलिए रुचि है।

१०. मरीचिः (पुं०, स्त्री०)–इससे अन्धकार मरता है, नष्ट होता है इसलिए मरीचि है। उणादि में 'मृ' से रीचिः प्रत्यय होता है।

११. भास् (स्त्री०, पुं०)–चमकती है इसलिए भास् है। यह सान्त शब्द दोनों लिंग में है। पुंलिङ्ग में भी है पर शब्द भेद है। भाः भासौ भासः–इस तरह रूप बनते हैं।

१२. तेजस् (नपुं०)–चमका देती है इसलिए तेजस् है।

१३. अर्चिष् (नपुं०)–पूज्य बनाती है, पूजी जाती है इसलिए अर्चिष् है अर्थात् किरणों से सूर्य पूज्य बनाता है इसलिए तथा स्वयं भी पूजी जाती है इसलिए अर्चिष् कहा है।

१४. गौः (स्त्री०, पुं०)–इसके उदित होने पर अन्धकार भग जाता है इसलिए गौ है।

१५. द्युतिः (स्त्री०)–प्रकाश मात्र है अथवा प्रकाशित करती है इसलिए द्युति है।

१६. प्रभा (स्त्री०)–प्रकृष्ट रूप से सुशोभित है इसलिए प्रभा है।

इसके अलावा रोचि, अभीशु, प्रद्योत, रश्मि, घृणि, रुचि, विभा, धाम, वसु, केतु, प्रग्रह, उपधृति, धृष्णि, पृश्नि, मयूख, विरोक, शेक आदि शब्द भी हैं।

दीप्तिर्ज्योतिर्महो धाम रश्मिरूर्जो विभावसुः।
शीतोष्ण प्रायपूर्वाञ्चौ तदन्ताविन्दुभास्करौ ॥४६॥

सप्त तेजसि। दीप्यते **दीप्तिः**। द्योतते **ज्योतिः**। ज्योतिरादयः। ज्योतिर्बहिरादयः। महति **महः**। सान्तम्। धीयते सूर्येण नान्तम् **धामन्**। रशिः सौत्रः। रशति अश्नुते **रश्मिः**। ''ऊर्ज बलप्राणनयोः।'' ऊर्जयतीति **ऊर्जः**। कः। विभा वसुर्यस्य स **विभावसुः**। (विभा। वसुः।)

तयोरन्तौ तदन्तौ। **इन्दुभास्करौ**। इन्दुश्च भास्करश्च। इन्दुभास्करौ। कथंभूतौ? **शीतोष्ण (प्राय) पूर्वाञ्चौ**। शीतीष्णौ (प्रायेण) पूर्वाञ्चौ ययोरिन्दुभास्करयोः (तौ) शीतोष्ण **(प्राय)** पूर्वाञ्चौ। शीतदीधितिः, शीतदीधितिमान्, शीतभानुः, शीतभानुमान्, शीतांशुः, शीतांशुमान्, शीतगभस्तिः, शीतगभस्तिमान्, शीतकिरणः, शीतकिरणवान्, शीतपादः, शीतपादवान्, शीतरुचिः, शीतरुचिमान्, शीतमरीचिः, शीतमरीचिमान्, शीतार्चिः, शीतार्चिष्मान्, शीतभाः, शीतभावान्, शीतगुः, शीतगोवा (मा) न्, शीतद्युतिः, शीतद्युतिमान्, शीतप्रभः, शीतप्रभावान्, शीतदीप्तिः, शीतदीप्तिमान्, शीतज्योतिः, शीतज्योतिष्मान्, शीतमहाः, शीतमहस्वान्, शीतधामा,

---

तेज और चन्द्रमा, सूर्य के नाम

श्लोकार्थ—दीप्ति, ज्योति, मह, धाम, रश्मि, ऊर्ज, विभावसु ये तेज के नाम हैं। प्रायः शीत, उष्ण शब्द किरण और तेज के नामों के पहले लगा देने पर तथा अञ्च् (मतुप्) प्रत्यय लगने से और दीधित आदि शब्द अन्त में होने पर क्रमशः चन्द्रमा, सूर्य के नाम हो जाते हैं ॥४६॥

भाष्यार्थ—तेज के सात नाम हैं।

१. **दीप्तिः** (स्त्री०)—इससे पदार्थ प्रकाशित किया जाता है इसलिए दीप्ति है।

२. **ज्योतिष्** (नपुं०)—प्रकाशित करता है इसलिए ज्योति है।

३. **महस्** (नपुं०)—पूजा जाता है इसलिए मह है।

४. **धामन्** (नपुं०)—सूर्य इसे धारण करता है इसलिए धाम है।

५. **रश्मिः** (पुं०)—प्राप्त होती है इसलिए रश्मि है।

६. **ऊर्जस्** (नपुं०)—बल और प्राणों को देता है इसलिए ऊर्जस् है।

७. **विभावसुः** (पुं०)—जिसका धन उसकी आभा है इसलिए विभावसु है।

पूर्व में शीत और अन्त में दीधित आदि लगाने से चन्द्रमा के नाम तथा मतुप् प्रत्यय से भी चन्द्रमा के नाम होते हैं—शीतदीधिति, शीतदीधितिमान्, शीतभानु, शीतभानुमान्, शीतांशु, शीतांशुमान्, शीतगभस्ति, शीतगभस्तिमान्, शीतकिरण, शीतकिरणवान्, शीतपाद, शीतपादवान्, शीतरुचि, शीतरुचिमान्, शीतमरीचि, शीतमरीचिमान्, शीतार्चि, शीतार्चिष्मान्, शीतभा, शीतभावान्, शीतगु, शीतगोवा (मा) न्, शीतद्युति, शीतद्युतिमान्, शीतप्रभ, शीतप्रभावान्, शीतदीप्ति, शीतदीप्तिमान्, शीतज्योति, शीतज्योतिष्मान्, शीतमहा, शीतमहस्वान्, शीतधामा, शीतधामवान्,

शीतधामवान्, शीतरश्मिः, शीतरश्मिवान्, शीतोर्जः, शीतोर्जवान्, शीतविभावसुः, शीतविभावसुमान्, किरणशब्दानां (शब्देभ्यः) पूर्वं शीतशब्दप्रयोगे, चन्द्रनामानि भवन्ति। उष्णशब्दप्रयोगे सूर्यनामानि भवन्ति–उष्णदीधितिः, उष्णदीधितिमान्, उष्णभानुः, उष्णभानुमान्, उष्णोस्रः, उष्णोस्रवान्, उष्णांशुः, उष्णांशुमान्, उष्णगभस्तिः, उष्णगभस्तिमान्, उष्णकिरणः, उष्णकिरणवान्, उष्णपादः, उष्णपादवान्, उष्णरुचिः, उष्णरुचिमान्, उष्णमरीचिः, उष्णमरीचिमान्, उष्णभाः, उष्णभास्वान्, उष्णतेजाः, उष्णतेजस्वान्, उष्णार्चिः, उष्णार्चिष्मान्, उष्णगुः, उष्णगोमान्, उष्णद्युतिः, उष्णद्युतिमान्, उष्णप्रभः, उष्णप्रभावान्, उष्णदीप्तिः, उष्णदीप्तिमान्, उष्णज्योतिः, उष्णज्योतिष्मान्, उष्णमहाः, उष्णमहस्वान्, उष्णधामा, उष्णधामवान्, उष्णरश्मिः, उष्णरश्मिवान्, उष्णोर्जः, उष्णोर्जवान्, उष्णविभावसुः, उष्णविभावसुवान्।

शशी विधुः सुधासूतिः कौमुदीकुमुदप्रियः।
कलाभृच्चन्द्रमाश्चन्द्रः कान्तिमानोषधीश्वरः ॥४७॥

दश चन्द्रे। शशोऽस्यास्तीति **शशी**। विदधात्यमृतं **विधुः**। ''वौ धाञश्च''। सुधा अमृतं सूयते **सूधासूतिः।** कुमुदानामियं विकाश (स) हेतुत्वात्**कौमुदी** (ज्योत्स्ना तस्याः प्रियः कौमुदीप्रियः)। कुमुदानां

शीतरश्मि, शीतरश्मिवान्, शीतोर्ज, शीतोर्जवान्, शीतविभावसु, शीतविभावसुमान्, किरणशब्दानां (शब्देभ्यः) पूर्वे शीतशब्दप्रयोगे, इत्यादि। एवं उष्ण शब्द लगाने से सूर्य के नाम होते हैं—उष्णदीधितिः, उष्णदीधितिमान्, उष्णभानुः, उष्णभानुमान्, उष्णोस्रः, उष्णोस्रवान्, उष्णांशुः, उष्णांशुमान्, उष्णगभस्तिः, उष्णगभस्तिमान्, उष्णकिरणः, उष्णकिरणवान्, उष्णपादः, उष्णपादवान्, उष्णरुचिः, उष्णरुचिमान्, उष्णमरीचिः, उष्णमरीचिमान्, उष्णभाः, उष्णभास्वान्, उष्णतेजाः, उष्णतेजवान्, उष्णार्चिः, उष्णार्चिष्मान्, उष्णगुः, उष्णगोमान्, उष्णद्युतिः, उष्णद्युतिमान्, उष्णप्रभः, उष्णप्रभावान्, उष्णदीप्तिः, उष्णदीप्तिमान्, उष्णज्योतिः, उष्णज्योतिष्मान्, उष्णमहाः, उष्णमहस्वान्, उष्णधामा, उष्णधामवान्, उष्णरश्मिः, उष्णरश्मिवान्, उष्णोर्जः, उष्णोर्जवान्, उष्णविभावसुः, उष्णविभावसुवान्।

चन्द्रमा के नाम

श्लोकार्थ—शशी, विधु, सुधासूति, कौमुदी, कुमुदप्रिय, कलाभृत्, चन्द्रमा, चन्द्र, कान्तिमान्, ओषधीश्वर ये चन्द्रमा के नाम हैं ॥४७॥

भाष्यार्थ—चन्द्र के दश नाम हैं।

१. **शशिन्** (पुं॰ एकव॰ में शशी)—शश अर्थात् खरगोश या कलंक। वह इसके होता है इसलिए शशी है।

२. **विधुः** (पुं॰)—अमृत को करता है अर्थात् देता है इसलिए विधु है।

३. **सुधासूतिः** (पुं॰)—सुधा अर्थात् अमृत्। सुधा को उत्पन्न करता है इसलिए सुधासूति है।

४. **कौमुदी** (स्त्री॰), **कौमदीप्रियः** (पुं॰)—कुमुद अर्थात् रात्रिविकाशी कमल। कुमुदों के खिलने का कारण होने से कौमुदी कहलाता है।

प्रियः अभीष्टः **कुमुदप्रियः**। कलां बिभर्त्तीति **कलाभृत्।** ''मा माने'' चन्द्रं मातीति **चन्द्रमाः**। ''चन्द्रे मातेः'' चन्द्रे उपपदे अस्मादसन् प्रत्ययो भवति। अगुणवद्भावादकारलोपः। भिन्नयोगः स्पष्टार्थ एव। चन्दतीति **चन्द्रः**। ''स्फायि तञ्चिवञ्चिशकिक्षिपिक्षुदिरुदिमदिमन्दिचन्द्युन्दीन्दिभ्यो रक्'' । कान्तिरस्यास्ति **कान्तिमान्**। ओषधीनामीश्वरः **ओषधीश्वरः**। इन्दुः, सोमः, राजा, रोहिणीवल्लभः, अब्जः, ऋक्षेशः, अत्रिनेत्रप्रसूतः।

तथा चोक्तं यशस्तिलके-[तृतीय आश्वास-४८०]।

''आहु नेंत्रोत्थमत्रेः स्नुतममृतनिधे यं हरेर्नर्मबन्धु
मित्रं पुष्पायुधस्य त्रिपुरविजयिनो मौलिभूषाविधानम्।
वृत्तिक्षेत्रं सुराणां यदुकुलतिलकं बान्धवं कैरवाणां,
सम्प्रीतिं वस्तनोतु द्विजरजनियतिश्चन्द्रमाः सर्वकालम्॥''

प्रालेयांशुः, श्वेतरोचिः, शशाङ्कः, द्विजराजः, रजनिकरः, पीयूषरुचिः, निशीथिनीनाथः, जैवातृकः, मृगाङ्कः, दाक्षायणीरमणः, मा अप्युच्यते, सत्यभामेतिवत्। सुधामूर्तिः, अमृतनिर्गमः, समुद्रनवनीतम्। देश्याम्।

---

५. **कुमुदप्रियः** (पुं०)—चन्द्रमा कुमुदों को प्रिय, अभीष्ट है इसलिए कुमुदप्रिय नाम है।

६. **कलाभृत्** (पुं०)—कलाओं को धारण करता है इसलिए कलाभृत् है।

७. **चन्द्रमाः** (मूल शब्द चन्द्रमस्)—चन्द्र कर्पूर को कहते हैं। उसके समान जो होता है इसलिए चन्द्रमा है।

८. **चन्द्रः** (पुं०)—प्रकाशित होता है इसलिए चन्द्र है।

९. **कान्तिमान्** (पुं०)—इसकी कान्ति होती है इसलिए कान्तिमान् है।

१०. **ओषधीश्वरः** (पुं०)—ओषधि का स्वामी है इसलिए ओषधीश्वर है।

इन्दु, सोम, राजा, रोहिणीवल्लभ, अब्ज, ऋक्षेश, अत्रिनेत्रप्रसूत आदि नाम भी हैं।

यशस्तिलक चम्पू में भी कहा है–हे राजन्! वह जगत्प्रसिद्ध ब्राह्मणों का और रात्रि का पति ऐसा चन्द्रमा आप लोगों का हर्ष विस्तारित करे, जिसे विद्वान् लोग अत्रिऋषि के नेत्र से उत्पन्न हुआ, क्षीर सागर का पुत्र, श्री नारायण का साला व कामदेव का मित्र और श्री महादेव के मस्तक का आभरण करने वाला व देवताओं की जीविका का खेत कहते हैं। जिसे यदुवंशी राजाओं के वंश का तिलक कहते हैं। इसी प्रकार विद्वान् लोग जिसे 'कुमुदबन्धु' कहते हैं क्योंकि चन्द्रमा द्वारा कुमुद विकसित होते हैं।

प्रालेयांशु, श्वेतरोचि, शशाङ्क, द्विजराज, रजनिकर, पीयूषरुचि, निशीथिनीनाथ, जैवातृक, मृगाङ्क, दाक्षायणीरमण, सुधामूर्ति, अमृतनिर्गम, समुद्रनवनीत आदि नाम भी हैं।

उडूनि भानि तारर्क्षं, नक्षत्रं तत्पतिर्निशा।
क्षणदा रजनी नक्तं, दोषा श्यामा क्षिपाकरः ॥४८॥

चत्वारो नक्षत्रे। अवति प्रभाम् **उडुः**। स्त्रीक्लीबे। तथा चामरसिंहे-

''नक्षत्रमृक्षं भन्तारा तारकाऽप्युडु वा स्त्रियाम्।''

भाति दीप्यते **भम्**। क्षीरस्वामिनि- **''भा विद्यतेऽस्य भम्**।'' तरन्त्यनया **तारा**। तारयति वा। ऋक्ष्णोति हिनस्ति तम् **ऋक्षम्**। नक्षति खे याति न तमः क्षि (क्ष) णोति वा **नक्षत्रम्**। ''अमि नक्षिकडिभ्योऽत्रः''। तारकं क्लीबेऽपि। यच्च शाश्वतः–

''नक्षत्रे वाऽक्षिमध्ये च तारकं तारकाऽपि च।

लक्ष्यं च-

द्वित्रैर्व्योम्नि पुराणमौक्तिकघनच्छायै स्थितं तारकैः''

नक्षत्र, रात्रि, चन्द्रमा के नाम

श्लोकार्थ—उडु, भ, तारा, ऋक्ष, नक्षत्र ये नक्षत्र के नाम हैं। इनका स्वामी रात्रि है। निशा, क्षणदा, रजनी, नक्त, दोषा, श्यामा, क्षिपा ये रात्रि के नाम हैं। इसमें कर जोड़ देने से चन्द्रमा के नाम होते हैं ॥४८॥

भाष्यार्थ—चार (पाँच) नाम नक्षत्र के हैं।

१. उडुः (स्त्री०, नपुं०)—प्रभा की रक्षा करता है इसलिए उडु है। सम्पादक के अनुसार—उ और डु इन दोनों शब्दों का कर्मधारय समास होने से उडु बना है। नक्षत्र रक्षा करते हैं और आकाश में ऊपर रहते हैं इसलिए उनको उडु कहते हैं।

अमरसिंह ने उडु शब्द को स्त्री० लिंग में माना है।

२. भम् (नपुं०)—सुशोभित होता है, दीप्ति देता है इसलिए भम् है। क्षीर स्वामी के अनुसार—इसके भा (प्रकाश) होता है इसलिए भम् है।

३. तारा (स्त्री०)—इसमें तैरते हैं इसलिए तारा है अर्थात् इसको देखने से आँखें प्रकाश में तैरती हैं इसलिए तारा कहा है अथवा जो तैराता है, पार कराता है इसलिए तारा है।

४. ऋक्षम् (नपुं०)—अन्धकार को नाश करता है इसलिए ऋक्ष है।

५. नक्षत्रम् (नपुं०)—आकाश में चलता है अथवा अन्धकार को दूर नहीं करता है इसलिए नक्षत्र है।

तारकम् (नपुं०) में भी है। क्षीर स्वामी भाष्य में कहा गया है–'नक्षत्र अथवा आंख के मध्य भाग में तारकं तारका इन दोनों शब्दों का प्रयोग होता है।' और लक्ष्य में भी कहा है—व्योम शब्द को दो और तीनों लिंगों में माना है। पुराण, मौक्तिक, घन, छाया, तारक शब्द भी इसी तरह जानना।

तत्पतिः।

(नक्षत्र पर्य्यायेभ्यः परं) **पति**शब्दप्रयोगे चन्द्रनामानि भवन्ति। उडुपतिः। तारापतिः। ऋक्षपतिः। नक्षत्रपतिः। उडुराजः। उडुस्वामी। उडुनाथः। नक्षत्रेश्वरः। तारेन्द्रः।

निशा।

क्षणदा रजनी नक्तं दोषा श्यामा क्षिपा।

सप्त रात्रौ। निशाति तनूकरोति चेष्टामिति **निशा**, निशो वा। ''आत श्चोपसर्गे''। क्षणमवसरं ददातीति **क्षणदा**। तमसा रञ्जति **रजनिः**। स्त्रियामीः। **रजनी**। रजनशब्दाद् वा नदादित्वादीः। नेनेक्ति **नक्तम्।** दुष्टं दूषयति याऽत्र **दोषा**। आदन्तोऽव्ययाऽनव्ययः। श्यायन्ते गच्छन्ति रात्रिञ्चरा अत्र **श्यामा**। तथाऽनेकार्थ (ध्वनि) मञ्जर्याम्-

''श्यामा रात्रिस्तु विट्श्यामा श्यामा स्त्री मुग्धयौवना।
श्यामा प्रियङ्गुराख्याता श्यामा स्याद् वृद्धदारिका॥''

क्षिप प्रेरणे। क्षिप्। क्षेपणं **क्षिपा**। ''षाऽनुबन्धभिदादिभ्यस्त्वङ्।'' क्षिप्यते स्वापेन जनैः, निर्गम्यते वा। तमी। तमा आदन्तोऽव्ययानव्ययः। तमिस्रा, तमस्विनी, विभावरी, नक्तमुखा। शर्वरी, त्रियामा, निशीथिनी, यामिनी, वसतिः, वासतेयी, रात्रिः।

नक्षत्र के पर्यायवाची नामों के आगे पति शब्द जोड़ने पर चन्द्र के नाम बनते हैं। उडुपति, तारापति इत्यादि देखें भाष्य।

रात्रि के सात नाम हैं।

१. निशा (स्त्री०)—चेष्टाओं को संकुचित करती है इसलिए निशा है।

२. क्षणदा (स्त्री०)—क्षण अर्थात् अवसर देती है इसलिए क्षणदा है अर्थात् रात्रि में अवसर मिलता है इसलिए क्षणदा है।

३. रजनिः, रजनी (स्त्री०)—अन्धकार से रञ्जायमान रहती है इसलिए रजनी है अथवा रजन शब्द से नदादि गण में ई लगने से रजनी होता है।

४. नक्तम् (नपुं०)—अपने आप को धोना यानि अपने मन व तन को जिस समय शांत किया जाता है वह नक्त-रात्रि है।

५. दोषा (स्त्री०)—जो यहाँ दुष्ट को दूषित करती है इसलिए दोषा है। यह अव्यय भी है।

६. श्यामा (स्त्री०)—इसमें रात्रिंचर जीव चलते हैं इसलिए श्यामा है। अनेकार्थ ध्वनि मञ्जरी में कहा है–

''श्यामा रात्रि को कहते हैं, बाजारू स्त्री को श्यामा कहते हैं, यौवन पर मुग्ध स्त्री श्यामा है, प्रियङ्गु फल श्यामा कहलाता है और वृद्ध वेश्या भी श्यामा कहलाती है।''

७. क्षिपा (स्त्री०)—निद्रा में भी पहुँचा देती है, रख देती है, वह क्षिपा है अथवा रात्रि लोगों के लिए निद्रा में निकल जाती है इसलिए क्षिपा है।

करः।

(निशापर्यायात्परं) **कर**शब्दे प्रयुज्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति। निशाकरः, क्षणदाकरः, रजनीकरः, नक्तङ्करः, दोषाकरः, श्यामाकरः, क्षपाकरः।

तरणिस्तपनो भानुर्ब्रध्नः पूषाऽर्यमा रविः।
तिग्मः पतङ्गो द्युमणिर्मार्तण्डोऽर्को ग्रहाधिपः ॥४९॥
इनः सूर्यस्तमोध्वान्ततिमिरारिर्विरोचनः।
दिनं दिवाऽहर्दिवसो वासरः-तत्करश्च सः॥५०॥

सप्तदश सूर्ये। तरन्त्यनेनेति **तरणिः**। ''ऋतृसृधृञ् धम्यश्यविवृतिग्रहिभ्योऽनिः।'' तपतिः त्रिलोकीं **तपनः।** भाति दीप्यते करैः **भानुः।** ''दाभारिवृञ्भ्यो नुः'' नुः प्रत्ययः। ''बन्ध बन्धने'' बध्नाति जन्तुदृष्टी**र्ब्रध्नः**। ''बन्धेर्ब्रधिश्च''। अस्मान्नक् प्रत्ययो भवति ब्रध्यादेशश्च। इकार उच्चारणार्थः। पुष पुष्टौ। पुष्णाति वर्धते तेजसा **पूषा**। पूषादयः– 'पूषन्नर्यमन्नुक्षञ्श्वन्प्लीहन्मातरिश्–वन्क्लेदन्स्नेहन्मूर्धन्यूषन्दोषन्'' एते कन्यन्ता निपात्यन्ते। इयर्त्तीति **अर्यमा**। ''ऋ गतौ''। रूयते स्तूयते **रविः**। ''इः सर्वधातुभ्यः''। तीतिक्षतीति **तिग्मः।**

विशेष—अन्य कोशों में 'क्षपा' शब्द मिलता है।

इसके अलावा तमी, तमा, तमिस्रा, तमस्विनी, विभावरी, नक्तमुखा। शर्वरी, त्रियामा, निशीथिनी, यामिनी, वसतिः, वासतेयी, रात्रिः आदि नाम भी हैं।

रात्रि के नामों में कर शब्द लगा देने पर चन्द्रमा के नाम होते हैं। निशाकर, क्षणदाकर, रजनीकर, नक्तङ्कर, दोषाकर, श्यामाकर, क्षपाकर इत्यादि।

सूर्य के नाम

श्लोकार्थ—तरणि, तपन, भानु, ब्रध्न, पूषा, अर्यमा, रवि, तिग्म, पतङ्ग, द्युमणि, मार्तण्ड, अर्क, ग्रहाधिप सूर्य के नाम हैं ॥४९॥

श्लोकार्थ—इन, सूर्य, तमोरि, ध्वान्तारि, तिमिरारि, विरोचन ये भी सूर्य के नाम हैं। दिन, दिवा, अहन्, दिवस और वासर दिन के नाम हैं। इनमें कर जोड़ने से सूर्य के नाम हो जाते हैं ॥५०॥

भाष्यार्थ—सत्रह सूर्य के नाम हैं।

१. **तरणिः** (पुं॰)—जिससे प्रकाश मार्ग तय किया जाता है या तरा जाता है वह सूर्य है।

२. **तपनः** (पुं॰)—तीन लोक को तपाता है इसलिए तपन है।

३. **भानुः** (पुं॰)-किरणों से सुशोभित होता है इसलिए भानु है।

४. **ब्रध्नः** (पुं॰)—जीवों की दृष्टि बांध देता है अर्थात् इसे जीव दृष्टि से देख नहीं पाते इसलिए ब्रध्न है।

५. **पूषन्** (प्र॰ वि॰ एकव॰ में पूषा)—अपने तेज से बढ़ता है, पुष्ट होता है इसलिए पूषन् है।

६. **अर्यमन्** (प्र॰ वि॰ एकव॰ में अर्यमा)—चलता है, जाता है इसलिए अर्यमन् है।

''युजिरुचितिजां घ्मक्''। पतति नक्षत्रपथे **पतङ्गः**। ''तृपतिभ्यामङ्गः''। आभ्यामङ्गः प्रत्ययो भवति। दिवो मणिरिव **द्युमणिः**। मृतण्डस्यापत्यं **मार्तण्डः**। मृतण्डश्च। आकाशमियर्त्ति **अर्कः**। उणादौ ''अर्च पूजायाम्।'' अर्च्यते **अर्कः**। ''इण्भीकापाशल्यर्चिकृदाधाराभ्यः कः'' एभ्यः कः प्रत्ययो भवति। ग्रहाणामधिपः स्वामी **ग्रहाधिपः**। एतीति **इनः**। ''इण्जिकृषिभ्यो नक्''। सुवति (प्रेरयति कर्मणि) लोकान् **सूर्यः**। ''सूर्यरुच्याव्यथ्याः कर्तरि''। **सूर्य** इति य प्रत्ययान्तो निपातः। तमश्च ध्वान्तं च तिमिरश्च **तमोध्वान्ततिमिराः**, तेषामरिः,– तमोरिः, ध्वान्तारिः, तिमिरारिः। विरोचते इत्येवंशीलो **विरोचनः**। ''रुचादेश्च व्यञ्जनादेः''। रुचादेर्गणाद् व्यञ्जनादेर्युः भवति। आदित्यः, सविता, सहस्रकिरणः, प्रद्योतनः, भास्करः, तिग्मांशुः, दिनमणिः, भास्वान्, विवस्वान्, हरिः, विकर्तनः, भगः, गोपतिः, दिनकरः, सूरः, शूरश्च, अंशुमाली, मिहिरः, तिमिररिपुः, अंशुमान्, अंशुः, हरिदश्वः, सप्ताश्वः, प्रभाकरः, भानुमान्, हंसः, खगः, मित्रः, चित्रभानुः, अहर्पतिः, कर्मसाक्षी, जगच्चक्षुः, द्वादशात्मा, त्रयीतनुः।

---

७. **रविः** (पुं०)—स्तुति की जाती है इसलिए रवि है।

८. **तिग्मः** (पुं०)—अत्यधिक ताप देती है इसलिए तिग्म है।

९. **पतङ्ग** (पुं०)—नक्षत्रों के रास्ते में आ पड़ता है इसलिए पतङ्ग है।

१०. **द्युमणिः** (पुं०)—दिन में मणि के समान है इसलिए द्युमणि है।

११. **मार्तण्डः** (पुं०)—मृतण्ड का पुत्र है इसलिए मार्तण्ड है। मृतण्ड नाम भी है।

१२. **अर्कः** (पुं०)—आकाश में चलता है इसलिए अर्क है। 'उणादि' से—पूजा जाता है इसलिए अर्क है।

१३. **ग्रहाधिपः** (पुं०)—ग्रहों का स्वामी है इसलिए ग्रहाधिप है।

१४. **इनः** (पुं०)—आता है अर्थात् प्रतिदिन उदित होता है इसलिए इन है।

१५. **सूर्यः** (पुं०)—लोक को कर्म करने की प्रेरणा देता है इसलिए सूर्य है।

१६. **तमोध्वान्ततिमिरारिः**–समासान्त पद होने के कारण भाष्याकार ने इसे एक नाम गिना है, इसलिए सत्रह सूर्य के नाम कहे हैं। वस्तुतः अरि शब्द को तमः, ध्वान्त और तिमिर के अन्त में जोड़ने से तीन नाम होते हैं। तमोरि, ध्वान्तारि, तिमिरारि (पुं०)।

१७. **विरोचनः** (पुं०)—विशेष रूप से शोभित होता है इसलिए विरोचन है।

इसके अलावा आदित्य, सविता, सहस्रकिरण, प्रद्योतन, भास्कर, तिग्मांशु, दिनमणि, भास्वान्, विवस्वान्, हरि, विकर्तन, भग, गोपति, दिनकर, सूर, शूरश्च, अंशुमाली, मिहिर, तिमिररिपु, अंशुमान्, अंशु, हरिदश्व, सप्ताश्व, प्रभाकर, भानुमान्, हंस, खग, मित्र, चित्रभानु, अहर्पति, कर्मसाक्षी, जगच्चक्षु, द्वादशात्मा, त्रयीतनु आदि नाम भी हैं।

पञ्च दिवसे। ''दोऽवखण्डने'' द्यति खण्डयति अन्धकारमिति **दिनम्**। ''**दोनात** इ (द्यतेरि)च्च'' द्यते र्नप्रत्ययो भवत्याकारस्येच्च। रविर्दी [र्घान् दी] प्यतेऽत्र; आदन्तमव्ययम् **दिवा**। अदन्तं क्लीबम्। दिवं विदन्। न जहाति काल (रवि) **महः**। ''नञि जहातेः'' इति क्विप् (कनिः)। दीव्यतीति **दिवसः**। दिवसम्। ''वेतसवाहसदिवसफनसाः'' एतेऽस्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। वासयत्यत्र **वासरः**। वासोऽपि। उभयम्। ''देविवटिजठिभ्रमिवासिभ्योऽरः'' एभ्योऽर् प्रत्ययो भवति। द्युः। घस्रः।

तत्करश्च सः।

दिनकरः दिवाकरः अहस्करः दिवसकरः वासरकरः इत्यादि सूर्यनामानि भवन्ति।

चक्रवाकाब्जपर्यायबन्धुः-कुमुदविप्रियः ।
यमुनायमकानीनजनकः सविता मतः ॥५१॥

चक्रवाकश्च अब्जं च चक्रवाकाब्जे, **तयोश्चकवाकाब्जयोः** (परत्र) **बन्धु** शब्दप्रयोगे सूर्यनामानि भवन्ति। चक्रवाकबन्धुः। अब्जबन्धुः। पद्मबन्धुः। कमलबन्धुः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

कुमुदविप्रियः।

कुमुदानां (परत्र) **विप्रिय**शब्दे प्रयुज्यमाने सूर्यनामानि भवन्ति। कुमुदविप्रियः। कैरवविप्रियः। कुमुदविवल्लभः। इत्यादि।

पाँच नाम दिन के हैं।

१. दिनम् (नपुं॰)—अन्धकार को खण्डित करता है, नष्ट करता है इसलिए दिन है।

२. दिवा (अव्य॰)—आकारन्त अव्यय है। अकारान्त नपुंसक लिंग में 'दिवम्' होता है।

३. अहन् (नपुं॰)—रवि को नहीं छोड़ता है इसलिए अहन् है।

४. दिवसः (पुं॰)—चमकता है, प्रकाशित होता है इसलिए दिवस है। सम्पादक के अनुसार—दिन में प्राणी क्रीड़ा करते हैं इसलिए भी दिवस है। दिव् धातु चमकने और क्रीड़ा करने दोनों अर्थ में है। 'दिवसम्' भी बनता है(नपुं॰)।

५. वासरः (पुं॰)—लोगों को निवास कराता है, रखता है अर्थात् लोग वहीं रहते हैं जहाँ दिन होता है इसलिए वासर है। 'वासः' भी बनता है।

द्युः, घस्रः शब्द भी दिन के वाचक हैं।

कर शब्द दिन के नाम में जोड़ देने से दिनकर, दिवाकर आदि सूर्य के नाम होते हैं। देखें भाष्य।

सूर्य के अन्य नाम

श्लोकार्थ—चक्रवाक और अब्ज (कमल) के नामों में बन्धु जोड़ देने से सूर्य के नाम बनते हैं। कुमुद के नाम के अन्त में विप्रिय जोड़ने से भी सूर्य के नाम होते हैं। यमुना, यम और कानीन में जनक जोड़ने से भी सविता (सूर्य) के नाम माने गये हैं ॥५१॥

भाष्यार्थ—सुगम है। नामों के लिए देखें भाष्य। कुमुदविप्रिय, कैरवविप्रिय, कुमुदविवल्लभ भी नाम हैं।

यमुनायकानीनजनकः सविता मतः॥ ५१॥

यमुनाजनकः। यमजनकः। कानीनजनकः। सविता। मतः कथितः।

वाहोऽश्वस्तुरगो वाजी हयो धुर्यस्तुरङ्गमः।
सप्तिरर्वा हरी रथ्यः-सप्ताद्यश्वो मयूखवान् ॥५२॥

एकादशाश्वे। वाह्यते गम्यतेऽश्ववाहै **वाहः**। तथाऽनेकार्थ (ध्वनि) मञ्जर्याम्-

''वाहो युग्यं घनो वाहो वाहके वाह इत्यपि।
वाहो मानविशेषश्च वाहो बाहुरिति स्मृतः॥''

''अशू व्याप्तौ॥ अश्। अश्नुते व्याप्नोति वेगेनाभीष्टस्थानमित्**यश्वः**।'' अथवा ''अश् भोजने'' अश्नाति भक्षयति मुद्गादीनित्**यश्वः**। ''अशिलटिखटिविशिभ्यः क्व :''। वमात्रः। ''घोषवत्योश्च कृति'' नेट्। उरो (रसा) गच्छतीति **उरगः**। ''डोऽसंज्ञायामपि''। पूर्वमश्वानां वाजा अभूवन्निति श्रुतिः। वाजाः सन्त्यस्य वजतीत्येवंशीलो वा **वाजी**। इदन्तोऽपि, वाजिः। तथा हैमनाममालायाम्-

''वाजं वाजस्तु पक्षेऽपि मुनौ निःस्वनवेगयोः।''

हिनोति गच्छति वर्धते (वा) अनेन **हयः**। धुरि सङ्ग्रामे साधु**र्धुर्यः**। ''यदुगवादितः''। तुरं (रेण)

घोड़े के नाम

श्लोकार्थ—वाह, अश्व, तुरग, वाजी, हय, धुर्य, तुरङ्गम, सप्ति, अर्वा, हरी, रथ्य ये घोड़े के नाम हैं। अश्व के आदि में 'सप्त' जोड़ने से सूर्य के नाम होते हैं ॥५२॥

भाष्यार्थ—ग्यारह अश्व के नाम हैं।

१. वाहः (पुं॰)—अश्ववाह (घुडसवार) के द्वारा ले जाया जाता है इसलिए वाह है। अनेकार्थ ध्वनि मञ्जरी में भी कहा है–युग्य, घन, वाहक, मान विशेष और बाहु के लिए भी वाह कहा जाता है।

२. अश्वः (पुं॰)—वेग से अभीष्ट स्थान को प्राप्त होता है इसलिए अश्व है। यहाँ 'अशु व्याप्तौ' धातु से अर्थ किया है। 'अश् भोजने' धातु से—मूंग, चना आदि खाता है इसलिए अश्व है।

३. उरगः—छाती से चलता है इसलिए उरग है। यह पाठ भ्रान्त है। सम्पादक के अनुसार—

तुरगः (पुं॰)—वेग से जाता है इसलिए तुरग है।

४. वाजी (पुं॰ एकव॰ में, मूल शब्द वाजिन्)—अश्वों के आगे बाजे होते थे, इससे श्रुति के अनुसार इसके पास बाजा होते हैं अथवा बाजा बजने के स्वभाव से इसे वाजी कहते हैं। 'वाजि' शब्द भी होता है। हैमनाममाला में भी कहा है–

''मुनि, निःस्वन और वेग अर्थ में वाजम् तथा वाजः शब्द है।''

५. हयः (पुं॰)—इससे वैभव की वृद्धि होती है अथवा इससे लोग चलते हैं, सवारी करते हैं इसलिए हय है।

६. धुर्यः (पुं॰)—संग्राम(युद्ध) में अच्छा काम आता है इसलिए धुर्य है। सम्पादक के

गच्छति तु (तो) तोर्त्ति त्वरते वा **तुरङ्गम्ः**। ''गमश्च'' नाम्न्युपपदे गमेश्च संज्ञायां खो भवति ''धात्वादेः षः सः''। सपत्यध्वानं गच्छतीति **सप्तिः**। ''सपेस्तिततितनः'' सपेर्धातोस्ति तति तन् एते प्रत्ययो भवन्ति। अर्वति गच्छति अनेन नान्तः, **अर्वन्**। हरत्यनेन **हरिः**। रथे साधू **रथ्यः**। गन्धर्वः, ताक्ष्यः, ययुः, घोटकः अर्दनिः, वीतिः, पीतिः।

सप्ताद्यश्वो मयूखवान् ॥५२॥

अश्वशब्दस्य (ब्दात्) पूर्वं यदि **सप्तादि** (प्त शब्दः) तदा सूर्यनामानि भवन्ति। सप्तवाहः। सप्ताश्वः। सप्ततुरगः। सप्तवाजीः। सप्तहयः। सप्तधुर्यः। सप्ततुरङ्गमः। सप्तसप्तिः। सप्तार्वा। सप्तहरिः। सप्तरथ्यः।

खं विहायो वियद् व्योम गगनाकाशमम्बरम्।
द्यौर्नभोऽभ्रोन्तरीक्षं च-मेघवायुपथोऽप्यथ ॥५३॥

एकादश गगने। खनति शून्यत्वेन खन्यते वा **खम्**। विजहाति सर्वं **विहायः**। अवाय विहायसां पक्षिणां मार्गे विहं यच्छतीति **वियत्**। (अथवा वीनां पक्षिणां मार्गं यच्छति वियत्)। अमरेन्द्रभाष्ये- ''**वियच्छति**

अनुसार—धुरा को धारण करता है इसलिए धुर्य है।

७. तुरङ्गमः (पुं०)—तीव्र गति से दौड़ता है इसलिए तुरङ्गम है।

८. सप्तिः (पुं०)—मार्ग में चलता है, जाता है इसलिए सप्ति है।

९. अर्वन् (पुं०)—इसके द्वारा जाता है या गमन करता है इसलिए अर्वन् है।

१०. हरिः (पुं०)—इससे लोग हरण कर लेते हैं अर्थात् चुरा कर भाग जाते हैं इसलिए हरि है।

११. रथ्यः (पुं०)—रथ में जुतता है, रथ का वहन करता है इसलिए रथ्य है।

गन्धर्व आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

'सप्त' शब्द आदि में जोड़ने से सूर्य के नाम होते हैं। सप्तवाहः इत्यादि देखें भाष्य।

आकाश के नाम

श्लोकार्थ—ख, विहाय, विहद्, व्योम, गगन, आकाश, अम्बर, द्यौ, नभ, अभ्र, अन्तरीक्ष, मेघपथ और वायुपथ ये आकाश के नाम हैं ॥५३॥

भाष्यार्थ—ग्यारह आकाश के नाम हैं।

विशेष—यहाँ अन्तरीक्ष तक ही आकाश के ग्यारह नाम लिये हैं। आगे के दो नाम बनाये हैं।

१. खम् (नपुं०)—खोदता है अथवा शून्य रूप से खोदा जाता है इसलिए 'ख' है। अर्थात् खोदने से खोखला, शून्य होता है और शून्य आकाश ही होता चला जाता है इसलिए 'ख' कहा जाता है। सम्पादक के अनुसार—'खर्व' धातु गति अर्थ में है। इस आकाश में चला जाता है इसलिए भी 'ख' कहते हैं।

२. विहायस् (नपुं०)—सब को त्याग देता है, छोड़ देता है इसलिए विहाय है अर्थात् आकाश किसी से संयुक्त नहीं रहता है इसलिए विहाय है। विशेष रूप से विमान आदि को चलने में सहायक

विरमति वियत्।'' वायुना वीयते (व्यवति व्यव्यते वा) **व्योमन्**। ''स्त्रिव्यवि मविज्वरित्वरामुपधायाः'' एषामुपधाया वकारस्य चोठ् भवति।''सर्वधातुभ्यो मन्'' (इति विपूर्वकादवेर्मन्)। गम्यते सर्वमनेन **गगनम्**। क्लीबे वा। गच्छत्यनेन गगनं वा। आकाशन्ते सूर्यादयोऽत्रा**काशम्**। न काशते वा छान्दसो दीर्घः। अम्बते शब्दायते **अम्बरम्**। दीव्यन्ति पक्षिणोऽत्र **द्यौः**। स्त्रियाम्। नह्यति बध्नाति सर्वमात्मना सान्तम् नभः। **नभम्** इत्यदन्तम् नभसं च। न भ्राजते**ऽभ्रम्।** अन्तः ऋक्षाण्यत्र **अन्तरीक्षम्**। पृषोदरादित्वम्। द्यावाभूम्योरन्तरीक्ष्यते वा अन्तरिक्षम्, अन्तरीक्षं च। मरुद्वर्त्मन्। तारापथः। पुष्करम्। विष्णुपदम्। त्रिदिवम्। नाकम्। अनन्तम्। सुरवर्त्म। महाब(वि)लम्। देश्याम्।

मेघवायुपथोऽप्यथ ॥५३॥

मेघशब्दाग्रे वायुशब्दाग्रे च पथशब्दे प्रयुज्यमाने आकाशनामानि भवन्ति। मेघपथः। मेघमार्गः। घनपथः। घनमार्गः। पर्जन्यपथः। पर्जन्यमार्गः। मिहिरपथः। मिहिरमार्गः। नभ्राट्पथः। नभ्राण्मार्गः। तडित्पतिपथः।

है इसलिए भी विहायस् है।

३. वियत् (नपुं॰)—पक्षियों के मार्ग को जानकर स्थान देता है अथवा पक्षियों को मार्ग, रास्ता देता है इसलिए वियत् है।

४. व्योमन् (नपुं॰)—वायु बहती है अथवा वायु के द्वारा चलता चला जाता है, जाना जाता है इसलिए व्योम है।

५. गगनम् (नपुं॰)—सभी को यह चलाता है अथवा इसके माध्यम से सभी की गति होती है इसलिए गगन है।

६. आकाशम् (नपुं॰)—इसमें सूर्य आदि सब ओर से प्रकाशमान होते हैं इसलिए आकाश है अथवा स्वयं नहीं प्रकाशित होता है इसलिए आकाश है।

७. अम्बरम् (नपुं॰)—शब्द के समान आचरण करता है इसलिए अर्थात् शब्द की तरह दिखाई नहीं देता है इसलिए अम्बर है।

८. द्यौः (स्त्री॰)—इसमें पक्षिगण क्रीड़ा करते हैं इसलिए द्यौ है।

९. नभस् (नपुं॰)—अपने से सभी को बांध लेता है इसलिए नभस् है। 'नभः' अकरान्त भी है।

१०. अभ्रम् (नपुं॰)—स्वयं जो दिखाई नहीं देता है, सुशोभित नहीं होता है इसलिए अभ्र है।

११. अन्तरीक्षम् (नपुं॰), अन्तरिक्षम् (नपुं॰)—इसके मध्य में या अन्दर नक्षत्र रहते हैं इसलिए अन्तरीक्ष है अथवा आकाश और पृथ्वी के बीच में रहता है इसलिए अन्तरिक्ष है।

मरुद्वर्त्मन्। तारापथ। पुष्करम्। विष्णुपदम्। त्रिदिवम्। नाकम्। अनन्तम्। सुरवर्त्म। महाब(वि)लम्। देश्याम्। आदि शब्द।

मेघ शब्द और वायु शब्द के आगे 'पथ' जोड़ देने पर आकाश के नाम होते हैं। मेघपथ। मेघमार्ग। घनपथ। घनमार्ग। पर्जन्यपथ। पर्जन्यमार्ग। मिहिरपथ। मिहिरमार्ग। नभ्राट्पथ। नभ्राण्मार्ग।

तडित्पतिमार्गः। सौदामिनीपतिपथः। सौदामिनीपतिमार्गः। वायुपथः। वायुमार्गः। वातपथः। वातमार्गः। अनिलपथः। अनिलमार्गः। मरुत्पथः। मरुन्मार्गः। समीरणपथः। समीरणमार्गः। गन्धवाहपथः। गन्धवाहमार्गः। श्वसनपथः। श्वसनमार्गः। सदागतिपथः। सदागतिमार्गः।

तच्चरः खेचरः तद्गः पक्षी पत्री पतत्र्यपि।
शकुन्तिः शकुनिर्विश्च पतङ्गो विष्किरोऽन्यथा ॥५४॥

तच्चरः खेचरः-

तत्र आकाशे चरतीति **तच्चरः**। आकाशाग्रे चरशब्दे प्रयुज्यमाने विद्याधरनामानि भवन्ति। खचरः। विहायश्चरः। वियच्चरः। व्योमचरः। नभश्चरः। गगनचरः। अम्बरचरः। आकाशचरः। अन्तरिक्षचरः। मेघपथचरः। मेघमार्गचरः। वायुपथचरः। वायुमार्गचरः। घनपथचरः। घनमार्गचरः। घनाघनपथचरः। घनाघनमार्गचरः। जीमूतपथचरः। जीमूतमार्गचरः। अभ्रपथचरः। अभ्रमार्गचरः। बलाहकपथचरः। बलाहकमार्गचरः। पर्जन्यपथचरः। पर्जन्यमार्गचरः। इत्यादिनामानि विद्याधरस्य ज्ञेयानि।

तद्गः,

तत्र गगने गच्छतीति तद्गः। गगनाऽग्रे। 'ग' शब्दे प्रयुज्यमाने शकुन्तनामानि भवन्ति। खगः। विहायोगः। वियद्गः। व्योमगः। नभोगः। गगनगः। द्योगः। आकाशगः। अन्तरिक्षगः। मेघपथगः। मेघमार्गगः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

तडित्पतिपथ। तडित्पतिमार्ग। सौदामिनीपतिपथ। सौदामिनीपतिमार्ग। वायुपथ। वायुमार्ग। वातपथ। वातमार्ग। अनिलपथ। अनिलमार्ग। मरुत्पथ। मरुन्मार्ग। समीरणपथ। समीरणमार्ग। गन्धवाहपथ। गन्धवाहमार्ग। श्वसनपथ। श्वसनमार्ग। सदागतिपथ। सदागतिमार्ग आदि।

विद्याधर और पक्षी के नाम

श्लोकार्थ—आकाश के नामों में 'चर' जोड़ देने से विद्याधर के नाम, उसमें 'ग' जोड़ देने से सभी नाम विद्याधर और पक्षी के नाम होते हैं। पक्षी, पत्री, पतत्री, शकुन्ति, शकुनि, वि, पतङ्ग, विष्किर भी पक्षी के नाम हैं ॥५४॥

भाष्यार्थ—आकाश में चलता है इसलिए चर लगाने से विद्याधर के नाम होते हैं। खचर आदि नामों के लिए देखें भाष्य। आकाश में चलता है इसलिए पक्षी के नाम 'ग' जोड़ने से होते हैं। खगः इत्यादि देखें भाष्य।

विशेष—'चर' और 'ग' जोड़ने से सभी नाम विद्याधर और पक्षी के लिए सामान्य रूप से जानना। मात्र पक्षी के ही नाम आगे कहते हैं।

सात नाम पक्षी के लिए हैं।

सप्त पतङ्गे। पक्षाः सन्त्यस्य **पक्षी**। पत्राणि सन्त्यस्य **पत्री**। नान्तः। पततीति **पत्रिः**। त्रिप्रत्यये इदन्तः। पतत्राणि सन्त्यस्य **पतत्री**। नान्तः। पततीति पतेः परतोऽत्रिप्रत्यये इदन्तो वा **पतत्रिः**। हलायुधभाष्यकारेण डाल्लणिकेन–पत्रिशब्दः **पत्रिन्** नकारान्तः पत्रिरिकारान्तश्च व्याख्यातः। अमरसिंहनाममालायाम्–

''पतत्रिपत्रिपतगपतत्पत्ररथाण्डजाः।
नगौकोवाजिविकिरविविष्किरपतत्रयः॥''

इकारान्तः पत्रिशब्दः पठितोऽस्ति। भाष्यकर्त्रा क्षीरस्वामिना पतत्रिरिकान्तो निषिद्धः। ''पतेरत्रिरिति'' भ्रान्त्या पतत्रिं ग्रन्थकृदिदन्तं मन्यते। एवं कथितमस्ति श्रीमदमरकीर्त्तिना द्वयोर्वचनं प्रमाणम्। शब्दानां वैचित्र्यं वर्त्तते। नभसा गन्तुं शक्नोति **शकुन्तः**। **शकुन्तिः**। एवं शकुनिः। एवं शकुनी। शकुन्तः। शकुनः। द्वौ अदन्तौ। वयतीति **विः**। ''वेञो डिः''। पतेन वेगेन गच्छतीति **पतङ्गः**। विकिरति पत्राणि **विष्किरः**।

''वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिंहे वर्णविपर्ययः।
षोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृषोदरे॥''

सुडागमः। विकिरश्च।

---

१. **पक्षिन्** (पुं०)–[प्र० वि० एकव० में पक्षी]—पंख इसके होते हैं इसलिए पक्षी है।

२. **पत्रिन्, पत्रिः** (पुं०)–[प्र० वि० एकव० में पत्री]—इसके पर होते हैं इसलिए पत्री है। गिरता है इसलिए 'पत्रिः' भी है।

३. **पतत्रिन्, पतत्रिः** (पुं०)–[प्र० वि० एकव० में पतत्री]—इसके पंख होते हैं इसलिए पतत्री है। हलायुध कोश के भाष्यकार ने 'पत्रिन्' नकरान्त और 'पत्रिः' इकारान्त शब्द भी कहा है। अमरसिंह की नाममाला में—पतत्रिः, पत्रिः, इत्यादि पत्रिः शब्द आया है। भाष्यकार क्षीरस्वामी ने इकारान्त 'पतत्रिः' शब्द का निषेध किया है। उनका कहना है कि भ्रम वश पतत्रिः पढ़ा जाने लगा है। किन्तु अमरकीर्ति को दोनों वचन प्रमाण हैं, क्योंकि शब्दों का वैचित्र्य होता है।

४. **शकुन्तः, शकुन्तिः** (पुं०)—आकाश से चलने में समर्थ होता है इसलिए शकुन्त या शकुन्ति है। इसी प्रकार शकुनिः, शकुनी, शकुन्तः, शकुनः ये नाम भी पक्षी के हैं।

५. **विः** (पुं०)—बहता है, हवा की तरह चलता है इसलिए 'वि' है।

६. **पतङ्ग** (पुं०)—वेग से चलता है इसलिए पतङ्ग है।

७. **विष्किरः** (पुं०)–पंखों को बिखेरता है इसलिए विष्किर है। यहाँ सुट् का आगम है।

सुट् वर्ण का आगम न होने से 'विकिरः' शब्द भी बनता है। श्लोक का अर्थ श्लोक ४५ में लिखा है।

जाङ्गलं पिशितं मांसं पलं पेशी च तत्प्रियः।
यातुधानस्तथा रक्षो-रात्र्यादिचर इष्यते ॥५५॥

पञ्च मांसे। गल्यते अद्यते **जाङ्गलं जङ्गलं** च। पिश्यते रुधिरादिभिः पूर्यते **पिशितम्**। मन्यते सम्भाव्यते शरीरोपचयोऽनेनेति **मांसम्**। ''वृतॄ वदिहनिमनिकस्यशिकषिभ्यः सः''। एभ्यः सः प्रत्ययो भवति। पलयते (पालयते) देहं **पलम्**। रुधिरादिभिः पिश्यते (पिंशति) शरीरम् **पेशी**। आमिषम्। रुच्यम्। तरसम्।

तत्प्रियः।

तस्य मांसस्य **प्रियः**। आमिषशब्दाग्रे प्रियशब्दे प्रयुज्यमाने राक्षसनामानि भवन्ति। जाङ्गलप्रियः। पिशितप्रियः। मांसप्रियः। पलप्रियः। पेशीप्रियः।

यातुधानस्तथा रक्षो–

द्वौ यातुधाने। यातूनि यातना धीयन्तेऽस्मिन् यातुधानः। रक्षतीति **रक्षः**। राक्षसः। कौणपः। क्रव्यादः। नैर्ऋतः। नैकसेयः। नैकषेयश्च। विपुसेऽपि (कर्बुरः। अस्रपः) कीनाशो नानार्थे।

रात्र्यादिचर इष्यते॥५५॥

रात्रिशब्दाग्रे **चर**शब्दे प्रयुज्यमाने राक्षसनामानि भवन्ति। रात्रिचरः। निशाचरः। क्षणदाचरः। रजनीचरः। नक्तञ्चरः। दोषाचरः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

मांस और राक्षस के नाम

श्लोकार्थ—जाङ्गल, पिशित, मांस, पल, पेशी ये मांस के नाम हैं। यातुधान, रक्ष ये दो नाम राक्षस के रात्रि आदि नाम में 'चर' लगा देने से भी राक्षस के नाम होते हैं ॥५५॥

भाष्यार्थ—मांस के पाँच नाम हैं।

१. **जाङ्गलम्, जङ्गलम्** (नपुं०)—गलाया जाता है, खाया जाता है इसलिए जांगल है।

२. **पिशितम्** (नपुं०)—रुधिर आदि से पूरित रहता है इसलिए पिशित है।

३. **मांसम्** (नपुं०)—शरीर की वृद्धि, पुष्टि इसी से मानी जाती है इसलिए मांस है।

४. **पलम्** (नपुं०)—देह का पालन, रक्षण करता है इसलिए पल है।

५. **पेशी** (स्त्री०)—रुधिर आदि के साथ शरीर को बनाता है, आकार देता है इसलिए पेशी है।

आमिषम्, रुच्यम्, तरसम् भी मांस के नाम हैं। उस आमिष शब्द के आगे प्रिय शब्द जोड़ने पर राक्षस के नाम होते हैं। जांगलप्रिय। पिशितप्रिय। मांसप्रिय। पलप्रिय। पेशीप्रिय। इत्यादि।

राक्षस के दो नाम हैं।

१. **यातुधानः** (पुं०)—यातना, प्रतिहिंसा इसमें रहती है इसलिए यातुधान है।

२. **रक्षस्** (नपुं०)—रक्षा करता है इसलिए रक्षस् है। सम्पादक के अनुसार—इससे लोग अपना बचाव करते हैं इसलिए रक्षस् है। राक्षस। कौणप। क्रव्याद। नैर्ऋत। नैकसेय। नैकषेय। विपुसेऽपि आदि नाम भी है।

रात्रि के शब्दों के आगे 'चर' जोड़ देने पर राक्षस के नाम होते हैं। रात्रिचर। निशाचर। क्षणदाचर। रजनीचर। नक्तञ्चर। दोषाचर। इत्यादि।

प्रारभ्यते स्वर्गवर्गः

सुतोऽदितेस् तडिद्धन्वा सेन्द्रो देवः सुरोऽमरः।
स्वद्यौः स्वर्गोऽथ नाकश्च, तद्वासस्त्रिदशो मतः॥ ५६॥

अदितिशब्दाग्रे सुतशब्दे प्रयुज्यमाने दैत्य (देव) नामानि भवन्ति। अदितिसुतः। अदितितनयः। अदितिपोतः। अदितिदारकः। अदितिनन्दनः। अदित्यर्भकः।अदितिस्तनन्धयः। अदित्युत्तानशयः।

पञ्च देवे। सह इन्द्रेण वर्त्तते इति **सेन्द्रः**। ''दिवु क्री॰''-। दिव्। दीव्यन्ति क्रीडन्ति स्वर्गेऽप्सरोभिः सह विलसन्ति **देवाः**। अचा सिद्धम्। अथवा दीव्यति क्रीडति परमानन्दनदे **देवः**। सुष्ठु राजते **सुरः**। तथा सुरन्ति **सुराः**। ''सुर ऐश्वर्ये'' सुरा एषामस्तीति वा। ''अर्शसादिभ्योऽ च्''। यतोऽब्धिजा सुरा तैः पीता। न म्रियते **अमरः**। आदित्याः। त्रिदशाः। सुमनसः। स्वर्गौकसः। देवताः। गीर्वाणाः। ऋभवः। मरुतः। वृन्दारकाः। निर्जराः। अस्वप्नाः। विबुधाः। त्रिविष्टपसदः। लेखाः। सुपर्वाणः। अमृताशनाः। अनिमिषाः। दैवतम्।

(स्वर्ग वर्ग) स्वर्ग वर्ग प्रारम्भ होता है।

देव और स्वर्ग के नाम

श्लोकार्थ—अदिति का पुत्र, तडिद्धन्वा, सेन्द्र, देव, सुर और अमर ये देव के नाम हैं। स्वर्, द्यौ, स्वर्ग और नाक ये स्वर्ग के नाम है। स्वर्ग के नामों में 'वास' जोड़ देने से त्रिदश अर्थात् देव के नाम माने जाते हैं ॥५६॥

भाष्यार्थ—अदिति शब्द के आगे सुत वाचक नामों को जोड़ने से दैत्य देव के नाम होते हैं। अदितिसुत। अदितितनय। अदितिपोत। अदितिदारक। अदितिनन्दन। अदित्यर्भक। अदितिस्तनन्धय। अदित्युत्तानशय। इत्यादि।

देव के पाँच नाम हैं।

१. **तडिद्धन्वन्** (पुं॰)—इसकी व्युत्पत्ति भाष्य में नहीं है।

२. **सेन्द्रः** (पुं॰)—इन्द्र के साथ रहता है इसलिए सेन्द्र है।

३. **देवः, देवा** (पुं॰)—स्वर्ग में अप्सराओं के साथ क्रीड़ा करते हैं इसलिए देवा हैं अथवा परमानन्द पद में क्रीड़ा करता है इसलिए देव है।

४. **सुरः** (पुं॰)—बहुत अच्छे ढंग से सुशोभित होता है इसलिए सुर है। 'सुराः' भी बनता है। सुर धातु ऐश्वर्य अर्थ में है। इनके पास ऐश्वर्य रहता है इसलिए सुरा है। चूँकि समुद्र मन्थन से उत्पन्न सुरा देवों ने पी है इसलिए उन्हें सुरा कहते हैं।

५. **अमरः** (पुं॰)—मरते नहीं हैं इसलिए अमर हैं अर्थात् जिनकी उम्र बहुधा असंख्यात वर्ष की होती है इसलिए अमर कहलाते हैं। आदित्या। त्रिदशा। सुमनस। स्वर्गौकस। देवता। गीर्वाणा। ऋभव। मरुत। वृन्दारका। निर्जरा। अस्वप्ना। विबुधा। त्रिविष्टपसद। लेखा। सुपर्वाण। अमृताशना। अनिमिषाः। दैवतम्। इत्यादि नाम भी हैं।

स्वर्द्यौः स्वर्गोऽथ नाकश्च,

चत्वारः स्वर्गे। मुदितो जनः। स्वरति शब्दं करोत्यत्र रान्तमव्ययम्। **स्वर्**। ''दिवु क्रीडादिषु''। दीव्यन्ति क्रीडन्ति अत्र पुण्यवन्तः इति **द्यौः**। ''दिवेर्डिविः'' प्रत्ययो भवति। असौ सुष्ठु अर्ज्यते **स्वर्गः**। ''स्वृ भृभ्यां गः'' ग प्रत्ययः। नास्त्यकं दुःखमत्र **नाकः**। उभयम्।

तद्वासस्त्रिदशो मतः ॥५६॥

तस्य स्वर्गस्य वासः, **तद् वासः**– स्वर्वासः। द्योवासः, स्वर्गवासः इत्यादीनि देवनामानि भवन्ति।

तत्पतिः शक्र इन्द्रश्च शुनासीरः शतक्रतुः।
प्राचीनबर्हिः सुत्रामा वज्री चाखण्डलो हरिः ॥५७॥
शत्रुर्बलस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेरपि।
वृत्रहा च सहस्राक्षो गीर्वाणेशः पुरन्दरः ॥५८॥
विडौजाश्चाप्सरोनाथो वासवो हरिवाहनः।
मरुतश्च मरुत्वाँश्च वृषा चैरावणाधिपः ॥५९॥
शतमन्युस्तुराषाट् च पुरुहूतश्च कौशिकः।
संक्रन्दनोऽथ मघवान् पुलोमारिर्मरुत्सखः ॥६०॥

तस्य देवस्य (स्वर्गस्य च) पतिः, **तत्पतिः**। देवपतिः, सेन्द्रपतिः, स्वर्गवासपतिः, स्वर्गपतिः, नाकपतिः, नाकेन्द्रः, इत्यादिपर्यायनामानि इन्द्रस्य ज्ञेयानि।

चार नाम स्वर्ग के हैं।

१. स्वर् (अव्यय)—यहाँ पर देव प्रसन्न होकर शब्द करता है या बोलता है, ध्वनि नाद होता है इसलिए स्वर् है।

२. द्यौः (स्त्री०)—यहाँ पुण्यवान जीव क्रीड़ा करते हैं इसलिए द्यौ है।

३. स्वर्गः (पुं०)—यह अच्छी तरह अर्जित किया जाता है अर्थात् लोग इसके लिए खूब प्रयास करते हैं इसलिए स्वर्ग है।

४. नाकः, नाकम् (पुं०, नपुं०)—यहाँ दुःख नहीं है इसलिए नाक है। उभय लिंग में यह शब्द है।

उस स्वर्ग का वास (रहना) अर्थात् स्वर्ग में रहने वाला स्वर्गवासः इत्यादि देव के नाम होते हैं।

इन्द्र के नाम

श्लोकार्थ—देव, स्वर्ग के नामों में 'पति' लगाने से इन्द्र के नाम होते हैं। तथा शक्र, इन्द्र, शुनाशीर, शतक्रतु, प्राचीनबर्हि, सुत्रामा, वज्री, आखण्डल, हरि, बलशत्रु, गोत्रशत्रु, पाकशत्रु, नमुचिशत्रु, वृत्रहा, सहस्राक्ष, गीर्वाणेश, पुरन्दर, विडौजा, अप्सरोनाथ, वासव, हरिवाहन, मरुत्, मरुत्वान्, वृषा, ऐरावणाधिप, शतमन्यु, तुराषाट्, पुरुहूत, कौशिक, सङ्क्रन्दन, मघवा, पुलोमारि, मरुत्सख ये इन्द्र के नाम हैं ॥५७-६०॥

त्रयस्त्रिंशदिन्द्रे। पातुं शक्नोतीति **शक्रः**। ''स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपिक्षुदिरुदिमदिचन्द्युन्दीन्दिभ्यो रक्'' । इन्दति परमैश्वर्ययुक्तो भवति **इन्द्रः**। रक्। शुन आदित्यः शीरो वायुस्तयोरपत्यमणो लुक्यभेदाद्वा, दीर्घे **शुनाशीरः**। तालव्यद्वयम्। शोभनं नासीरं कटकं वा यस्य स सुनासीरः। द्वौ दन्त्यौ। शु अव्ययं तालव्यमपि। अत्र पक्षे प्रथमस्तालव्यो द्वितीयो दन्त्यो भवति। तथा च शोभना नासीरा अग्रेसरा अस्य, **शुनासीरः**। शुः पूजायाम्, श्वशुरवत्। शुनासीरयोरपत्यमित्येके। शतं क्रतवो यज्ञा यस्य **शतक्रतुः**। प्राचीना प्राचीनमुखा **बर्हिषी** दर्भा यस्य सः। सुष्ठु त्रायते नान्तः **सुत्रामा**। वज्रं विद्यते यस्य स **वज्री**। आखण्डयति भिनत्त्यरीना**खण्डलः**। ह्रियते शचीकटाक्षै**र्हरिः**।

''शत्रुर्बलस्य गोत्रस्य पाकस्य नमुचेरपि''-

बलशत्रुर्गोत्रशत्रुः पाकशत्रुर्नमुचिशत्रुः, इत्यादीनि इन्द्रनामानि भवन्ति। वृत्रं दानवं यज्ञं वा हतवान्

भाष्यार्थ– उस देव (या स्वर्ग) का पति तत्पति है। देवपति, सेन्द्रपति, स्वर्गवासपति, स्वर्गपति, नाकपति, नाकेन्द्र इत्यादि पर्यायवाची नाम इन्द्र के जानना चाहिए। इन्द्र के तैंतीस नाम हैं।

१. शक्रः (पुं॰)—रक्षा करने में समर्थ होता है इसलिए शक्र है।

२. इन्द्रः (पुं॰)—परम ऐश्वर्य से सहित होता है, इसलिए इन्द्र है।

३. शुनाशीरः (पुं॰), सुनासीरः–शुन अर्थात् सूर्य, शीर अर्थात् वायु। दोनों का पुत्र है इसलिए शुनाशीर है अथवा सु–शोभन, नासीर–कटक—जिसका कटक (सेना) शोभायमान है इसलिए सुनासीर है। इस शब्द में दोनों दन्ति 'स' हैं। शु अव्यय भी है और तालव्य 'श' भी है। इस तरह पहिला तालव्य 'श' दूसरा दन्त्य 'स' भी होता है। जिससे आगे–आगे अच्छी तरह शोभित होता है अतः 'शुनासीरः' है। 'शु' अव्यय पूजा अर्थ में भी है जैसे 'श्वसुर' शब्द की व्युत्पत्ति में आता है, उसी प्रकार 'शुनासीर' शब्द में भी 'शु' पूजा अर्थ में है, यह आशय है। शुना और सीर का पुत्र 'शुनासीर' है, इस प्रकार भी कुछ लोग मानते हैं।

४. शतक्रतुः (पुं॰)—जिसके सैकड़ों यज्ञ हैं इसलिए शतक्रतु है।

५. प्राचीनबर्हिष् (पुं॰)—जिसके पास बर्हि अर्थात् यज्ञानुष्ठान की एक विशेष घास प्राचीन होती है इसलिए प्राचीनबर्हिः है।

६. सुत्रामन् (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में सुत्रामा]—अच्छी तरह रक्षा करता है इसलिए सुत्रामा है।

७. वज्रिन् [प्र॰ वि॰ एकव॰ पुं॰ में वज्री]—इसके पास वज्र होता है इसलिए वज्री है।

८. आखण्डलः (पुं॰)—शत्रुओं को सब ओर से खण्डित करता है, नष्ट करता है इसलिए आखण्डल है।

९. हरिः (पुं॰)—शची की कटाक्षों से इसका चित्त हरण किया जाता है इसलिए हरि है।

१०, ११, १२, १३. बलशत्रु, गोत्रशत्रु, पाकशत्रु और नमुचिशत्रु इन्द्र के नाम हैं।

वृत्रहा। क्विप्। ''(क्विब्) ब्रह्मभ्रूणवृत्रेषु'' क्विप् सहस्रमक्षीणि यस्य स **सहस्राक्षः**। गीर्वाणानां देवाना मीशः (**गीर्वाणेशः**)। विट्सु प्रजासु ओजो यस्य। पृषोदरादित्वाद् वृद्धिः। विड भेदने वा। विडं भेदकमोजो यस्य वा (**विडौजाः**)। अप्सरसां नाथोऽ**प्सरोनाथः**। वस्वपत्यं **वासवः**। हरिर्वाहनं यस्य **हरिवाहनः**। पुण्यक्षये म्रियते च्यवते **मरुत्**। तान्तम्। मरुतो देवाः सन्त्यस्य **मरुत्वान्**। वर्षति, नान्तम्, **वृषा**। ऐरावणानामधिपः **ऐरावणाधिपः**। शतं मन्यवः क्रतवोऽस्य **शतमन्युः**। ''षह मर्षणे''॥ षह्। ''धात्वादेः षः सः''। सहते कश्चित्तमपरः प्रयुङ्क्ते ''धातोश्च हेतौ'' इञ्। अस्योप॰ दीर्घः। **साहि** जाते। तुरपूर्वकः। तरंत्वरितं साहयत्यभिभवत्यरीनिति तुराषाट्।''सहश्छन्दसि'' विण्।''कारितस्या॰'' कारितलोपः। वेर्लोपः। ''नहि वृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ'' क्विबन्तेषु प्राग्यकाराणां दीर्घः। तुरा जातम्। तुरासाह् निष्पन्नः। सिः। ''व्यञ्जनान्ताच्च'' सिलोपः। ''हशष च्छान्तेजादीनां डः'' हस्य डः। ''सहेः साडः षः'' सस्य षत्वम्। रपरत्वात्परपदेऽपि सस्य षत्वम्। स्वमते अपिशब्दबलात्। अथवा तुरं वेगं सहते **तुराषाट्**। ''सह श्छन्दसि'' विण् पूर्ववत्। पुरु प्रभूतं हूतं यज्ञे यज्ञेष्वा (ज्ञे आ) ह्वानं यस्य **पुरुहूतः**। जातमात्रोऽदित्या

---

१४. वृत्रहन् (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में वृत्रहा]—वृत्र दानव अथवा यज्ञ को कहते हैं। उसको नष्ट किया जाता है इसने इसलिए वृत्रहा है।

१५. सहस्राक्षः (पुं॰)—इसकी हजार आँखें होती हैं इसलिए सहस्राक्ष है।

१६. गीर्वाणेशः (पुं॰)—गीर्वाण देव को कहते हैं। उन देवों का स्वामी होने से गीर्वाणेश है।

१७. पुरन्दरः (पुं॰)—इसकी टीका नहीं है।

१८. विडौजस् (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में विडौजाः]—इसका ओज, प्रताप प्रजाजनों में रहता है इसलिए विडौजा है। अथवा विड धातु भेदन अर्थ में है। इससे जिसका ओज दूसरों का भेदन, खण्डन करता है इसलिए विडौजा है।

१९. अप्सरोनाथः (पुं॰)—अप्सराओं का स्वामी है इसलिए अप्सरोनाथ है।

२०. वासवः (पुं॰)—वसु पुत्र होने से वासव है।

२१. हरिवाहनः (पुं॰)—हरि अर्थात् घोड़ा, अश्व। अश्व का वाहन रखता है इसलिए हरिवाहन है।

२२. मरुत् (पुं॰)—पुण्य के क्षय होने पर मरता है या स्वर्ग से च्युत होता है इसलिए मरुत् है।

२३. मरुत्वान् (पुं॰)—मरुत् अर्थात् देव। इसके पास अन्य देव होते हैं इसलिए मरुत्वान् है।

२४. वृषन् (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में वृषा]—वर्षा करता है इसलिए वृषा है।

२५. ऐरावणाधिपः (पुं॰)—ऐरावत हाथी का स्वामी है इसलिए ऐरावणाधिप है।

२६. शतमन्युः (पुं॰)—इसके सैकड़ों यज्ञ होते हैं इसलिए शतमन्यु है।

२७. तुराषाट् (पुं॰)—शीघ्र ही शत्रुओं को हरा देता है इसलिए तुराषाट् है अथवा वेग को सहन करता है इसलिए तुराषाट् है।

२८. पुरूहूतः (पुं॰)—यज्ञों के लिए बहुत अधिक इसका आह्वान होता है इसलिए पुरुहूत है।

कुशैराच्छादितत्वात् **कौशिकः**। तथा पुराणम्–

''जातमात्रोऽथ भगवानदित्या स कुशै वृतः।
तदा प्रभृति देवेशः कौशिकत्वमुपागतः॥''

कुशैर्दर्भैश्चरति वा। अरिस्त्रीः सङ्क्रन्दयति **सङ्क्रन्दनः**। मङ्घ्यते पूज्यते नान्तो **मघवा**। ''मङ्केर्नलुगवन्तश्च'' मङ्केः कनिः प्रत्ययो भवति, नलुगवन्तश्च। पुलोमस्या (म्नोऽ) रिः **पुलोमारिः**। मरुतां पवनानां सखा मित्रः (त्रं) **मरुत्सखः**। दुश्च्यवनः। वृत्रारिः। बलसूदनः। वृद्धश्रवाः। जिष्णुः। वज्रधरः। वास्तोष्पतिः। गोपतिः। पर्जन्यः। हरिहयः। पूर्वदिक्पतिः। स्वराट्। गोत्रभिद्। अग्रधन्वा। हरिमान्। पाकशासनः। दिवस्पतिः।

काष्ठा ककुब् दिगाशा च दक्षकन्या तथा हरित्।
तत्पर्यायपरं योज्यं प्राज्ञैः पालगजाम्बरम् ॥६१॥

षड् दिशायाम्। काशन्ते राजन्ते (नक्षत्रादयोऽत्र) **काष्ठा**। कं स्कुभ्नाति विस्तारयति **ककुप्**। भान्तम्। दिशत्यवकाशं **दिक्**। ''ऋत्विग्दधृक् स्रग्दिगुष्णिहश्च'' इति साधुः। आश्नुते **आशा**। दक्षः प्रजापतिः,

---

२९. कौशिकः (पुं॰)—अदिति के कुशों से आच्छादित होने से जात मात्र कौशिक है। पुराण में कहा है–''तुरन्त उत्पन्न हुए वह भगवान् अदिति (पृथिवी) के कुशों (घास के अग्र भाग) से आच्छादित थे तब से लेकर देवेश (इन्द्र) को कौशिकपना प्राप्त हुआ है अर्थात् इन्द्र को कौशिक कहा जाने लगा है।''

अथवा यज्ञ के योग्य कुश (घास) के साथ चलता है इसलिए कौशिक है।

३०. सङ्क्रन्दनः (पुं॰)—शत्रुओं की स्त्री को रुलाता है इसलिए संक्रन्दन है।

३१. मघवन् (पुं॰)[प्र॰ वि॰ एकव॰ में मघवा]—पूजा जाता है इसलिए मघवा है।

३२. पुलोमारिः (पुं॰)—पुलोमन् एक राक्षस है। उसका शत्रु होने से पुलोमारि है।

३३. मरुत्सखः (पुं॰)—पवन का सखा होने से मरुत्सख है।

दुश्च्यवन। वृत्रारि। बलसूदन। वृद्धश्रवा। जिष्णु। वज्रधर। वास्तोष्पति। गोपति। पर्जन्य। हरिहय। पूर्वदिक्पति। स्वराट्। गोत्रभिद्। अग्रधन्वा। हरिमान्। पाकशासन। दिवस्पति आदि नाम भी हैं।

दिशा और दिगम्बर मुनि के नाम

श्लोकार्थ—काष्ठा, ककुप्, दिग्, आशा, दक्षकन्या और हरित् ये दिशा के नाम हैं। इन दिशा के नामों में पाल, गज, अम्बर जोड़ देने से दिगम्बर मुनि के नाम प्राज्ञ पुरुषों ने कहे हैं ॥६१॥

भाष्यार्थ—दिशाओं के छह नाम हैं।

१. काष्ठा (स्त्री॰)—इसमें नक्षत्र आदि सुशोभित होते हैं इसलिए काष्ठा है।

२. ककुप्, ककुभ् (स्त्री॰)—वात (हवा) को फैलाती है इसलिए ककुप् है। सम्पादक के अनुसार—कुछ विद्वान् 'ककुभा' शब्द भी मानते हैं। आदित्य अथवा जल से जिसमें नक्षत्र कुत्सित हो जाते हैं अर्थात् इनकी आभा नष्ट हो जाती है इसलिए ककुभा है।

३. दिक् (स्त्री॰)—अवकाश, स्थान देती है इसलिए दिक् है।

तस्य कन्या, **दक्षकन्या**। हरत्यनया **हरित्**।

काष्ठादीनामतः **परं योज्यं प्राज्ञैः** विद्वद्भिः **पालगजाम्बरम्**। काष्ठापालः। ककुप्पालः। दिक्पालः। आशापालः। दक्षकन्यापालः। हरित्पालः। गजप्रयोगे दिग्गजनामानि भवन्ति। काष्ठागजः। ककुब्गजः। दिग्गजः। आशागजः। दक्षकन्यागजः। हरिद्गजः। अम्बरशब्दप्रयोगे दिगम्बरनामानि भवन्ति। काष्ठाऽम्बरः। ककुबम्बरः। दिगम्बरः। आशाऽम्बरः। दक्षकन्याम्बरः। हरिदम्बरः। तथा च-

''गिरिकन्दरदुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्तु परमां गतिम्॥''

एवंविधा मुनयो भव्यानां शरणं भवन्तु जन्मनि जन्मनि।

पवनः पवमानश्च वायुर्वातोऽनिलो मरुत्।
समीरणो गन्धवाहः श्वसनश्च सदागतिः ॥६२॥
नभस्वान् मातरिश्वा च चरण्युर्जवनस्तथा।
प्रभञ्जनः अस्य पर्यायपुत्रौ भीमाञ्जनात्मजौ ॥६३॥

पञ्चदश वायौ। पवते जगत् पवित्रीकरोति **पवनः**। युच्। ''पूङ् पवने।'' पू। पवते **पवमानः**। ''पूङ्यजोः शानङ्'' आनमात्रः। अन्वि॰ अनिच॰ नाम्यन्तगुणः। ''ओ अव्।'' ''आन्मोऽन्त आने''

---

४. आशा (स्त्री॰)—चारों ओर व्याप्त रहती है इसलिए आशा है।

५. दक्षकन्या (स्त्री॰)—दक्ष प्रजापति को कहते हैं उसकी कन्या होने से दक्षकन्या कहलाती है।

६. हरित् (स्त्री॰)—ले जाती है इसलिए हरित् है। दिशा ज्ञान के कारण से ही कुछ भी, कैसे भी, कहीं भी ले जाया जाता है इसलिए हरित् है।

विद्वान् पुरुषों को काष्ठा आदि नाम के आगे 'पाल' जोड़ देने से दिग्गज के नाम होते हैं। 'अम्बर' शब्द जोड़ देने से दिगम्बर मुनि के नाम होते हैं। नाम के लिए देखें भाष्य। कहा भी है–''गिरि, कन्दर और दुर्गों में जो रहते हैं वे दिगम्बर पाणिपुट को ही पात्र बनाकर आहार करते हैं। वे परम गति को प्राप्त होते हैं।''

इस प्रकार के मुनि भव्यों को जन्म-जन्म में शरण होवें।

वायु, भीम, हनुमान के नाम

श्लोकार्थ—पवन, पवमान, वायु, वात, अनिल, मरुत्, समीरण, गन्धवाह, श्वसन, सदागति, नभस्वान्, मातरिश्वा, चरण्यु, जवन तथा प्रभञ्जन वायु के नाम हैं। इन नामों में पुत्र शब्द जोड़ देने पर भीम और हनुमान के नाम होते हैं ॥६२-६३॥

भाष्यार्थ—वायु के लिए पन्द्रह (१५) नाम हैं।

१. पवनः (पुं॰)—जगत् को पवित्र करती है इसलिए पवन है।

२. पवमानः (पुं॰)—वातावरण को शुद्ध करती रहती है इसलिए पवमान है।

मोऽन्तः। वातीति **वायुः**। ''कृवापाजी''- ति उण्। वाति सर्वत्राऽस्खलितं वा **वायुः**। वाति अस्खलितं याति, **वातः**। ''मृगृवाहस्यमिदमिलूपूभ्यस्तः''। अनेन जगत् अनिति प्राणिति, न निलति वा **अनिलः**। ''निल गहने''। क्षुद्रजन्तवो म्रियन्ते स्पर्शेनास्य **मरुत्**। तान्तम्। ''मृग्रोरुतिः'' उतिप्रत्ययः। समन्तादीरयति **समीरणः**। गन्धं वहति **गन्धवहः**। **गन्धवाहः**। गन्धवाही। श्वसन्त्यनेन **श्वसनः**। सदा सर्वकालं गतिर्यस्य स **सदागतिः**। नभ आकाशमस्यास्तीति **नभस्वान्**। मातरि रेतः श्वयति वर्द्धते नान्तो **मातरिश्वन्**। मातरिश्वेव भवति **मारिश्वा**। चराचरं याति **चरण्युः**। ''केवयुभुरण्व्वध्वर्य्वादयः'' केवय्वादयः शब्दा डुप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। तथा च द्विसन्धानकाव्ये-

''असूययाऽगम्य निशाम्य यां पुरो
विलज्जयाऽम्भःपरिणामिनीदशाम् ।
गता इवाभान्ति कुलाद्रिपेशला-
श्चरण्युलोलाः परिखाम्बुवीचयः॥''

''जु'' इति सौत्रो धातुर्गतौ। सौत्रा धातवोऽपि भ्वादौ पठ्यन्ते। जवतीति **जवनः**।''जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्य-सृगृधिज्वल-शुचपतपदाम्'' एभ्यो युर्भवति। सर्वा दिशाः प्रभनक्ति **प्रभञ्जनः**।

---

३. वायुः (पुं०)—बहती रहती है इसलिए वायु है।

४. वातः (पुं०)—बिना किसी रुकावट के सर्वत्र बहती है इसलिए वाति है।

५. अनिलः (पुं०)—इससे जगत् प्रसन्न रहता है अथवा जो गहन नहीं रहती है, विरल रहती है इसलिए भी अनिल है।

६. मरुत् (पुं०)—इसके स्पर्श से क्षुद्र जन्तु मर जाते हैं इसलिए मरुत् है।

७. समीरणः (पुं०)—चारों ओर से बहती है इसलिए समीरण है।

८. गन्धवाहः (पुं०)—गन्ध को धारण करती है या बहा ले जाती है इसलिए गन्धवाह है। 'गन्धवहः', 'गन्धवाही' नाम भी हैं।

९. श्वसनः (पुं०)—जीव इससे श्वास लेते हैं इसलिए श्वसन है।

१०. सदागतिः (पुं०)—इसकी गति सदा सर्वकाल बनी रहती है इसलिए सदागति है।

११. नभस्वान् (पुं०)—इसके पास हमेशा आकाश रहता है इसलिए नभस्वान् है।

१२. मातरिश्वन् (पुं०) [प्र. एकव० में मातरिश्वा]—माता में जैसे रजोवृद्धि होती है इसी तरह अन्तरीक्ष में वायु बढ़ती रहती है इसलिए मातरिश्वा है। क्षीर स्वामी के अनुसार—आकाश में बढती है इसलिए मातरिश्वा है।

१३. चरण्युः (पुं०)—चर-अचर सभी पदार्थों को ले जाती है इसलिए चरण्यु है। द्विसन्धानकाव्य में 'चरण्यु' शब्द का प्रयोग है। देखें भाष्य।

१४. जवनः (पुं०)—वेग से चलती है इसलिए जवन है।

१५. प्रभञ्जनः (पुं०)—सभी दिशाओं को तोड़ती है इसलिए प्रभञ्जन है।

जगत्प्राणः। पृषदश्वः। स्पर्शनः। समीरः। हरिः। महाबलः। आशुगः।

अस्य पर्यायपुत्रौ भीमाञ्जनात्मजौ ॥६३॥

अस्य पर्य्यायात् प्रभञ्जनादिशब्दात्परत्र पुत्रशब्दो दीयते तदा भीमहनुमतोर्नामानि भवन्ति। पवनपुत्रः। पवनतनयः। पवमानपुत्रः पवमानतनयः। वायुपुत्रः। वायुतनयः। वातपुत्रः। वाततनयः। अनिलपुत्रः। अनिलतनयः। समीरणपुत्रः। समीरणतनयः। गन्धवाहपुत्रः। गन्धवाहतनयः। श्वसनपुत्रः। श्वसनतनयः। सदागतिपुत्रः। सदागतितनयः। नभस्वत्पुत्रः। नभस्वत्तनयः। मातरिश्वपुत्रः। मातरिश्वतनयः। चरण्युपुत्रः। चरण्युतनयः। जवनपुत्रः। जवनतनयः। चलपुत्रः। चलतनयः। प्रभञ्जनपुत्रः। प्रभञ्जनतनयः। भीमस्य हनुमतश्च नामानि ज्ञातव्यानि।

तत्सखाऽग्निः,

तत्सखाऽग्निः शिखी वह्निः पावकश्चाशुशुक्षणिः।
हिरण्यरेता सप्तार्चिर्जातवेदास्तनूनपात् ॥६४॥
स्वाहापतिर्हुताशश्च ज्वलनो दहनोऽनलः।
वैश्वानरः कृशानुश्च रोहिताश्वो विभावसुः ॥६५॥

तस्य वायोः सखा, तत्सखः। वायुशब्दाग्रे सखशब्दे प्रयुज्यमाने अग्निनामानि भवन्ति। पवनसखः। वायुसखः। अनिलसखः। वातसखः। मरुत्सखः। गन्धवाहसखः। समीरणसखः। श्वसनसखः। सदागतिसखः।

जगत्प्राण। पृषदश्व। स्पर्शन। समीर। हरि। महाबल। आशुग आदि नामों को भी जानना।

हवा के पर्यायवाची नामों के आगे पुत्र शब्द जोड़ने से भीम और हनुमान के नाम होते हैं। पवनपुत्र। पवनतनय। पवमानपुत्र। पवमानतनय। वायुपुत्र। वायुतनय। वातपुत्र। वाततनय। अनिलपुत्र। अनिलतनय। समीरणपुत्र। समीरणतनय। गन्धवाहपुत्र। गन्धवाहतनय। श्वसनपुत्र। श्वसनतनय। सदागतिपुत्र। सदागतितनय। नभस्वत्पुत्र। नभस्वत्वत्तनय। मातरिश्वपुत्र। मातरिश्वतनय। चरण्युपुत्र। चरण्युतनय। जवनपुत्र। जवनतनय। चलपुत्र। चलतनय। प्रभञ्जनपुत्र। प्रभञ्जनतनय। इत्यादि।

अग्नि के नाम

श्लोकार्थ—उस वायु का सखा अग्नि है। शिखी, वह्नि, पावक, आशुशुक्षणि, हिरण्यरेता, सप्तार्चि, जातवेद, तनूनपात्, स्वाहापति, हुताश, ज्वलन, दहन, अनल, वैश्वानर, कृशानु, रोहिताश्व, विभावसु ये अग्नि के नाम हैं ॥६४-६५॥ (कुछ आगे के श्लोक में)-

भाष्यार्थ—उस वायु का सखा अग्नि है। वायु के पर्यायवाची नामों के आगे 'सखा' जोड़ने से अग्नि के नाम होते हैं। पवनसख। पवमानसख आदि नामों के लिए भाष्य देखें।

नभस्वत्सखः। मातरिश्विसखः। चरण्युसखः। जवनसखः। चलसखः। प्रभञ्जनसखः। पवनेष्टः। पवतमानेष्टः। इत्यादीनि अग्नेर्नामानि ज्ञातव्यानि।

वृषाकपिः समीगर्भो हव्यवाहो हुताशनः।

एकविंशतिरग्नौ। ''अक अग कुटिलायां गतौ।'' अगति वायुवशादूर्ध्वं गच्छतीत्य**ग्निः**। शिखाऽस्त्यस्य **शिखी**। उह्यते **वह्निः**। ''अगिश्रुश्रियुवहिभ्यो निः'' एभ्यो धातुभ्यो निः प्रत्ययो भवति। पुनाति **पावकः**। आशु शोषयति रसान् **आशुशुक्षणिः**। ''आशौ शुषेः सनिक्।'' ''शुष शोषे।'' अन्तर्भूतकारितार्थोऽयम्। आशुपूर्वः। आशावुपपदे शुषेः सनिक् प्रत्ययो भवति। हिरण्यंरेतोऽस्य स **हिरण्यरेताः**। यत् स्मृतिः– ''**अग्नेरपत्यं प्रथमं सुवर्णम्**''। सप्तार्चिषो यस्य स **सप्तार्चिः**। भवन्ति ''हिरण्या, कतका, रक्ता, कृष्णा, प्रसुप्तभावाऽन्या। अतिरिक्ता बहुरूपेति सप्त सप्तार्चिषो जिह्वाः।'' जाते जाते विद्यते सान्तो **जातवेदस्**। जाता वेदा अस्माद् वा **जातवेदाः**। तनू न पातयति **तनूनपात्**। अपि तान्तो दान्तो वा। ''स्वाहा'' इत्यस्य (स्याः) पतिः भर्त्ता

एकवीस (२१) अग्नि के नाम हैं।

अग्निः (पुं०)—हवा के कारण ऊपर को जाती है इसलिए अग्नि है।

१. शिखिन् (पुं०) [प्र० वि० एकव० में शिखी]—इसकी शिखा (ज्वाला) होती है इसलिए शिखी है।

२. वह्निः (पुं०)—धारण की जाती है इसलिए वह्नि है। सम्पादक के अनुसार—आहूति का वहन करती है, ऐसी व्युत्पत्ति भी अन्यत्र है।

३. पावकः (पुं०)—पवित्र करती है इसलिए पावक है अर्थात् पवित्र कार्यों में काम आती है या हवन आदि से वातावरण को पवित्र करती है इसलिए इसे पावक कहा है।

४. आशुशुक्षणिः (पुं०)—रसों को शीघ्र शोषित कर लेती है इसलिए आशुशुक्षणि है अर्थात् किसी भी पदार्थ के रस, जलांश या सारभाग को शीघ्र सोख लेती है इसलिए आशुशुक्षणि कहा है।

५. हिरण्यरेतस् (पुं०)[प्र० वि० एकव० में हिरण्यरेताः]—हिरण्य ही इसकी धातु है इसलिए हिरण्यरेत है। कहा भी है–'अग्नि का पहला पुत्र सुवर्ण है।'

६. सप्तार्चिष् (पुं०)[प्र० वि० एकव० में सप्तार्चिः]—इसकी सात किरणें या ज्वाला होती हैं इसलिए सप्तार्चि है। हिरण्या, कतका, रक्ता, कृष्णा, प्रसुप्तभावा, अतिरिक्ता, बहुरूपा इस प्रकार अग्नि की सात लौ या जिह्वा होती हैं।

७. जातवेदस् (पुं०)—प्रत्येक उत्पन्न हुए पदार्थ में अग्नि रहती है अथवा वेदों की उत्पत्ति का कारण होने से भी इसे जातवेद कहते हैं। सम्पादक के अनुसार—वेद का अर्थ धन, सुवर्ण है। इससे सुवर्ण उत्पन्न होता है इसलिए अथवा उत्पन्न हुए पदार्थ को अग्नि जानती है, वेदन करती है, यह व्युत्पत्ति भी है।

८. तनूनपात्, तनूनपाद् (पुं०)—अपने स्वरूप को नहीं जलाती है इसलिए तनूनपात् है।

स्वाहापतिः। हुतं वषट्कारकृतं वस्तु अश्नातीति **हुताशः**। हुतम् आशो भोजनं यस्य वा। ज्वलतीत्येवंशीलो **ज्वलनः**। दहतात्येवंशीलो **दहनः**। अनिति प्राणित्यनेन **अनलः**। विश्वानरस्यापत्यं **वैश्वानरः**। कृश्यति तनूकरोति **कृशानुः**। रोहिताऽख्यो मृगोऽश्वो वाहनमस्य **रोहिताश्वः**। विभा वसुर्धनं यस्य स **विभावसुः**। वृषो धर्मः कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च तद्रूपात् **वृषाकपिः**। पुराणम्–

''कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृष उच्यते।
तस्माद् वृषाकपि प्राह काश्यपो मां प्रजापतिः॥''

हैमीनाममालायाम्–

''वृषाकपिर्वासुदेवे शिवेऽग्नौ च।''

शम्यां यस्य स **शमीगर्भः**। हव्यं वहतीति **हव्यवाट्**। हुतमश्नातीति **हुताशनः**। बहुलः। वसुः।

सम्पादक के अनुसार—प्रत्येक उत्पन्न हुआ पदार्थ विनष्ट होता है इसलिए उसके शरीर की रक्षा नहीं करती है इसलिए तनूनपात् है अथवा तनु-थोड़ी रक्षा करती है इसलिए तनूनपात् है अथवा तनूनप् घी को कहते हैं, उस घी को खा लेती है इसलिए तनूनपात् कहते है।

९. स्वाहापतिः (पुं॰)—'स्वाहा' का पति, स्वामी होती है इसलिए स्वाहापति है।

१०. हुताशः (पुं॰)—आहूति दी गयी, वषट्कार (समर्पित) की गयी वस्तु को खा लेती है, भस्म कर देती है इसलिए हुताश है अथवा आहूति ही जिसका भोजन है इसलिए वह हुताश है।

११. ज्वलनः (पुं॰)—जलती है, जलन स्वभाव वाली है इसलिए ज्वलन है।

१२. दहनः (पुं॰)—जलाती है, इस स्वभाव वाली है इसलिए दहन है।

१३. अनलः (पुं॰)—इससे प्राणियों का जीवन चलता है इसलिए अनल है।

१४. वैश्वानरः (पुं॰)—विश्वानर का पुत्र है इसलिए इसे वैश्वानर कहते हैं।

१५. कृशानुः (पुं॰)—कम करती है, सुखा देती है इसलिए कृशानु है। सम्पादक के अनुसार—कृश को भी बढ़ाती है इसलिए कृशानु है। चूँकि जठराग्नि के प्रदीप्त होने पर पतला भी वृद्धिंगत होता है इसलिए ऐसी भी व्युत्पत्ति की है।

१६. रोहिताश्वः (पुं॰)—रोहित नाम का मृग अथवा अश्व इसका वाहन है इसलिए रोहिताश्व है।

१७. विभावसुः (पुं॰)—विभा-प्रकाश ही इसका धन है इसलिए विभावसु है।

१८. वृषाकपिः (पुं॰)—वृष यानी धर्म। कपि अर्थात् वराह और श्रेष्ठ। अग्नि धर्म है और श्रेष्ठ रूप है इसलिए वृषाकपि है। पुराण ग्रंथों में भी कहा है–''कपि शब्द वराह और श्रेष्ठ के लिए है। धर्म को वृष कहा जाता है। इसलिए प्रजापति काश्यप मुझे वृषाकपि कहते हैं।'' हेमचन्द्र नाममाला में भी अग्नि को वृषाकपि कहा है।

१९. शमीगर्भः, समीगर्भः (पुं॰)—'शमी' एक वृक्ष का नाम है इसमें आग रहती है। इसलिए

सितेतरगतिः। अर्चिष्मान्। धूमध्वजः। बहिर्ज्योतिः। उषर्बुधः। चित्रभानुः। शुचिः। कृपीटयोनिः। दमुना। कृष्णवर्त्मा। आपांपित्तम्। वीतहोत्रः। बृहद्भानुः। आश्रयाशः। धनञ्जयः। तमोघ्नः। दमूना इत्येके। दमेरूनसि।

तदादिसूनुः, सेनानीः स्कन्दश्च शिखिवाहनः ॥६६॥

अग्निसूनुः। वह्निपुत्रः। वृषाकपिसूनुः। वृषाकविपुत्रः। इत्यादीनि स्कन्दनामानि भवन्ति।

कार्तिकेयो विशाखश्च कुमारः षण्मुखो गुहः।
शक्तिमान् क्रौञ्चभेदी च स्वामी शरवणोद्भवः ॥६७॥

द्वादश स्कन्दे। सेनां नयतीति **सेनानीः**। ''सत्सूद्विषद्रुहदुहयुजविदभिदछिदजिनीराजामुप-सर्गेऽपि'' एषामुपसर्गेऽप्यनुपसर्गेऽपि नाम्न्यनाम्न्युपपदे क्विब् भवति। स्कन्दत्यरीन् **स्कन्दः**। स्कन्नं शुष्कं रेतोऽस्य वा। शिखी मयूरो वाहनमस्य **शिखिवाहनः**। कृत्तिकानामपत्यं **कार्तिकेयः**। दानवबलौजस्तेजांसि श्यति

अग्नि को शमीगर्भ कहा है।

२०. हव्यवाट् (पुं०)—आहूति को वहन करती है, धारण करती है इसलिए हव्यवाट् है।

२१. हुताशनः (पुं०)—आहूत किये गये पदार्थ को भस्म कर लेती है, खा लेती है इसलिए हुताशन है।

बहुल। वसु। सितेतरगति। अर्चिष्मान्। धूमध्वज। बहिर्ज्योति। उषर्बुध। चित्रभानु। शुचि। कृपीटयोनि। दमुना। कृष्णवर्त्मा। अपांपित्तम्। वीतहोत्र। बृहद्भानु। आश्रयाश। धनञ्जय। तमोघ्न। दमूना। दमेरूनसि आदि नाम भी हैं।

अग्नि और कार्तिकेय के नाम

श्लोकार्थ—वृषाकपि, समीगर्भ, हव्यवाह, हुताशन ये भी अग्नि के नाम हैं। अग्नि के नामों को आदि में रखकर सूनु शब्द जोड़ने से कार्तिकेय के नाम बनते हैं। सेनानी, स्कन्द, शिखिवाहन, कार्तिकेय, विशाख, कुमार, षण्मुख, गुह, शक्तिमान्, क्रौञ्चभेदी, स्वामी और शरवणोद्भव ये कार्तिकेय के नाम हैं ॥६६-६७॥

अग्नि के नामों के बाद पुत्र के पर्यायवाची नाम जुड़ने से कार्तिकेय के नाम बनते हैं। अग्निसूनु आदि देखें भाष्य।

कार्तिकेय के बारह नाम हैं।

१. सेनानीः (पुं०)—सेना को ले जाता है इसलिए सेनानी है।

२. स्कन्दः (पुं०)—शत्रुओं को उछालता है इसलिए स्कन्द है अथवा इसका वीर्य शुष्क होता है इसलिए स्कन्द है। ब्रह्मचारियों का शुष्करेत होना आगम प्रसिद्ध है।

३. शिखिवाहनः (पुं०)—इसका वाहन(सवारी) मयूर होता है इसलिए शिखिवाहन है।

४. कार्तिकेयः (पुं०)—कृत्तिका छह तारों का पुंज होता है। उससे उत्पन्न होता है इसलिए कार्तिकेय है।

विशेषेण तनूकरोति **विशाखः**। विशाखासुतो वा। **कुमारो** ब्रह्मचारित्वात्। कुत्सितो मारोऽस्येति **कुमारः**। षण्मुखानि यस्य स **षण्मुखः**। गूहति रक्षति देवसैन्यं **गुहः**। ''नाम्युपधप्रीकृगृज्ञां कः।'' शक्तिर्विद्यतेऽस्य **शक्तिमान्**। क्रौञ्चं पर्वतं भिनत्तीति **क्रौञ्चभेदी**। स्वमस्त्यस्य **स्वामी**। शराणां वनम्, शरवणम्, तस्मिन्नुद्भवः **शरवणोद्भवः**। गौरीपुत्रः। शक्तिपाणिः। तारकारिः। अग्निभूः। बाहुलेयः। गाङ्गेयः। ब्रह्मचारी। महासेनः। महातेजाः। पार्वतीनन्दनः।

तत्पिता शङ्करः शम्भुः शिवः स्थाणुर्महेश्वरः।
त्र्यम्बको धूर्जटिः शर्वः पिनाकी प्रमथाधिपः ॥६८॥

---

५. विशाखः (पुं०)—दानवों का बल, ओज और तेज विशेष रूप से कम कर देता है या नष्ट कर देता है इसलिए विशाख है अथवा विशाखा पुत्र है इसलिए विशाख है। सम्पादक के अनुसार—विशाखा नक्षत्र में उत्पन्न हुआ है अथवा दानवों के बल (सेना) को विशेष रूप से व्याप्त (घेर) लेता है इसलिए विशाख है।

६. कुमारः (पुं०)—ब्रह्मचारी होने से कुमार है अथवा इसका मार अर्थात् कामदेव कुत्सित-निन्दित हुआ है इसलिए कुमार है। सम्पादक के अनुसार—पृथिवी पर दुष्टों को मारता है इसलिए कुमार है अथवा क्रीडार्थक कुमार धातु से—क्रीड़ा करता है इसलिए कुमार है।

७. षण्मुखः (पुं०)—जिसके छह मुख हैं इसलिए वह कार्तिकेय षण्मुख है।

८. गुहः (पुं०)—देवों की सेना की रक्षा करता है इसलिए गुह है।

९. शक्तिमान् (पुं०)—इसके पास शक्ति रहती है इसलिए शक्तिमान् है।

१०. क्रौञ्चभेदिन् (पुं०)[प्र० वि० एकव० में क्रौञ्चभेदी]—क्रौञ्च पर्वत को खण्डित करता है इसलिए क्रौञ्चभेदी है।

११. स्वामिन् (पुं०)—इसके पास ऐश्वर्य होता है इसलिए स्वामी है। सम्पादक के अनुसार—अच्छी तरह रक्षा करता है इसलिए स्वामी है।

१२. शरवणोद्भवः (पुं०)—बाणों के वन में उत्पन्न होता है इसलिए शरवणोद्भव है।

गौरीपुत्र। शक्तिपाणि। तारकारि। अग्निभू। बाहुलेय। गाङ्गेय। ब्रह्मचारी। महासेन। महातेज। पार्वतीनन्दन आदि नाम भी हैं।

महादेव के नाम

श्लोकार्थ—उन कार्तिकेय के पिता शंकर, शम्भु, शिव, स्थाणु, महेश्वर, त्र्यम्बक, धूर्जटि, शर्व, पिनाकी, प्रमथाधिप, त्रिपुरारि, विशालाक्ष, गिरीश, नीललोहित, रुद्र, इन्दुमौलि, यज्ञारि, त्रिनेत्र, वृषभध्वज, उग्र, शूली, कपाली, शिपिविष्ट, भव, हर, उमापति, विरूपाक्ष, विश्वरूप, कपर्दी नाम वाले हैं ॥६८-७०॥

त्रिपुरारिर्विशालाक्षो गिरीशो नीललोहितः।
रुद्रेन्दुमौलिर्यज्ञारिस्त्रिनेत्रो वृषभध्वजः ॥६९॥
उग्रः शूली कपाली च शिपिविष्टो भवो हरः।
उमापतिर्विरूपाक्षो विश्वरूपः कपर्द्यपि ॥७०॥

एकोनत्रिंशदीश्वरे। **तस्य** स्कन्दस्य **पिता**। शं सुखं करोतीति **शङ्करः**। शम्भवती (त्यस्मादि) ति **शम्भुः**। ''भुवो डुर्विशम्प्रेषु च।'' शेते प्रलयकाले जगदत्र **शिवः**। जगति प्रलीनेऽपि तिष्ठति **स्थाणुः**। महाँष्वासौ ईश्वरः **महेश्वरः**। त्रीण्यम्बकानि अक्षीण्यस्य **त्र्यम्बकः**। त्रयाणां लोकानाम् अम्बकः पितेत्यागमः। धूर्भारभूता जटयो जटा यस्य, धूर्गङ्गा जटिषु यस्य वा **धूर्जटिः**। शृणाति दैत्यान् **शर्वः**। ''शर्वजिह्वाग्रीवा'' एते क्व प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। पिनाकमस्त्यस्य **पिनाकी**। प्रमथाया अधिपः, **प्रमथाधिपः**। त्रिपुरा-

---

भाष्यार्थ—उनतीस (२९) महादेव के नाम हैं।

उन कार्तिकेय के पिता के नाम-

१. शङ्करः (पुं०)—शम् अर्थात् सुख को करते हैं इसलिए शङ्कर है।

२. शम्भुः (पुं०)—इनसे शम् अर्थात् सुख होता है इसलिए शम्भु है। सम्पादक के अनुसार— अथवा सुख उत्पन्न कराते है इसलिए शम्भु है।

३. शिवः (पुं०)—इस जगत् में प्रलयकाल में वह सोते हैं इसलिए शिव है। सम्पादक के अनुसार—शिव अर्थात् कल्याण करते हैं इसलिए शिव है।

४. स्थाणुः (पुं०)—जगत् में प्रलीन (नाश) होने पर रहते हैं अर्थात् उनका अस्तित्व है इसलिए स्थाणु है।

५. महेश्वरः (पुं०)—महान् ही ईश्वर है इसलिए महेश्वर है।

६. त्र्यम्बकः (पुं०)—अम्बक अर्थात् आँख। इनकी तीन आँखें होती हैं इसलिए त्र्यम्बक हैं। अथवा तीनों लोकों के पिता हैं, यह आगम में है, इसलिए भी त्र्यम्बक हैं क्योंकि अम्बक अर्थात् पिता।

७. धूर्जटिः (पुं०)—धूः-भार वाली, भारी। ऐसी भारी जटायें जिनकी हो वह धूर्जटि है अथवा धूः-गङ्गा। जिनकी जटाओं में गङ्गा हो वह धूर्जटि है अर्थात् इनकी जटाओं से गङ्गा निकलती है ऐसी मान्यता है।

८. शर्वः (पुं०)—दैत्यों को नष्ट करते हैं इसलिए शर्व है।

९. पिनाकिन् (पुं०)[प्र० वि० एकव० में पिनाकी]—पिनाक—त्रिशूल। इनके पास त्रिशूल होता है इसलिए पिनाकी है।

१०. प्रमथाधिपः (पुं०)—प्रमथा—दुर्गा। दुर्गा के स्वामी हैं इसलिए प्रमथाधिप है। सम्पादक के अनुसार—प्रमथा शब्द अमरादि कोश में परिषद के रूप में प्रसिद्ध है। दुर्गा रूप से इसकी प्रसिद्धि नहीं है। इसलिए पारिषदों के स्वामी है यह अर्थ ठीक है।

सुरस्यारिस्त्रिपुरारिः। विशाले विस्तीर्णे अक्षिणी यस्य **विशालाक्षः**। ''सक्थ्यक्षिणी स्वाङ्गे।'' गिरीणामीशो **गिरीशः**। कालकूटभक्षणान्नीलं कृष्णं लोहितं यस्य स **नीललोहितः**। **''नीलः कण्ठे लोहितश्च केशे इति नीललोहितः''** इति पुराणम्। रोदयत्यरिस्त्री **रुद्रः**। ''स्फायितञ्चिवञ्चिशकिक्षिपिक्षुदि-रुदिमदिमन्दि-चन्द्युन्दीन्दिभ्यो रक्।'' इन्दुर्मौलिर्मुकुटं यस्य (सः) **इन्दुमौलिः**। यज्ञानां पशुकारणलक्षणानाम् अरिः, **यज्ञारिः**। त्रीणि नेत्राण्यस्य **त्रिनेत्रः**। वृषभो बलीवर्दो ध्वजायां यस्य स **वृषभध्वजः**। कोपमूर्जति **उग्रः**। शूलमस्त्यस्य **शूली**। कपालं मनुष्यकरोटिरस्त्यस्य **कपाली**। शिवः पिष्टो हतौ अस्थिरूपो (विष्टे) मूर्ध्नि यस्य स **शिपिविष्टः**। भवतीति **भवः**। हरत्यघं **हरः**। उमायाः पतिः **उमापतिः**। विरूपाण्यक्षीण्यस्य **विरूपाक्षः**।

---

१२. **त्रिपुरारिः** (पुं॰)—त्रिपुर—असुर का शत्रु है, इसलिए त्रिपुरारि है।

१२. **विशालाक्षः** (पुं॰)—अक्षि—आँख। विशाल—विस्तीर्ण—बड़ी जिनकी आँखें हैं इसलिए विशालाक्ष है।

१३. **गिरीशः** (पुं॰)—पर्वतों का ईश्वर, स्वामी है इसलिए गिरीश है।

१४. **नीललोहितः** (पुं॰)—कालकूट खाने से जिनका रुधिर नील या कृष्ण हुआ है इसलिए नीललोहित है। लोहित—रुधिर। पुराण शास्त्र के अनुसार—कण्ठ में नीलापन और केश (जटाओं) में रक्त (लाल) वर्ण होने से नीललोहित कहते हैं।

१५. **रुद्रः** (पुं॰)—शत्रुओं की स्त्रिओं को रुलाता है इसलिए रुद्र है।

१६. **इन्दुमौलिः** (पुं॰)—इन्दु—चन्द्रमा ही जिनका मुकुट है इसलिए इन्दुमौलि है। सम्पादक के अनुसार—मुकुट में चन्द्रमा है इसलिए इन्दुमौलि है।

१७. **यज्ञारिः** (पुं॰)—जिन यज्ञों में पशु होम किये जाते हैं उन यज्ञों का शत्रु होने से यज्ञारि है।

१८. **त्रिनेत्रः** (पुं॰)—तीन नेत्र इनके हैं इसलिए त्रिनेत्र है।

१९. **वृषभध्वजः** (पुं॰)—जिनकी ध्वजा में वृषभ-बैल रहता है इसलिए वृषभध्वज है।

२०. **उग्रः** (पुं॰)—कोप को बल देता है इसलिए उग्र है।

२१. **शूलिन्** (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में शूली]—त्रिशूल, भाला इनके पास है इसलिए शूली है।

२२. **कपालिन्** (पुं॰) [प्र॰ वि॰ एकव॰ में कपाली]—कपाल-मनुष्य की खोपड़ी। कपाल इनके पास है इसलिए कपाली है।

२३. **शिपिविष्टः** (पुं॰)—शिव (लिंग) तथा अस्थिचूर्ण जिसके शिरोभाग पर रहता है इसलिए शिपिविष्ट है। सम्पादक के अनुसार—शिव और पिष्ट शब्द का आदि अक्षर ग्रहण कर शिपि शब्द बना है।

२४. **भवः** (पुं॰)—भव्य के लिए होता है इसलिए भव है।

२५. **हरः** (पुं॰)—अघ को नष्ट करता है इसलिए हर है।

२६. **उमापतिः** (पुं॰)—उमा के पति हैं इसलिए उमापति है।

विश्वेषु रूपं यस्य स **विश्वरूपः**। कपर्दोऽस्त्यस्य **कपर्दी**। कपर्दो जटाजूटः। कं शिरः पिपर्तीति कपर्दः। औणादिको दः। अपिशब्दात्-ईशानः। शशिशेखरः। पशुपतिः। शम्भुः। गिरिशः। श्रीकण्ठः। सर्वज्ञः। त्रिपुरान्तकः। भूतेशः। परमेश्वरः। अन्धकरिपुः। दक्षाध्वरध्वंसकः। स्रष्टा। वामदेवः। कामध्वंसी। व्योमकेशः। वह्निरेताः। भीमः। भर्गः। कृत्तिवासाः। वृषाङ्कः।

भागीरथी त्रिपथगा जाह्नवी हिमवत्सुता।
मन्दाकिनी द्युपर्यायधुनी गङ्गानदीश्वरः ॥७१॥

पञ्च गङ्गायाम्। भगीरथेन राज्ञा ऽवतारितत्वात्तस्यापत्यं वा **भागीरथी**। त्रिभिः पथिभिर्गच्छति **त्रिपथगा**। त्रिमार्गगा च। जह्नुना पीता श्रोत्रेण त्यक्ता **जाह्नवी**। जह्नोरपत्यं वा जाह्नवी। हिमवतो हिमाचलस्य सुता **हिमवत्सुता**। मन्दाका मन्दा गतिरस्त्यस्या **मन्दाकिनी**। सुरसरित्। विष्णुपदी। सरिद्वरा। त्रिदशदीर्घिका। त्रिस्रोताः। भीष्मसूः। सुरनिम्नगा।

---

२७. विरूपाक्षः (पुं०)—इसकी आँखें विरूप (विषम संख्या में या भद्दी) हैं इसलिए विरूपाक्ष है।

२८. विश्वरूपः (पुं०)—सम्पूर्ण विश्व में जिसका रूप है इसलिए वह विश्वरूप है।

२९. कपर्दी (मूल शब्द कपर्दिन्) (पुं०)—कपर्द–जटाजूट। इसके जटाजूट होते हैं इसलिए कपर्दी है अथवा कम्–शिर। शिर को (जटा से) भरे रखता है इसलिए कपर्दी है।

अपि शब्द से ईशान। शशिशेखर। पशुपति। शम्भु। गिरिश। श्रीकण्ठ। सर्वज्ञ। त्रिपुरान्तक। भूतेश। परमेश्वर। अन्धकरिपु। दक्षाध्वरध्वंसक। स्रष्टा। वामदेव। कामध्वंसी। व्योमकेश। वह्निरेता। भीम। भर्ग। कृत्तिवासा। वृषाङ्क आदि और भी नाम हैं।

गंगा और महादेव के नाम

श्लोकार्थ—भागीरथी, त्रिपथगा, जाह्नवी, हिमवत्सुता, मन्दाकिनी, द्यु (स्वर्ग) के पर्यायवाची नामों में धुनी (नदी के नाम) जोड़ने से भी गंगा के नाम बनते हैं। नदी के नाम में ईश्वर के नाम जोड़ने से महादेव के नाम बनते हैं ॥७१॥

भाष्यार्थ—गंगा के पाँच नाम हैं।

१. भागीरथी (स्त्री०)—भगीरथ राजा ने इसे उतारा था अथवा भगीरथ की पुत्री होने से भागीरथी है।

२. त्रिपथगा (स्त्री०)—तीन रास्तों से चलती है इसलिए त्रिपथगा है। सम्पादक के अनुसार—महाभारत में कहा है–पृथ्वी पर मनुष्यों को तारती है, अधोलोक में नागों को तारती है और स्वर्ग में देवों को तारती है इसलिए त्रिपथगा है। त्रिमार्गगा भी नाम है।

३. जाह्नवी (स्त्री०)—जह्नु राजा ने क्रुद्ध होकर इसे पी लिया और फिर प्रसन्न होकर कानों से बाहर निकाल दिया इसलिए जाह्नवी है अथवा जह्नु की पुत्री होने से जाह्नवी है।

४. हिमवत्सुता (स्त्री०)—हिमाचल की पुत्री है इसलिए हिमवत्सुता है।

५. मन्दाकिनी (स्त्री०)—मन्द गति से चलती है इसलिए मन्दाकिनी है।

द्युपर्यायधुनी

आकाशशब्दतो (तः परत्र) नदीपर्यायेषु गङ्गानामानि भवन्ति। खस्रोतस्विनी। विहायोधुनी। वियत्सिन्धुः। व्योमप्रवन्ती। नभोनदी। गगननिम्नगा। अम्बरापगा। द्योनदी। आकाशनदी। अन्तरीक्षद्विरेफा। मेघपथसरित्। वायुपथतरङ्गिणी। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

गङ्गानदीश्वरः॥ ७१॥

भागीरथ्यादिशब्दतः (परत्र) **ईश्वर**पर्यायेषु हरनामानि भवन्ति। भागीरथीराजः। त्रिपथगाधिपः। जाह्नवीपतिः। हिमवत्सुतास्वामी। मन्दाकिनीनाथः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

विधिर्वेधा विधाता च द्रुहिणोऽजश्चतुर्मुखः।
पद्मपर्य्यायोनिश्च पितामहविरिञ्चिनौ ॥७२॥
हिरण्यगर्भः स्रष्टा च प्रजापतिस्सहस्त्रपात्।
ब्रह्मात्मभूरनन्तात्मा कः तत्पुत्रोऽथ नारदः ॥७३॥

सप्तदश ब्रह्मणि। विधति सृजति **विधिः**। विधत्ते वा विधिः ''उपसर्गे दः किः।'' विधति सृजति **वेधाः**। ''सर्वधातुभ्योऽसन्।'' ''विध विधाने।'' विदधाति धारयति भूतानीति **विधाता**। द्रुह्यत्यसुरेभ्यो **द्रुहिणः**। न जायते**ऽजः**। चत्वारि मुखानि वक्त्राण्यस्य **चतुर्मुखः**। ''**पद्मपर्यायोनिः**''- पद्मपर्यायशब्दाग्रे

सुरसरित्। विष्णुपदी। सरिद्वरा। त्रिदशदीर्घिका। त्रिस्रोता। भीष्मसू। सुरनिम्नगा। आदि नाम भी हैं।

आकाश शब्द से आगे नदी के पर्यायवाची नामों को जोड़ देने से गङ्गा के नाम होते हैं। खस्रोतस्विनी। विहायोधुनी। वियत्सिन्धु। व्योमप्रवन्ती। नभोनदी। गगननिम्नगा। अम्बरापगा। द्योनदी। आकाशनदी। अन्तरीक्षद्विरेफा। मेघपथसरित्। वायुपथतरङ्गिणी आदि भी जानना।

भागीरथी आदि शब्द के आगे ईश्वर के वाची शब्दों को जोड़ने से महादेव के नाम होते हैं। भागीरथीराज। त्रिपथगाधिप। जाह्नवीपति। हिमवत्सुतास्वामी। मन्दाकिनीनाथ इत्यादि जानना।

ब्रह्मा और नारद के नाम

श्लोकार्थ—विधि, वेधा, विधाता, द्रुहिण, अज, चतुर्मुख, कमल के पर्यायवाची शब्दों के आगे 'योनि' शब्द जोड़ देने पर तथा पितामह, विरिञ्चन, हिरण्यगर्भ, स्रष्टा, प्रजापति, सहस्रपाद्, ब्रह्मा, आत्मभू, अनन्तात्मा और क ये विधाता के नाम हैं। उनका पुत्र नारद है ॥७२-७३॥

भाष्यार्थ—सत्रह ब्रह्मा के नाम हैं।

१. विधिः (पुं॰)—बनाता है, स्रजन करता है इसलिए विधि है अथवा करता है इसलिए विधि है।

२. वेधस् (पुं॰)—बनाता, रचना करता है इसलिए वेधा है।

३. विधाता (पुं॰ एकव॰)[मूल शब्द विधातृ]—भूत-प्राणी या पंचभूत। इनको करता है, धारण करता है इसलिए विधाता है।

४. द्रुहिणः (पुं॰)—असुरों से द्रोह(द्वेष, युद्ध) करता है इसलिए द्रुहिण है।

योनिशब्दे प्रयुज्यमाने धातुर्नामानि भवन्ति। तामरसयोनिः। कमलयोनिः। नलिनयोनिः। पद्मयोनिः। सरोजयोनिः। सरसीरुहयोनिः। खरदण्डयोनिः। पुण्डरीकभवः। महोत्पलजः। अरविन्दयोनिः। शतपत्रयोनिः। पुष्करयोनिः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि। दक्षमन्वादीनां लोकपितृणां पिता **पितामहः**। आत्मनो भूतानि विरिङ्क्ते पृथक् करोति **विरिञ्चनः। विरिञ्चः। विरिञ्चिश्च।** हिरण्यं गर्भे यस्य हिरण्यं गर्भो वा यस्य **हिरण्यगर्भः**। पुराणम्–

''हिरण्यगर्भमभवत्तत्राण्डमुदके तथा।
तत्र यज्ञे स्वयं ब्रह्मा स्वयम्भूर्लोकविश्रुतः॥''

सृजतीत्येवंशीलः **स्रष्टा**। प्रजानां पतिः **प्रजापतिः**। ''पद गतौ।'' पद्। पद्यन्ते गम्यन्ते (गच्छन्ति) प्राणिनः, तान् पद्यमानान् जन्तून् चरणा एव प्रयुञ्जते। ''धातोश्च हेतौ'' इञ्। अस्योप० दीर्घः। पादि जा०। पादयन्तीति पादः। क्विप् च। ''कारितस्या०'' कारितलोपः। वेर्लोपः। पाद्। सहस्रं पादो यस्य स **सहस्रपाद्**। बृंहन्ति वर्धन्ते चराचराण्यत्र **ब्रह्म**। उभयम्। इदं ब्रह्म। अयं ब्रह्मा। अथवा बृंहन्ति व्रतानि यस्मिन्निति **ब्रह्म**। बृंहेः मन् प्रत्ययो भवति, अच्च हकारात् पूर्वम्। आत्मना भवति **आत्मभूः**। न अन्तो विद्यते यस्य सोऽनन्तः,

---

५. **अजः** (पुं०)—उत्पन्न नहीं होता है इसलिए अज है।

६. **चतुर्मुखः** (पुं०)—इसके चार मुख हैं इसलिए चतुर्मुख है।

७. पद्म के पर्यायवाची नामों के आगे 'योनि' शब्द जोड़ने से—तामरसयोनि । कमलयोनि। नलिनयोनि। पद्मयोनि। सरोजयोनि। सरसीरुहयोनि। खरदण्डयोनि। पुण्डरीकभव। महोत्पलज। अरविन्दयोनि। शतपत्रयोनि। पुष्करयोनि आदि ब्रह्मा के नाम जानना।

८. **पितामहः** (पुं०)—दक्ष, मन्त्र आदि लोकपिताओं का पिता है इसलिए पितामह है।

९. **विरिञ्चनः, विरिञ्चिः, विरिञ्चः** (पुं०)—अपने से भूतों को(प्राणियों को) पृथक् करता है इसलिए विरिञ्चन है।

१०. **हिरण्यगर्भः** (पुं०)—जिसके गर्भ में हिरण्य (सुवर्ण) रहता है इसलिए हिरण्यगर्भ है। अथवा जिसका गर्भ हिरण्य है (क्योंकि लोक में ऐसा माना जाता है कि सोने के अण्डे से इसका जन्म हुआ है) इसलिए हिरण्यगर्भ है। पुराण में कहा है कि—''जल में जिस प्रकार अण्डा होता है उसी तरह उस अण्डे में हिरण्यगर्भ (ब्रह्मा) उत्पन्न हुए थे। चूँकि उस अण्डे में ब्रह्मा स्वयं उत्पन्न हुए थे इसलिए वह 'स्वयम्भू' इस नाम से लोक में विश्रुत हुए।''

११. **स्रष्टन्** (पुं०)[एकव० में स्रष्टा]—सृजन करने का स्वभाव है इसलिए स्रष्टा है।

१२. **प्रजापतिः** (पुं०)—प्रजा का स्वामी है इसलिए प्रजापति है।

१३. **सहस्रपाद्** (पुं०)—इसके हजार पाद हैं इसलिए सहस्रपाद् है।

१४. **ब्रह्मन्** (पुं०)—चर-अचर पदार्थ इसमें बढ़ते हैं इसलिए ब्रह्मा है। नपुं० लिंग में भी यह शब्द है। जैसे इदं ब्रह्म। अयं ब्रह्मा अथवा जिसमें व्रत वृद्धि को प्राप्त होते हैं इसलिए ब्रह्म है।

१५. **आत्मभूः** (पुं०)—स्वयं से होता है, उत्पन्न होता है इसलिए आत्मभू है।

अनन्तो विनाशरहित आत्मा यस्य सः **अनन्तात्मा**। कायतीति **कः**। परमेष्ठी। सुरज्येष्ठः। शतानन्दः। स्वयम्भूः। जगत्कर्ता। शतधृतिः। स्थविरः।

तत्पुत्रोऽथ नारदः ॥७३॥

तस्य पुत्रस्तत्पुत्रः। ब्रह्मणः शब्दात् (परत्र) पुत्रशब्दे प्रयुज्यमाने नारदनामानि भवन्ति। विधिपुत्रः। वेधःपुत्रः। विधातृपुत्रः। विरिञ्चिपुत्रः। द्रुहिणपुत्रः। अजपुत्रः। चतुर्मुखपुत्रः। पद्मयोनिपुत्रः। पितामहपुत्रः। हिरण्यगर्भपुत्रः। प्रजापतिपुत्रः। सहस्रपात्पुत्रः। ब्रह्मपुत्रः। आत्मभूसुतः। अनन्तात्मपुत्रः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

कृष्णो दामोदरो विष्णुरुपेन्द्रः पुरुषोत्तमः।
केशवश्च हृषीकेशः शार्ङ्गी नारायणो हरिः ॥७४॥
केशी मधुर्बलिर्बाणो हिरण्यकशिपुर्मुरः।
तदादिसूदनः शौरिः पद्मनाभोऽप्यधोऽक्षजः ॥७५॥
गोविन्दो वासुदेवश्च लक्ष्मीः श्रीर्गोमिनीन्दिरा।
तत्पतिः शैलभूम्यादिधरचक्रधरस्तथा ॥७६॥

एकविंशतिर्नारायणे। कर्षत्यरीन् कृष्णवर्णत्वाद्वा **कृष्णः**। ''इणुजिकृषिभ्यो नक्।'' दाम उदरे यस्य

---

१६. **अनन्तात्मन्** (पुं०)—जिसका अन्त न हो वह अनन्त है। जिसकी आत्मा अन्त रहित, विनाश रहित हो वह अनन्तात्मा है।

१७. **कः** (पुं०)—शब्द या ध्वनि करता है इसलिए क है।

परमेष्ठी। सुरज्येष्ठ। शतानन्द। स्वयम्भू। जगत्कर्ता। शतधृति। स्थविर आदि नाम भी हैं।

ब्रह्म के पर्यायवाची नाम के आगे पुत्र, सुत आदि जोड़ने पर नारद के नाम होते हैं। विधिपुत्र। वेधस्पुत्र। विधातृपुत्र। विरिञ्चिपुत्र। द्रुहिणपुत्र। अजपुत्र। चतुर्मुखपुत्र। पद्मयोनिपुत्र। पितामहपुत्र। हिरण्यगर्भपुत्र। प्रजापतिपुत्र। सहस्रपात्पुत्र। ब्रह्मपुत्र। आत्मभूसुत। अनन्तात्मपुत्र आदि नाम जानना।

नारायण और लक्ष्मी के नाम

श्लोकार्थ—कृष्ण, दामोदर, विष्णु, उपेन्द्र, पुरुषोत्तम, केशव, हृषीकेश, शार्ङ्गी, नारायण, हरि तथा केशी, मधु, बलि, बाण, हिरण्यकशिपु और मुर इन नामों को आदि में रखकर सूदन वाचक शब्द लगा देने पर तथा शौरि, पद्मनाभ, अधोक्षज, गोविन्द और वासुदेव ये कृष्ण के नाम हैं।

लक्ष्मी, श्री, गोमिनी, इन्दिरा ये लक्ष्मी के नाम हैं। लक्ष्मी के नाम में पति वाचक शब्द लगाने से हरि के नाम होते हैं। शैल और भूमि के नामों में 'धर' जोड़ देने से भी हरि के नाम होते हैं। चक्रधर भी हरि का नाम है ॥७४-७६॥

भाष्यार्थ—नारायण के २१ नाम हैं।

१. **कृष्णः** (पुं०)—शत्रुओं को नष्ट करता है अथवा काले रंग का होने से कृष्ण कहते हैं।

स **दामोदरः**। यल्लक्ष्यम् बालो हि चापलाद्दाम्ना बद्धोऽभूत्। वेवेष्टि व्याप्नोति **विष्णुः**। ''सूविषिभ्यां यण्वत्॥'' उपगतमिन्द्रमुपेन्द्रः। इन्द्र उपगतोऽनुजत्वाद् वा **उपेन्द्रः**। पुरुषेषु उत्तमः **पुरुषोत्तमः**। केशाः सन्त्यस्य **केशवः**। हृषीकाणामिन्द्रियाणामीशो वशित्वाद् **हृषीकेशः**। शार्ङ्गं धनुरस्त्यस्य **शार्ङ्गी**। नारा आपः अयनं यस्य **नारायणः**। यत्स्मृतिः–

''आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः॥''

नरस्यापत्यं वा। नरानयते इति वाक्येन नरायणोऽपि। हरत्यघं **हरिः**। केशाः सन्त्यस्य **केशी**। मन्यते जनैः **मधुः**।''मनिजनिनमां मधजतनाकाश्च'' एषामुप्रत्ययो भवति मधजतनाकाश्च यथासंख्यमादेशा भवन्ति।

---

२. दामोदरः (पुं०)—उदर (कटिभाग) में दाम-रस्सी, कपड़े का फीता जिसके है इसलिए दामोदर है। जैसा कि कहा है–बालक चंचल होने से रस्सी से बांध दिये जाते हैं। सम्पादक के अनुसार—पौराणिकी कथा है कि—यशोदा ने बाल कृष्ण की चपलता को दूर करने के लिए कटिप्रदेश पर रज्जु बांध दिया था।

३. विष्णुः (पुं०)—सर्वत्र व्याप्त है इसलिए विष्णु है।

४. उपेन्द्रः (पुं०)—इन्द्र के निकट रहता है इसलिए उपेन्द्र है अथवा अनुज होने से इन्द्र समीप आया इसलिए उपेन्द्र है।

५. पुरुषोत्तमः (पुं०)—पुरुषों में उत्तम है इसलिए पुरुषोत्तम कहा है।

६. केशवः (पुं०)—इनके केश होते हैं इसलिए केशव है।

७. हृषीकेशः (पुं०)—हृषीक-इन्द्रिय। इन्द्रियों को वश करने से इन्द्रियों का स्वामी है इसलिए हृषीकेश है।

८. शार्ङ्गिन् (पुं०)—शार्ङ्ग-धनुष। इनके पास धनुष होता है इसलिए शार्ङ्गी है।

९. नारायणः (पुं०)—नारा जल को कहते हैं वह जल ही जिसका मार्ग है वह नारायण है। टिप्पणकार ने नारायण की व्युत्पत्ति इस प्रकार की है–नरों का समूह नार है, उस नर से अर्थात् विराट् पुरुष से जो उत्पन्न हुआ है वह तत्त्व नार है। उसको जो जानता है अथवा प्रवर्तन कराता है वह नारायण है। जैसा कि मनुस्मृति में लिखा है—''भगवान् की उत्पत्ति पर रूप से हुई—जल को नार या नीर भी कहते हैं क्योंकि नीर बूँद ही नर और नारी के स्वरूप को रचने वाला है, नर के आधे भाग को नारी कहते हैं और भगवान् को नर+अयन=नारायण कहते हैं। इस जगत् को चलाने वाले यही ब्रह्मा हैं।''

१०. हरिः (पुं०)—पाप को हरता है इसलिए हरि है।

११. केशन् (पुं०)—इसके केश होते हैं इसलिए केशी है।

''वल वल्ल च।'' बलतीति **बलिः**। ''इः सर्वधातुभ्यः।'' बण्यते **बाणः**। **तदादिसूदनः**। तदादीनां केश्यादीनां सूदनो नाशकर्ताऽरिः। केशी, मधुः, बलिः, बाणः, हरिण्यकशिपुः, मुरः एभ्यः शब्देभ्यः परत्रारिशब्दे प्रयुज्यमाने नारायणनामानि भवन्ति। केशिवैरी। केश्यरातिः। केश्यमित्रः। केशिद्विट्। केशिसपत्नः। मधुवैरी। मध्वरातिः। मध्वमित्रः। मध्वरिः। मधुद्विट्। मधुसपत्नः। मधुरिपुः। बलिवैरी। बल्यरातिः। बल्यमित्रः। बलिद्विट्। बलिसपत्नः। बलिरिपुः। बाणवैरी। बाणारातिः। बाणामित्रः। बाणारिः। बाणद्विट्। बाणसपत्नः। बाणरिपुः। हिरण्यकशिपुद्विट्। हिरण्यकशिपुसपत्नः। हिरण्यकशिपुरिपुः। मुरवैरी। मुरारिः। मुरारातिः। मुरद्विट्। मुरसपत्नः। मुररिपुः। मधुशत्रुः। बाणशत्रुः। मधुसूदनः। बलिसूदनः। बलिबन्धनः। बाणसूदनः। **हिरण्यकशिपुसूदनः**। केशिसूदनः। इत्यादि पर्यायनामानि। शूरस्तस्यादिपुरुषस्तस्यापत्यम्, **शौरिः**। सौरिर्वा। पद्मं नाभावस्य **पद्मनाभः**। ''संज्ञायां नाभिः।'' अधोक्षाणां जितेन्द्रियाणां जायते प्रत्यक्षीभवति, **अधोक्षजः**। गां भुवं विन्दति **गोविन्दः**। वसुदेवस्यापत्यं **वासुदेवः**। मञ्जुकेशः। श्रीवत्साङ्कः। श्रीपतिः। पीतवासाः। विष्वक्सेनः। विश्वरूपः। मुकुन्दः। धरणिधरः। सुपर्णकेतुः। वैकुण्ठः। जलशयनः। रथाङ्गपाणिः। दाशार्हः। क्रतुपुरुषः। वृषाकपिः। अच्युतः। इन्द्रावरजः। बभ्रुः। विष्टरश्रवाः। वनमाली। सनातनः। जिनः। शम्भुः। इत्याद्यूह्यम्।

लक्ष्मीः श्रीर्गोमिनीन्दिरा।

---

१२. मधुः (पुं॰)—लोगों से माना जाता है, मान्य है इसलिए मधु है।

१३. बलिः (पुं॰)—जीता है इसलिए बलि है।

१४. बाणः (पुं॰)—तीर छोड़ता है इसलिए बाण है।

केशी, मधु, बलि, बाण, हरिण्यकशिपु, मुर इनके आगे 'सूदन' वाचक शब्द जोड़ने से नारायण के नाम होते हैं। केशिवैरी, केशयराति, केश्यमित्र, केशिद्विट् आदि नाम भाष्य में देखें।

१५. हिरण्यकशिपुसूदनः (पुं॰),

१६. मुरसूदनः (पुं॰)—इन सभी नामों को बनाने के लिए देखें भाष्य।

१७. शौरिः (पुं॰)—शूर का आदिपुरुष और उसका पुत्र होने से शौरि है। सौरि भी बनता है।

१८. पद्मनाभः (पुं॰)—इसकी नाभि में पद्म, कमल होता है इसलिए पद्मनाभ है।

१९. अधोक्षजः (पुं॰)—अधोक्ष-जितेन्द्रिय। उनको प्रत्यक्ष होता है इसलिए अधोक्षज है। सम्पादक के अनुसार—अक्षज-इन्द्रियज्ञान। जिसने उस इन्द्रियज्ञान को नीचे कर दिया है, हटा दिया है अथवा जिसका निचला हिस्सा कभी भी नष्ट नहीं होता है इसलिए अधोक्षज है।

२०. गोविन्दः (पुं॰)—पृथिवी को जानता है इसलिए गोविन्द है।

२१. वासुदेवः (पुं॰)—वसुदेव का पुत्र है इसलिए वासुदेव है।

मञ्जुकेश। श्रीवत्साङ्क। श्रीपति। पीतवासा। विष्वक्सेन। विश्वरूप। मुकुन्द। धरणिधर। सुपर्णकेतु। वैकुण्ठ। जलशयन। रथाङ्गपाणि। दाशार्ह। कतुपुरुष। वृषाकपि। अच्युत। इन्द्रावरज। बभ्रु। विष्टरश्रवा। वनमाली। सनातन। जिन। शम्भु आदि नामों को भी जानना।

चत्वारः श्रियाम्। ''लक्ष दर्शनाकाङ्क्षयोः।'' लक्षयति दर्शयति पुण्यकर्माणं जनमिति **लक्ष्मीः**। ''लक्षेर्मोऽन्तश्च'' अस्मादीप्रत्ययो भवति मोऽन्तश्च। ''भज् श्रिञ् (सेवायाम्)।'' पुण्यकृतं श्रयतीति **श्रीः**। ''वचिप्रच्छिश्रिद्रुप्रुज्वां क्वि ब्दीर्घश्च'' एभ्यः क्विप्प्रत्ययो भवति दीर्घश्च स्वरस्य चैषाम्। गां मिनोतीति **गोमिनी**। इन्दति परमैश्वर्य्ययुक्ता भवति **इन्दिरा**। कमला। पद्मा। पद्मवासा। हरिप्रिया। क्षीरोदतनया। माया। मा। ता। ई। आ। रमा। सीता। वला (चला)। भर्भरी। अब्धिजाऽपि।

तत्पतिः शैलभूम्यादिधरश्चचक्रधरस्तथा ॥७६॥

तस्याः पतिस्**तत्पतिः**। लक्ष्मीपतिः। श्रीपतिः। गोमिनीपतिः। इन्दिरापतिः। इत्यादीनि हरिनामानि स्युः। **शैलभूम्यादिधरः**। पर्वतधरः। शैलधरः। दरीभृद्धरः। अचलधरः। शृङ्गिधरः। सानुमद्धरः। गिरिधरः। नगधरः। शिलोच्चयधरः। भूमिधरः। भूधरः। पृथ्वीधरः। गह्वरीधरः। मेदिनीधरः। महीधरः। धराधरः। वसुन्धराधरः। धात्रीधरः। क्ष्माधरः। वसुमतीधरः। विश्वम्भराधरः। अवनीधरः। धरणीधरः। क्षमाधरः। धरित्रीधरः। क्षितिधरः। कुधरः (ध्रः)। कुम्भिनीधरः। इलाधरः। उर्वरीधरः। उर्वीधरः। गोधरः। जगतीधरः। इत्यादीनि हरेर्नामानि ज्ञातव्यानि। तथा **चक्रधरो**ऽपि।

चार नाम लक्ष्मी के हैं।

१. लक्ष्मीः (स्त्री०)—लोगों को पुण्य कर्म(का फल) दिखाती है इसलिए लक्ष्मी है।

२. श्रीः (स्त्री०)—पुण्य करने वालों का आश्रय लेती है इसलिए श्री है।

३. गोमिनी (स्त्री०)—पृथिवी को स्थापित करती है, मापती है इसलिए गोमिनी है। सम्पादक के अनुसार—'गोमिनी' शब्द का लक्ष्मी अर्थ में प्रमाण ढूँढ़ना चाहिए। इसका विग्रह जो भाष्यकार ने किया है, वह भी चिन्तनीय है। यह मतुप् अर्थ वाला शब्द कोषान्तरों में गोपालिका के लिये प्रयुक्त है।

४. इन्दिरा (स्त्री०)—परम ऐश्वर्य से युक्त होती है इसलिए इन्दिरा है।

कमला। पद्मा। पद्मवासा। हरिप्रिया। क्षीरोदतनया। माया आदि नाम भी हैं।

विशेष–मा, ता ई, आ ये शब्द लक्ष्मी अर्थ में हैं। अभिधान चिन्तामणि में कहा है 'लक्ष्मी पद्मा रमा या मा ता धी कमलेन्दिरा' अभि.चि. २/१४०। भर्भरी शब्द भी लक्ष्मी के अर्थ में है। ऐसा इसी टीका में कहा है।

लक्ष्मी का पति—लक्ष्मीपति। श्रीपति। गोमिनीपति। इन्दिरापति आदि नाम भी हरि के हैं।

शैल, भूमि आदि नामों में 'धर' जोड़ने से भी हरि के पर्वतधर। शैलधर। दरीभृद्धर। अचलधर। शृङ्गिधर। सानुमद्धर। गिरिधर। नगधर। शिलोच्चयधर। भूमिधर। भूधर। पृथ्वीधर। गह्वरीधर। मेदिनीधर। महीधर। धराधर। वसुन्धराधर। धात्रीधर। क्ष्माधर। वसुमतीधर। विश्वम्भराधर। अवनीधर। धरणीधर। क्षमाधर। धरित्रीधर। क्षितिधर। कुधर (ध्रः)। कुम्भिनीधर। इलाधर। उर्वरीधर। उर्वीधर। गोधर। जगतीधर इत्यादि नाम होते हैं। चक्रधर भी हरि का नाम है।

तत्पुत्रो मन्मथः कामः सूर्पकाराति (कारि) रनन्यजः।
कायपर्यायरहितो मदनो मकरध्वजः ॥७७॥

षट् कामे। तत्पुत्रः। कृष्णपुत्रः। दामोदरपुत्रः। विष्णुपुत्रः। उपेन्द्रतनयः। पुरुषोत्तमसूनुः। केशवपुत्रः। हृषीकेशपुत्रः। हृषीकेशतनयः। शार्ङ्गिनन्दनः। नारायणोद्वहः। हरिसूनुः। गोविन्दतुक्। इमानि मदनस्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि। मथ्नाति चित्तं **मन्मथः**। कामयते जनः (अनेन) **कामः**। **सूर्पकारातिः**। मनसोऽन्यस्मान्न जायते **अनन्यजः**। **कायपर्यायरहितः**। विदेहः। अकायः। अनङ्गः। अनपघनः। अवपुः। असंहननः। अकलेश्वरः। अमूर्त्तिः। इत्यादि (दीन्यपि तस्य) पर्यायनामानि। जनं मदयतीति **मदनः**। मकरो ध्वजे यस्य स **मकरध्वजः**। प्रद्युम्नः। मनसिजः। सङ्कल्पजन्मा। अङ्गजः। पञ्चेषुः। श्रीनन्दनः। हृच्छयः। मधुसखः।

कामदेव के नाम

श्लोकार्थ—नारायण का पुत्र कामदेव है। मन्मथ, काम, सूर्पकाराति, अनन्यज, कायपर्याय-रहित—काय के पर्यायवाची शब्द में निषेधात्मक 'अ' जोड़ने से, मदन, मकरध्वज ये काम के नाम हैं ॥७७॥

भाष्यार्थ—काम के छह नाम हैं। कृष्ण आदि नामों में 'पुत्र' जोड़ने से काम के नाम होते हैं। कृष्णपुत्र। दामोदरपुत्र। विष्णुपुत्र। उपेन्द्रतनय। पुरुषोतमसूनु। केशवपुत्र। हृषीकेशपुत्र आदि।

१. मन्मथः (पुं०)—चित्त को मथ देता है इसलिए मन्मथ है। सम्पादक के अनुसार—यहाँ चित्त न कहकर 'मन' शब्द को कहना चाहिए अर्थात् जो मन को मथ देता है वह मन्मथ है। क्षीरस्वामी और रामाश्रम ने कहा है–मनन करना मत् है, चेतना है। चेतना को, मनन को मथता है, नष्ट करता है इसलिए मन्मथ है।

२. कामः (पुं०)—इसके द्वारा प्राणी कामना करते हैं इसलिए काम है।

३. सूर्पकारातिः ()—सम्पादक के अनुसार—छन्दभंग के भय के कारण यहाँ शूर्पकारिः यह पाठ जानना चाहिए। शूर्पक किसी दानव का नाम है। उस दानव का नाश करने के कारण काम को शूर्पकारि कहा है।

४. अनन्यजः (पुं०)—मन के अलावा अन्यत्र उत्पन्न नहीं होता है इसलिए अनन्यज है। काय के पर्यायवाची शब्दों से रहित अर्थ के लिए 'अ' प्रारम्भ में जोड़ने से जैसे अदेह, विदेह इत्यादि।

५. मदनः (पुं०)—लोगों को मद उत्पन्न कराता है इसलिए मदन है।

६. मकरध्वजः (पुं०)—जिसके ध्वज में मकर बना है इसलिए मकरध्वज है।

प्रद्युम्न। मनसिज। सङ्कल्पजन्मा। अङ्गज। पञ्चेषु। श्रीनन्दन। हृच्छय। मधुसख आदि नाम भी हैं।

शिलीमुखः शरो बाणो मार्गणो रोपणः कणः।
इषुः काण्डं क्षुरप्रं च नाराचं तोमरं खगः ॥७८॥

द्वादश बाणे। शिलीव मुखं यस्य **शिलीमुखः**। ''शृ हिंसायाम्''। शृणन्त्यनेनेति **शरः**। ''पुंसि संज्ञायां घः'' घ प्रत्ययः। बणति **बाणः**। ''व्यञ्जनाच्च'' घञ्। मार्गयति अन्वेषयति **मार्गणः**। रोप्यते देहे निखन्यते **रोपणः**। कणति **कणः**। ''इष गतौ''। इष्यते गम्यते शत्रुसम्मुखमिति **इषुः**। जन्तुमिष्यति हिनस्तीति वा **इषुः**। ''इषिधृषिभिदिगृधिमृदिपृभ्यः कुः''। काम्यते रिपुवधाय **काण्डम्**। उभयम्। खनति भिनत्ति **क्षुरप्रम्**। नारं नरसमूहम् अञ्चतीति **नाराचम्**। स्तोम्यते श्लाघ्यते **तोमरम्** खमाकाशं गच्छतीति **खगः**। कङ्कपत्रः। चित्रपुङ्खः। विशिखः। कलम्बः। कदम्बोऽपि। सायकः। प्रदहः। पृषत्कः। रोपः। गार्द्धपक्षः। खरुः। भल्लिः। भल्लः।

बाण के नाम

श्लोकार्थ—शिलीमुख, शर, बाण, मार्गण, रोपण, कण, इषु, काण्ड, क्षुरप्र, नाराच, तोमर, खग ये बाण के नाम हैं ॥७८॥

भाष्यार्थ—बाण के बारह नाम हैं।

१. **शिलीमुखः** (पुं०)—शिली-गण्डूपद। इसे ही केचुवा कहते हैं। इसके समान मुख, अग्रभाग सूक्ष्म होता है इसलिए शिलीमुख है।

२. **शरः** (पुं०)—इससे प्राणी मरते हैं इसलिए शर है।

३. **बाणः** (पुं०)—बणति अर्थात् इसका पंख भाग शब्द करता है इसलिए बाण है।

४. **मार्गणः** (पुं०)—खोजता है, अन्वेषण करता है(मार्ग आदि का) इसलिए मार्गण है।

५. **रोपणः** (पुं०)—शरीर में लग जाता है, भिद जाता है इसलिए रोपण है।

६. **कणः** (पुं०)—शब्द करता है इसलिए कण है।

७. **इषुः** (पुं०)—शत्रु के सम्मुख भेजा जाता है इसलिए इषु है।

८. **काण्डः, काण्डम्** (पुं०, नपुं०)—शत्रु के वध की कामना करता है इसलिए काण्ड है।

९. **क्षुरप्रम्** (नपुं०)—भेद देता है इसलिए क्षुरप्र है। सम्पादक के अनुसार—तीक्ष्णता से जाता है इसलिए क्षुरप्र है।

१०. **नाराचम्** (नपुं०)—नर समूह को प्राप्त होता है अर्थात् नर समूह को घायल करता है इसलिए नाराच है।

११. **तोमरम्** (नपुं०)—इसकी श्लाघा, प्रशंसा की जाती है इसलिए तोमर है।

१२. **खगः** (पुं०)—आकाश में जाता है इसलिए खग है।

कङ्कपत्र। चित्रपुङ्ख। विशिख। कलम्ब। कदम्बोऽपि। सायक। प्रदह। पृषत्क। रोप। गार्द्धपक्ष। खरु। भल्लि। भल्ल अन्य नाम भी हैं।

कार्मुकं धन्व चापं च धर्म कोदण्डकं धनुः।
शिलीमुखादेरासनं-तत्कोटिमटनीं विदुः ॥७९॥

षड् धनुषि। कर्मणे शत्रुवधलक्षणाय प्रभवतीति **कार्मुकम्**। दधन्ति मारयत्यनेन **धन्वन्**। अदन्तम् धन्वम्। चपस्य वेणोविकार**श्चापम्**। उभयम्। धरति **धर्मन्**। धर्मे च। ''कुदृ अनृतभाषणे''। कोदयत्यनेन **कोदण्डम्**। शत्रुवधार्थे धन्यते अर्थ्यते धार्यते वा **धनुः**। उभयम्। उणादौ दधन्तीति धनुः (नूः)। ''कृषिचमित-निधनिवधिसर्जिखर्जिभ्य ऊः''। शिलीमुखादेरासनम्। शिलीमुखासनः। शरासनः। मार्गणासनः। रोपणासनः। कणासनः। इष्वासनः। काण्डासनः। क्षुरप्रासनः। नाराचासनः। तोमरासनः।

तत्कोटिमटनीं विदुः॥७९॥

तस्य धनुषः **कोटि**मग्रभागम्। कार्मुककोटिः। धन्वकोटिः। चापकोटिः। काण्डकोटिः। धनुष्कोटिः। शिलीमुखासनकोटिः। शरासनकोटिः। बाणासनकोटिः। रोपणासनकोटिः। मार्गणासनकोटिः। इत्यादिकमटनीति कथ्यते। अटति गच्छति भूमिम**टनिः**। ङ्याम्। **अटनी**। द्वौ स्त्रियाम्।

धनुष और धनुष के अग्रभाग के नाम

श्लोकार्थ—कार्मुक, धन्व, चाप, धर्म, कोदण्डक, धनु, शिलीमुख आदि नामों के साथ 'आसन' शब्द जोड़ देने से धनुष के नाम होते हैं। धनुष की कोटि (नोंक) को अटनी कहा है ॥७९॥

भाष्यार्थ—धनुष के छह नाम हैं।

१. कार्मुकम् (नपुं॰)—शत्रु वध लक्षण रूप कर्म के लिए समर्थ है इसलिए कार्मुक है।

२. धन्वन् (नपुं॰)—इससे मारा जाता है इसलिए धन्वन् है।

धन्वम् (नपुं॰)—'धन्व' शब्द अकारान्त भी है। सम्पादक के अनुसार—वैसे तो धन धातु धान्य अर्थ में है पर धातु के अनेक अर्थ होने से यहाँ मारण अर्थ में लिया है।

३. चापम् (नपुं॰), **चापः** (पुं॰)—चप अर्थात् वेणु-बांस का बना हुआ होने से चाप है।

४. धर्मन्, धर्मः (पुं॰)— दुःखी जीवों की रक्षा करता है इसलिए धर्म है। सम्पादक के अनुसार—अकारान्त धर्म शब्द (धर्मः) भी धनुष अर्थ में मेदिनी कोश में है।

५. कोदण्डम्, कोदण्डकम् (नपुं॰)—इससे शब्द ध्वनि उत्पन्न करायी जाती है इसलिए कोदण्ड है।

६. धनुष्, धनुः (नपुं॰, पुं॰)—शत्रु वध के लिए कामना इससे की जाती है अथवा शत्रु वध के लिए धारण किया जाता है इसलिए धनुष है। उणादि गण से—लोग इसे धारण करते हैं इसलिए धनुष है। शिलीमुख आदि नाम के साथ 'आसन' जोड़ने से भी धनुष के शिलीमुखासन शरासन। मार्गणासन। रोपणासन। कणासन। इष्वासन। काण्डासन। क्षुरप्रासन। नाराचासन। तोमरासन नाम होते हैं।

उस धनुष की कोटि-अग्रभाग को अटनि कहते हैं। 'अटनी' शब्द भी है। दोनों शब्द स्त्री लिंग में है। धनुष के नामों के आगे कोटि शब्द जोड़ने से अटनि के कार्मककोटि धन्वकोटि। चापकोटि। काण्डकोटि। धनुष्कोटि। शिलीमुखासनकोटि। शरासनकोटि। बाणासनकोटि। रोपणासनकोटि। मार्गणासनकोटि नाम होते हैं। इत्यादि अटनी कही जाती हैं। भूमि को प्राप्त होती है इसलिए अटनि है।

पुष्पं सुमनसः फुल्लं लतान्तं प्रसवोद्गमौ।
प्रसूनं कुसुमं ज्ञेयं-तदाद्यस्त्रशरः स्मरः ॥८०॥

षट् (अष्ट) **पुष्पे**। पुष्प्यति विकसति **पुष्पम्**। सुष्ठु मन्यन्ते आभिः **सुमनसः**। स्त्रीत्वबहुत्वे। ''ञिफला विशरणे।'' फल्। फलति स्म **फुल्लः**। **फुल्लं वा**। ''गत्यर्थाऽकर्मक-'' तः। ''आदनुबन्धाच्च'' इति नेट्। ''अनुपसर्गात्फुल्लक्षीबकृ-शोल्लाघाः'' निष्ठातकारस्य लत्वम्। ''चरफलोरुदस्य'' तकारादावगुणे उत्तवम्। सिः। रेफः। लताया। अन्तं पतितं **लतान्तम्**। प्रसू (य) ते **प्रसवम्**। उद्गच्छति प्रादुर्भवति **उद्गमः**। श्रियं प्रसूते **प्रसूनम्**। सूनं सूनकं च। एता उभयम्। कौ शोभां सूते **कुसुमम्**। सुमं **च**। **ज्ञेयं ज्ञातव्यम्।**

तदाद्यस्त्रशरः स्मरः॥ ८०॥

पुष्पपर्यायतोऽ (तः परत्रा) स्त्रपर्यायेषु तथा बाणपर्यायेष्वपि स्मरनामानि भवन्ति। पुष्पेषुः। पुष्पबाणः। पुष्पशिलीमुखः। पुष्पशरः। पुष्पमार्गणः। पुष्परोपणः। पुष्पकाण्डः। पुष्पकणः। पुष्पक्षुरप्रः। पुष्पनाराचः। पुष्पतोमरः। सुमनःक्षुरप्रः। सुमशिलीमुखः। सुमनोनाराचः। लतान्तेषुः। लतान्तकाण्डः। लतान्तक्षुरप्रः।

पुष्प और काम के नाम

श्लोकार्थ—पुष्प, सुमनस्, फुल्ल, लतान्त, प्रसव, उद्गम, प्रसून, कुसुम ये फूल के नाम हैं। इन नामों के बाद अस्त्र के और बाण के पर्यायवाची नाम जोड़ने से काम के नाम होते हैं ॥८०॥

भाष्यार्थ—पुष्प के आठ नाम हैं।

१. **पुष्पम्** (नपुं॰)—पुष्पित होता है, विकसित होता है इसलिए पुष्प है।

२. **सुमनसः** (स्त्री॰ बहुव॰)—इसे बहुत अच्छा मानते हैं इसलिए सुमनस है। सम्पादक के अनुसार—इससे मन बहुत प्रीति करता है इसलिए सुमनस है।

३. **फुल्लम्** (नपुं॰), **फुल्लः** (पुं॰)— फला (फूला) हुआ हो वह फुल्ल है।

४. **लतान्तम्** (नपुं॰)—लता के अन्त में गिरता है इसलिए लतान्त है।

५. **प्रसवः** (पुं॰)—प्रसव-उत्पन्न होता है इसलिए प्रसव है।

६. **उद्गमः** (पुं॰)—उत्पन्न होता है, प्रादुर्भाव होता है इसलिए उद्गम है।

७. **प्रसूनम्** (नपुं॰)—लक्ष्मी (उत्सव) को देता है इसलिए प्रसून है। सूनम् और सूनकम् शब्द भी हैं। ये दोनों शब्द दोनों (पुं॰, नपुं॰) लिंग में हैं।

८. **कुसुमम्** (नपुं॰)—पृथिवी पर शोभा उत्पन्न करता है इसलिए कुसुम है। 'सुमम्'(नपुं॰) शब्द भी है।

पुष्प के पर्यायवाची नामों के परे अस्त्र और बाण के पर्यायवाची नाम जोड़ने से स्मर के पुष्पेषु। पुष्पबाण। पुष्पशिलीमुख। पुष्पशर। पुष्पमार्गण। पुष्परोपण। पुष्पकाण्ड। पुष्पकण। पुष्पक्षुरप्र। पुष्पनाराच। पुष्पतोमर। सुमनःक्षुरप्र। सुमशिलीमुख। सुमनोनाराच। लतान्तेषु। लतान्तकाण्ड।

लतान्तनाराचः। लतान्ततोमरः। प्रसवमार्गणः। प्रसवरोपणः प्रसवकणः। प्रसवेषुः। प्रसवकाण्डः। प्रसवक्षुरप्रः। प्रसवनाराचः। प्रसवतोमरः। उद्गमशिलीमुखः। उद्गमशरः। उद्गमबाणः। उद्गममार्गणः। उद्गमरोपणः। उद्गमकणः। उद्गमेणुः। उद्गमक्षुरप्रः। उद्गमनाराचः। उद्गमतोमरः। प्रसूनशिलीमुखः। प्रसूनशरः। प्रसूनबाणः। प्रसूनरोपणः। प्रसूनकणः। प्रसूनकाण्डः। प्रसूनेषुः। प्रसूनक्षुरप्रः। प्रसूननाराचः। प्रसूनतोमरः। कुसुमशिलीमुखः। कुसुमशरः। कुसुमबाणः। कुसुमार्गणः। कुसुमरोपणः। कुसुमकणः। कुसुमेषुः। कुसुमकाण्डः। कुसुमक्षुरप्रः। कुसुमनाराचः। कुसुमतोमरः। पुष्पशब्दाग्रे धनुषि शब्दे प्रयुज्यमाने कन्दर्पनामानि भवन्ति। पुष्पकार्मुकः। पुष्पधन्वा। पुष्पचापः। पुष्पधर्मा। पुष्पकोदण्डः। पुष्पधनुः (न्वा)। लतान्तकार्मुकः। लतान्तधनुः (न्वा)। लतान्तचापः। लतान्तधर्मः (र्मा)। लतान्तकोदण्डः। लतान्तधन्वा। प्रसवचापः। प्रसवकोदण्डः। प्रसवधनुः (न्वा)। प्रसूनकार्मुकः। कुसुमधन्वा। कुसुमचापः। कुसुमधर्मः (र्मा)। कुसुमकोदण्डः। कुसुमधनुः (न्वा)। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

स्वान्तमास्वनितं चित्तं चेतोऽन्तःकरणं मनः।
हृदयं विशिखाऽकूतम्-मारस्तत्रोद्भवो मतः ॥८१॥

नव चित्ते। ''स्यम स्वन ध्वज शब्दे।'' आङ्पूर्वः। स्वनति स्म, आस्वनति स्म इति **स्वान्तम्, आस्वान्तम्**। ''गत्यर्था.'' निष्ठा क्तः। ''वा रुष्यमत्वरसंघुषाऽस्वनाम्'' एभ्यः क्ते विभाषयेड् भवति। वेट्।

लतान्तक्षुरप्र। लतान्तनाराच। लतान्ततोमर। प्रसवमार्गण। प्रसवरोपण। प्रसवकण। प्रसवेषु। प्रसवकाण्ड। प्रसवक्षुरप्र। प्रसवनाराच। प्रसवतोमर। उद्गमशिलीमुख। उद्गमशर। उद्गमबाण। उद्गममार्गण। उद्गमरोपण। उद्गमकण। उद्गमेणु। उद्गमक्षुरप्र। उद्गमनाराच। उद्गमतोमर। प्रसूनशिलीमुख। प्रसूनशर। प्रसूनबाण। प्रसूनरोपण। प्रसूनकण। प्रसूनकाण्ड। प्रसूनेषु। प्रसूनक्षुरप्र। प्रसूननाराच। प्रसूनतोमर। कुसुमशिलीमुख। कुसुमशर। कुसुमबाण। कुसुमार्गण। कुसुमरोपण। कुसुमकण। कुसुमेषु। कुसुमकाण्ड। कुसुमक्षुरप्र। कुसुमनाराच। कुसुमतोमर। पुष्प शब्द के आगे धनुष् शब्द जोड़ने से कन्दर्प (काम) के पुष्पकार्मुक। पुष्पधन्वा। पुष्पचाप। पुष्पधर्मा। पुष्पकोदण्ड। पुष्पधनु (न्वा)। लतान्तकार्मुक। लतान्तधनु (न्वा)। लतान्तचाप। लतान्तधर्म (र्मा)। लतान्तकोदण्ड। लतान्तधन्वा। प्रसवचाप। प्रसवकोदण्ड। प्रसवधनु (न्वा)। प्रसूनकार्मुक। कुसुमधन्वा। कुसुमचाप। कुसुमधर्म (र्मा)। कुसुमकोदण्ड। कुसुमधनु (न्वा)। नाम होते हैं।

मन और कामदेव के नाम

श्लोकार्थ—स्वान्त, आस्वनित, चित्त, चेतस्, अन्तःकरण, मन, हृदय, विशिख, आकूतः ये मन के नाम हैं। उसमें उद्भव(उत्पत्ति वाचक) शब्द जोड़ने से काम के नाम हो जाते हैं ॥८१॥

भाष्यार्थ—चित्त के नौ नाम हैं।

१. स्वान्तम् (नपुं॰), **अस्वान्तम्** (नपुं॰)—देखें भाष्य।

''पञ्चमो.''। ''मनोरनुस्वारो धुटि''। मनोऽर्थे ''क्षुभिवाही'' त्यादिना क्ते नेट्। कथिततत्वकथनेऽपि परत्वात्पूर्वोक्तपरोक्तयोः परोक्तविधिर्बलवान् इति वचनात्। अनेन सूत्रेणायमेव विकल्पो भवति। मनोऽभिधानेऽपि परत्वादयमेव विधिर्भवति। चेतति **चित्तम्**। चेतति जानाति अनेनात्मा **चेतस्** सान्तम्। अन्तः निश्चयः क्रियतेऽनेन, **अन्तःकरणम्**। मन्यते बुध्यतेऽनेन सान्तम् **मनस्**। बुद्ध्याऽर्थे हरति **हृदयम्**। ''हृयो दोऽन्तश्च''। दान्तं च हृद्। विगतं (ता) नष्टं (ष्टा) शिखं (खा) यस्य तत् **विशिखम्।** आ समन्तात् कूयते आकूयते (आकूतम्)। तथा चाष्टसाहस्याम्–''जाताकूतेनाकारेणेति मानसम्''।

मारस्तत्रोद्भवो मतः॥८१॥

तत्र चित्ते **उद्भवो मारो मतः** कथितः। स्वान्तसम्भवः। स्वान्तजः। आस्वनितजः। चित्तसम्भवः। चित्तजः। चेतस्सम्भवः। चेतोजः। अन्तःकरणसम्भवः। हृदयसम्भवः। हृदयजः। विशिखसम्भवः। विशिखजः। आकूतसम्भवः। इत्यादीनि कन्दर्पनामानि ज्ञातव्यानि।

मौर्वी जीवा गुणो गव्या ज्या-अलिर्भृङ्गः शिलीमुखः।
भ्रमरः षट्पदो ज्ञेयो द्विरेफश्च मधुव्रतः ॥८२॥

---

२. **आस्वनितम्** (नपुं०)—देखें भाष्य।

३. **चित्तम्** (नपुं०)—चेतता है, अनुभव करता है इसलिए चित्त है।

४. **चेतस्** (नपुं०)—इससे आत्मा जानता है इसलिए चेतस् है।

५. **अन्तःकरणम्** (नपुं०)—अन्तः–निश्चय। इससे निश्चय किया जाता है इसलिए अन्तःकरण है। सम्पादक के अनुसार—अन्तः शब्द को 'निश्चय' अर्थ करके व्युत्पत्ति करना ठीक नहीं है। जो करण-इन्द्रियों के अन्तर्गत है इसलिए अन्तःकरण कहा है, यह व्युत्पत्ति जानना।

६. **मनस्** (नपुं०)—इससे माना जाता है, जाना जाता है इसलिए मन है।

७. **हृदयम्** (नपुं०)—बुद्धि से अर्थ को, पदार्थ को चुरा लेता है या ग्रहण कर लेता है इसलिए हृदय है। हृद शब्द भी है।

८. **विशिखम्** (नपुं०)—इसकी शिखा नष्ट हो गयी है इसलिए विशिख है। सम्पादक के अनुसार—विशिख शब्द हृदय के अर्थ में किसी कोश में उपलब्ध नहीं होता है। चूँकि हृदय अधोमुख कमल के आकार का होता है इसलिए हृदय को शिखा रहित कथंचित् माना जा सकता है।

९. **आकूतम्** (नपुं०)—चारों ओर से बोलता है, बुलाता है इसलिए आकूत है। अष्टसहस्री में कहा है–उस चित्त में उत्पन्न होने वाला 'काम' कहा है। स्वान्तसम्भव। स्वान्तज। आस्वनितज। चित्तसम्भव। चित्तज। चेतस्सम्भव। चेतोज। अन्तःकरणसम्भव। हृदयसम्भव आदि नाम है।

(पञ्च) षड् गुणे। मूर्वति हिनस्त्यनया मूर्वा। तदाख्यस्य तृणस्य विकारो **मौर्वी**। धनुरनया जीवतीति **जीवा**। गुण्यते अभ्यस्यतेऽनेन **गुणः**। पुंसि। गोभ्यो हिता **गव्या**। जीयतेऽनया **ज्या**। **बाणासनम्**। **द्रुणा**।

सप्त भृङ्गे। अलति मण्डयति पुष्पजातीः **अलिः**। मधुना बिभत्तर्यात्मानं **भृङ्गः**। "शृङ्गभृङ्गाङ्गानि" एतेऽङ्गप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। शिलीसदृशं शिलासदृशं वा मुखमस्य **शिलीमुखः**। भ्रमन् रौतीति निरुक्त्या **भ्रमरः**। "शकन्ध्वादयः" शकन्धुप्रभृतीनाम् अकारस्य लोपो भवति। आदिशब्दात् नकारस्य लोपः। उणादौ "भ्रमु चलने"। भ्रमतीति **भ्रमरः**। "देवि वटिजठिभ्रमिवासिभ्योऽरः।" षट् पदानि चरणा अस्य **षट्पदः**। द्वौ रेफौ यस्य **द्विरेफः**। मधु व्रतयति भुङ्क्ते **मधुव्रतः**। मधुकरः। पुष्पलिड्। इन्दिन्दिरः। षट्चरणः। षडङ्घ्रिः। चञ्चरीकः। भसलः। रोलम्बः। देश्याम्।

धनुष की डोरी और भ्रमर के नाम

श्लोकार्थ—मौर्वी, जीवा, गुण, गण्या, ज्या ये धनुष की डोरी के नाम हैं। अलि, भृङ्ग, शिलीमुख, भ्रमर, षट्पद, द्विरेफ और मधुव्रत ये भ्रमर के नाम हैं ॥८२॥

भाष्यार्थ—डोरी के पाँच नाम हैं।

१. मौर्वी (स्त्री०)—जिससे हिंसा की जाय वह मूर्वा। उस मूर्वा नाम की तृण से तैयार की जाती है इसलिए मौर्वी है।

२. जीवा (स्त्री०)—धनुष इससे ही जीवित रहता है अर्थात् यह धनुष का प्राण है इसलिए जीवा है।

३. गुणः (पुं०)—इससे अभ्यास किया जाता है इसलिए गुण है अर्थात् बार-बार बाण इसी पर चढ़ाया जाता है।

४. गव्या (स्त्री०)—गो अर्थात् बाण। उन बाणों के लिए हितकर है इसलिए गव्या है।

५. ज्या (स्त्री०)—इससे जीता जाता है इसलिए ज्या है। सम्पादक के अनुसार—ज्या धातु वयो हानि में है। इसलिए इससे दूसरे की वय का नाश होता है इसलिए भी ज्या है।

बाणासनम् और द्रुणा भी इस डोरी के नाम हैं।

भ्रमर के सात नाम हैं।

१. अलिः (पुं०)—पुष्प समूहों को भषित कर देता है, सजा देता है इसलिए अलि है।

२. भृङ्गः (पुं०)—मधु से अपना पालन पोषण करता है इसलिए भृङ्ग है।

३. शिलीमुखः (पुं०)—इसका मुख केंचुवे के सदृश होता है इसलिए शिलीमुख है।

४. भ्रमरः (पुं०)—भ्रमण करता हुआ रोता है, गूंज करता है इसलिए भ्रमर है अथवा भ्रमण करता है इसलिए भ्रमर है।

५. षट्पदः (पुं०)—इसके छह पद, चरण होते हैं इसलिए षट्पद है।

६. द्विरेफः (पुं०)—भ्रमर पद में दो रेफ होते हैं इसलिए द्विरेफ है।

७. मधुव्रतः (पुं०)—मधु का ही जिसका व्रत है, अर्थात् मधु ही खाता है इसलिए मधुव्रत है।

मौर्व्यादिप्रान्तमल्यादिकन्दर्पस्यैक्षवं धनुः।
हेतिरस्त्राऽयुधं शस्त्रम् पुष्पाद्यस्त्रः स्मरो मतः ॥८३॥

इक्षोर्विकार **ऐक्षवम्**। अलिमौर्वी (कम्)। भृङ्गमौर्वी (कम्)। शिलीमुखमौर्वी (कम्)। भ्रमरमौर्वी (कम्)। षट्पदमौर्वी (कम्)। द्विरेफमौर्वी (कम्)। मधुव्रतमौर्वी (कम्)। अलिजीवा (वम्)। भृङ्गजीवा (वम्)। शिलीमुखजीवा (वम्)। भ्रमरजीवा (वम्)। षट्पदजीवा (वम्)। द्विरेफजीवा (वम्)। मधुव्रतजीवा (वम्)। अलिगुणः (णम्)। भृङ्गगुणः (णम्)। शिलीमुखगुणः (णम्)। भ्रमरगुणः (णम्)। षट्पदगुणः (णम्)। द्विरेफगुणः (णम्)। मधुव्रतगुणः (णम्)। अलिज्या (ज्यम्)। भृङ्गज्या (ज्यम्)। द्विरेफज्या (ज्यम्)। मधुव्रतज्या (ज्यम्)। इत्यादीनि कन्दर्पशिलीमुख (धनुः) नामानि ज्ञेयानि।

हेतिरस्त्राऽयुधं शस्त्रम्-

चत्वारः शस्त्रे। हिनोति अनया **हेतिः**। स्त्रियाम्। ''सातिहेतिजूतियूतयश्च''। एते क्तिप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। अस्यते क्षिप्यतेऽनेनेति **अस्त्रम्**। आयुध्यतेऽनेन **आयुधम्**। उभयम्। शस्यतेऽनेन **शस्त्रम्**। ''नीदाप्शसुयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदं-शनहां करणे'' ष्ट्रन्। त्रमात्रः। ''व्यञ्जनम्'' इति सपरगमनम्। ननु अस्येट्प्रतिषेधाभावात् ष्ट्रनि प्रत्यये इडागमः कथं भवति। आगमशास्त्रमनित्यमिति वचनात् शसुधातोः ष्ट्रनि प्रत्यये इट् न भवति। ''युग्यं पत्रे'' इति ज्ञापकादेव (द्वा)।

पुष्पाद्यस्त्रः स्मरो मतः॥८३॥

पुष्पपर्यायतः **अस्त्र**पर्यायेषु शरपर्यायेषु तथा चापपर्यायेष्वपि **स्मर**नामानि भवन्ति। पुष्पहेतिः। पुष्पास्त्रः। पुष्पायुधः। पुष्पशस्त्रः। सुमनोहेतिः। सुमनोऽस्त्रः। सुमनआयुधः। सुमनश्शस्त्रः। लतान्तहेतिः। लतान्तास्त्रः।

मधुकर। पुष्पलिड्। इन्दिन्दिर। षट्चरण। षडङ्घ्रि। चञ्चरीक। भसल। रोलम्ब आदि नाम भी हैं।

श्लोकार्थ—मौर्वी आदि नामों को भ्रमर के नामों के अन्त में जोड़ देने पर काम के नाम बन जाते हैं। काम के धनुष को ऐक्षव कहते हैं। हेति, अस्त्र, आयुध और शस्त्र ये हथियार के नाम हैं। पुष्प के नामों के अन्त में 'अस्त्र' के नाम जोड़ने पर स्मर के नाम हो जाते हैं ॥८३॥

भाष्यार्थ—इक्षु से बनता है इसलिए ऐक्षव है। देखें भाष्य।

शस्त्र के चार नाम हैं।

१. हेतिः (स्त्री॰)—इससे हनन, घात किया जाता है इसलिए हेति है।

२. अस्त्रम् (नपुं॰)—इसे फेंका जाता है इसलिए अस्त्र है।

३. आयुधम् (नपुं॰)—इससे युद्ध किया जाता है इसलिए आयुध है। आयुधः (पुं॰) में भी है।

४. शस्त्रम् (नपुं॰)—इसके द्वारा प्रशंसा होती है अर्थात् युद्ध में शस्त्र के द्वारा जीते जाने पर योद्धा की प्रशंसा होती है इसलिए शस्त्र है।

पुष्प के पर्यायवाची शब्दों में अस्त्र के पर्यायवाची शब्द और बाण के पर्यायवाची शब्द तथा धनुष के पर्यायवाची शब्द जोड़ने से काम के पुष्पहेति। पुष्पास्त्र। पुष्पायुध। पुष्पशस्त्र। सुमनोहेति।

लतान्तायुधः। लतान्तशस्त्रः। प्रसवास्त्रः। प्रसवायुधः। प्रसवशस्त्रः। उद्गमहेतिः। उद्गमायुधः। उद्गमशस्त्रः। प्रसूनहेतिः। प्रसूनास्त्रः। प्रसूनायुधः। प्रसूवशस्त्रः। कुसुमहेतिः। कुमुमास्त्रः। कुसुमायुधः। कुसुमशस्त्रः। इत्यादिकानि नामानि ज्ञातव्यानि।

ध्वजं पाताका केतुश्च चिह्नं तद्वैजयन्त्यपि।
तत्तदन्तो झषाद्यादिः शम्भोर्विघ्नकरः स्मरः ॥८४॥

पञ्च पताकायाम्। ध्वजते (ति) धूयते **ध्वजः**। तथाऽमरसिंहे- "**ध्वजमस्त्रि याम्।**" ध्वजिश्च। पताकादण्डे ध्वज इत्यन्यः। पत्यते क्षिप्यते वातेन **पताका**। बलाकादयः-"बलाकापिनाकपताका-श्यामाकशलाकाः" एते अकप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। पटाका च। स्त्रियाम्। कीयते सैन्यमनेन **केतुः**। केत्वादयः-"केत्वृतुक्रत्वाप्तुपीत्वेधतुवहतुजीवातवः" एते तुन्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। चह परिकल्कने। चहयति (अनेन) **चिह्नम्**। विजयतेऽनया **वैजयन्ती**। जयन्ती च। स्त्रीन्रोः। वैजयन्तः। जयन्तः।

तत्तदन्तो झषाद्यादिः शम्भोर्विघ्नकरः स्मरः॥८४॥

झषध्वजः। झषपताकः। झषकेतुः। झषचिह्नः। झषवैजयन्तिः। षडक्षीणध्वजः। षडक्षीणपताकः।

सुमनोऽस्त्र। सुमनआयुध। सुमनश्शस्त्र। लतान्तहेति। लतान्तास्त्र। लतान्तायुध। लतान्तशस्त्र। प्रसवास्त्र। प्रसवायुध। प्रसवशस्त्र। उद्गमहेति। उद्गमायुध। उद्गमशस्त्र। प्रसूनहेति। प्रसूनास्त्र। प्रसूनायुध। प्रसूवशस्त्र। कुसुमहेति। कुमुमास्त्र। कुसुमायुध। कुसुमशस्त्र इत्यादि नाम बन जाते हैं।

ध्वजा और काम के नाम

श्लोकार्थ—ध्वज, पताका, केतु, चिह्न, वैजयन्ती, झष आदि मीन के नामों के अन्त में ध्वज के नाम जोड़ने से शम्भु के नाम होते हैं और शम्भु के नामों में 'विघ्नकर' जोड़ने से काम के नाम होते हैं ॥८४॥

भाष्यार्थ—पताका के पाँच नाम हैं।

१. ध्वजः (पुं०)—लहराता है, हिलता है इसलिए ध्वज है। अमरसिंह ने ध्वज को दोनों लिंगों (पुं०, नपुं०) में माना है। 'ध्वजिः' शब्द भी बनता है।

२. पताका (स्त्री०)—हवा से इधर-उधर चलती है, बाधित होती है इसलिए पताका है। 'पटाका' शब्द भी है।

३. केतुः (पुं०)—इससे सेना को संकेत मिलता है इसलिए केतु है।

४. चिह्नम् (नपुं०)—इससे पहचान होती है इसलिए चिह्न है।

५. वैजयन्ती (स्त्री०)—इससे विजय की जाती है इसलिए वैजयन्ती है। जयन्ती () तथा ये दोनों शब्द पुंलिङ्ग में भी हैं। वैजयन्त, जयन्त (पुं०)।

झष आदि मछली पर्यायवाची आदि में और ध्वज के पर्यायवाची अन्त में होने से झषध्वज।

षडक्षीणकेतुः। षडक्षीणचिह्नः। षडक्षीणवैजयन्तिः। सफरध्वजः। सफरपताकः। सफरकेतुः। सफरचिह्नः। सफरवैजयन्तिः। अनिमिषध्वजः। अनिमिषपताकः। अनिमिषकेतुः। अनिमिषचिह्नः। अनिमिषवैजयन्तिः। तिमिध्वजः। तिमिपताकः। तिमिकेतुः। तिमिचिह्नः। तिमिवैजयन्तिः। मीनध्वजः। मीनपताकः। मीनकेतुः। मीनचिह्नः। मीनवैजयन्तिः। पाठीनध्वजः। पाठीनपताकः। पाठीनकेतुः। पाठीनचिह्नः। पाठीनवैजयन्तिः। **शम्भोर्विघ्नकरः**। हरविघ्नकरः। इत्यादीनि स्मरनामानि ज्ञातव्यानि।

कौक्षेयकासिनिस्त्रिंकृपाणाः करवालकः।
तरवारिर्मण्डलाग्रं खड्गनामावलिं विदुः ॥८५॥

अष्टौ खड्गे। कुक्षौ भवः **कौक्षेयकः**। कौक्षेयः। अस्यते क्षिप्यतेऽ**सिः**। निष्क्रान्तस्त्रिंशतोऽङ्गुलिभ्यो **निस्त्रिंशः**। तालव्यान्तः। शत्रून् हन्तुं कल्पते याचते **कृपाणः**। ''कृपेः काणः''। करे वलते **करबालः**। करपालः। तरति (तरं) प्लवमानं वारि यत्रेति निरुक्त्या **तरवारिः**। मण्डलं वर्तुलमग्रं यस्य **तन्मण्डलाग्रम्**। खण्डति परमर्माण्यनेन **खड्गः**। ''खण्डेर्गक्''। स्त्रीत्रोः। **ऋषिः**। **चन्द्रहासः**।

झषपताक। झषकेतु। झषचिह्न। झषवैजयन्ति। षडक्षीणध्वज। षडक्षीणपताक। षडक्षीणकेतु। षडक्षीणचिह्न। षडक्षीणवैजयन्ति। सफरध्वज। सफरपताक। सफरकेतु। सफरचिह्न। सफरवैजयन्ति। अनिमिषध्वज। अनिमिषपताक। अनिमिषकेतु। अनिमिषचिह्न। अनिमिषवैजयन्ति। तिमिध्वज। तिमिपताक। तिमिकेतु। तिमिचिह्न। तिमिवैजयन्ति। मीनध्वज। मीनपताक। मीनकेतु। मीनचिह्न। मीनवैजयन्ति। पाठीनध्वज। पाठीनपताक। पाठीनकेतु। पाठीनचिह्न। पाठीनवैजयन्ति आदि शब्द शंकर के होते हैं। शम्भु शब्द से विघ्नकर शब्द जोड़ने पर शम्भुविघ्नकर। हरविघ्नकर आदि काम के नाम बनते हैं।

तलवार के नाम

श्लोकार्थ—कौक्षेयक, असि, निस्त्रिंश, कृपाण, करवालक, तरवारि, मण्डलाग्र, खड्ग ये तलवार के नाम हैं ॥८५॥

भाष्यार्थ—तलवार के आठ नाम हैं।

१. कौक्षेयकः (पुं०)—कुक्षि (कमर) में रहती है इसलिए कौक्षेयक है। कौक्षे (पुं०) शब्द भी है।

२. असिः (पुं०)—इसे फेंका जाता है इसलिए असि है।

३. निस्त्रिंशः (पुं०), निस्त्रिंसः (पुं०)—

४. कृपाणः (पुं०)—शत्रु को नाश करने के लिए मांगते हैं इसलिए कृपाण है। सम्पादक के अनुसार—कृपा को दूर कर देती है इसलिए कृपाण है।

५. करवालकः (पुं०)—हाथ को घेर कर रहती है अर्थात् मुट्ठी से कस कर पकड़ी जाती है इसलिए करवालक है। 'करपालः' शब्द भी है।

६. तरवारिः (पुं०)—जिस पर पानी तैरता है इस निरुक्ति से इसे तरवारि कहा है।

७. मण्डलाग्रम् (नपुं०)—जिसके आगे का भाग गोल होता है इसलिए उसे मण्डलाग्र कहा है।

८. खड्गः (पुं०)—दूसरों के मर्म स्थानों को खण्डित करता है इसलिए खड्ग है।

अक्षौहिणी बलानीकं वाहिनी साधनं चमूः।
ध्वजिनी पृतना सेना सैन्यं दण्डो वरूथिनी ॥८६॥

द्वादश सेनायाम्। अक्षाणां रथानामूहिनी **अक्षौहिणी**। ''अक्षस्यौत्वमूहिन्याम्'' औत्वम्। अथवा धात्वर्थेन साध्यते भाष्यकर्त्रा श्रीमदमरकीर्तिना। अशू व्याप्तौ। अश्नुते व्याप्नोतीति अक्षः। ''वृतृवदिहनिमनिकम्यशिकषिभ्यः सः'' स प्रत्ययः। ''छशोश्च'' ष। ''षढोः कः से'' अक् ष। ''कषसंयोगे क्षः''। अक्ष इति जातः। ऊहनं ऊहः। ऊहो विद्यते यस्याः सा ऊहिनी। अक्षाणामूहिनी अक्षौहिणी। ''समासान्त-समीपयोरसुवादेः'' अस्यार्थः समासस्य अन्ते समासस्य समीपे च नकारस्य पूर्वपदस्थात् निमित्तात् (परस्य) णो भवति वा। इदानीम् अक्षौहिणी**प्रमाणं** क्रियते। यद्भारतम्–

''**एको रथो गजश्चैको नराः पञ्च पदातयः।**
त्रयश्च तुरगास्तज्ज्ञैः पत्तिरित्यभिधीयते॥
पत्त्यंगैस्त्रिगुणैः सर्वैः क्रमादाख्या यथोत्तरम्।
सेनामुखं गुल्मगणौ वाहिनी पृतना चमूः॥
अनीकिनी''

पत्तेस्त्रिगुणं सेनामुखम्। गजाः ३, रथाः ३, अश्वाः ९, पदातयः १५ इति सेनामुखम्। गजाः ९, रथाः ९, अश्वाः २७, पदातयः ४५ इति गुल्मम्। गजाः २७, रथाः २७, अश्वाः ८१, पदातयः १३५ इति गणः। गजाः ८१, रथाः ८१, अश्वाः २४३, पदातयः ४०५ इति वाहिनी। गजाः २४३, रथाः २४३, अश्वाः ७२९, पदातयः १२१५ इति पृतना। गजाः ७२९, रथाः ७२९, अश्वाः २१८७, पदातयः ३६४५ इति चमूः। गजाः २१८७, रथाः २१८७, अश्वाः ६५६१, पदातयः १०९३५ इत्यानीकिनी। **दशानी किन्योऽक्षौहिणी**। गजाः

ऋष्टि और चन्द्रहास भी नाम हैं।

सेना के नाम

श्लोकार्थ–अक्षौहिणी, बल, अनीक, वाहिनी, साधन, चमू, ध्वजिनी, पृतना, सेना, सैन्य दण्ड वरूथिनी ये सेना के नाम हैं ॥८६॥

भाष्यार्थ–सेना के बारह नाम हैं।

१. अक्षौहिणी (स्त्री०)–अक्ष–रथ। रथों को ढोने वाली सेना अक्षौहिणी है अथवा धात्वर्थ से अब भाष्यकार अमरकीर्ति इसकी व्युत्पत्ति करते हैं। अशू धातु से अक्ष शब्द बनाकर अक्षौहिणी सिद्ध होती है। यहाँ अक्षौहिणी का प्रमाण बताते हैं। जैसा कि महाभारत में है–एक रथ, एक हाथी, पाँच पैदल मनुष्य, तीन घोड़ों की एक पत्ति होती है। पत्ति की तीन गुनी सेना होती है अर्थात् ३ रथ, ३ हाथी, ९ अश्व, १५ मनुष्य का एक सेनामुख होता है। ९ हाथी, ९ रथ, २७ अश्व और ४५ पदाति मनुष्यों का एक गुल्म होता है। जिसमें २७ गज और २७ रथ, ८१ अश्व,१३५ मनुष्य हों वह गण है। जिसमें ८१ गज, ८१ रथ, २४३ अश्व, ४०५ पदाति हों वह वाहिनी है। जिसमें २४३ गज, २४३ रथ, ७२९ अश्व और १२१५ पदाति हों वह पृतना है। जिसमें ७२९ गज, ७२९ रथ, २१८७ अश्व और ३६४५ पदाति

२१८७०, रथाः २१८७०, अश्वाः ६५६१०, पदातयः १०९३५०। बलते संवृणोति परभूमिं **बलम्**। उभयम्। अनिति प्राणिति तूर्यस्वनैः न नीयते पराभवं वा **अनीकम्**। वाहा अश्वाः सन्त्यस्यां **वाहिनी**। साध्यते (अनेन) **साधनम्**। परान् शत्रून् चमति ग्रसते **चमूः**। ''कृषिचमितनिधनिवधिसर्जिखर्जिभ्य ऊः।'' चमुश्च। ध्वजाः सन्त्यस्यां **ध्वजिनी**। नायकं पिपर्ति **पृतना**। अङ्गैः सिनोति बध्नाति **सेना**। ''सिनोतेर्नः''। सेनायाः स्वार्थे यणि **सैन्यम्**। दाम्यति **दण्डः**। वरूथो रथगुप्तिरस्त्यस्या **वरूथिनी**। पताकिनी। चक्रम्। अनीकिनी। गूढः। तन्त्रम्।

कदनं समरं युद्धं संयुगं कलहं रणम्।
संग्रामं सम्परायाजी संयदाहुर्महाहवम् ॥८७॥

एकादश युद्धे। कद्यते **कदनम्**। समियति प्रतिविकला भवन्त्यत्र नराः **समरम्**। युध्यते(त्रा)रिभि**र्युद्धम्**।

हों वह चमू है। जिसमें २१८७ गज, २१८७ रथ, ६५६१ अश्व और १०९३५ पदाति हों वह अनीकिनी है।

ऐसी दश अनीकिनी की एक अक्षौहिणी सेना होती है। इसमें २१८७० गज, २१८७० रथ, ६५६१० अश्व और १०९३५० पदाति होते हैं।

२. बलम् (नपुं॰, पुं॰)—दूसरे की भूमि को घेर लेती है इसलिए बल है।

३. अनीकम् (स्त्री॰)—जोरदार ध्वनि से इसमें प्राण फूंके जाते हैं इसलिए अनीक है अथवा जो पराजय को प्राप्त नहीं होती है वह अनीक है।

४. वाहिनी (स्त्री॰)—इसमें अश्व वाहन होते हैं इसलिए वाहिनी है।

५. साधनम् (नपुं॰)—इससे लक्ष्य साधा जाता है इसलिए साधन है।

६. चमूः (स्त्री॰)—शत्रुओं को ग्रस लेती है इसलिए चमू है। चमु शब्द भी है।

७. ध्वजिनी (स्त्री॰)—इसमें ध्वजाएँ रहती हैं इसलिए ध्वजिनी है।

८. पृतना (स्त्री॰)—नायक को आगे ले जाती है इसलिए पृतना है।

९. सेना (स्त्री॰)—(सेना के) अंगों से बंधी रहती है इसलिए सेना है।

१०. सैन्यम् (नपुं॰)—सेना से स्वार्थ में यणि से सैन्य बनता है। सेना ही सैन्य है।

११. दण्डः (पुं॰)—दमन करती है इसलिए दण्ड है।

१२. वरूथिनी (स्त्री॰)—वरूथ-रथों से रक्षित। इसकी रक्षा रथों से होती है इसलिए वरूथिनी है। पताकिनी। चक्रम्। अनीकिनी। गूढ। तन्त्रम् आदि नाम भी हैं।

युद्ध के नाम

श्लोकार्थ—कदन, समर, युद्ध, संयुग, कलह, रण, सङ्ग्राम, सम्पराय, आजि, संयत्, महावह ये युद्ध के नाम हैं ॥८७॥

भाष्यार्थ—युद्ध के ग्यारह नाम हैं।

१. कदनम् (नपुं॰)—लोगों को घबरा देता है, या दुःखी करता है इसलिए कदन है।

भटाः संयुज्यन्ते मिलन्त्यत्र **संयुगम्**। कलं मधुरं वाक्यं हन्त्यत्र **कलहः**। रणन्ति दुन्दुभयोऽत्र **रणम्**। संग्रस्यन्ते सत्वान्यनेनेति **संग्रामः**। पुंसि। संपरैति मृत्युरत्र **सम्परायः**। भटाः अज्यन्ते क्षिप्यन्तेऽत्र **आजिः**। स्त्रीन्रोः। संयतन्तेऽत्र तान्तं **संयत्**। महाँश्चासौ आहवः **महाहवः**। तम् **आहुः** ब्रुवन्ति। आयोधनम्। जन्यम्। प्रधनम्। प्रविदारणम्। मृद्यम्। आस्कन्दनम्। संख्यम्। समीकम्। अनीकम्। विग्रहः। समुदायः। अभ्यागमः। संस्फोटिः (टः)। समितिः। समित्। द्वन्द्वम्। सम्मर्दः। संगरः।

गजो मतङ्गजो हस्ती वारणोऽनेकपः करी।
दन्ती स्तम्बेरमः कुम्भी द्विरदेभमितङ्गमाः ॥८८॥
शुण्डालः सामजो नागो मातङ्गः पुष्करी द्विपः।
करेणुः सिन्धुरः-तेषु यन्ता याता निषाद्यपि ॥८९॥

विंशतिर्गजे। गजति माद्यति **गजः**। अच्। मतङ्गादृर्षेजातो **मतङ्गजः**। सप्तमीपञ्चम्यन्ते जनेर्डः।

---

२. **समरम्** (नपुं॰)—इसमें मनुष्य दुःखी होते हैं इसलिए समर है।

३. **युद्धम्** (नपुं॰)—इसमें शत्रुओं से युद्ध किया जाता है इसलिए युद्ध है।

४. **संयुगम्** (नपुं॰)—योद्धा यहाँ मिलते हैं, आपस में भिड़ते हैं इसलिए संयुग है।

५. **कलहः** (पुं॰)—इसमें कहीं पर भी मधुर वाक्य नहीं होते हैं इसलिए कलह है।

६. **रणम्** (नपुं॰)—इसमें दुन्दुभियाँ बजती है इसलिए रण है।

७. **संग्रामः** (पुं॰)—इससे जीव समाप्त किए जाते हैं इसलिए संग्राम है। सम्पादक हेमचन्द्र के अनुसार—संग्राम शब्द युद्ध के लिए है। यहाँ युद्ध किया जाता है इसलिए संग्राम है।

८. **सम्परायः** (पुं॰)—यहाँ मृत्यु प्राप्त होती है इसलिए सम्पराय है।

९. **आजिः** (स्त्री॰, पुं॰)—इसमें भटों-योद्धाओं को फेंक देता है इसलिए आजि है।

१०. **संयत्** (स्त्री॰)—इसमें समीचीन रूप से यत्न उद्यम किया जाता है, इसलिए संयत् है।

११. **महाहवः** (पुं॰)—इसमें योद्धाओं को नष्ट किया जाता है इसलिए आहव है। महान् आहव को महाहव कहते हैं।

आयोधन। जन्य। प्रधन। प्रविदारण। मृद्य। आस्कन्दन। संख्य। समीक। अनीक। विग्रह। समुदाय। अभ्यागम। संस्फोटि (टः)। समिति। समित्। द्वन्द्व। सम्मर्द। संगर आदि नाम भी हैं।

हाथी के नाम

श्लोकार्थ—गज, मतङ्गज, हस्ती, वारण, अनेकप, करी, दन्ती, स्तम्बेरम, कुम्भी, द्विरद, इभ, मितङ्गम, शुण्डाल, सामज, नाग, मातङ्ग, पुष्करी, द्विप, करेणु और सिन्धुर ये हाथी के नाम हैं। इनमें यन्तृ, यातृ निपादिन् जोड़ने से महावत के नाम होते हैं ॥८८-८९॥

भाष्यार्थ—हाथी के बीस नाम हैं।

१. **गजः** (पुं॰)—मस्त रहता है, अपने मद में चूर रहता है इसलिए गज है।

हस्तो विद्यतेऽस्य **हस्ती**। ''जातौ तु दन्तहस्ताभ्यां कराच्चैव इनेव हि''। वारयति परान् शत्रून् **वारणः**। न एकेन पिबत्य**नेकपः**। करोऽस्त्यस्य **करिन्**। इदन्तोऽपि करिः। दन्तो विद्यतेऽस्य **दन्ती**। स्तम्बे तृणे रमते **स्तम्बेरमः**। ''स्तम्बकर्णयो रमिजपोः'' खच्। कुम्भो विद्यतेस्य **कुम्भी**। द्वौ रदौ यस्य **द्विरदः**। एति गच्छति शत्रुसम्मुखमिती**भः**। ''इणो यण्वत्'' भप्रत्ययो भवति स च यण्वत्। मितु गच्छतीति **मितङ्गमः**। ''गमेरच्'' खप्रत्ययः। ''ह्रस्वा रुषोर्मोन्तः।'' शुण्डां लाति गृह्णातीति, **शुण्डालः**। साम्नः सामवेदाज्जातः **सामजः**। नगे पर्वते भवो **नागः**। मन्यते जनेन **मातङ्गः**। पुष्करं विद्यतेऽस्य **पुष्करी**। द्वाभ्यां पिबति **द्विपः**। करोति कार्यं

---

२. **मतङ्गजः** (पुं०)—मतङ्ग ऋषि से उत्पन्न हुआ है इसलिए मतङ्गज है।

३. **हस्तिन्** (पुं०)—इसके सूंड होती है इसलिए हस्ती है।

४. **वारणः** (पुं०)—शत्रुओं को रोकता है अर्थात् युद्ध में शत्रुओं को आगे नहीं बढ़ने देता है इसलिए वारण है।

५. **अनेकपः** (पुं०)—एक से नहीं पीता है अर्थात् सूँड के दो छिद्रों से पीता है इसलिए अनेकप है।

६. **करिन्** (पुं०)—कर-हस्त-सूंड। सूँड इसके होती है इसलिए करिन् है। 'करिः' शब्द भी है।

७. **दन्तिन्** (पुं०)—इसके दाँत होता है इसलिए दन्ती है।

८. **स्तम्बेरमः** (पुं०)—स्तम्ब अर्थात् तृण , वृक्ष के गुल्म, पत्ते आदि। उनमें ही रमता है इसलिए स्तम्बेरम है।

९. **कुम्भिन्** (पुं०)—कुम्भ-मस्तक-ललाट स्थल। कुम्भ इसके होता है इसलिए कुम्भी है।

१०. **द्विरदः** (पुं०)—इसके दो दाँत होते हैं इसलिए द्विरद है।

११. **इभः** (पुं०)—शत्रु के सामने पहुँच जाता है इसलिए इभ है।

१२. **मितङ्गमः** (पुं०)—धीमे या थोड़ा चलता है इसलिए मितङ्गम है।

१३. **शुण्डालः** (पुं०)—शुण्डा-सूँड। सूँड को रखता है इसलिए शुण्डाल है।

१४. **सामजः** (पुं०)—सामवेद से उत्पन्न होता है इसलिए सामज है। सम्पादक के अनुसार—सामवेद गीत परक है। उसके स्वर से आकृष्ट हुए हाथी बाँध लिए जाते हैं। बँधे हुए ही खींचकर लोगों के सामने, नगर में लाए जाते हैं। चूँकि गीत में मुग्ध होते हैं इसलिए बाँध कर लाए जाते हैं अतः सामज कहे जाते हैं। इस प्रकार इस शब्द की संगति बैठती है। अन्य **प्रमाण**, कोश में भी इस शब्द की व्युत्पत्ति खोजना चाहिए अथवा सामवेदों का उच्चारण करते हुए ब्रह्मा इनकी उत्पत्ति करता है इसलिए सामज हैं अथवा सामवेद के साथ उत्पन्न होने से सामज है।

१५. **नागः** (पुं०)—नग-पर्वत। पर्वत पर उत्पन्न होता है, रहता है इसलिए नाग है।

१६. **मातङ्गः** (पुं०)—लोग इसे मानते हैं, अर्थात् आदर देते हैं इसलिए मातङ्ग है।

१७. **पुष्करिन्** (पुं०)—पुष्कर-सूँड। सूँड इसके होती है इसलिए पुष्करी है।

करेणुः। ''हृकृञ्भ्यामेणुः'' आभ्यामेणुः प्रत्ययो भवति। स्यन्दते स्रवति मदं **सिन्धुरः**। दन्तावलः। पद्मी। पीलुः। कालिङ्गः।

तेषु यन्ता याता निषाद्यपि ॥८९॥

त्रयो हस्तिपके। यच्छतीति **यन्ता**। यातीति **याता**। निषीदति इत्येवंशीलो **निषादी**। गजयन्ता। गजयाता। हस्तियन्ता। हस्तियाता। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि। अपिशब्दात्-आधोरणः। हस्तिपः। हस्त्यारोहः। गजाजीवः। महामात्रः।

नागाद्यरिः कण्ठी (ण्ठि) रवो मृगेन्द्रः केसरी हरिः।
व्याघ्रश्चमूरः शार्दूलः-शरभोऽष्टापदोऽष्टपात् ॥९०॥

चत्वारः सिंहे। नागारिः। गजरिपुः। मतङ्गवैरी। हस्तिद्विट्। वारणवैरी। अनेकपसपत्नः। करिरिपुः। दन्तिवैरी। स्तम्बेरमरिपुः। क्वचिद्दृश्यते ईदृशः पाठः। कुम्भिवैरी। इभवैरी। मतङ्गशत्रुः। शुण्डालरिपुः। सामजद्वेषी। नागारिः। पुष्कररिपुः। द्विपवैरी। करेणुरिपुः। सिन्धुरवैरी। इत्यादीनि पर्यायनामानि सिंहस्य ज्ञातव्यानि। कण्ठे रवो ध्वनिर्यस्य **कण्ठीरवः**।

---

१८. द्विपः (पुं०)—दोनों छिद्रों से (सूँड के) पीता है इसलिए द्विप है।

१९. करेणुः (पुं०)—कार्य करता है इसलिए करेणु है।

२०. सिन्धुरः (पुं०)—मद को झराता है इसलिए सिन्धुर है।

दन्तावल। पद्मी। पीलु। कालिङ्ग। आदि नाम भी हैं।

महावत के तीन नाम हैं।

शासन करता है इसलिए **यन्ता** है। ले जाता है इसलिए **याता** है। बैठा रहता है इसलिए **निषादी** है। इन तीनों शब्दों को गज के पर्यायवाची शब्दों में जोड़ने से महावत के गजयन्ता। गजयाता। हस्तियन्ता। हस्तियाता नाम बनते हैं। अपि शब्द से-आधोरण, हस्तिप, हस्त्यारोह, गजाजीव, महामात्र।

सिंह, तेंदुआ और अष्टापद के नाम

श्लोकार्थ—हाथी के नामों में अरि शब्द जोड़ने से सिंह के नाम होते हैं। कण्ठीरव, मृगेन्द्र, केसरी, हरि भी सिंह के नाम हैं। व्याघ्र, चमूर, शार्दूल ये तेंदुए के नाम हैं। शरभ, अष्टापद और अष्टपात् ये अष्टापद के नाम हैं ॥९०॥

भाष्यार्थ—सिंह के चार नाम हैं।

हाथी के पर्यायवाची नामों में शत्रु के नाम जोड़ने से सिंह के नागारिः आदि नाम होते हैं। देखें भाष्य।

१. कण्ठीरवः (पुं०)—जिसके कण्ठ में ध्वनि होती है अर्थात् जो गले से आवाज करता है, दहाड़ता है इसलिए कण्ठीरव है। कण्ठेरव का कण्ठीरव शब्द बना है क्योंकि एकार का ईकार निम्न

''वर्णागमो गवेन्द्रदौ सिंहे वर्ण विपर्ययः।
षोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृषोदरे॥''

इत्यनेन एकारस्य **ईकारः**। मृगाणां चतुष्पदानां मध्ये इन्द्रः **मृगेन्द्रः**। केसराः स्कन्धकेशाः सन्त्यस्य **केसरी**। क्रमप्राप्ते हरति **हरिः**। पञ्चाननः। हर्यक्षः। नखरायुधः। मृगरिपुः। सिंहः।

व्याघ्रश्चमूरः शार्दूलः-

त्रयो व्याघ्रे। व्याजिघ्रति प्राणान् उपादत्ते **व्याघ्रः**। चमति अत्ति पशून् **चमूरः**। परान् शृणाति हिनस्ति **शार्दूलः**। द्वीपी। पुण्डरीकः। तरक्षुः। चित्रकायः। मृगारिः।

शरभोऽष्टापदोऽष्टपात् ॥९०॥

त्रयोऽष्टापदे। शृणाति हिनस्ति **शरभः**। ''कृशृशलिगर्दिरासवलिवल्लिभ्योऽभः''। अष्टौ पदान्यस्य **अष्टापदः**। अष्टौ पादा यस्यासौ **अष्टपात्**।

श्लोक से हुआ है–

''गवेन्द्र आदि में वर्ण का आगम हुआ है, सिंह में वर्ण विपर्यय है, षोडश आदि में वर्ण विकार हुआ है और पृषोदरादि गण में वर्णनाश होता है।''

२. मृगेन्द्रः (पुं॰)—मृग अर्थात् समस्त चौपाहे पशु। उन सभी पशुओं के मध्य यह इन्दु है इसलिए मृगेन्द्र है।

३. केसरिन् (पुं॰)—केसर—कंधे के बाल। इसके कंधे पर बाल होते हैं इसलिए केसरी है।

४. हरिः (पुं॰)—पैर पकड़ लेने पर प्राणों का हरण कर लेता है इसलिए हरि है।

पञ्चानन। हर्यक्ष। नखरायुध। मृगरिपु। सिंह आदि नाम भी हैं।

व्याघ्र के तीन नाम हैं।

१. व्याघ्रः (पुं॰)—चारों ओर से सूँघता है, प्राणों का हरण कर लेता है इसलिए व्याघ्र है।

२. चमूरः (पुं॰)—पशुओं को खा लेता है इसलिए चमूर है।

३. शार्दूलः (पुं॰)—दूसरों की हिंसा करता है इसलिए शार्दूल है। द्वीपी। पुण्डरीक। तरक्षु। चित्रकाय। मृगारि आदि नाम भी हैं।

अष्टापद के तीन नाम हैं।

१. शरभः (पुं॰)—वध करता है इसलिए शरभ है।

२. अष्टापदः (पुं॰)—इसके आठ पैर होते हैं, इसलिए अष्टापद है।

क्रोडो वराहो दंष्ट्री च घृष्टिः पोत्री च शूकरः।
उष्ट्रो मयः शृंखलिकः कलभः शीघ्रगामुकः ॥९१॥

अष्टौ (षट्) शूकरे। पल्वलं संक्रमति **क्रोडः**। वरानाहन्ति **वराहः**। दंष्ट्राः सन्त्यस्य **दंष्ट्री**। घर्षतीति **घृष्टिः**। गृष्टिश्च। पूङ पवने। पू। भौ०। पूञ् पवने वा। क्रै०। उभयपदी। पूयतेऽनेनेति **पोत्रम्** ''हलशूकरयोः पुवः'' ष्ट्रन्। त्रमात्रः। नाम्यन्तगुणः। सि० नपुं०। पोत्रमस्त्यस्य **पोत्री**। सूते प्रचुरापत्यानि, श्वयति वर्धते वा पीनत्वेन **सूकरः**। शूकरश्च। दन्त्यतालव्यः। कोलः। किरः। किरिश्च।

पञ्चोष्ट्रे। उष्यते दह्यते मरौ **उष्ट्रः**। ''सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्''। मद्यते गच्छति **मयः**। मर्यते इत्येके। शृङ्खलं बन्धनमस्य **शृङ्खलिकः**। कं शिरो रभते उन्नमयतीति **कलभः**। करभश्च। शीघ्रं गच्छतीति **शीघ्रगामुकः**। दासेरकः। दीर्घजङ्घः। ग्रीवी। रवणः। धू प्राकोः (धूपकः)।

---

३. **अष्टपात्** (पुं०)—जिसके आठ पैर होते हैं वह अष्टपात् भी कहलाता है।

सुअर और ऊँट के नाम

श्लोकार्थ—क्रोड, वराह, दंष्ट्री, घृष्टि, पोत्री और शूकर ये सुअर के नाम हैं। उष्ट्र, मय, शृंखलिक, कलभ और शीघ्रगामुक ये उष्ट्र (ऊँट) के नाम हैं ॥९१॥

भाष्यार्थ—सूकर के छह नाम हैं।

१. **क्रोडः** (पुं०)—तालाब में लोटता है इसलिए क्रोड है। सम्पादक के अनुसार—क्रोडन-घनत्व। इसका शरीर घनाकार-स्थूल होता है इसलिए क्रोड है।

२. **वराहः** (पुं०)—वर-अपेक्षाकृत बड़े जानवर। उनको भी मार देता है इसलिए वराह है। सम्पादक के अनुसार—जिसका आहार अपेक्षाकृत अधिक होता है इसलिए भी वराह है।

३. **दंष्ट्रिन्** (पुं०)—इसके दाढ़ (नुकीले दांत) होते हैं इसलिए दंष्ट्री है।

४. **घृष्टिः** (स्त्री०)—घिसता रहता है अर्थात् दूसरे पशुओं को घसीटता है इसलिए घृष्टि है।

५. **पोत्रिन्** (पुं०)—इसके पोत्र-थूथन-विशिष्ट प्रकार की नाक होती है इसलिए पोत्री है।

६. **सूकरः** (पुं०)—बहुत से बच्चे पैदा करता है अथवा पुष्ट होने से बढ़ता है इसलिए सूकर है। 'शूकर' शब्द भी है।

सम्पादक के अनुसार—कड़े, रूखे बाल—शूक कहलाते हैं। इसके ऐसे बाल होते हैं इसलिए शूकर है अथवा 'शू' ऐसी आवाज करता रहता है इसलिए शूकर है।

कोल। किर। किरि आदि नाम भी हैं।

ऊँट के पाँच नाम हैं।

१. **उष्ट्रः** (पुं०)—मरुस्थल में जल जाता है इसलिए उष्ट्र है।

२. **मयः** (पुं०)—मदमाती चाल चलता है इसलिए मय है।

३. **शृङ्खलिकः** (पुं०)—सांकल इसका बंधन है इसलिए शृंखलिक है।

४. **कलभः** (पुं०)—कम्–शिर। शिर उठा रहता है इसलिए कलभ है। करभ भी कहते हैं।

५. **शीघ्रगामुकः** (पुं०)—शीघ्र, तेजी से चलता है इसलिए शीघ्रगामुक है। दासेरक। दीर्घजङ्घ।

कौलेयकः सारमेयो मण्डलः श्वा पुरोगतिः।
जिह्वापो ग्रामशार्दूलः कुक्करो रात्रिजागरः ॥९२॥

नव सारमेये। कुले गृहे भवः **कौलेयः** (यकः)। सरमाया अपत्यं **सारमेयः**। मण्डं लाति **मण्डलः**। चौरादीन् श्वयति गच्छति **श्वा**। श्वानोऽदन्तोऽपि। पुरो गच्छति **पुरोगतिः**। जिह्वां शरीरं पाति रक्षति **जिह्वापः**। ग्रामाणं शार्दूलो व्याघ्रः **ग्रामशार्दूलः**। कुक् शब्दं करोतीति **कुक्कुरः**। कुर् शब्दे। कुकुरश्च। रात्रौ जाग्रर्ति **रात्रिजागरः**। लेड्वहः। वुक्कणः। भषणः। मृगदंशः। शालावृकः।

हेम चाष्टापदं स्वर्णं कनकार्जुनकाञ्चनम्।
सुवर्णं हिरण्यं भर्म जातरूपं च हाटकम् ॥९३॥

ग्रीवी। रवण। धू प्राको (धूपक) आदि नाम भी हैं।

कुत्ते के नाम

श्लोकार्थ—कौलेयक, सारमेय, मण्डल, श्वा, पुरोगति, जिह्वाप, ग्रामशार्दूल, कुक्कु र, रात्रिजागर ये कुत्ते के नाम हैं ॥९२॥

भाष्यार्थ—कुत्ते के नौ नाम हैं।

१. **कौलेयकः** (पुं०)—घर में होता है, रहता है इसलिए कौलेयक है।

२. **सारमेयः** (पुं०)—देवों की कुतिया सरमा कहलाती है। उसका पुत्र होने से सारमेय है।

३. **मण्डलः** (पुं०)—भात का मांड लाता है, ग्रहण करता है अथवा खोपड़ी को जो उठा ले आता है इसलिए मण्डल है।

४. **श्वन्** (पुं०) [कर्तृ० एकव० में श्वा]—चौर आदि को भगा देता है इसलिए श्वा है। 'श्वानः' शब्द भी है।

५. **पुरोगतिः** (पुं०)—आगे-आगे चलता है इसलिए पुरोगति है।

६. **जिह्वापः** (पुं०)—जिह्वा-शरीर। शरीर की रक्षा करता है इसलिए अथवा सम्पादक के अनुसार—जिह्वा से शरीर की रक्षा करता है इसलिए जिह्वाप है।

७. **ग्रामशार्दूलः** (पुं०)—गाँवों का बाघ है इसलिए ग्रामशार्दूल है।

८. **कुक्कुरः** (पुं०)—कुक् शब्द करता है इसलिए कुक्कु र है। 'कुकुर' शब्द भी है।

९. **रात्रिजागरः** (पुं०)—रात्रि में जागता है इसलिए रात्रिजागर है। लेड्वह। वुक्कण। भषण। मृगदंश। शालावृक आदि नाम भी हैं।

तपनीयं कलधौतं कार्तस्वरशिलोद्भवम्।
रूप्यं रजतं गुलिका शुक्तिजं मौक्तिकं तथा ॥९४॥

पञ्चदश स्वर्णे। हिनोति वर्धतेऽनेन **हेमन्**। नान्तम्। अदन्तं हेमं च। अष्टसु लोहेसु पदं प्रतिष्टाऽस्य **अष्टापदम्**। ''अष्टनः संज्ञायाम्'' इति दीर्घः। शोभनो वर्णोऽस्य **स्वर्णम्**। उकारलोपः। अथवा समासे वर्णस्य वा वलोपमाहुः। यथा पञ्चार्णो मन्त्रः। कनति दीप्यते **कनकम्**। ''कनिचनिभ्यामकः''। कनी दीप्तिकान्तिगतिषु। अर्ज सर्ज अर्जने। अर्जतीत्य**र्जुनम्**। ''ऋकृतृबृञ्यमिदार्यर्जिभ्य उनः''। काञ्चति शोभां बध्नाति **काञ्चनम्**। शोभनो वर्णो यस्य **सुवर्णम्**। उभयम्। पुण्यं जिहीते **हिरण्यम्**। अथवा ओहाक् त्यागे। हीयते हिरण्यम्। ''हो हिरश्च'' अस्मादन्यः प्रत्ययो भवति हिरादेशश्च। भ्रियते धार्यते नान्तम् **भर्मन्**। अदन्तं च भर्मम्। जातं रूपं यस्य **जातरूपम्**। क्लीबे। तथा च यशस्तिलके-''असङ्गस्पृहोऽपि जातरूप-स्पृहः।'' हटति **हाटकम्**। हट दीप्तौ। अग्निना तप्यते **तपनीयम्**। कला धावति गच्छति **कलधौतम्**। कृतस्वराकरे भवं **कार्तस्वरम्**। शिलायाः पाषाणादुद्भवो यस्य **शिलोद्भवम्**। शातकुम्भम्। गाङ्गेयम्। कर्बुरम्।

सोने, चाँदी और मोती के नाम

श्लोकार्थ—हेम, अष्टापद, स्वर्ण, कनक, अर्जुन, काञ्चन, सुवर्ण, हिरण्य, भर्म, जातरूप, हाटक, तपनीय, कलधौत, कार्तस्वर, शिलोद्भव ये सोने के नाम हैं। रूप्य, रजत, गुलिका ये चाँदी के नाम हैं। शुक्तिज, मौक्तिक ये मोती के नाम हैं ॥९३-९४॥

भाष्यार्थ—स्वर्ण के पंद्रह नाम हैं।

१. हेमन् (नपुं०)—इससे वृद्धि होती है अर्थात् समृद्धि बढ़ाता है इसलिए हेम है। हेम शब्द भी है।

२. अष्टापदम् (नपुं०)—आठ प्रकार लोहे के भेद में इसकी अधिक प्रतिष्ठा है इसलिए अष्टापद है।

३. स्वर्णम् (नपुं०)—इसका रंग शोभनीय है इसलिए स्वर्ण है।

४. कनकम् (नपुं०)—चमकता है इसलिए कनक है।

५. अर्जुनम् (नपुं०)—इसे इकट्ठा किया जाता है, कमाया जाता है इसलिए अर्जुन है।

६. काञ्चनम् (नपुं०)—शोभा बढ़ाता है इसलिए काञ्चन है।

७. सुवर्णम् (नपुं०), **सुवर्ण** (पुं०)—इसका वर्ण-रंग सुन्दर है इसलिए सुवर्ण है। उभयलिङ्गी है।

८. हिरण्यम् (नपुं०)—पुण्य को प्राप्त कराता है इसलिए हिरण्य है अथवा छोड़ा जाता है इसलिए हिरण्य है।

९. भर्मन् (नपुं०)—भरण-धारण किया जाता है इसलिए भर्म है। भर्म (पुं०) शब्द भी है।

१०. जातरूपम् (नपुं०)—जिसका रूप उत्पन्न हुआ हो या स्वाभाविक हो वह जातरूप है। सम्पादक के अनुसार—बनावटी, मिलावटी नहीं इसलिए इसका रूप प्रशस्त है इसलिए जातरूप है। यशस्तिलक में भी कहा है-''निष्परिग्रह की इच्छा होते हुए भी सुवर्ण से स्पृहा है।''

चामीकरम्। महारजतम्। रुक्मम्। रुम्मम्। जम्बूनदम्। कल्याणम्। गिरिकं। चन्द्रवसु च।

रूप्यं रजतं गुलिका-

त्रयो रूप्ये। रूप्यते जना मुह्यतेऽनेन **रूप्यम्**। जनं रजति **रजतम्**। रज्यते हेम्ना रजतं वा। गुड रक्षायाम्। गुडति रक्षति आपदः। सकाशाद् **गुलिका**। गुडिका च। कलाधौतम्। तारम्। सितम्। दुर्वर्णम्। खर्जूरम्। श्वेतम्।

शुक्तिज मौक्तिकं तथा ॥९४॥

द्वौ मौक्तिके। शुक्त्या जलादियानोपकरणद्रव्यविशेषाज्जातम् **शुक्तिजम्**। मुक्तानां समूहो **मौक्तिकम्**। समूहेऽर्थे इकण्।

वित्तं वस्तु वसु द्रव्यं स्वार्थं रा द्रविणं धनम्-
कस्वरं तत्पतिं प्राहुः कुवेरं चैकपिङ्गलम् ॥९५॥
वैश्रवणं राजराजमुत्तराशापतिं तथा।
अलकानिलयं श्रीदं धनपर्यायदायकम् ॥९६॥

---

११. हाटकम् (नपुं०)—प्रकाशमान होता है इसलिए हाटक है।

१२. तपनीयम् (नपुं०)—अग्नि से तपाया जाता है इसलिए तपनीय है।

१३. कलधौतम् (नपुं०)—सुवर्ण की सफाई होने पर एक-एक कला बढ़ती है, चमक आती है इसलिए कलधौत है।

१४. कार्तस्वरम् (नपुं०)—सुनार के यहाँ होता है इसलिए कार्तस्वर है।

१५. शिलोद्भवम् (नपुं०)—शिला-पाषाण से जिसकी उत्पत्ति होती है इसलिए वह शिलोद्भव है।

शातकुम्भ। गाङ्गेय। कर्बुर। चामीकर। महारजत। रुक्म। रुम्म। जम्बूनद। कल्याण। गिरिक। चन्द्रवसु आदि नाम भी हैं।

चाँदी के तीन नाम हैं।

१. रूप्यम् (नपुं०)—लोग इससे मोहित होते हैं इसलिए रूप्य है।

२. रजतम् (नपुं०)—लोगों को अनुरक्त करती है इसलिए रजत है अथवा सोने के साथ रंग जाती है इसलिए रजत है।

३. गुलिका (स्त्री०)—आपत्ति से रक्षा करती है इसलिए गुलिका है। 'गुडिका' शब्द भी है।

कलाधौत। तार। सित। दुर्वर्ण। खर्जूर। श्वेत आदि नाम भी हैं।

मोती के दो नाम हैं।

१. शुक्तिजम् (नपुं०)—शुक्ति से उत्पन्न होता है या जलादि से, यान उपकरण द्रव्य विशेष से उत्पन्न होता है इसलिए शुक्तिज है।

दश धने। विन्दति पुण्यकृतं **वित्तम्**। धात्वर्थेन व्युत्पत्तिः क्रियतेऽमरकीर्तिना। विद्लृ लाभे। विद्। विद्यते स्म भुज्यते(स्म) वित्तम्। निष्ठाक्तः। "भित्तर्णवित्ताः शकलाधमर्णभोगेषु" वित्तमितिनिपातः। निपातस्येड् न भवति। "दाद्वस्य च" तो नो न भवति। वसति सुखमनेन **वस्तु**। "कमिमनिजनिवसिहिभ्यश्च" एभ्यस्तुन् प्रत्ययो भवति। वसति सुखमनेन **वसु**। "पय्य सिवसिहनिमनित्रपीन्दिकन्दिबध्निबह्यणि-भ्यश्च" एभ्य एकादशभ्यः उः प्रत्ययो भवति। द्रूयते गम्यते **द्रव्यम्**। परं स्यति अन्तं नयति अथवा पुण्यं स्वनति **स्वः। स्वम्**। उभ्यम्। पुण्यकृतमियर्त्ति **अर्थम्**। गुणान् राति **रैः**। "राते डैः।" स्त्रीन्रोः। द्रुयते गम्यते **द्रविणम्**। दधाति धारयति सारत्वं **धनम्**। कश गतौ। कशतीत्येवं शीलं **कस्वरम्**। "कसिपिसिथाप्तीशस्थाप्रमदां च" वरप्रत्ययः। द्युम्नं। सारम्। स्वापतेयम्। ऋक्थम्। रिक्थम्। हिरण्यम्। विभवः।

सप्त कुवेरे। तस्य पतिः **तत्पतिः** तं **कुवेरं** प्राहुर्ब्रुवन्ति। वित्तपतिः। वसुपतिः। वस्तुपतिः। द्रव्यपतिः।

---

२. मौक्तिकम् (नपुं॰)—मुक्ताओं (मोतियों) के समूह को मौक्तिक कहते हैं।

श्लोकार्थ—वित्त, वस्तु, वसु, द्रव्य, स्व, अर्थ, रा, द्रविण, धन, कस्वर ये धन के नाम हैं। धन के पर्यायवाची शब्दों से पति शब्द जोड़ने पर कुबेर के नाम बनते हैं। धन के पति को कुबेर कहते हैं। कुवेर, एकपिंगल, वैश्रवण, राजराज, उत्तराशापति, अलकानिलय, श्रीद तथा धन के पर्याय वाची नामों में 'दायक' और 'द' जोड़ने से कुबेर के नाम होते हैं ॥९५-९६॥

भाष्यार्थ—धन के दस नाम हैं।

१. वित्तम् (नपुं॰)—पुण्य किये व्यक्ति को जानता है इसलिए वित्त है। धातु के अर्थ से अमरकीर्ति व्युत्पत्ति करते हैं। जिसका लाभ हो या भोगा जाय वह वित्त है।

२. वस्तु (नपुं॰)—इससे सुख रहता है इसलिए वस्तु है। वस् + तुन्

३. वसु (नपुं॰)—इससे सुख बना रहता है इसलिए वसु है। वस् + उ

४. द्रव्यम् (नपुं॰)—ले जाते हैं, चला जाता है इसलिए द्रव्य है।

५. स्वः, स्वम् (पुं॰, नपुं॰)—अन्त तक ले जाता है अथवा पुण्य बताता है इसलिए स्व है।

६. अर्थम् (नपुं॰)—पुण्य करने वाले के पास पहुँचता है इसलिए अर्थ है।

७. रैः (स्त्री॰, पुं॰)—गुणों को लाता है इसलिए रै है।

८. द्रविणम् (नपुं॰)—चला जाता है इसलिए द्रविण है।

९. धनम् (नपुं॰)—सारपने को धारण करता है इसलिए धन है।

१०. कस्वरम् (नपुं॰)—चलन स्वभाव वाला है इसलिए कस्वर है।

अन्य नाम द्युम्न। सार। स्वापतेय। ऋक्थ। रिक्थ। हिरण्य। विभव भी हैं।

कुबेर के सात नाम हैं।

१. कुवेरः (पुं॰)—धन के पति-स्वामी को कुवेर कहते हैं। वित्तपति आदि नाम के लिए देखें भाष्य। कुबड़ा होने से जिसकी देह कुत्सित है इसलिए उसे कुवेर कहा है।

स्वपतिः। अर्थपतिः। रा (रै) पतिः। द्रविणपतिः। धनपतिः। कस्वरपतिः। इत्यादिपर्यायनामानि कुवेरस्य ज्ञातव्यानि। कुत्सितो वेरो देहः कुब्जत्वाद्यस्य स **कुबेरः**। पिङ्गलैकनेत्रत्वादे**कपिङ्गलः**। विस्रवसोऽपत्यमणि शिवादित्वात्। णादेशो **वैश्रवणः**। राज्ञां यक्षाणां राजा **राजराजः**। उत्तराशायाः पतिः **उत्तराशपतिः**। अलका निलयो गृहं यस्य **अलकानिलयः**। श्रियं दयते **श्रीदः**। **धनपर्यायदायकः**। धनदायकः। धनदः। वित्तदायकः। वित्तदः। वसुदायकः। वसुदः। द्रव्यदायकः। द्रव्यदः। स्वदायकः। स्वदः। रैदायकः। रैदः। द्रविणदायकः। द्रविणदः। कस्वरदायकः। कस्वरदः।

राष्ट्रं जनपदो निर्गो जनान्तो विषयः स्मृतः।
पूः पुरी नगरं चैव पट्टनं पुटभेदनम् ॥९७॥

पञ्च जनपदे। राजते **राष्ट्रम्**। तथा च सोमनीतौ–''पशुधान्यहिरण्यसंपदा राजते शोभते इति **राष्ट्रम्**''। जनी प्रादुर्भावे। जन्। जायते कश्चित्तमन्ये प्रयुञ्जते। ''धातोश्च हेतौ'' इन् प्रत्ययः। अस्योप. दीर्घः। जानिरिति जातम्। जनिबध्योश्च ह्रस्वः। जनि जातम्। जनयन्ति प्रजां धनमिति जनाः। ''अञ् पचादिभ्यः'' अच् प्रत्ययः। ''कारितस्याना॰'' कारितलोपः। पद गतौ। पद्। जनैर्वर्णाश्रमलक्षणैः पद्यते गम्यते प्राप्यते आश्रीयत इति **जनपदः**। ''अच् पचादेः'' अच् प्रत्ययः। जनपद इति जातः। तथा च सोमनीतौ– ''जनस्य

---

२. एकपिङ्गलः (पुं॰)—जिसके नेत्र भूरे होते हैं इसलिए एकपिङ्गल कहा है।

३. वैश्रवणः (पुं॰)—विश्रवा का पुत्र है इसलिए वैश्रवण है।

४. राजराजः (पुं॰)—यक्षों का राजा है इसलिए राजराज है।

५. उत्तराशापतिः (पुं॰)—उत्तर दिशा का स्वामी है इसलिए उत्तराशापति है।

६. अलकानिलयः (पुं॰)—अलका नगरी में जिसका घर है इसलिए वह अलकानिलय है।

७. श्रीदः (पुं॰)—लक्ष्मी देता है इसलिए श्रीद है।

धन के पर्यायवाची नामों में 'दायक' और 'द' जोड़ने से भी कुबेर के धनदायक। धनद। वित्तदायक। वित्तद। वसुदायक। वसुद। द्रव्यदायक। द्रव्यद। स्वदायक। स्वद। रैदायक। रैद। द्रविणदायक। द्रविणद। कस्वरदायक। कस्वरद नाम होते हैं।

राष्ट्र और नगर के नाम

श्लोकार्थ—राष्ट्र, जनपद, निर्ग, जनान्त और विषय ये देश के नाम हैं। पुर्, पुरी, नगर, पत्तन, पुटभेदन ये नगर के नाम हैं ॥९७॥

भाष्यार्थ—जनपद के पाँच नाम हैं।

१. राष्ट्रम् (नपुं॰)—शोभित होता है इसलिए राष्ट्र है। श्री सोमदेव ने अपने नीतिवाक्यामृत में कहा है–पशु, धान्य, हिरण्य(सोना-चाँदी) की संपदा से जो शोभित होता है वह राष्ट्र है।

२. जनपदः (पुं॰)—वर्णाश्रम वाले लोग इसका आश्रय लेते हैं अथवा इसमें पाये जाते हैं इसलिए जनपद है। सोमदेव सूरि ने भी कहा है–वर्णाश्रम लक्षण वाले मनुष्य अर्थात् सभी वर्णों के मनुष्य का

वर्णाश्रमलक्षणस्य द्रव्योत्पत्तेर्वा स्थानमिति **जनपदः**।'' निर्गम्यते यस्मिन्निति **निर्गः**।''निर्गो देशेऽधिकरणे'' इति डप्रत्ययः। देशादन्यत्र- निर्गम्यते यस्मिन्निति निर्गमनो गिरिः। जनानामन्तो निकटे **जनान्तः**। षिञ् बन्धने। ''धात्वादेः षः सः'' सि॰ विपू॰। विषिण्वन्ति अस्मिन्निति **विषयः**।''पुंसि संज्ञायां घः नाम्यं॰'' गुणः।''ए अय्'' तथा। च सोमनीतौ ''विविधवस्तुप्रदानेन स्वामिनः सद्मनि गजान् नृवाजिनश्च सिनोति बध्नातीति विषयः।''

पूः पुरी नगरं चैव पट्टनं पुटभेदनम्॥ ९७॥

षट् (पञ्च) नगरे। पृ पालनपूरणायोः। पृ। क्रै॰। पृणातीत्येवंशीला **पूः**।''क्विब्भ्राजिपृधुर्विभासाम्'' क्वि प्। ''उरोष्ठयोपधस्य च'' उर्। पुर् जातम्। ''नामिनोर्वोरु॰'' पूर्। वेर्लोपः। सिः। ''व्यञ्जनाच्च'' सिलोपः।''रेफसोर्विसर्जनीयः'' रस्य विसर्गः। पूः। अदन्तः। पुरं **पुरी** च। इदन्तोऽपि पुरिः। नगाः। सन्त्यत्र, ग्राम्यत्वं नश्यत्यत्र वा **नगरम्**। क्लीबे। नगरी च। नानादिग्देशागतानां वणिजां भाण्डानि पतन्त्यत्र **पत्तनम्**। पट्टनं च। अत्र स्मृतिभेदः-

''पट्टनं शकटैर्गम्यं घोटकैर्नौभिरेव वा।
नौभिरेव तु यद्गम्यं पत्तनं तत्प्रचक्षते॥''

स्थान होने से अथवा द्रव्य-धन की उत्पत्ति का स्थान होने से जनपद है।

३. निर्गः (पुं॰)—जिसमें से और देश निकलते हैं अथवा जिसमें से अन्यत्र देश में जाया जाता है इसलिए निर्ग है।

४. जनान्तः (पुं॰)—लोगों का निकट स्थान होने से जनान्त है।

५. विषयः (पुं॰)—इसके बन्धन में रहते हैं इसलिए विषय है। सोमदेव के नीतिवाक्यामृत में भी लिखा है–'अनेक प्रकार की वस्तुओं को प्रदान करने से स्वामी, घर, हाथी, मनुष्य, घोड़े आदि को बांधता है इसलिए विषय है।'

नगर के पाँच नाम हैं।

१. पूः (कर्तृ॰ एकव॰-पूः) मूलशब्द पुर् (स्त्री॰)—पालन-पोषण करती है अथवा प्रसन्न करती है इसलिए पुर् है।

२. पुरम्, पुरी (नपुं., स्त्री॰), पुरिः शब्द भी है।

३. नगरम् (नपुं॰)—यहाँ हाथी रहते हैं अथवा ग्राम्यपना यहाँ रहने से नष्ट हो जाता है इसलिए नगर है। नगरी (स्त्री॰) शब्द भी है।

४. पत्तनम् (नपुं॰), **पट्टनम्** (नपुं॰)—अनेक देश और दिशाओं से आए व्यापारियों के बर्तन-भांड आदि यहाँ मिलते हैं इसलिए पत्तन है। यहाँ मनुस्मृति से कुछ भेद पत्तन और पट्टन में बताया गया है–

पुटा वासा भिद्यन्तेऽत्र **पुटभेदनम्**। क्लीबे। अधिष्ठानम्। निगमः। द्रङ्गः। स्थानीयम्।

वक्त्रं लपनमास्यं च वदनं मुखमाननम्।
श्रवणं श्रोत्र श्रवश्चापि कर्णं चैव श्रुतिं विदुः ॥९८॥

षण्मुखे। वच परिभाषणे। उच्यतेऽनेन **वक्त्रम्**। ''सर्वधातुभ्यः ष्ट्रन्''। रप् लप् जल्प् व्यक्तायां वाचि। लप्यतेऽनेन **लपनम्**। युट्। अत्यतेऽस्मिन्नास्यम्। ''कृत्यल्युटो बहुल'' मिति ण्यच्। वद् व्यक्तायां वाचि। उद्यतेऽनेन **वदनम्**। महति मुह्यति स्तोत्रेण वा **मुखम्**। खन्यते वा मुखम्। उणादौ। सुख दुःख तत्क्रियाम्। चौरादिकत्वादिन्। सुखयति अन्नादिखादनेनेति मुखम्। ''सुखे को मुखिश्च''। सुखेः कः प्रत्ययो भवति धातोर्मुखिश्च। इकार उच्चारणार्थः। आ अनिति श्वसित्यनेन **आननम्**। तुण्डम्।

श्रवणं श्रोत्र श्रवश्चापि कर्णं चैव श्रुतिं विदुः॥ ९८॥

पञ्च कर्णे। श्रूयतेऽनेन **श्रवणम्**। **श्रोत्रम्**। क्लीबे। शृणोत्यनेन सान्तम् **श्रवः**। क्लीबे। करोति

''जहाँ गाड़ी से, घोड़े से अथवा नाव से जाया जा सके वह पट्टन है तथा जहाँ केवल नाव से ही जाया जाय उसे पत्तन कहते हैं।''

५. पुटभेदनम् (नपुं॰)—यहाँ भिन्न-भिन्न जगह लोगों का वास रहता है इसलिए पुटभेदन है। अधिष्ठान। निगम। द्रङ्ग। स्थानीय आदि नाम भी हैं।

मुख और कान के नाम

श्लोकार्थ—वक्त्र, लपन, आस्य, वदन, मुख, आनन ये मुख के नाम हैं। श्रवण, श्रोत्र, श्रव, कर्ण, श्रुति ये कान के नाम हैं ॥९८॥

भाष्यार्थ—मुख के छह नाम हैं।

१. वक्त्रम् (नपुं॰)—इससे कहा जाता है, बोला जाता है इसलिए वक्त्र है।

२. लपनम् (नपुं॰)—इससे भाव व्यक्त किये जाते हैं इसलिए लपन है।

३. आस्यम् (नपुं॰)—इसमें खाया जाता है इसलिए आस्य है। सम्पादक के अनुसार—अम्ल आदि से इसमें लार झरती है इसलिए आस्य है।

४. वदनम् (नपुं॰)—इससे बोला जाता है इसलिए वदन है।

५. मुखम् (नपुं॰)—पूजा जाता है अथवा स्तोत्र से मोहित करता है इसलिए मुख है अथवा अन्नादि के खाने से सुख करता है इसलिए मुख है।

६. आननम् (नपुं॰)—इससे चारों ओर से श्वास ली जाती है इसलिए आनन है।

तुण्ड नाम भी है।

कर्ण (कान) के पाँच नाम हैं।

१. श्रवणम् (नपुं॰)—इससे सुना जाता है इसलिए कर्ण है।

२. श्रोत्रम् (नपुं॰)—इससे सुना जाता है इसलिए श्रोत्र भी है।

शब्दावधानं **कर्णः**। कर्णयति वा कर्णः। छिद्रः कर्णभेदे। श्रूयतेऽनया **श्रुतिः**। स्त्रियाम्। **विदुः** कथयन्ति।

दृगक्षि चक्षुर्नयनं दृष्टिर्नेत्रं विलोचनम्।
कटाक्षं केकरापाङ्गं विभ्रमस्तस्य वैकृतम् ॥९९॥

सप्त नेत्रे। दृश्यतेऽनया **दृक्**। तालव्यान्तः। अशू व्याप्तौ। अश्नुते व्याप्नोत्यनेनात्मा घटादीनर्थानिति **अक्षि**। ''अशिकुषिभ्यां सिक्''। चष्टे हृदयाकूतं सान्तम् **चक्षुः**। ''ऋपृवपिचक्षिजीवतनिधनिभ्य उस्''। नीयते चित्तं विषयेषु अनेन **नयनम्**। दृश्यते प्रकटार्थोऽनया **दृष्टिः**। नीयतेऽनेन दृश्यं **नेत्रम्**। उभयम्। विशेषेण लोच्यते अवलोक्यतेऽनेन **विलोचनम्**। अक्षम्। तारका। ज्योतिः।

तस्य नेत्रस्य वैकृते षट् (पञ्च)। कटयतीति **कटाक्षम्**। उभयम्। के (शिरसि) किरति विक्षेपं क्षिपतीति

---

३. **श्रवस्** (नपुं॰)—इससे सुनते हैं इसलिए श्रव है।

४. **कर्णः** (पुं॰)—शब्द धारण करता है इसलिए कर्ण है अथवा सुनता है इसलिए कर्ण है।

५. **श्रुतिः** (स्त्री॰)—इससे सुना जाता है इसलिए श्रुति है।

नेत्र और कुटाक्ष के नाम

श्लोकार्थ—दृक्, अक्षि, चक्षु, नयन, दृष्टि, नेत्र, विलोचन ये आँख के नाम हैं। कटाक्ष, केकर, अपाङ्ग, विभ्रम, वैकृत ये नेत्र के विकार हैं ॥९९॥

भाष्यार्थ—नेत्र के सात नाम हैं।

१. **दृक्, दृश्** (स्त्री॰)—इससे देखा जाता है इसलिए दृक् है।

२. **अक्षि** (नपुं॰)—इससे आत्मा घट आदि पदार्थों को व्याप्त कर लेती है, देख लेती है इसलिए अक्षि है। 'अशू व्याप्तौ' धातु से यह शब्द बना है।

३. **चक्षुस्** (नपुं॰)—हृदय के अभिप्राय को कह देती है इसलिए चक्षु है।

४. **नयनम्** (नपुं॰)—इसके माध्यम से विषयों में चित्त ले जाया जाता है इसलिए नयन है।

५. **दृष्टिः** (स्त्री॰)—इससे प्रकट-स्पष्ट-सामने का पदार्थ दिखाई देता है इसलिए दृष्टि है।

६. **नेत्रम्** (नपुं॰), (पुं॰)—इससे दृश्य ले जाया जाता है अर्थात् प्राप्त किया जाता है, देखा जाता है इसलिए नेत्र है।

७. **विलोचनम्** (नपुं॰)—इससे विशेष रूप से देखा जाता है अर्थात् विशेष ज्ञान किया जाता है इसलिए विलोचन है। अक्ष, तारका, ज्योति भी नेत्र के नाम हैं।

नेत्र की विकृति के पाँच नाम हैं।

१. **कटाक्षः** (पुं॰) कटाक्षम् (नपुं॰)—प्रकट करती है, दिखाती है इसलिए कटाक्ष है। सम्पादक के अनुसार—इसमें आँखें बड़ी हो जाती हैं इसलिए कटाक्ष है अथवा शरीर को व्याप्त करती है, देखती है इसलिए कटाक्ष है।

२. **केकरः** (पुं॰)—शिर पर विक्षेप करती है अर्थात् शिर को आकर्षित करती है इसलिए केकर है।

(कर्षतीति) **केकरः**। न पाति कामिनम**पाङ्गः**। उभयम्। विभ्रमणं **विभ्रमः**। विकृतस्य भावो **वैकृतम्**।

दन्तवासोऽधरोऽप्योष्ठे वर्णितो दशनच्छदः।
शिरोधरो गलो ग्रीवा कण्ठश्च धमनी धमः ॥१००॥

चत्वारश्चतुर्थे ओष्ठे। दन्तानां वासो **दन्तवासः**। अवति शोभा**मधरः**। ''अधो भवोऽधरो वा। ओष्ठाभ्यां सहितावधरौ वा। अधरोऽप्योष्ठमात्रे वर्तते''। उषति दहति सपत्नीहृदय**मोष्ठः**। उष्यते तीक्ष्णाहारे**णौष्ठो** वा। **वर्णितः** कथितः। दशनस्य छदो **दशनच्छदः**।

षड् गले। शिरो धरति **शिरोधरः**। शिरोधरा च। गलति भोजनं **गलः**। गृणाति गिरति वा **ग्रीवा**। उणादौ गृशब्दे गृणातीति **ग्रीवा**। ''शर्वजिह्वाग्रीवाः'' एते क्व प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। कणति **कण्ठः**। ''कणेष्ठः'' अस्माट्ठप्रत्ययो भवति। धमः सौत्रो धातुः। धम्यतेऽनया **धमनिः**। इदन्तः। स्त्रियामीः। **धमनी**। धमति **धमः**। मन्या। कन्धरा।

दोर्दोषा च भुजो बाहुः-पाणिर्हस्तः करस्तथा।

---

३. अपाङ्गः (पुं॰, नपुं॰)—कामियों की रक्षा नहीं करती है इसलिए अपाङ्ग है।

४. विभ्रमः (पुं॰)—विभ्रम उत्पन्न करती है इसलिए विभ्रम है।

५. वैकृतम् (नपुं॰)—विकृत का भाव वैकृत है।

ओठ और गले के नाम

श्लोकार्थ—दन्तवास, अधर, ओष्ठ, दशनच्छद ये ओठ के नाम हैं। शिरोधर, गल, ग्रीवा, कण्ठ, धमती, धम ये गले के नाम हैं ॥१००॥

भाष्यार्थ—ओठ के चार नाम हैं।

१. दन्तवासः (पुं॰)—इनमें दाँतों का वास रहता है इसलिए दन्तवास है।

२. अधरः (पुं॰)—शोभा की रक्षा करते हैं इसलिए अधर हैं अथवा जो नीचे होता है वह अधर है।

३. ओष्ठः (पुं॰)—सौत पत्नी के हृदय को जलाता है इसलिए ओष्ठ है अथवा तीखे भोजन से जल जाता है इसलिए ओष्ठ है।

४. दशनच्छदः (पुं॰)—दाँतों को ढक देता है इसलिए दशनच्छद है।

गले के छह नाम हैं।

१. शिरोधरः (पुं॰)—शिर को धारण करता है इसलिए शिरोधर है। 'शिरोधरा' शब्द भी है।

२. गलः (पुं॰)—भोजन को निगलता है इसलिए गल है।

३. ग्रीवाः (स्त्री॰)—बोलता है अथवा गीला रहता है इसलिए ग्रीवा है।

४. कण्ठः (पुं॰)—आवाज करता है इसलिए कण्ठ है।

५. धमनिः, धमनीः (स्त्री॰)—इससे फूँका जाता है, धौंका जाता है इसलिए धमनी है।

६. धमः (पुं॰)—धौंकता है इसलिए धम है। मन्या और कन्धरा भी इसके नाम हैं।

प्राहुर्बाहुशिरोंऽसश्च-हस्तशाखा कराङ्गुलिः ॥१०१॥

चत्वारो बाहौ। दम्यते विनीयते परोऽनेन **दोः**। सान्तम्। ''दमेर्डोस्''। दूषयति दुष्टं या इति **दोषा**। आदन्तः। अव्ययः। न व्ययते भुज्यतेऽनेन **भुजः**। निपातनात् चजोः कगत्वं न भवति। नामिन इति गुणश्च न भवति। ''भुजन्युब्जौ पाणिरोगयोः'' इत्यस्मिन्नर्थे निपातनात्। भुजा च। वहत्यनेनेति **बाहुः**। ''बहिस्वदि (रहि) तलि पंशिभ्य उण्''। प्रकोष्ठः।

पाणिर्हस्तः करस्तथा।

त्रयो हस्ते। पणायते व्यवहरत्यनेन **पाणिः**। ''अजिजन्यतिरशिपणिभ्यः'' एभ्य इञ् भवति। हसते **हस्तः**। हसेस्तः। कीर्यते क्षिप्यतेऽनेन **करः**। शयः। शम इत्यन्यः। पञ्चशाखः।

प्राहुर्बाहुशिरोंऽसश्च-

बाहुशिरसोः **अंस** इति संज्ञां **प्राहुः** कथयन्ति। अस्यते भारे**णांसः**। स्कन्धश्च।

हस्तशाखा कराङ्गुलिः॥ १०१॥

द्वौ अङ्गुल्याम्। हस्तस्य शाखा इव **हस्तशाखा**। आकुञ्चनादिकर्माणि अङ्गति गच्छति **अङ्गुलम्**।

भुजा, हाथ आदि के नाम

श्लोकार्थ—दोष्, दोषा, भुज, बाहु ये बांह के नाम हैं। पाणि, हस्त और कर ये हाथ के नाम हैं। बाहुशिर और अंस ये कन्धे के नाम हैं। हस्तशाखा, कराङ्गुलि ये अंगुलि के नाम हैं ॥१०१॥

भाष्यार्थ—बाहु के चार नाम हैं।

१. दोष् (पुं०, नपुं०)—इससे दूसरे को दमित किया जाता है या झुकाया जाता है इसलिए दोष् है।

२. दोषा (अव्य०)—जो दुष्ट को दूषित करती है इसलिए वह दोषा है।

३. भुजः (पुं०)—इससे भोगा जाता है, या भोजन किया जाता है इसलिए भुज है। 'भुजा' शब्द भी है।

४. बाहुः (पुं०, स्त्री०)—इससे भार वहन किया जाता है इसलिए बाहु है। प्रकोष्ठ नाम भी है।

हाथ के तीन नाम हैं।

१. पाणिः (पुं०)—इससे व्यापार किया जाता है या लेन-देन कर व्यवहार किया जाता है इसलिए पाणि है।

२. हस्तः (पुं०)—हस् धातु मिलना-जुलना अर्थ में होती है परस्पर में एक दूसरे से मिलने पर प्रसन्नता की व्यक्ति का साधन है।

३. करः (पुं०)—इससे फेंका जाता है इसलिए कर है। शय, शम नाम भी हैं।

बाहुशिरों को अंस-कंधा कहते हैं। भार से आहत हो जाता है इसलिए अंस है। 'स्कन्ध' नाम भी है।

अंगुलि के दो नाम हैं।

स्त्रीक्लीबे। अङ्गुली। करस्याङ्गुलिः **कराङ्गुलिः**। एवमङ्गुरम्। अङ्गुरी।

नासा घ्राणं उरो वक्षः कुक्षिः स्याज्जठरोदरम्।
स्तनः पयोधरकुचौ वक्षोज इति वर्णितः ॥१०२॥

द्वौ नासिकायाम्। नासते शब्दायते नास्यतेऽनया वा **नासा**। नेस्ना च। जिघ्रत्यनेन **घ्राणम्**। क्लीबे। सिङ्घनी। नासिका। घोणा।

उरो वक्षः

द्वौ भुजमध्ये। अर्यते गम्यते **उरः**। ''अर्तेरुश्च'' आत्मादसुन्प्रत्ययो भवति अस्य उरादेशो भवति। ऋ गतौ। अस्य धातोः प्रयोगः। वक्ति वाणीं **वक्षः**। ''वचेः सोऽन्तश्च'' अस्मादसन् प्रत्ययो भवति सोऽन्तः। अकार उच्चारणार्थः। चवर्गस्य किः। ''निमित्तादि'' त्यादिना षत्वं च।

कुक्षिः स्याज्जठरोदरम्।

त्रयो जठरे। कुषति (कुष्णाति) निष्कर्षत्याहारं **कुक्षिः**। पुंसि। कुक्षम्। क्लीबे। जमति **जठरम्**। अथवा जठ सौत्रोऽयं धातुः। उणादौ निपातोऽस्ति। उनत्ति क्लेदयत्याहार**मुदरम्**। एते उभयम्। पिचण्डम्।

---

१. हस्तशाखा (स्त्री०)—हाथ की शाखा के समान होती है इसलिए हस्तशाखा है।

२. कराङ्गुलि (स्त्री०)—आकुञ्चन-सिकोड़ना आदि कर्म करती है इसलिए अङ्गुलि है। अङ्गुलम् (नपुं०) एवं अङ्गुलिः, अङ्गुली (स्त्री०) शब्द हैं। हाथ की अङ्गुलि को कराङ्गुली कहते हैं। इसी प्रकार अङ्गुर और अंगुरी शब्द भी हैं।

नाक, छाती, पेट और स्तन के नाम

श्लोकार्थ—नासा और घ्राण नाक के नाम हैं। उर और वक्ष छाती के नाम हैं। कुक्षि, जठर, उदर पेट के नाम हैं। स्तन, पयोधर, कुच और वक्षोज ये स्तन के नाम हैं ॥१०२॥

भाष्यार्थ—नाक के दो नाम हैं।

१. नासा (स्त्री०)—शब्द करती है अथवा इससे सूंघा जाता है इसलिए नासा है। 'नेस्ना' शब्द भी है। सम्पादक के अनुसार—यह शब्द अन्यत्र कहीं उपलब्ध नहीं है।

२. घ्राणम् (नपुं०)—इससे सूँघा जाता है इसलिए घ्राण है। सिंघनी। नासिका। घोणा आदि शब्द भी हैं।

छाती के दो नाम हैं।

१. उरस् (नपुं०)—बल से जाना जाता है अर्थात् बल यहाँ रहता है इसलिए उर है। सम्पादक के अनुसार—बल धारण करता है इसलिए उर है।

२. वक्षस् (नपुं०)—वाणी बोलता है अर्थात् वचनों को कहता है इसलिए वक्ष है।

पेट के तीन नाम हैं।

१. कुक्षिः (पुं०)—आहार को अन्तिम परिणाम पर पहुँचाता है इसलिए कुक्षि है। कुक्षम् (नपुं०)

तुन्दम्।

स्तनः पयोधरकुचौ वक्षोज इति वर्णितः ॥१०२॥

चत्वारः कुक्षौ। स्तन्यते बालैः **स्तनः**। पयो धरतीति **पयोधरः**। कोचते स्त्री मृद्यमानेऽत्र, कुच्यते मर्दनेन आकुलीक्रियते वा **कुचः**। कूचश्च। वक्षसि जातो **वक्षोजः**। उरसिजः। वक्षोरुहः।

कटिर्नितम्बं श्रोणी च जघनं-जानु जह्नु च।
चलनं चरणं पादं क्रमोऽह्रिश्च पदं विदुः ॥१०३॥

चत्वारः कट्याम्। कट्यते वस्त्रैराच्छाद्यते **कटिः। कटी। कटः। कटम्।** नितरामतिशयेन तम्यते काङ्क्ष्यते **नितम्बः**। आश्रीयते कामिभिः **श्रोणः**। नदादित्वादीः। **श्रोणी**। इदन्तोऽपि **श्रोणिः**। स्त्रियामीः। **श्रोणी**। हन्ति चित्तमिति **जघनम्**। "हनेर्जघश्च"। चकारात् काञ्चीपदम्। कलत्रम्। कडत्रम्। जघनम्।

में भी है।

२. जठरम् (नपुं०), जठरः (पुं०)—खाता है अर्थात् इसमें अन्न रहता है इसलिए जठर है।

३. उदरम् (नपुं०), उदरः (पुं०)—आहार को पचाता है, गलाता है इसलिए उदर है। ये दोनों जठर, उदर शब्द दोनों लिंग में हैं। पिचण्ड, तुन्द नाम भी पेट के हैं।

स्तन के चार नाम हैं।

१. स्तनः (पुं०)—बच्चे इसके लिए रोते हैं, आवाज करते हैं इसलिए स्तन है अर्थात् माँ का दूध पीने के लिए बच्चे रोते हैं इसलिए स्तन कहा है। सम्पादक के अनुसार—यौवन के आगमन को बताता है इसलिए स्तन है अथवा अन्यत्र ऐसी भी व्युत्पत्ति है कि—कामुक लोग इसका वर्णन करते हैं, इसके बारे में बातें करते हैं इसलिए स्तन है।

२. पयोधरः (पुं०)—दुग्ध धारण करते हैं इसलिए पयोधर हैं।

३. कुचः (पुं०)—इसको मलने पर स्त्री आह भरती है अथवा इसके मर्दन से आकुलित किया जाता है इसलिए कुच है। 'कुचः' शब्द भी है।

४. वक्षोजः (पुं०)—वक्ष-छाती में उत्पन्न होते हैं इसलिए वक्षोज हैं।

उरसिज, वक्षोरुह नाम भी हैं।

कमर, जांघ और पैर के नाम

श्लोकार्थ—कटि, नितम्ब, श्रोणी और जघन ये कमर और उसके पास के भाग के नाम हैं। जानु, जह्नु जांघ के नाम हैं। चलन, चरण, पाद, क्रम, अह्रि, पद पैर के नाम हैं ॥१०३॥

भाष्यार्थ—कटि के चार नाम हैं।

१. कटिः, कटी, कटः, कटम् (स्त्री०, स्त्री०, पुं०, नपुं०)—वस्त्रों से ढकी रहती है इसलिए कटि है।

२. नितम्बः (पुं०)—कामी जन इसकी कांक्षा-चाह रखते हैं इसलिए नितम्ब हैं। यह कमर के पिछले भाग का नाम है, जिन्हें पुट्ठे या कूलू भी कहते हैं।

ककुद्मती। आरोहः। कटीरम्। त्रिकस्थानकम्। स्थानपदाभावेऽपि त्रिकम्। फलकं च।

द्वौ जानौ। गन्तुं जायते **जानुः**। ''कृवापाजिमिस्वदिसाध्यशूदृसनिजनिचरिचटिभ्य उण्''। जहाति **जह्नुः**। अष्ठीवान्। जङ्घा।

चलनं चरणं पादं क्रमोऽह्रिश्च पदं विदुः ॥१०३॥

षट् चरणे। चाल्यते **चलनम्**। चरत्यनेन **चरणम्**। पद्यतेऽनेन **पादः**। घञ्। दान्तोऽपि पाद्। 'क्रमु पादविक्षेपे'। क्राम्यत्यनेनेति **क्रमः**। अहि गतौ। इदनुबन्धत्वान्नागमः। अंहत्यनेनेत्यं**ह्रिः**। ''अहेरिः'' अंहेर्धातोरिप्रत्ययो भवति। अङ्घ्रिश्च। पद्यते **पदम्**। क्लीबे।

शिरो मूर्धोत्तमाङ्गं कम् प्रारभ्यं प्रेरितेरितम्।
वाग्वचो वचनं वाणी भारती गीः सरस्वती ॥१०४॥

---

३. श्रोणिः, श्राणी, श्रोणः (स्त्री०, स्त्री०, पुं०)—कामी लोग इसका सहारा लेते हैं इसलिए श्रोण है। सम्पादक-हेमचन्द्र ने लिखा है कि यहाँ किंकिण ध्वनि सुनाई पड़ती है अर्थात् करधनी की घण्टी की आवाज आती है क्योंकि बच्चों की कमर में पहनाई जाती है इसलिए श्रोणी है।

४. जघनम् (नपुं०)—चित्त का नाश करती है, दुःख देती है इसलिए जघन है।

च कार से काञ्चीपद। कलत्र। कड्त्र। जघन। ककुद्मती। आरोह। कटीर। त्रिकस्थानक। त्रिक। फलक आदि नाम भी हैं।

जंघा के दो नाम हैं।

१. जानु (नपुं०)—चलने के लिए होती है इसलिए जांघ है। सम्पादक के अनुसार—इससे संकोच आदि अर्थात् पैरों का सिकुड़ना होता है इसलिए जानु कहा है। इस अपेक्षा से यह घुटने का नाम भी है। भाष्य में जानुः शब्द पुं० में क्यों यह चिन्तनीय है।

२. जह्नु (नपुं०)—छोड़ता है इसलिए जह्नु है। सम्पादक के अनुसार—इस विषय में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। यहाँ भी पुं० में भाष्य में लिखा है। अष्ठीवान्, जंघा ये नाम भी हैं।

पैर के छह नाम हैं।

१. चलनम् (नपुं०)—इससे चलाया जाता है, आगे बढ़ाया जाता है इसलिए चलन है। सम्पादक के अनुसार—इससे चलते हैं इसलिए चलन है, ऐसा कहना ज्यादा ठीक है।

२. चरणम् (नपुं०)—इससे गति होती है, चलते हैं इसलिए चरण है।

३. पादः (पुं०)—इससे चलना-फिरना होता है इसलिए पाद है। 'पाद्' शब्द भी है।

४. क्रमः (पुं०)—इससे चलते हैं इसलिए क्रम है।

५. अह्रिः (पुं०)—इससे गत होती है इसलिए अह्रि है। अंघ्रिः शब्द भी है।

६. पदम् (नपुं०)—चलते हैं इसलिए पद हैं।

चत्वारो मस्तके। शृ हिंसायाम्। शीर्यते हिंस्यते **शिरः**। ''उषिरंजिशृभ्यो यण्वत्'' एभ्योऽसन् प्रत्ययो भवति स च। यण्वत्। तेनागुणः। अनुषप्लीहनङ्गलोपः। 'मूर्छा मोहसमुच्छाययोः।' मूर्छन्त्यत्राहताः प्राणिनो **मूर्धा**। पूषादयः– ''पूषन्अर्यमन्मज्जन्नुक्षन्श्वन्मातरिश्वन्क्लेदन्स्नेहन्**मूर्धन्**यूषन्'' एते कन्यन्ता निपात्यन्ते। उत्तमं च तद् अङ्गम् **उत्तमाङ्गम्**। कै गै शब्दे। कायतीति **कम्**। शीर्षम्। मस्तकः। कन्याङ्गं च नानार्थे।

प्रारभ्यं प्रेरितेरितम्।

त्रयः प्रेरणे। प्रारभ्यते **प्रारभ्यम्**। ''शकिसहिपवर्गान्ताच्च'' यः प्रत्ययः। ईर गतौ कम्पने च। प्रेर्यते **प्रेरितम्। ईरितम्।** ''नपुंसके भावे क्तः''।

साम्प्रतं सरस्वतीनामानि प्रारभ्यन्ते आचार्यश्रीमदमरकीर्तिना–

वाग्वचो वचनं वाणी भारती गीः सरस्वती ॥१०४॥

सप्त वाण्याम्। उच्यते **वाक्**। ''वचिप्रच्छिश्रिद्रुश्रुप्रुज्वां क्विब् दीर्घश्च'' एभ्यः क्विप् प्रत्ययो भवति दीर्घश्चस्वरस्यैषाम्। वक्ति **वचः**। ''सर्वधातुभ्योऽसन्''। उच्यते **वचनम्**। वाण्यते **वाणिः**। स्त्रियामीः।

शिर, प्रेरित वस्तु और प्राणी के नाम

श्लोकार्थ—शिर, मूर्धा, उत्तमांग, क ये शिर के नाम हैं। प्रारभ्य, प्रेरित, ईरित ये प्रेरित वस्तु के नाम हैं। वाग्, वच, वचन, वाणी, भारती, गी, सरस्वती से वाणी के नाम हैं ॥१०४॥

भाष्यार्थ—मस्तक के चार नाम हैं।

१. **शिरस्** (नपुं०)—इसको नष्ट किया जाता, हिंसा की जाती है इसलिए शिर है।

२. **मूर्धन्** (पुं०)—इसके आहत होने पर प्राणी मूर्छित हो जाते हैं इसलिए मूर्धा है।

३. **उत्तमाङ्गम्** (नपुं०)—यह अङ्ग उत्कृष्ट है इसलिए उत्तमाङ्ग है।

४. **कम्** (नपुं०)—शब्द करता है इसलिए क है।

शीर्ष, मस्तक ये भी नाम हैं। नानार्थ कोश में कन्याङ्ग नाम भी है। सम्पादक के अनुसार—कन्याङ्ग नाम के लिए कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं।

प्रेरणा के तीन नाम हैं।

१. **प्रारभ्यम्** (नपुं०)—प्रारम्भ किया जाता है इसलिए प्रारभ्य है।

२. **प्रेरितम्** (नपुं०)—प्रेरणा की जाती है इसलिए प्ररित है।

३. **ईरितम्** (नपुं०)—इसी तरह ईरित है।

अब आचार्य श्रीमदमरकीर्ति सरस्वती के नामों का कथन प्रारंभ करते हैं–

वाणी के सात नाम हैं।

१. **वाक्, वाच्** (स्त्री०)—कही जाती है इसलिए वाक् है।

२. **वचस्** (नपुं०)—कहते हैं इसलिए वच है।

वाणी। बिभर्ति जगद् धारयति, भरतो ब्रह्मा तस्येयं **भारती**। तथा च–

''आत्मनि मोक्षे ज्ञाने वृत्तौ ताते च भरतराजस्य।
ब्रह्मेति गीः प्रगीता न चापरो विद्यते ब्रह्मा ॥''

गीर्यते उच्चार्यते रान्तं **गीः**। सरः प्रसरणमस्त्यस्याः **सरस्वती**ः। **ब्राह्मी**। तथाहि–

''गौर्गौः कामदुघा सम्यक् प्रयुक्ता स्मर्यते बुधैः।
दुष्प्रयुक्ता पुनर्गो वं प्रयोक्तुः सैव शंसति॥''

सिंहद्विपघने गर्जः हेषाऽश्वे बृंहितं गजे।
स्फीत्कृतं धेनुकलभे-स्तनितं जलदे तथा ॥१०५॥

सिंहे कण्ठीरवे, **द्विपे** गजे, **घने** मेघे च **गर्ज** शब्दः कथ्यते। गर्जनं **गर्जः**।

हेषाऽश्वे

अश्वानां शब्दे **हेषा**। हेषणम्। हैषा ह्लेषा च।

---

३. वचनम् (नपुं०)—कहे जाते हैं इसलिए वचन हैं।

४. वाणिः, वाणी (स्त्री०)—शब्द किये जाते हैं इसलिए वाणी है।

५. भारती (स्त्री०)—जगत् इसे धारण करता है इसलिए भारती है अथवा भरत ब्रह्मा है, उसकी यह वाणी भारती कहलाती है। कहा है–

''आत्मा में, मोक्ष में, ज्ञान में, वृत्ति में (चरित्र में) भरत राजा के पिता में ब्रह्मा यह शब्द कहा है, अन्य कोई ब्रह्मा नहीं है।''

६. गीः [मूलशब्द गिर् (स्त्री०)]—इससे उच्चारण किया जाता है इसलिए गी है।

७. सरस्वती (स्त्री०)—इसका प्रसार-फैलाव होता है इसलिए सरस्वती है।

ब्राह्मी नाम भी है। कहा भी है–

''गौ शब्द कामधेनु के अर्थ में विद्वानों के द्वारा समीचीन रूप से प्रयुक्त होता है। 'गोवं' शब्द दुष्प्रयुक्त है। प्रयोक्ता के लिए गौः शब्द ही प्रशंसनीय है।''

सिंह, हाथी, बादल, घोड़ा गाय के बच्चे के नाम

श्लोकार्थ—सिंह, हाथी और मेघ की आवाज को गर्ज कहते हैं। घोड़े की आवाज हेषा (हींसना), हाथी की आवाज बृंहित, गोवत्स की आवाज स्फीतकृत और बादल की ध्वनि स्तनित कहलाती है ॥१०५॥

भाष्यार्थ—सिंह-कण्ठीरव, द्विप-गज, घन-मेघ इनकी ध्वनि या शब्द को गर्ज कहते हैं। गर्जन करना ही गर्ज है।

घोड़ों का हींसना हेषा (स्त्री०) है। हैषा 'ह्लेषा' शब्द भी हैं।

हाथी के शब्द को बृंहितम् (नपुं०) और वर्हणम् (नपुं०) कहा है।

बृंहितं गजे।

गजशब्दे **बृंहितम्**। वर्हणम्।

स्फीत्कृतं धेनुकलभे-

धेनुकलभे शिशुवत्से **स्फीत्कृतं** स्फीत् शब्दः कथ्यते।

स्तनितं जलदे तथा ॥१०५॥

जलदे मेघे मेघानां शब्दे **स्तनितं** कथ्यते। स्तन्यते **स्तनितम्**।

स्यन्दने चीत्कृतं मन्त्रे भटे च हुङ्कृतं तथा।
सीत्कृतं मणितं कामे खन्कृतं शृङ्खलायुधे ॥१०६॥

स्यन्दने रथशब्दे **चीत्कृतं** कथ्यते। **मन्त्रे भटे च** हुंशब्दः कथ्यते। हुं मन्त्रे, हुं परिप्रश्ने हुं सत्त्वं सुष्टु ते भयादौ राक्षसोऽयम्। कुत्सने हुं निर्लज्जा। अनिच्छायाम् हुं हुं मुञ्च।

सीत्कृतं मणितं कामे-

कामे कन्दर्पभोगप्रस्तावशब्दे **सीत्कृतं मणितम्**। सीत्क्रियते सीत्कृतम्। मण्यते **मणितम्**।

गाय के वत्स की आवाज स्फीतकृत कहलाती है।

भाष्यकार ने धेनु-शिशु, कलभ-वत्स ऐसा माना है। सम्पादक ने इस अभिप्राय को स्पष्ट किया है-हाल ही की जन्मी गाय धेनु कहलाती है। तीस वर्ष का हाथी का बच्चा 'कलभ' कहलाता है। इन दोनों ही अर्थात् गाय और हाथी के बच्चे की आवाज 'स्फीतकृत' कहलाती है। ऐसा लगता है कि टीकाकार(भाष्यकार) को गोवत्स शब्द ही स्फीतकृत जान पड़ा है। इस विषय में कोशान्तर प्रमाण का अभाव होने से और कवियों के द्वारा प्रयोग भी नहीं देखे जाने से मूलशब्द का अनुसरण करना ही शरण है।

नोट—भाष्यकार ने धेनुकलभे शिशुवत्से यह अर्थ किया है। इसकी जगह गोवत्से ऐसा लिखना चाहिए था किन्तु धेनु के लिए शिशु और कलभ के लिए वत्स ऐसा पृथक् प्रयोग मानें तो सम्पादक का अभिप्राय और भाष्यकार का अभिप्राय एक समान हो जाता है। मेघों की आवाज को स्तनित कहते हैं। आवाज होती है इसलिए स्तनित है।

रथ आदि की आवाज के नाम

श्लोकार्थ—रथ की आवाज को चीत्कृत, मंत्र और भट की आवाज को हुंकृत, काम की आवाज को सीत्कृत तथा मणित, सांकल और हथियार की आवाज को खन्कृत कहा है ॥१०६॥

भाष्यार्थ—स्यन्दन—रथ की आवाज को चीत्कृत कहा जाता है।

मन्त्र, योद्धा की आवाज को हुं शब्द से कहते हैं। हुंकार मन्त्र में, परिप्रश्न में, बल में, भय आदि में जैसे कि यह राक्षस है; प्रयोग किया जाता है। कुत्सित अर्थ में भी हुंकार होती है जैसे—हुं निर्लज्ज! अनिच्छा प्रकट करने में भी, जैसे—हुं हुं छोड़ दो।

काम भोग के समय होने वाले शब्द को सीत्कृत और मणित कहा है। सीत्कार की जाती है

खन्कृतं शृङ्खलायुधे ॥१०६॥

शृङ्खलाऽयुधे खन्कृतम्। सुगमम्।

मञ्जीरकं तुलाकोटिर्नू-पुरं तत्र संसृतम्।
झाङ्कृतं चाथ मरुति क्रेङ्कृतं क्रौञ्चहंसयोः ॥१०७॥

त्रयः स्त्रीणां चरणाभरणे। मञ्जिः सौत्रः। मञ्जत्याकर्षति चित्तं **मञ्जीरकं**। अथवा मञ्जु मधुरमीरयति मञ्जीरकं। तुलाकृतेर्जङ्घाया कोटिरिव **तुलाकोटिः**। स्त्रीगतिं नौतीति **नूपुरम्**। शिञ्जिनी। पादकटकः। हंसकम्। पदाङ्गदम्। कलापो नानार्थे।

तत्र संसृतम्।

तत्र तस्मिन् मञ्जीर के तच्छब्दे **संसृतं** कथ्यते।

झाङ्कृतं चाथ मरुति-

मरुति वायौ तच्छब्दे **झाङ्कृतं** कथ्यते।

क्रेङ्कृतं क्रौञ्चहंसयोः॥ १०७॥

क्रौञ्चश्च हंसश्च कौञ्चहंसौ तयोः **क्रौञ्चहंसयोः क्रेंकृत**शब्दो मतः कथितः। तथा चामरसिंहः-

---

इसलिए सीत्कृत है। धीमे-धीमे आवाज, गुनगुनाहट की जाती है इसलिए मणित है।

सांकल और अस्त्र में खन्कार की आवाज होती है। यह सुगम है।

नूपुर, वायु, पंक्षी की आवाज के नाम

श्लोकार्थ—मञ्जीरक, तुलाकोटि, नूपुर ये बिछिया के नाम हैं। इनकी आवाज को संसृत, वायु की आवाज को झांकृत तथा क्रौंच, हंस की आवाज को केंकृत कहते हैं ॥१०७॥

भाष्यार्थ—स्त्रियों के चरणों के आभूषण के तीन नाम हैं।

१. मञ्जीरकम् (नपुं०)—चित्त को आकर्षित करता है इसलिए मञ्जीरक या मञ्जीर है अथवा मञ्जु-मधुर आवाज करता है इसलिए मञ्जीर है।

२. तुलाकोटिः (पुं०)—तराजू की आकृति के किनारे के समान है इसलिए तुलाकोटि है।

३. नूपुरम् (नपुं०)—स्त्री की चाल की प्रशंसा करते हैं इसलिए नूपुर है।

नोट—ये तीनों नाम स्त्री के पैर के आभूषण के हैं। आवाज आदि करना तो घुंघरु, पायल आदि में होता है, इन्हीं के ये नाम हैं। शिञ्जिनी। पादकटक। हंसक। पदाङ्गद। कलाप। आदि नाम भी हैं।

इनकी आवाज को संसृत कहते हैं।

हवा के शब्द-आवाज को झाङ्कृत कहते हैं।

क्रौंच तथा हंस पक्षी के शब्द को केंकृत कहते हैं। अमरसिंह ने भी कहा है—निषाद, ऋषभ,

''निषादर्षभगान्धारषड्जमध्यमधैवताः ।
पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रीकण्ठोत्थिताः स्वराः॥''

तथा च भरतनाटके-

''षड्ज मयूरा ब्रुवते गावस्त्वृषभभाषिणः।
आजाविकं तु गान्धारं क्रौञ्चः क्वणति मध्यमम्॥
पुष्पसाधारणे काले पिकः कूजति पञ्चमम्।
धैवतं हेषते बाजी निषादं बृंहते गजः॥
नासाकण्ठमुरस्तालुजिह्वादन्तांश्च संस्पृशन्।
षड्भ्यः संजायते यस्मात्तस्मात्षड्ज इति स्मृतः॥''

प्रतीतं संस्तुतं लब्धं दृष्टं परिचितं स्मृतम्।
संस्थितं दशमीस्थं च परासुं च मृतं विदुः ॥१०८॥

षट् स्मृते। प्रतीयते **प्रतीतम्**। ष्टुञ् स्तुतौ। ष्टु। ''धात्वादेः षः सः।'' स्तुः सम्पूर्वः। सम्यक् प्रकारेण स्तूयते स्म **संस्तुतम्**। लभ्यते स्म **लब्धम्**। (दृश्यतेस्म **दृष्टम्**) परिचीयते स्म **परिचितम्**। स्मर्यते स्म **स्मृतम्**।

गान्धार, षड्ज, मध्यम, धैवत और पञ्चम ये सात तन्त्रीकण्ठ से उत्पन्न स्वर हैं।

भरत नाटक में कहा है-

''मयूर षड्ज स्वर से बोलते हैं, गायें ऋषभ स्वर से बोलती हैं। आजाविक का गान्धार, क्रौंच पक्षी का मध्यम स्वर में बोलना होता है। वसन्त काल में कोयल पञ्चम स्वर में कूंजती है। घोड़ों का हींसना धैवत स्वर में तथा हाथी की आवाज निषाद स्वर में होती है। नासा, कण्ठ, छाती, तालु, जिह्वा और दाँत इन छह के स्पर्श करते हुए जो उत्पन्न होता है वह षड्ज स्वर कहा है।''

याद की हुई चीज और मृत के नाम

श्लोकार्थ—प्रतीत, संस्तुत, लब्ध, दृष्ट, परिचित, स्मृत ये याद या जाती हुई वस्तु के नाम हैं तथा संस्थित, दशमीस्थ, परासु और मृत ये मरे हुए प्राणी के नाम हैं ॥१०८॥

भाष्यार्थ—याद की हुई वस्तु के छह नाम हैं।

१. **प्रतीतम्** (नपुं॰)—प्रतीति में आ चुका है इसलिए प्रतीत है।

२. **संस्तुतम्** (नपुं॰)—जो अच्छी तरह स्तुत-प्रशंसित हुआ है इसलिए संस्तुत है।

३. **लब्धम्** (नपुं॰)—प्राप्त हुआ था इसलिए लब्ध है।

४. **दृष्टम्** (नपुं॰)—जो देखा गया था इसलिए दृष्ट है। भाष्य में यह व्युत्पत्ति छूटी है।

५. **परिचितम्** (नपुं॰)—परिचय हुआ था इसलिए परिचित है।

६. **स्मृतम्** (नपुं॰)—स्मरण किया गया था इसलिए स्मृत है।

नोट—ये सभी शब्द भूतकालीन कृदन्त हैं। जो विशेषण के रूप में तीनों लिंगों में प्रयुक्त हो

संस्थितं दशमीस्थं च परासुं च मृतं विदुः ॥१०८॥

चत्वारो मृते। संतिष्ठते स्म **संस्थितः**। सम्पूर्वकस्तिष्ठतिः। दशमीं तिष्ठतीति **दशमीस्थः**। तथा च–

"प्रथमे जायते चिन्ता द्वितीये द्रष्टुमिच्छति।
तृतीये दीर्घ निःश्वासश्चतुर्थे भजते ज्वरम्॥
पञ्चमे दह्यते गात्रं षष्ठे भुक्तं न रोचते।
सप्तमे स्यान्महामूर्छा उन्मत्तत्वमथाष्टमे॥
नवमे प्राणसन्देहो दशमे मुच्यतेऽसुभिः।
एतैर्वर्गैः समाक्रान्तो जीवस्तत्त्वं न पश्यति॥"

दशानां पूरणी दशमी तत्र तिष्ठतीति वा दशमीस्थः। परागता असवोऽस्य **परासुः**। म्रियते स्म **मृतं**। **विदुः** कथयन्ति।

खेदो द्वेषोऽप्यमर्षश्च रुट्कोपक्रोधमन्यवः।
हर्षः प्रमोदः प्रमदो मुत्तोषानन्दमुत्सवः ॥१०९॥

सप्त क्रोधे। खिद परिघाते। तुदादौ खिन्दति। दैन्ये रुधादिपाठात् खिन्ते (ततः खेदनं) **खेदः**। भावे

सकते हैं। भाष्यकार के अनुसार—नपुं० लिंग लिख दिया है। भाव वाच्य में नपुं० लिंग एकव० में भी इनका प्रयोग होता है। यह भी जानना।

मृत प्राणी के चार नाम हैं।

१. **संस्थित** (तीनों लिंग में)—पड़ा रह जाता है इसलिए संस्थित है।

२. **दशमीस्थ** (त्रि० लि०)—दशमी अवस्था में रहता है इसलिए दशमीस्थ है। दशमी अवस्था को इस प्रकार कहा है–"काम की प्रथम अवस्था में चिन्ता उत्पन्न होती है, दूसरी में देखने की इच्छा होती है, तीसरी अवस्था में दीर्घ श्वास निकलती है, चौथी में ज्वर चढ़ जाता है, पाँचवी में शरीर जलने लगता है, छठी में भोजन नहीं रुचता है, सातवी में महामूर्छा आती है, आठवी में उन्मत्तता (पागलपन) आ जाता है, नवमीं में प्राणों का सन्देह होने लगता है और दशमी दशा में प्राण ही छूट जाते हैं। इन दश अवस्थाओं से पीड़ित जीव तत्त्व को नहीं देखता है।"

३. **परासुः** (त्रि० लि०)—इसके प्राण निकल जाते हैं इसलिए परासु है।

४. **मृत** (त्रि० लि०)—मर गया है इसलिए मृत है।

क्रोध और आनन्द के नाम

श्लोकार्थ—खेद, द्वेष, अमर्ष, रुष्, कोप, क्रोध, मन्यु ये क्रोध के नाम हैं। हर्ष, प्रमोद, प्रमद, मुत्, तोष, आनन्द, उत्सव ये हर्ष के नाम हैं ॥१०९॥

भाष्यार्थ—क्रोध के सात नाम हैं।

१. **खेदः** (पुं०)—परिघात (मानसिक आघात) होना खेद है। तुदादि गण में खिद धातु परिघात

घञ् प्रत्ययः। द्विष् अप्रीतौ अदादौ। द्वेषणं **द्वेषः**। मृष तितिक्षायाम्। चुरादौ। शक मृष क्षमायाम्। दिवादौ विभाषितः। मृषु सहने भ्वादौ परस्मैपदी। अमर्षणम् **अमर्षः**। कुप क्रुध रुष रोषे। रोषणं **रुट्**। सम्पदादित्वाद्भवे क्विप्। कोपनं **कोपः**। क्रोधनं **क्रोधः**। मन ज्ञाने। मन्यते **मन्युः**। ''जनिमनिदसिभ्यो युः''। एभ्यो युप्रत्ययो भवति। उणादित्वाद्योरनादेशो न भवति।

हर्षः प्रमोदः प्रमदो मुत्तोषानन्दमुत्सवः ॥१०९॥

सप्त हर्षे। हर्षणं **हर्षः**। प्रहर्षश्च। प्रमोदनं **प्रमोदः**। मदी हर्षे। प्रमदनं **प्रमदः**। ''मदेः प्रसमोर्हर्षे'' प्रसमोरुपपदयोर्मदेरल् भवति हर्षार्थे। मोदनं **मुद्** दान्तः स्त्रियाम्। तुष तुष्टौ। तोषणं **तोषः**। आनन्दनम् **आनन्दः**। पुंसि। टुनदि समृद्धौ। उत्सवनम् **उत्सवः**। प्रीतिः। उत्कर्षः। उद्धवः।

कृपाऽनुकम्पानुक्रोशोऽहन्तोक्तिः करुणा दया।
शेमुषी धिषणा प्रज्ञा मनीषा धीस्तथाऽशयः॥११०॥

अर्थ में है। रुधादि गण में दैन्य अर्थ में है जिससे खेद करना खेद है।

२. द्वेषः (पुं०)—अदादि गण में अप्रीति अर्थ में द्विष् धातु है। द्वेष करना द्वेष है।

३. अमर्षः (पुं०)—चुरादि गण में मृष धातु तितिक्षा-सहनशीलता अर्थ में है। सहनशील नहीं होता है इसलिए अमर्ष कहा है।

४. रुट् (स्त्री०)—रोष करना रुट् है।

५. कोपः (पुं०)—कोप करना कोप है।

६. क्रोधः (पुं०)—क्रोध करना क्रोध है।

७. मन्युः (पुं०)—त्याज्य रूप से जानता है इसलिए मन्यु है।

हर्ष के सात नाम हैं।

१. हर्षः (पुं०)—हर्ष करना हर्ष है। प्रहर्ष शब्द भी है।

२. प्रमोदः (पुं०)—प्रमोद करना प्रमोद है।

३. प्रमदः (पुं०)—प्रमद होना, हर्ष होना प्रमद है।

४. मुद् (स्त्री०)—मोद-आनन्द होना मुद् है।

५. तोषः (पुं०)–तोषण करना, तुष्ट होना तोष है।

६. आनन्दः (पुं०)—आनन्द होना आनन्द है।

७. उत्सवः (पुं०)—उत्सव होना उत्सव है।

प्रीति, उत्कर्ष, उद्धव शब्द भी हर्ष अर्थ में हैं।

दया और बुद्धि के नाम

श्लोकार्थ—कृपा, अनुकम्पा अनुक्रोश, अहन्तोक्ति, करुणा, दया ये दया के नाम हैं। शेमुषी,

षड् दयायाम्। क्रप कृपायाम्। क्रपणं **कृपा**। ''षानुबन्धभिदादिभ्योऽङ्'' इत्यङ्। ''क्रपेः सम्प्रसारणम्'' इति परसूत्रेणाङ् सम्प्रसारणं च। स्वमते क्रप कृपायाम् इति ज्ञापकात्। सम्प्रसारणम्। ''स्त्रियामादा।'' अनुकम्पन**मनुकम्पा**। अनुक्रोशन्त्यनेन **अनुक्रोशः**। पुंसि। न हन्तोक्तिः **अहन्तोक्तिः**। करोति विषादं चित्तं किरति वा **करुणा**। उणादौ डुकृञ् करणे। क्रियते करुणा। ''ॠकृतृवृञ्दमिदार्यर्जिभ्य उनः'' एभ्य उनः प्रत्ययो भवति। दयनं **दया**। दय दानगतिहिंसादानेषु। भिदाद्यङ्।

शेमुषी धिषणा प्रज्ञा मनीषा धीस्तथाऽशयः॥११०॥

षड् बुद्धौ। शे इत्यव्ययम्। मोहः। तं मुष्णाति शमयति इति **शेमुषी**। धृष्णेत्यनया **धिषणा**। प्रज्ञानं **प्रज्ञा**। मनुते जानात्यनया **मनीषा**। मनस ईषा मनीषा वा। ''हल लाङ्गलयोरीषा मनसश्च'' इत्यनेन अन्त्यस्वरादेर्लोपः। अत्र सलोपश्च। चकाराधिकाराल्लोकोपचाराद्वा सलोपः। स्मृ ध्यै चिन्तायाम्। ध्यानं

धिषणा, प्रज्ञा, मनीषा, धी तथा आशय ये बुद्धि के नाम हैं॥११०॥

भाष्यार्थ—दया के छह नाम हैं।

१. **कृपा** (स्त्री०)—कृपा करना कृपा है।

२. **अनुकम्पा** (स्त्री०)—अनुकम्पा करना अनुकम्पा है।

३. **अनुक्रोशः** (पुं०)—इससे दया करते हैं इसलिए अनुक्रोश है।

४. **अहन्तोक्तिः** (स्त्री०)—जहाँ हन्तोक्ति न हो वह अहन्तोक्ति है अर्थात् हन्त, खेद है ऐसा न कहने पड़े वहाँ दया है।

५. **करुणा** (स्त्री०)—चित्त में विषाद करती है अथवा चित्त के विषाद को बिखेर देती है, हटा देती है इसलिए करुणा है। उणादि में—किसी पर की जाती है वह करुणा है।

६. **दया** (स्त्री०)—दया करना, दान करना दया है।

बुद्धि के छह नाम हैं।

१. **शेमुषी** (स्त्री०)—'शे' यह अव्यय है जो कि मोह अर्थ में है। इस मोह को शमन करती है इसलिए शेमुषी है।

२. **धिषणा** (स्त्री०)—इससे बोलने लगता है इसलिए धिषणा कहते हैं। धिष् धातु शब्द करने अर्थ में है।

३. **प्रज्ञा** (स्त्री०)—प्रज्ञा-प्रकृष्ट जानना प्रज्ञा है अथवा सम्पादक के अनुसार—इससे प्रकृष्ट रूप से ज्ञान किया जाता है इसलिए प्रज्ञा है।

४. **मनीषा** (स्त्री०)—इससे जानता है इसलिए मनीषा है अथवा मन को जोतने का हल है या विकार दूर करके ज्ञान बढ़ाया जाता है इसलिए मनीषा कहा जाता है। ईषा-हल को कहते हैं।

धी:। सम्पदादित्वाद्भावे क्विप्। ''ध्याप्योः सम्प्रसारणम्'' अनेनैव सम्प्रसारणं दीर्घत्वं च। प्र० सिः। ''रेफसोर्विसर्जनीयः''। आशेते तिष्ठति सर्वमत्र**आशयः**। तथा-प्रेक्षा। प्रतिभा बुद्धिः। मतिः। मेधा। संख्या। संवित्तिः। उपलब्धिः।

प्राज्ञमेधाविनौ विद्वानभिरूपो विचक्षणः।
पण्डितः सूरिराचार्यो वाग्मी नैयायिकः स्मृतः ॥१११॥

दश विदुषि। प्रजानातीति प्रज्ञः। प्रज्ञादित्वादण् **प्राज्ञः**। मेधास्त्यस्य **मेधावी**। मायामेधाप्रजो विन्। वाधिकारात्सर्वे एवैते विभाषया विभाषिताः। शेषेभ्यो मतुरिष्यते। मतिमान्। बुद्धिमान्। विद ज्ञाने। विद। वेत्ति जानातीति **विद्वान्**। वर्तमाने श०। शतृङ्। ''अन्वि०'' अदादि। ''वेत्तेः शतुर्वसुः''। शतृङ् स्थाने वसुः। तदादेशास्तद्वद्भवन्ति इति वचनात्। वसोः शतृङ्वद्भावेन सार्वधातुकत्वात् ''अर्त्तीण् घयेसैकस्वरातामिड्वसौ'' अनेनैकस्वरत्वात्प्राप्त इड् न भवति। विद्वन् संजातम्। ''सिः। सान्तमहतोर्नोपधायाः'' दीर्घः। विदुषोऽपि। अभिगतं रूपं येन**अभिरूपः**। रूपं विद्या।

''कोकिलानां स्वरो रूपं नारीरूपं पतिव्रता।
विद्या रूपं कुरूपाणां क्षमा रूपं तपस्विनाम्।''

चक्ष धातुर्विपूर्वः। विविधं चष्टे **विचक्षणः**। नन्दादेर्युः। योरनः। रषृ० णत्वम्। विचक्षणो विद्वान्

---

५. **धीः** (स्त्री०)—चिन्तन करना, ध्यान करना इससे होता है इसलिए धी है।

६. **आशयः** (पुं०)—इसमें सब कुछ ठहरता है, रहता है इसलिए आशय है।

प्रेक्षा, प्रतिभा आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

पण्डित के नाम

श्लोकार्थ—प्राज्ञ, मेधावी, विद्वान्, अभिरूप, विचक्षण, पण्डित, सूरि, आचार्य, वाग्मी, नैयायिक ये पण्डित के नाम हैं ॥१११॥

भाष्यार्थ—विद्वान् के दश नाम हैं।

१. **प्राज्ञः** (पुं०)—प्रकृष्ट रूप से जानता है इसलिए प्रज्ञ है। प्रज्ञ को ही प्राज्ञ कहते हैं।

२. **मेधाविन्** (पुं०)—इसके पास मेधा होती है इसलिए मेधावी है।

३. **विद्वान्** (पुं०)—जानता है इसलिए विद्वान् है।

४. **अभिरूपः** (पुं०)—रूप विद्या को कहते हैं। जिसने रूप को प्राप्त कर लिया है वह अभिरूप है। कहा भी है—

''कोयलों का रूप उनका मधुर स्वर है, पतिव्रता होना ही नारी का रूप है, कुरूपों का रूप विद्या है और तपस्वियों का रूप क्षमा है।''

५. **विचक्षणः** (पुं०)—अनेक प्रकार का कथन करता है या विविध व्याख्यान करता है, वह विचक्षण है।

इत्यनेन विचक्षण इति निपातः। निपातस्य फलं ख्यादेशो न भवति। पण्डा बुद्धिः। पण्डा संजाताऽस्येति **पण्डितः**। ''तारकितादिदर्शनात्संजातेऽर्थे इतच्।'' ''इवर्णावर्ण॰'' आकारलोपः। सिः। रेफः। षूङ् प्राणिगर्भविमोचने। सूते बुद्धिं **सूरिः**।''भूस्वदिभ्यः क्रिः'' एभ्यः क्रिप्रत्ययो भवति। को यण्वदर्थः। आचर्यते **आचार्यः**। ''चरेराङि चागुरौ''। तथा चोक्तम्- इन्द्रनन्दिनीतिशास्त्रे-

''पञ्चाचाररतो नित्यं मूलाचारविदग्रणीः।
चतुर्वर्णस्य सङ्घस्य यः स आचार्य इष्यते॥''

प्रशस्ता वागस्त्यस्य **वाग्मी**। न्याये विचारे नियुक्तो **नैयायिकः**। धीरः। लब्धवर्णः। विपश्चित्। वृद्धः। आप्तरूपः। सन्। मनीषी। ज्ञः। दोषज्ञः। कोविदः। प्रबुद्धः। सुधीः। कृती। कृष्टिः। कविः। व्यक्तः। विशारदः। संख्यावान्। मतिमान्।

पारिषद्यो बुधः सभ्यः सदः संसत्सभोचितः।
परिषत्सभाऽस्थानपती राजसूयो नृपक्रतुः ॥११२॥

षट् सभापुरुषे। परिषदि सभायां भवः **पारिषद्यः**। यण्। बुध अवगमने। बोधतीति **बुधः**। सभायां साधुः **सभ्यः**। कुशलो योग्यो हितश्च साधुरुच्यते। सदसि उचितो योग्यः **सदउचितः**। **संसदुचितः**,

---

६. पण्डितः (पुं॰)—पण्डा—बुद्धि को कहते हैं। पण्डा इसके उत्पन्न हो जाती है इसलिए पण्डित है।

७. सूरिः (पुं॰)—बुद्धि को उत्पन्न करता है इसलिए सूरि है।

८. आचार्यः (पुं॰)—दूसरे जिनका आचरण करते हैं इसलिए आचार्य हैं। इन्द्रनन्दी ने नीतिशास्त्र में कहा है–''जो नित्य पञ्चाचार में रत हैं, मूलाचार को जानने वाले हैं, संघ में अग्रणी हैं वह चतुर्वर्ण संघ के आचार्य कहे जाते हैं।''

९. वाग्मिन् (पुं॰)—इनकी वाणी प्रशस्त होती है इसलिए वाग्मी हैं।

१०. नैयायिकः (पुं॰)—न्याय अर्थात् विचार। उसमें जो नियुक्त है वह नैयायिक है।

धीर आदि अन्य शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

सभासद, सभा, राजा और राजयज्ञ के नाम

श्लोकार्थ—पारिषद्य, बुध, सभ्य तथा सदस् और संसत् और सभा में उचित जोड़ने से सभासद के नाम होते हैं। परिषत्, सभा, आस्थान ये सभा के नाम हैं। सभा के नामों में पति जोड़ने से राजा के नाम होते हैं। राजसूय, नृपक्रतु ये राजयज्ञ के नाम हैं ॥११२॥

भाष्यार्थ—सभापुरुष के छह नाम हैं।

१. पारिषद्यः (पुं॰)—परिषद् अर्थात् सभा में होता है इसलिए पारिषद्य है।

२. बुधः (पुं॰)—जानता है इसलिए बुध है।

३. सभ्यः (पुं॰)—सभा में अच्छा माना जाता है इसलिए सभ्य है। कुशल, योग्य और हित को साधु कहते हैं अर्थात् जो सभा में कुशल हो, योग्य हो और हितकर हो वह सभ्य है।

४. सदउचितः (पुं॰)—सभा के योग्य है इसलिए सदउचित है।

सभोचितः। सभासद्। सभास्तारः। सामाजिकः।

परिषत्सभाऽस्थानपती-

त्रयः सभायाम्। परिषीदन्त्यस्यां **परिषद्**। सह भान्त्यस्यां **सभा**। आसमन्तात्स्थीयतेऽस्मिन् **आस्थानम्**। (अधिपति राजा) पतिः- आस्थानं सभा इत्यादिपर्यायनामतोऽधिपतिः पतिरित्यादिपर्याय शब्देषु सत्सु राज्ञो नामानि भवन्ति। परिषदधिपतिः। परिषत्पतिः। सभाधिपतिः। सभापतिः। आस्थानाधिपतिः। आस्थानपतिः।

राजसूयो नृपक्रतुः ॥११२॥

मण्डलेश्वरप्रजायां (प्रयाजे) द्वौ। षुञ् अभिषवे। षु। ''धात्वा०'' सः। राजन्पूर्वः राज्ञा सोतव्यो राज्ञा सूयते वा यस्मिन्निति **राजसूयः**। ''राजसूयश्च''। घ्यण्प्रत्ययान्तो निपातः। नृपाणां राज्ञां क्रतुः **नृपक्रतुः**। तथा च स्मृतौ-

''गोसवे सुरभिं हन्याद्राजसूये तु भूभुजम्।
अश्वमेघे हयं हन्यत् पौण्डरीके च दन्तिनम्॥''

विष्टरं मल्लिकापीठमासन्दीमासनं विदुः।
विष्टपं भुवनं लोको जगत्-तस्य पतिर्जिनः ॥११३॥

पञ्चासने। स्तृञ आच्छादने। विपूर्वः। विस्तरणं **विष्टरः**। ''स्वर वृदृगमिग्रहामल्।'' अल्।

---

५. **संसदुचितः** (पुं०)—अर्थ वही। ६. **सभोचितः** (पुं०)—अर्थ वही।

सभासद्, सभास्तार, सामाजिक ये नाम भी हैं।

सभा के तीन नाम हैं।

१. **परिषद्** (स्त्री०)—इसमें चारों तरफ लोग बैठते हैं इसलिए परिषद् है।

२. **सभा** (स्त्री०)—इसमें सभी साथ-साथ सुशोभित होते हैं इसलिए सभा है।

३. **आस्थानम्** (नपुं०)—इसमें चारों ओर बैठा जाता है इसलिए आस्थान है।

इन सभा के पर्यायवाची नामों में पति, अधिपति आदि पर्यायवाची नाम जोड़ने पर राजा के नाम होते हैं। देखें भाष्य।

राजयज्ञ के दो नाम हैं।

१. **राजसूयः** (पुं०)—इसमें राजा का अभिषेक होता है अथवा राजा इसे करता है इसलिए राजसूय है।

२. **नृपक्रतुः** (पुं०)—राजाओं का यज्ञ है इसलिए नृपक्रतु है। मनुस्मृति में कहा है-''गोसव यज्ञ में गायों को, राजसूय में राजाओं को, अश्वमेघ में घोड़ों को और पौण्डरीक में हाथियों को वध करे।''

आसन, संसार और जिन भगवान के नाम

श्लोकार्थ—विष्टर, मल्लिका, पीठ, आसन्दी, आसन ये बैठने के आसन के नाम हैं। विष्टप, भुवन, लोक, जगत् ये संसार के नाम हैं। संसार के नामों में 'पति' वाची शब्द जोड़ने से जिन—जिनेन्द्र भगवान् के नाम होते हैं ॥११३॥

नाम्यन्तगुणः। ''वौस्तृणातेः''। संज्ञायां सस्य षत्वम्। ''तवर्गस्य षटवर्गाट्टवर्गः।'' मल्ल्यते धार्यते **मल्लिका**। पेठतीति **पीठम्**। पृषोदरादित्वाद्दीर्घः। आ समन्तात्सीदति तिष्ठत्यस्या**मासन्दी**। आस्यते उपविश्यतेऽस्मिन्न**ासनम्**। ''कृत्ययुटोऽन्यत्रापि च'' युट्। **विदुः** कथयन्ति।

विष्टपं भुवनं लोको जगत्–

चत्वारो जगति। विष्टपन्त्यत्र **विष्टपम्।** भूतानि भवन्त्यस्माद्भुवनम्। लोक्यते **लोकः**। गच्छतीत्येवंशीलं **जगत्**। ''द्युतिगमोर्द्वे च'' क्विप्। गमो द्विर्वचनम्। अभ्यासमकारलोपः। ''कवर्गस्य चवर्गः'' गस्य जः। ज गम् जातम्। ''पञ्चमो॰''। दीर्घः। ''यममनतनगमां क्वौ'' पञ्चमलोपः। आत् अत्। ''धातोस्तोऽन्तः पानुबन्धे'' तोऽन्तः। वेर्लोपः। सिः। नपुंसकम्।

तस्य पतिर्जिनः ॥११३॥

तस्य भुवनस्य पतिर्जिनः कथ्यते। अनेकभवगहनव्यसनप्रापणहेतून् कर्मारातीन् जयतीति **जिनः**। ''इण्नशजिकृषिभ्यो नक्''। विष्टपपतिः। लोकपतिः। जगत्पतिः। इत्यादीनि जिनस्य पर्यायनामानिज्ञातव्यानि।

वर्षीयान् वृषभो ज्यायान् पुरुराद्यः प्रजापतिः।
ऐक्ष्वाकुः (कः) काश्यपो ब्रह्मा गौतमो नाभिजोऽग्रजः॥ ११४॥

भाष्यार्थ—आसन के पाँच नाम हैं।

१. विष्टरः (पुं॰)—विशेष रूप बिछा कर बैठा जाता है इसलिए विष्टर है।

२. मल्लिका (स्त्री॰)—इसको धारण-ग्रहण किया जाता है इसलिए मल्लिका है।

३. पीठम् (नपुं॰)—इस पर बैठते हैं इसलिए पीठ है।

४. आसन्दी (स्त्री॰)—इस पर चारों ओर बैठते हैं इसलिए आसन्दी है।

५. आसनम् (नपुं॰)—इस पर बैठा जाता है इसलिए आसन है।

संसार के चार नाम हैं।

१. विष्टपम् (नपुं॰)—इसमें जीवों को परस्पर प्रतिघात होता है इसलिए विष्टप है।

२. भुवनम् (नपुं॰)—इससे जीवों का होना बना रहता है इसलिए भुवन है अर्थात् जीवों से संसार रहित नहीं होता है।

३. लोकः (पुं॰)—इसमें जीव आदि द्रव्य देखें जाते हैं इसलिए लोक है।

४. जगत् (नपुं॰)—चलता है, निरन्तर परिणमित होता रहता है इसलिए जगत् है।

उस संसार के पति जिन भगवान् हैं।

जिनः (पुं॰)—अनेक संसाररूपी गहन कष्ट को प्राप्त कराने के कारणभूत कर्म शत्रुओं को जीत लेते हैं इसलिए जिन हैं। विष्टपपति आदि जिन के पर्यायवाची नाम हैं। देखें भाष्य।

ऋषभ भगवान् के नाम

श्लोकार्थ—वर्षीयस्, वृषभ, ज्यायस्, पुरु, आद्य, प्रजापति, ऐक्ष्वाकु, काश्यप, ब्रह्मा, गौतम,

द्वादश वृषभे। अतिशयेन वृद्धो **वर्षीयान्**। ''प्रियस्थिरस्फिरोरुबहुलगुरुवृद्धतृप्रदीर्घवृन्दारकाणां प्रस्थस्फबर्बंहिगर्वर्षित्रब्दा-घिवृन्दाः''। वृषेण अहिंसालक्षणोपेतधर्मेण भातीति **वृषभः**। ''ऋषिवृषिभ्यां यण्वत्''। आभ्यामभः प्रत्ययो भवति स च यण्वत्। अयमेषां मध्ये प्रकृष्टो वृद्धः प्रशस्यो वा **ज्यायान्**। ''वृद्धस्य च ज्यः'' वृद्धशब्दस्य ज्यादेशो भवति। पृ पालनपूरणयोः। पृणाति पालयतीति **पुरुः**। ''इषिधृषिभिदिगृधिमृदिपृभ्य कुः'' एभ्यः कुप्रत्ययो भवति। अस्मिन्नहनि **अद्य**। इदमोद्भावो द्यश्च परविधिः ''सद्योऽद्या निपात्यन्ते'' इति वचनात्। (आदौ भव आद्यः) प्रजानाम् इन्द्रधरणेन्द्र-चक्रवर्त्यादीनां पतिः स्वामी **प्रजापतिः**। इषु इच्छायाम्। वाञ्छयते लोकैः **ऐक्ष्वाकः**। तथा चार्षे महापुराणे-

''अङ्कनाच्च तदेक्षूणां रससंग्रहणे नृणाम्।
इक्ष्वाकुरित्यभूद्देवो जगतामभिसम्मतः॥''

काश्यं क्षत्रियतेजः पातीति **काश्यपः**। तथा च महापुराणे-

''काश्यमित्युच्यते तेजः काश्यपस्तस्य पालनात्।''

बृंहतीति **ब्रह्मा**।

''आत्मनि मोक्षे वृत्तौ ताते च भरतराजस्य।
ब्रह्मेति गीः प्रगीता न चापरो विद्यते ब्रह्मा॥''

नाभिज, अग्रज ये आदिनाथ भगवान् के नाम हैं ॥११४॥

भाष्यार्थ—वृषभ भगवान् के बारह नाम हैं।

१. **वर्षीयस्** (पुं० एकव० में वर्षीयान्)—अत्यधिक पुरातन है इसलिए वर्षीयस् हैं।

२. **वृषभः** (पुं०)—वृष-धर्म। अहिंसा लक्षण सहित धर्म से जो सुशोभित होते हैं इसलिए वृषभ हैं।

३. **ज्यायस्** (पुं० एकव० में ज्यायन्)—जो सबमें बड़े हैं, वृद्ध (पुराने) हैं अथवा प्रशंसनीय हैं इसलिए ज्यायस् हैं।

४. **पुरुः** (पुं०)—पालन करते हैं इसलिए पुरु हैं।

५. **आद्यः** (पुं०)—आदि काल में हुए हैं इसलिए आद्य हैं।

६. **प्रजापतिः** (पुं०)—इन्द्र, धरणेन्द्र, चक्रवर्ती आदि प्रजा के स्वामी हैं इसलिए प्रजापति हैं।

७. **ऐक्ष्वाकः** (पुं०)—लोक-संसार इन्हें चाहता है इसलिए ऐक्ष्वाक हैं। महापुराण में कहा है– ''रस ग्रहण करने के लिए तभी वृषभदेव ने मनुष्यों को इक्षु-गन्ना को पेलना बताया इसलिए संसारी जीवों को मान्य आप इक्ष्वाकु हुए।''

८. **काश्यपः** (पुं०)—काश्य-क्षत्रियों का तेज, प्रताप कहलाता है। उसकी रक्षा करते हैं इसलिए काश्यप हैं। महापुराण में कहा है–''काश्य तेज को कही जाता है, इसकी रक्षा करने से आप काश्यप हैं।''

९. **ब्रह्मन्** (पुं०)—वृद्धि को प्राप्त होते हैं इसलिए ब्रह्मा हैं। कहा भी है–''आत्मा, मोक्ष, ज्ञान, चारित्र और भरतराज के पिता को ब्रह्मा कहा गया है और कोई दूसरा ब्रह्मा नहीं है।''

अतः परो ब्रह्मा नास्ति। गौतमो गोत्रोऽवताराद् **गौतमः**। आर्षे महापुराणे–

"गौः स्वर्गः स प्रकृष्टात्मा गोतमोऽभिमतः सताम्।
स तस्मादागतो देवो गौतमश्रुतिमन्वभूत्॥"

नाभेर्जातो **नाभिजः**। अग्रे जातोऽ**ग्रजः**। अदृष्टत्वात्।

सन्मतिर्महतिर्वीरोमहावीरोऽन्त्यकाश्यपः।
नाथान्वयो वर्धमानो यत्तीर्थमिह साम्प्रतम् ॥११५॥

सती समीचीना मतिर्यस्य स **सन्मतिः**। महापुराणे–

"तत्सन्देहे गते ताभ्यां चरणाभ्यां च भक्तितः।
अस्तावि सन्मतिर्देवो भावीति समुदाहृतः॥"

(मह्यते पूज्यते इति महतिः)। महती पूजा यस्य स **महतिः**। विशिष्टाम् इन्द्राद्यसम्भाविनीम् ईम् अन्तरङ्गां समवसरणानन्तचतुष्टयलक्षणां लक्ष्मीं रात्यादत्ते इति **वीरः**। वीर इति नाम कस्माज्जातम्? जन्माभिषेके चालघुशरीरदर्शनादाशङ्कितवृत्तेरिन्द्रस्य सामर्थ्यख्यापनार्थे पादाङ्गुष्ठेन मेरुसंचालनादिन्द्रेण वीरनाम कृतम्। महाँश्चासौ वीरः **महावीरः**। तथा च बृहत्प्रतिक्रमणभाष्ये–

---

१०. गौतमः (पुं०)—गौतम गोत्र का अवतरण आपसे ही हुआ है इसलिए आप ही गौतम हैं। महापुराण में कहा है–"गौ स्वर्ग कहलाता है। उसमें जो प्रकृष्ट आत्मा है उसे सज्जनों ने गौतम कहा है। भगवान् उत्कृष्ट स्वर्ग सर्वार्थसिद्धि से आए इसलिए गौतम यह नाम पड़ गया।"

११. नाभिजः (पुं०)—नाभिराय से उत्पन्न हुए इसलिए नाभिज हैं।

१२. अग्रजः (पुं०)—सर्वप्रथम हुए हैं इसलिए अग्रज हैं। अदृष्ट होने से भी अग्रज हैं।

भगवान् महावीर के नाम

श्लोकार्थ—सन्मति, महति, वीर, महावीर, अन्त्यकाश्यप, नाथान्वय, वर्धमान यह महावीर के नाम हैं, जिनका तीर्थ वर्तमान में इस समय चल रहा है ॥११५॥

भाष्यार्थ—१. सन्मतिः (पुं०)—जिनकी मति समीचीन है इसलिए वह सन्मति हैं। महापुराण में कहा है–"दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों को सन्देह होने पर बालक महावीर को देखने मात्र से उनकी शंका दूर हो गई इसलिए आगे इनका नाम 'सन्मति' होगा ऐसा कहा।"

२. महतिः (पुं०)—पूजे जाते हैं इसलिए महति हैं अथवा बड़ी महान् पूजा जिनकी होती है इसलिए वह महति है।

३. वीरः (पुं०)—इन्द्र आदि के लिए असम्भव ऐसी विशिष्ट समवसरण लक्ष्मी और अन्तरङ्ग में अनन्तचतुष्टय लक्ष्मी को धारण करते हैं इसलिए वीर हैं। वीर, यह नाम कैसे पड़ा ? जन्माभिषेक के समय भगवान् का छोटा शरीर देखने से इन्द्र को आशंका हो गई उसी समय अपनी सामर्थ्य दिखाने के लिए पैर के अंगूठे से मेरु को चलायमान कर दिया। जिससे इन्द्र ने उनका नाम वीर रख दिया।

४. महावीरः (पुं०)—महान् ही वह वीर हैं इसलिए महावीर हैं। बृहत्प्रतिक्रमण भाष्य में कहा है–

''कुमारकाले आमलकीक्रीडायां क्रीडतः सङ्गमदेवेन विमानस्खलनाद्भगवत्पो(च्चो)दनार्थं महाफटाटोपोपेतं भयानकं सर्परूपं विकृत्य वृक्षो वेष्टितः। भगवाँस्तस्मान्मस्तकादिपादन्यासं कृत्वा वृक्षादुत्तीर्णः। ततस्तेन महावीर इति नाम कृतम्।'' अन्त्यं काश्यं तेजः पातीति **अन्त्यकाश्यपः**। ततः परस्तीर्थकरो नास्ति। नाथोऽन्वयो यस्य स **नाथान्वयः**। तथा च–

''चत्वारः पुरुवंशजा जिनवृषा धर्मादयस्ते पुन–
र्नेमिश्रीमुनिसुव्रतौ हरिकुले वीरोऽथ नाथान्वये॥
शेषाः सप्तदशाधिका जिनवरा इक्ष्वाकुवंशोद्भवाः
प्रोद्यन्मोहविनाशनैकनिपुणाः सङ्घस्य सन्तु श्रियै॥''

अव समन्ताद् ऋद्धं परमातिशयप्राप्तं मानं केवलज्ञानं यस्यासौ वर्धमानः।

''वष्टिभागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः ।
आपं चैव हलन्तानां यथा वाचा निशा दिशा॥''

इत्यवशब्दस्याकारलोपः। तथा ऋषिश्च प्रत्यक्षवेदी- भगवतो हि गर्भावतारादौ पित्रेन्द्रादिविनिर्मितां विशिष्टां पूजां रत्नवृष्टिं स्वस्य च ऋद्धिवृद्ध्यादिकं दृष्ट्वा वर्धमान इति नाम कृतम्। **इह** अस्मिन् पञ्चमकाले

''कुमार अवस्था में आमलकी वृक्ष पर क्रीड़ा में खेलते हुए वीर से संगम देव का विमान रुक गया। जिससे उन्हें समझाने के लिए विशाल फणों को धारण करने वाले एक भयानक सर्प रूप की विक्रिया करके उस वृक्ष को घेर लिया। भगवान् वीर उसी के मस्तक पर पैर रखकर वृक्ष से उतर आए। जिससे देव ने उनका नाम महावीर रख दिया।''

५. अन्त्यकाश्यपः (पुं॰)—अन्त में तेज प्रतापत्व गुण को धारण करने वाले हैं इसलिए अन्त्यकाश्यप हैं क्योंकि आपसे आगे फिर कोई तीर्थंकर नहीं हुए।

६. नाथान्वयः (पुं॰)—जिनका नाथ वंश है इसलिए वह नाथान्वय हैं। कहा भी है–

''धर्मनाथ आदि चार जिनेन्द्र भगवान् पुरु (कुरु) वंश के हैं। नेमिनाथ और मुनिसुव्रत भगवान् हरिवंश के हैं तथा वीर भगवान् नाथ वंश के हैं, शेष सत्रह जिनवर इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न हुए हैं। बढ़े हुए मोह का विनाश करने में निपुण सभी जिनेन्द्र चतुर्विध संघ के कल्याण के लिए होवें।''

विशेष—निर्वाण भक्ति में—शान्तिकुन्थ्वरकौरव्या यादवौ नेमि-सुव्रतौ। उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इक्ष्वाकुवंशजाः॥

अर्थात्—शान्ति, कुन्थु, अरनाथ कुरुवंश के, नेमि और मुनिसुव्रत यादव वंश के और पार्श्वनाथ उग्र वंश के, वीर भगवान् नाथ वंश के तथा इक्ष्वाकु वंश के शेष तीर्थंकर हैं। ऐसा लिखा है।

७. वर्धमानः (पुं॰)—जिनका मान-केवलज्ञान चारों तरफ से परम अतिशय को प्राप्त हुआ है इसलिए वह वर्धमान हैं।

''भागुरि नामक आचार्य अव और अपि इन उपसर्गों में अकार का लोप करना चाहते हैं तथा हलन्त शब्दों में भी स्त्रीत्व बोधक आप् प्रत्यय का विधान अभीष्ट मानते हैं।

जैसे–अकार लोप होने पर अव+गाह=वगाहः। अपि+धानम्=पिधानम्

यस्य तीर्थे यत्तीर्थम् **साम्प्रप्तम्** अधुना वर्तते।

सर्वज्ञो वीतरागोऽर्हन् केवली धर्मचक्रभृत्।
तीर्थङ्करस्तीर्थकरस्तीर्थकृद्दिव्यवाक्पतिः ॥११६॥

नव जिनेन्द्रे। ज्ञा अवबोधने। ज्ञा। **सर्वज्ञः**। सर्वं जानाति वेत्तीति सर्वज्ञः। ''आतोऽनुपसर्गात्कः'' अप्रत्ययः। ''के यण्वच्च योक्तवर्जम्'' इति यण्वद्भावात् आलोपः। विशिष्टा ई तां प्रति इतः प्राप्तो रागो यस्य स **वीतरागः**। अरिहननाद्रजोहन (स्या) भावाच्च परिप्राप्तानन्तचतुष्टयस्वरूपः सन् इन्द्रनिर्मितामतिशयवतीं पूजामर्हतीति **अर्हन्**। घातिक्षयज-मनन्तज्ञानादिचतुष्टयं विभूत्पाद्यं यस्येति वाऽर्हन्। त्रिकालं केवलज्ञानमस्त्यस्य **केवली**। जिनधर्मचक्रं सहस्रारयुक्तं तीर्थकृदग्रे निराधारतया विहारकाले गगने गच्छत् सर्वजीवदयासूचकं रत्नमयमायुधविशेषं बिभर्ति तद्वाऽनुभवतीति **धर्मचक्रभृत्**। तीर्थं द्वादशाङ्गशास्त्रं करोतीति **तीर्थङ्करः**। तीर्थं

वाच्, निश्, दिश् आदि शब्दों टाप् करके वाचा, निशा, दिशा।

पाणिनि मत में विकल्प होगा।

यहाँ अव शब्द के अकार का लोप हुआ है। प्रत्यक्ष ज्ञानी को ऋषि कहते हैं। गर्भावतरण आदि होने पर पिता ने इन्द्र आदि के द्वारा की गई विशिष्ट रत्नवृष्टि, पूजा को देखकर और स्वयं की ऋद्धि वृद्धि आदि को देखकर वर्धमान नाम रख दिया था। इन्हीं वर्धमान का इस पञ्चम काल में अभी तीर्थ चल रहा है।

जिनेन्द्र भगवान् के नाम

श्लोकार्थ—सर्वज्ञ, वीतराग, अर्हन्, केवली, धर्मचक्रभृत्, तीर्थंकर, तीर्थकर, तीर्थकृत्, दिव्यवाक्पति ये जिनेन्द्र भगवान् के नाम हैं ॥११६॥

भाष्यार्थ—जिनेन्द्र भगवान् के नौ नाम हैं।

१. सर्वज्ञः (पुं०)—सब कुछ जानते हैं इसलिए सर्वज्ञ हैं।

२. वीतरागः (पुं०)—वि-विशिष्ट। इ-लक्ष्मी-अनन्त चतुष्टय। विशिष्ट अन्तरंग लक्ष्मी के प्रति जिनको राग हुआ है इसलिए वह वीतराग हैं।

३. अर्हन् (पुं०)—अरि-कर्मशत्रु। अरि का नाश करने से और आवरणीय कर्मरूपी रज का अभाव कर देने से जिन्हें अनन्तचतुष्टयस्वरूप की प्राप्ति हुई है और जो इन्द्र के द्वारा की गई अतिशयवान पूजा के योग्य होते हैं इसलिए अर्हन् हैं अथवा घातिकर्म के क्षय से उत्पन्न अनन्तज्ञान आदि चतुष्टयरूप विभूति जिनके पास है इसलिए अर्हन् हैं।

४. केवलिन् (पुं०)—तीन काल सम्बन्धी केवलज्ञान इनके पास है इसलिए केवली हैं।

५. धर्मचक्रभृत् (पुं०)—सहस्र आरों से युक्त जिन धर्मचक्र तीर्थंकर के आगे आकाश में निराधार होकर विहार काल में चलता हुआ सभी जीवों पर दया का सूचक होता है जो कि रत्नमय आयुध विशेष

करोतीति **तीर्थकृत्**। दिव्यवाचाम्पतिः **दिव्यवाक्पतिः**। तथा चोक्तम्ः-

''यत्सर्वात्महितं न वर्णसहित न स्पन्दितोष्ठद्वयं
नो वाञ्छाकलितं न दोषमलिनं न श्वासरुद्धक्रमम्।
शान्तामर्षविष समं पशुगणैः संकर्णितं कर्णिभि-
स्तद्वः सर्वविदः प्रनष्टविपदः पायादपूर्वं वचः॥''

चेलं निवसनं वासश्चीरमम्बरमंशुकम्।
वस्त्राद्यन्तः दिगाद्यादिसंज्ञितो वृषभेश्वरः॥११७॥

षड् वस्त्रे। चिल्यते वस्यतेऽनेन **चेलं** चैलं च। निवसत्यनेन **निवसनं**, विवसनं, वस्नं च। वस्यतेऽनेनाङ्ग **वासः**। सान्तम्। चिनोति उपार्जयति सारतां **चीरम्**, चीवरं च। अम्बते गच्छति शोभामनेन **अम्बरम्**। उभयम्। अंशून् कारयति **अंशुकम्**। क्लीबे कर्पटम्। आच्छादनम्। वस्त्रम्। सिचयः। पटः, पटम्, पटी।

होता है, उसे वह धारण करते हैं अथवा अनुभव करते हैं इसलिए धर्मचक्रभृत् हैं।

६. **तीर्थङ्करः** (पुं०)—तीर्थ—द्वादशांग शास्त्र। इस तीर्थ को जो करते हैं इसलिए तीर्थंकर हैं।

७. **तीर्थकरः** (पुं०)—तीर्थकर हैं, तीर्थ के कर्ता हैं।

८. **तीर्थकृत्** (पुं०)—तीर्थ के कर्ता हैं इसलिए तीर्थकृत् हैं।

९. **दिव्यवाक्यपतिः** (पुं०)—दिव्य वचनों के स्वामी हैं इसलिए दिव्यवाक्यपति हैं। कहा भी है–

''जो सभी की आत्मा का हित करने वाले हैं, वर्ण सहित नहीं हैं, जिसमें दोनों ओष्ठों का स्पन्दन नहीं होता है, इच्छा से रहित हैं, निर्दोष हैं, जिसमें श्वास का क्रम नहीं रुकता है, जिसमें क्रोध विष का अभाव है, जो पशु समूह में भी समान हैं, कर्ण इन्द्रिय वाले जिसे सुनते हैं ऐसे समस्त पदार्थों को जानने वाले, विपदा रहित भगवान् के अपूर्व वचन हम सभी की रक्षा करें।''

वस्त्र और दिगम्बर मुनि के नाम

श्लोकार्थ—चेल, निवसन, वास, चीर, अम्बर, अंशुक ये वस्त्र के नाम हैं। दिशा आदि नामों में वस्त्र आदि के नाम अन्त में जोड़ने से वृषभेश्वर के नाम होते हैं॥११७॥

भाष्यार्थ—वस्त्र के छह नाम हैं।

१. **चेलम्, चैलम्** (नपुं०)—इससे शरीर ढंकता है इसलिए चेल है।

२. **निवसनम्** (नपुं०)—इससे शरीर में रहना होता है इसलिए निवसन है। विवसन और वस्न नाम भी हैं।

३. **वासस्** (नपुं०)—इससे शरीर मौजूद रहता है इसलिए वासस् है।

४. **चीरम्, चीवरम्** (नपुं०)—सारपने को इकट्ठा करता है इसलिए चीर है।

५. **अम्बरम्** (नपुं०)—इससे शरीर शोभा पाता है इसलिए अम्बर है। अम्बरः (पुं०) शब्द भी है।

६. **अंशुकम्** (नपुं०)—चमक उत्पन्न कराता है इसलिए अंशुक है। कर्पट आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

पोतः। प्रावरः। प्रावारः। संव्यानं च।

वस्त्राद्यन्तः दिगाद्यादिसंज्ञितो वृषभेश्वरः॥११७॥

वस्त्रादयः वस्त्रपर्याया अन्ते दिगादयो दिक्पर्याया आदौ यस्य **तत्संज्ञितो वृषभेश्वरः**। वस्त्रादिकं नाम अन्ते दिगादिकं नाम आदौ यथा-दिक्चेलः। दिग्वासाः। दिग्वसनः। दिगम्बरः। दिगंशुकः। दिग्वस्त्रः। काष्ठाचेलः। काष्ठानिवसनः। काष्ठावासाः। काष्ठाचीरः। काष्ठाम्बरः। काष्ठांशुकः। काष्ठावस्त्रः। ककुप्चेलः। ककुन्निवसनः। ककुब्वासाः। ककुप्चीरः। ककुबम्बरः। ककुबंशुकः। ककुब्वस्त्रः। आशाचेलः। आशानिवसनः। आशावासाः। आशाचीरः। आशाम्बरः। आशांशुकः। आशावस्त्रः। दक्षकन्याचेलः। दक्षकन्यावासाः। दक्षकन्याचीरः। दक्षकन्याम्बरः। दक्षकन्यान्शुकः। दक्षकन्यावस्त्रः। हरिच्चेलः। हरिन्निवसनः। हरिद्वासाः। हरिच्चीरः। हरिदम्बरः। हरिदंशुकः। हरिद्वस्त्रः। इत्यादीनि वृषभेश्वरनामानि ज्ञातव्यानि।

कुङ्कुमं रुधिरं रक्तम्-कस्तूरी मृगनाभिजम्।
कर्पूरं घनसारं च हिमं सेवेत पुण्यवान्॥११८॥

त्रयः कुङ्कुमे। काम्यते जनैः **कुङ्कुमम्**। रुधिर् आवरणे। रुणाद्धि **रुधिरम्**। ''तिमिरुधिमन्दिधिरुचिशुषिभ्यः किरः''। रज्यतेऽनेन **रक्तम्**।

कस्तूरी मृगनाभिजम्।

द्वौ मृगमदे। के स्तूयते **कस्तूरी**। मृगनाभेर्जातम् **मृगनाभिजम्**। मृगनाभीजं च।

वस्त्र के पर्यायवाची शब्दों में दिशा के पर्यायवाची शब्द जोड़ने पर वृषभेश्वर के नाम होते हैं। दिक्चेलः आदि। देखें भाष्य।

केशर, कस्तूरी, कपूर के नाम

श्लोकार्थ—कुंकुम, रुधिर, रक्त, ये कुंकुम (केशर) के नाम हैं। कस्तूरी, मृगनाभिजा ये कस्तूरी के नाम हैं। कर्पूर, घनसार, हिम ये कपूर के नाम हैं। इन वस्तुओं का सेवन पुण्यवान करता है ॥११८॥

भाष्यार्थ—कुंकुम के तीन नाम हैं।

१. **कुङ्कुमम्** (नपुं०)—लोग इसकी कामना करते हैं इसलिए कुंकुम है।

२. **रुधिरम्** (नपुं०)—आवरण करता है, इसलिए रुधिर है।

३. **रक्तम्** (नपुं०)—इससे रंग जाता है इसलिए रक्त है।

मृगमद के दो नाम हैं

१. **कस्तूरी** (स्त्री०)—शिर पर प्रशस्त रूप से धारण करने से पूजा की जाती है इसलिए कस्तूरी है।

२. **मृगनाभिजम्** (नपुं०)—मृग की नाभि से उत्पन्न होती है इसलिए मृगनाभिज है। मृगनाभीज भी शब्द है।

कपूर के तीन नाम हैं।

१. **कर्पूरः** (पुं०)—उचित पदार्थ है इसलिए कर्पूर है।

''कहीं पर प्रवृत्ति होवे, कहीं पर प्रवृत्ति पर न होवे, कहीं पर विकल्प होवे और कहीं पर

कर्पूरं घनसारं च हिमं सेवेत पुण्यवान्॥११८॥

कृपू सामर्थ्ये। कल्पते **कर्पूरः**। कृपेरूरप्रत्ययः। ''नाम्यन्तगुणः।'' ''कृपे रोलः'' कथन्न, सत्यम्। उणादयो हि बहुलम्, तेन–

''क्वचित्प्रवृत्तिः क्व चिदप्रवृत्तिः क्व चिद्विभाषा क्व चिदन्यदेव।
विधेर्विधानं बहुधा समीक्ष्य चतुर्विधं बाहुलकं वदन्ति॥''

घनस्येव सारोऽस्य **घनसारः**। हि गतौ। हिनोतीति **हिमम्**। ''इन्धियुधिश्याधूहिभ्यो मक्''। **चन्द्रसंज्ञः**। सिताभ्रः। हिमवालुकः।

समालम्भोऽङ्गरागश्च प्रसाधनविलेपनम्।
भूषणाभरणं रुच्यम् माल्यं मालागुणस्रजः॥११९॥

भूषणाभरणं रुच्यम्–माल्यं मालागुणस्रजः ॥११९॥चत्वारो रागे। सम्यक् प्रकारेणालभ्यते **समालम्भः**। अङ्गस्य रागोऽ**ङ्गरागः**। प्रकर्षेण साध्यते मण्ड्यते **प्रसाधनम्**। विलिप्यते **विलेपनम्**।

भूषणाभरणं रुच्यम्–

अन्य रूप ही हो जावे, इस प्रकार विधि–नियम के विधान को बहुत प्रकार से देखकर 'बहुलता' को चार प्रकार कहते हैं।

२. घनसारः (पुं०)—श्वेत पदार्थ का ही सार है इसलिए घनसार है।

३. हिमम् (नपुं०)—शीघ्र ही उड़ने के स्वभाव वाला होने से चला जाता है, उड़ जाता है इसलिए हिम है। चन्द्रसंज्ञ आदि नाम भी हैं, देखें भाष्य।

लेप, गहने और माला के नाम

श्लोकार्थ—समालम्भ, अंगराग, प्रसाधन, विलेपन ये लेप के नाम हैं। भूषण, आभरण, रुच्य ये जेवर के नाम हैं। माल्य, माला, गुण और स्रज् माला के नाम हैं ॥११९॥

भाष्यार्थ—राग के चार नाम हैं।

१. समालम्भः (पुं०)—सम्यक् प्रकार से रंग जाता है, लिप जाता है इसलिए समालम्भ है।

२. अङ्गरागः (पुं०)—अंग, शरीर का राग है, लेप है इसलिए अंगराग है।

३. प्रसाधनम् (नपुं०)—प्रकर्ष रूप से इससे सजाया जाता है इसलिए प्रसाधन है।

४. विलेपनम् (नपुं०)—इसका विलेप किया जाता है इसलिए विलेपन है।

आभरण के तीन नाम हैं।

१. भूषणम् (नपुं०)—इससे अलंकार होता है, सजाया जाता है इसलिए भूषण है।

२. आभरणम् (नपुं०)—सब ओर से शोभा धारण करता है इसलिए आभरण है।

३. रुच्यम् (नपुं०)—शोभित होता है इसलिए रुच्य है। अलंकार आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

त्रय आभरणे। तसि भूष अलङ्कारे। भूष्यते मण्ड्यतेऽनेन **भूषणम्**। आ समन्ताद् भ्रियते शोभा धार्यतेऽनेन **आभरणम्**। रोचते **रुच्यम्**। अलङ्कारः। परिष्कारः। मण्डनम्।

माल्यं मालागुणस्त्रजः।

चत्वारः पुष्पमालायाम्। मालैव **माल्यम्**। चातुर्वर्णादित्वात्ष्यण्। माल्यते धार्यते **माला**। अथवा मां लान्ति पुष्पाण्यत्र माला। स्त्रियाम्। गुणतीति **गुणः**। ''नाम्युपधप्रीकृगृज्ञां कः''। सृज्यते **स्त्रक्**। ''ऋत्विग् दधृक्स्त्रगिति'' साधुः।

मेखला रसना काञ्ची हेमपर्यायसूत्रकम्।
श्रोणीबिम्बं कटीसूत्रं मानसूत्रमिवाहितम् ॥१२०॥

त्रय काञ्च्याम्। मेहनस्य खं तस्य मां लातीति निरुक्तिः। मिनोति प्रक्षिपति कामिचित्तमिति वा **मेखला**। रसति शब्दं करोतीति **रसना**। रस कान्तौ (शब्दे) सौत्रोऽयं धातुः। श्रोणी शोभां कचति (काञ्चते) बध्नातीति **काञ्चिः**। स्त्रियामीः। **काञ्ची**। तप्तकी। कलापः। कटिसूत्रम्। सारसनम्। शिञ्जिनी च।

हेमपर्यायसूत्रकम्।

हेमशब्दात्**सूत्र**शब्दे प्रयुज्यमाने मेखलापर्यायनामानि भवन्ति। हेमसूत्रम्। अष्टापदसूत्रम्। स्वर्णसूत्रम्।

पुष्प माला के चार नाम हैं।

१. **माल्यम्** (नपुं॰)—माला ही माल्य कहलाती है।

२. **माला** (स्त्री॰)—धारण की जाती है इसलिए माला है अथवा इसमें पुष्प लगते हैं इसलिए माला है।

३. **गुणः** (पुं॰)—गूँथ कर बनाई जाती है इसलिए गुण है।

४. **सृज्, सृक्** (स्त्री॰)—बनाई जाती है इसलिए सृज् है।

करधौनी एवं पट्टसूत्र के नाम

श्लोकार्थ—मेखला, रसना, काञ्ची तथा सुवर्ण के पर्यायवाची नाम में 'सूत्र' जोड़ने से करधनी के नाम बनते हैं। श्रोणीबिम्ब, कटीसूत्र, मानसूत्र की तरह कहा जाता है ॥१२०॥

भाष्यार्थ—काञ्ची के तीन नाम हैं।

१. **मेखला** (स्त्री॰)—अथवा कामियों के चित्त को विचलित करती है इसलिए मेखला है।

२. **रसना** (स्त्री॰)—शब्द करती है इसलिए रसना है।

३. **काञ्चिः, काञ्ची** (स्त्री॰)—शोभा को बाँधे रखती है इसलिए काञ्ची है।

तप्तकी आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

हेम के पर्यायवाची नामों में सूत्र शब्द जोड़ने से मेखला के नाम बन जाते हैं। हेमसूत्र इत्यादि। देखें भाष्य।

कनकसूत्रम्। अर्जुनसूत्रम्। काञ्चनसूत्रम्। हिरण्यसूत्रम्। जातरूपसूत्रम्। शातकुम्भसूत्रम्। हाटकसूत्रम्। कलधौतसूत्रम्। तपनीयसूत्रम्। कार्तस्वरसूत्रम्। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

श्रोणीबिम्बं कटीसूत्रं मानसूत्रमिवाहितम् ॥१२०॥

त्रयः पट्टसूत्रे। श्रोण्याः कट्याः बिम्बं प्रच्छादकं **श्रोणीबिम्बम्**। कटीं सूत्रयति वेष्टयतीति **कटीसूत्रम्**। मानं प्रमाणीभूतं सूत्रयतीति **मानसूत्रम्**। केचिद् रागसूत्रं पठन्ति पट्टसूत्रं च।

मदिरां मद्यमैरेयं शीधु कादम्बरीमिराम्।
प्रसन्नां वारुणीं हालां मधुवारां सुरां विदुः ॥१२१॥

एकादश मद्ये। माद्यत्यनया **मदिरा**। मधिष्टा च। मद्यतेऽनेन **मद्यम्**। ''यमिकदिगदां त्वनुपसर्गे''। इरायां ग्रामसीमायाम् साधु **ऐरेयम्**। शेरतेऽनेन शीधुः। ''शीङोधुक्''। शीषो(धो) रित्येके पठितत्वात् शीधुप्रकृतेः क इति व्याख्यत्। अथवा पीतेऽत्र जनः शेते **शीधुः**। उभयम्। तालव्यः। कुत्सितं नीलमम्बरं यस्य स कदम्बरो बलदेवः। तस्येयं प्रिया **कादम्बरी**। कुत्सितमम्बते यात्यनया वा कादम्बरी। एति परिभ्राम्यत्यनया **इरा**। आत्मा प्रसीदत्यनया **प्रसन्ना**। आदन्तः। वरुणास्यापत्यं **वारुणी**। जहति लज्जामनया **हाला**। स्त्रियाम्।

पट्टसूत्र के तीन नाम हैं।

१. **श्रोणीबिम्बम्** (नपुं०)—श्रोणी-कटि। कटि को ढाँकती है इसलिए श्रोणीबिम्ब है।

२. **कटीसूत्रम्** (नपुं०)—कटी-कमर को घेरती है इसलिए कटीसूत्र है।

३. **मानसूत्रम्** (नपुं०)—कमर की माप को प्रमाण करती है इसलिए मानसूत्र है। कुछ लोग 'रागसूत्र' पाठ भी पढ़ते हैं। 'पट्टसूत्र' भी पढ़ते हैं।

मदिरा के नाम

श्लोकार्थ—मदिरा, मद्य, मैरेय, शीधु, कादम्बरी, इरा, प्रसन्ना, वारुणी, हाला, मधुवारा, सुरा को शराब कहते हैं ॥१२१॥

भाष्यार्थ—मद्य के ग्यारह नाम हैं।

१. **मदिरा** (स्त्री०)—इससे उन्माद आता है या मदहोश करती है इसलिए मदिरा है। 'मदिष्टा' शब्द भी है।

२. **मद्यम्** (नपुं०)—इससे मद उत्पन्न होता है इसलिए मद्य है।

३. **मैरेयम्, ऐरेयम्** (नपुं०)—गाँव के लोगों में यह अच्छी मानी जाती है इसलिए ऐरेय है।

४. **शीधुः** (पुं, नपुं०)—इससे आदमी सोता है अथवा इसके पी लेने पर यहाँ मनुष्य सो जाता है इसलिए शीधु है। सम्पादक के अनुसार-अन्यत्र 'सीधुः' यह पाठ भी मिलता है।

५. **कादम्बरी** (स्त्री०)—जिसका वस्त्र कुत्सित-नीला होता है वह कदम्बर-बलदेव कहलाता है। बलदेव को यह प्रिय होती है इसलिए कादम्बरी कहलाती है अथवा इसके द्वारा मनुष्य कुत्सित-बुरे कार्य करता है इसलिए कादम्बरी है।

६. **इरा** (स्त्री०)—इसे पीकर आदमी चारों ओर घूमता है इसलिए इरा है।

मधु वारयतीति **मधुवारा**। सुवति सूते भवं **सुरा**। तथा द्विसन्धानभाष्ये–''**अतिप्रलापभावेन समुद्र-मथनान्निष्कासिता सुरैः सुरा।**''

''लक्ष्मीकौस्तुभपारिजातकसुरा धन्वन्तरिश्चन्द्रमा।
गावः कामदुघाः सुरेश्वरगजो रम्भादि देवाङ्गना॥
अश्वः सप्तमुखः सुधा हरिधनुः शङ्खो विषं चाम्बुधेः
रत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मङ्गलम्॥''

विदुः कथयन्ति। मधुः। आसवः। परिप्लुता। स्वादुरसा। शुण्डा। गन्धोत्तमा। माधवकः। माधवः। कल्यं, कल्या। कश्यं, कश्या। परिश्रुत्। तान्तं स्त्रियाम्। तालव्यदन्त्यः। हारहूरं कापिशायनम्। मृद्वीकम्। माध्वीकम्।

शुण्डासवः तद्विधायी शौण्डो गद्येत मद्यपः।
सक्तोऽक्षद्यूतपानेषु विचित्रा शब्दपद्धतिः॥१२२॥

मद्यविशेषौ द्वौ। सुन्व(न)न्ति तृप्तिं गच्छन्त्यनया शुण्य(न्य)ते पातुमभिगम्यते वा **शुण्डा**। स्त्रीन्रोः।

---

७. प्रसन्ना (स्त्री॰)—इससे आत्मा प्रसन्न होती है इसलिए प्रसन्ना है।

८. वारुणी (स्त्री॰)—वरुण की पुत्री है इसलिए वारुणी है।

९. हाला (स्त्री॰)—इससे आदमी लज्जा छोड़ देता है इसलिए हाला है।

१०. मधुवारा (स्त्री॰)—मधु-शहद, मिठाई को रोक देती है अर्थात् इसे पीने वाला मीठा नहीं खाता है इसलिए मधुवारा है।

११. सुरा (स्त्री॰)—उत्पन्न होती है इसलिए सुरा है।

द्विसन्धान भाष्य में भी कहा है–''देवों ने अति प्रलाप करने के भाव से समुद्र मंथन करके इस सुरा को निकाला है।''

''लक्ष्मी, कौस्तुभमणि, पारिजातक वृक्ष, सुरा, धन्वन्तरि (वैद्य का नाम), चन्द्रमा, कामधेनु गायें, इन्द्र का हाथी, रम्भा आदि देवांगना, सप्तमुखी घोड़ा, सुधा (अमृत), इन्द्र का धनुष, शंख और सागर का विष ये चौदह रत्न हैं जो समुद्र मंथन से प्राप्त हुए हैं, ये सभी को प्रतिदिन मङ्गल करें।''

मधुः आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

मद्यविशेष, मद्यप और जुआरी के नाम

श्लोकार्थ—शुण्डा, आसव ये विशेष प्रकार की मदिरा के नाम हैं। मदिरा बनाने वालों को शौण्ड, मद्यप कहते हैं। अक्ष (पासे), जुवा और मद्य में आसक्त को मद्यप कहते हैं। शब्द पद्धति विचित्र है जो सभी को मद्यप कहा है ॥१२२॥

भाष्यार्थ—विशेष मदिरा के दो नाम हैं।

१. शुण्डा (स्त्री॰)—इसे पीकर लोग तृप्ति पाते हैं अथवा इसे पीने के लिए लोग इच्छा करते हैं

शुण्डः। आसूते जनयति मदम् **आसवः**। पुंसि।

तद्विधायी शौण्डो गद्येत मद्यपः।

द्वौ कल्यपालके। शुण्डायां मद्ये भवः **शौण्डः**। मद्यं पिबति पाययतीति वा **मद्यपः**।

सक्तोऽक्षद्यूतपानेषु विचित्रा शब्दपद्धतिः॥१२२॥

त्रयो मद्यासक्ते। अक्षेषु द्यूक्षेषु द्यूतेषु सक्तः **अक्षसक्तः**। **द्यूतसक्तः**। पानेषु सक्तः **पानसक्तः**। विचित्रा नाना प्रकारा शब्दानां पद्धतिः श्रेणिः शब्दपद्धतिर्वर्तते। अक्षशौण्डः। अक्षधूर्तः। अक्षकितवः। ''सप्तमी शौण्डैः''। व्याल, अधि, पटु, पण्डित, कुशल, चपल, निपुण, स्वेत्यादि शौण्डादिराकृतिगणः।

सर्पिर्हैयङ्गवीनाज्यं दुग्धं क्षीराऽमृतं पयः।
उदश्विन्मथितं तक्रं कालशेयं पिबेद् गुरुः॥१२३॥

त्रयः **सर्पिषि**। सप्त धातवः सर्पन्त्यनेन सान्तं सपः। क्लीबे।

''अर्चिशुचिरुचिहुसृपिछादिछर्दिभ्य इसिः''। सृप्लृ गतौ। ह्यो गोदोहस्य विकारो **हैयङ्गवीनम्**। इदं

इसलिए शुण्डा है। यह पुं० लिंग में भी है–शुण्डः।

२. आसवः (पुं०)—मद उत्पन्न करता है इसलिए आसव है।

मदिरा बनाने वाले के दो नाम हैं।

१. शौण्डः (पुं०)—मदिरा पान की दुकान में रहने वाला शौण्ड है।

२. मद्यपः (पुं०)—मद्य पीता है अथवा जो पिलाता है वह मद्यप है।

मद्य में आसक्त पुरुष के तीन नाम हैं।

१. अक्षसक्तः (पुं०)—अक्ष अर्थात् पासे से खेलना। उसमें जो आसक्त है वह अक्षसक्त है।

२. द्यूतसक्तः (पुं०)—द्युत-जुआ। जुआ खेलने में जो लगा रहता है वह द्यूतसक्त है।

३. पानसक्तः (पुं०)—पीने में आसक्त है वह पानसक्त है।

शब्दों की श्रेणि, परम्परा अनेक प्रकार की है।

अक्षशौण्ड आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

घी, दूध, छाछ के नाम

श्लोकार्थ—सर्पि, हैयङ्गवीन, आज्य ये घी के नाम हैं। दुग्ध, क्षीर, अमृत, पय ये दूध के नाम हैं। उदश्वित्, मथित, तक्र और कालशेय ये चार छाछ के नाम हैं। इनका सेवन गुरु करता है ॥१२३॥

भाष्यार्थ—घृत के तीन नाम हैं।

१. सर्पिष् (नपुं०)—इससे सात धातुएँ अच्छी मात्रा में बनती हैं इसलिए सर्पिष् है।

२. हैयङ्गवीनम् (नपुं०)-घी कल निकले हुए गो दुग्ध से बनता है इसलिए वह हैयङ्गवीन है।

हैयङ्गवीनं ह्यस्तनदिनगोदोहे सञ्जातम्। उक्तं च–

''तत्तु हैयङ्गवीनं यद् ह्योगोदोहोद्भवं घृतम्।''

तथा चाशाधरमहाभिषेके–

''आयुः पीयूषकुण्डैः स्मृतिमणिखनिभिः शेमुषीबल्लिकन्दै-
र्मेघासस्याम्बुबाहैर्वरफलतरुभिर्नेत्ररत्नाधिदेवैः।
निष्टप्तैर्घ्राणपेयप्रचुरमधुरिमस्नेहधूमोऽपि येषां
कुर्मो हैयङ्गवीनैः स्नपनमपनय ध्वान्तभानोर्जिनस्य॥''

वीयते क्षिप्यते पित्तमने**नाज्यम्**। तथा क्षीरस्वामिनि–**''आ अञ्जनीयमाज्यम्''**। ''आङ्पूर्वादञ्जेः संज्ञायाम्'' क्यप्। घृतम्। आधारः। स्पृह्यम्। याज्यम्। हविः।

दुग्धं क्षीराऽमृतं पयः।

चत्वारो दुग्धे। दुह प्रपूरणे। दुह्यते **दुग्धम्**। घस्लृ अदने। सौत्रोऽयम्। घस्यते **क्षीरम्**। ''घसेः किच्च'' ईरमात्रः। गमहनजनेत्युपधालोपः। ''अघोषेषु प्रथमः'' कः। ''शासिवसिघसीनां च'' षत्वम्। कषसंयोगे क्षः। ''व्यञ्जनमस्व''। उणादौ क्षिणु क्षणु हिंसायाम्। क्षणोतीति **क्षीरम्**। ''क्षीरोशीरगभीरगम्भीरा'' एते ईरप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। न म्रियतेऽनेन **अमृतम्**। अजरामरकारित्वात्। पीयते वा सरसत्वात् **पयः**। असुन्। ऊधस्यम्। स्तन्यम्। पीयूषं, पयूषं च।

उदश्विन्मथितं तक्रं कालशेयं पिबेद् गुरुः॥

कहा भी है–''हैयङ्गवीन वह है जो कल के गो दुग्ध से बना हुआ है।''

आशाधर के महाभिषेक पाठ में भी हैयङ्गवीनम् का अर्थ घी लिया है

३. आज्यम् (नपुं०)—इससे पित्त दूर (नष्ट) होता है इसलिए आज्य है। क्षीर स्वामी ने कहा है–चारों ओर से अञ्जन (लेप) के योग्य है इसलिए आज्य है।

घृत आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

दूध के चार नाम हैं।

१. दुग्धम् (नपुं०)—दुहा जाता है, भरा जाता है इसलिए दुग्ध है।

२. क्षीरम् (नपुं०)—पिया जाता है इसलिए क्षीर है। ईर प्रत्यान्त यह निपात सिद्ध शब्द है।

३. अमृतम् (नपुं०)—इससे मरण नहीं होता है इसलिए अमृत है क्योंकि इसके सेवन से अजर-अमरपना प्राप्त होता है।

४. पयस् (नपुं०)—सरस होने से पिया जाता है इसलिए पय है।

असुन् आदि नाम भी हैं, देखें भाष्य।

छाछ के चार नाम हैं।

१. उदश्वित् (नपुं०)—जल से बढ़ जाती है इसलिए उदश्वित है।

चत्वारस्तक्रे। उदकेन श्वयति वर्धते **उदश्वित्**। तान्तस्तालव्यमध्यः। मथ्यते (स्म) **मथितं** घोलं च। तञ्चति द्रवं गच्छति **तक्रम्**। उभयम्। "**तक्रं विभागभिन्नं तु केवलं मथितं स्मृतम्**" इति धन्वन्तरिः। कलश्यां गर्गर्यां भवं **कालशेयं पिबेत् गुरुः**। तत्कालीनं गरिष्ठिम्। अरिष्टिम्। दण्डाहतम्।

प्रायो वयो दशानेहा पूर्णं यौवनकं विदुः।
तारुण्यं यौवनं चान्त्यो वार्द्धीनः स्थविरो मतः।
वंशोऽन्वयोऽन्ववायः स्यादाम्नायः संततिः कुलम्॥१२४॥

अष्टौ तारुण्ये। प्रकर्षेण परलोकमेत्यनेन **प्रायः** पुंसि। सान्तोऽपि प्रायस्। वयते **वयः**। दशति चुम्बति स्त्रीमुखं **दशा**। न ईहते चेष्टते **अनेहा**। "अनेहसोऽप्सरसोऽङ्गिरसः" एतेऽसन् प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। ईह चेष्टायाम्। पूरी आप्यायने दिवादौ आत्मनेपदी। अदन्तानां प्राक् तृ(ऋ)तीयः परस्मैपदी। पूर्यते कश्चित्,

---

२. मथितम् (नपुं०)—मथा गया था इसलिए मथित है। घोलम् नाम भी है।

३. तक्रम् (नपुं०), **तक्रः** (पुं०)—द्रव रूप को प्राप्त होता है इसलिए तक्र है। दोनों लिंग में है। धन्वन्तरी ने कहा है–"विभाजन करके पृथक् किया जाता है इसलिए तक्र है और जो केवल पेय मात्र हो वह मथित है।"

४. कालशेयम् (नपुं०)—कलशी, गागर में बनता है इसलिए कालशेय है। इसे गुरु अर्थात् धनवान् पीते हैं।

तत्कालीन आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

तरुण अवस्था और वृद्ध अवस्था, वंश के नाम

श्लोकार्थ—प्राय, वय, दशा, अनेहा, पूर्ण, यौवनक, तारुण्य, यौवन ये तरुण अवस्था के नाम हैं। अन्त्य, वार्द्धीन, स्थविर वृद्ध अवस्था के नाम हैं। वंश, अन्वय, अन्ववाय, आम्नाय, सन्तति, कुल ये वंश के नाम हैं ॥१२४॥

भाष्यार्थ—तारुण्य अवस्था के आठ नाम हैं।

१. प्रायस् (नपुं०), प्रायः (पुं०)—इस तारुण्य अवस्था से उत्कृष्ट रूप से परलोक की प्राप्ति होती है इसलिए प्रायः है। सम्पादक हेमचन्द्र ने लिखा है–प्रकर्ष रूप से शरीर की क्रम से वृद्धि होती है इसलिए प्राय है।

२. वयस् (नपुं०)—तरुण दशा चलती जाती है इसलिए वय है। सम्पादक हेमचन्द्र के अनुसार—शरीर का क्रम विशेष रूप से चलता है इसलिए वयः है।

३. दशा (स्त्री०)—स्त्री मुख का चुम्बन लेता है इसलिए इस अवस्था को दशा कहते हैं। सम्पादक हेमचन्द्र के अनुसार—बाल्य आदि अवस्था को यह डस लेती है इसलिए दशा है।

४. अनेहस् (पुं०)—इस अवस्था में कोई चेष्टा नहीं करता है इसलिए अनेहा है।

५. पूर्णः (पुं०)—पूरा जाता है, पूरता है, शरीर को पूर्ण करता है अर्थात् पुष्ट करता है इसलिए पूर्ण है।

६. यौवनकम् (नपुं०)—युवा अवस्था का भाव यौवन है। स्वार्थे क प्रत्यय जोड़ने से यौवनक

पूरयति कश्चित्। इन् चुराद्यपेक्षया वा। ''कारित.'' कारितलोपः। उभयथा पूरि जातम्। पूर्यते स्म **पूर्णः**। निष्ठाक्तः। ''दान्तशान्तपूर्णदस्तस्पष्टछन्नज्ञप्ताश्चेनन्ताः'' इत्यनेन पूर्णेति निपातः। यूनो भावो **यौवनम्**। स्वार्थे कः। **यौवनकम्**। युवादित्वाद्भावेऽण्। वृद्धौ। तरुणस्य भावस्तारुण्यम्। भावार्थे यण्। यूनो भावो यौवनम्।

अन्त्यो वार्द्धीनः स्थविरो मतः।

त्रयो वृद्धे। अन्ते भवोऽन्त्यः। वृद्धे नियुक्तो **वार्द्धीनः**। तिष्ठतीति **स्थविरः**। गतिभङ्गा**न्मतः** कथितः। प्रवयाः यातयामः। दशमीस्थः जरन्। जरठः। जीर्णः। वृद्धः।

वंशोऽन्वयोऽन्ववायः स्यादाम्नायः संततिः कुलम्॥१२४॥

षड् वंशे। उश्यते काम्यते जनेन **वंशः**। पुंसि। अन्वयते सन्ततिरत्रा**न्वयः**। अन्ववैत्यपत्यमत्रा**न्ववायः**। आम्नायते **आम्नायः**। सम् सम्यक् प्रकारेण तनोति विस्तारयतीति **सन्ततिः**। सन्तननं वा सन्ततिः। कु(को)लति सर्व भवत्यत्र **कुलम्**। उभयम्। गोत्रम्। अभिजनः।

होता है।

७. तारुण्यम् (नपुं०)—तरुण अवस्था का भाव तारुण्य है।

८. यौवनम् (नपुं०)—युवा का भाव यौवन है।

वृद्धा अवस्था के तीन नाम हैं।

१. अन्त्यः (पुं०)—अन्त में होती है इसलिए अन्त्य है।

२. वार्द्धीनः (पुं०)—वृद्ध दशा में नियुक्त होता है इसलिए वृद्ध पुरुष को वार्द्धीन कहा है। वृद्ध दशा भी वार्द्धीन है।

३. स्थविरः (पुं०)—इस दशा में ठहरता है इसलिए स्थविर है। सम्पादक हेमचन्द्र के अनुसार—यौवन को लांघकर ठहरती है इसलिए इस दशा को स्थविर कहते हैं। या उस व्यक्ति को स्थविर कहते हैं। चूँकि गति (चलना-फिरना) बंद हो जाता है इसलिए इसे स्थविर कहा है।

प्रवया आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

वंश के छह नाम हैं।

१. वंशः (पुं०)—मनुष्य इसकी कामना करता है इसलिए वंश है। सम्पादक क्षीरस्वामी के भाष्यानुसार—'वश कान्तौ' धातु से यह शब्द बना है। इससे प्रिय हो जाता है, चाहा जाता है इसलिए वंश है।

२. अन्वयः (पुं०)—इसमें सन्तति-परम्परा की निरन्तरता बनी रहती है इसलिए अन्वय है।

३. अन्ववायः (पुं०)—यहाँ सन्तान कुल के अनुसार जानी जाती है इसलिए अन्ववाय है।

४. आम्नायः (पुं०)—परम्परा बनी रहती है इसलिए आम्नाय है।

५. सन्ततिः (पुं०)—सम्यक् प्रकार से विस्तार करता है इसलिए सन्तति है अथवा समीचीन रूप से फैलना सन्तति है।

ओघो वर्गश्च सन्तानः काव्यमेव कविस्थितिः।
हंसो मरालश्चक्राङ्गः हंसवाहः सनातनः॥१२५॥

त्रयः समूहे (वंशस्यावान्तरवर्गभेदे)। ओह्यते **ओघः**। वृज्यते विजातीयेन पृथक् क्रियते **वर्गः**। सन्तन्यते **सन्तानः**। विकरः। निकायः। निवहः। विसरः। व्रजः। पुञ्जः। समूहः। सञ्चयः। समुदयः। समुदायः। सार्थः। यूथः। निकुरम्बः। कदम्बम्। पूगः। राशिः। चयः। समवायः। मण्डलम्। चक्रवालम्। जालम्। स्तोमः। व्यूहः।

काव्यमेव कविस्थितिः।

द्वौ काव्ये। कवेर्भावः **काव्यम्**। तथा च यशस्तिलके-

''दुर्जनानां विनोदाय बुधानां मतिजन्मने।
मध्यस्थानां न मौनाय मन्ये काव्यमिदम्भवेत्॥''

कवीनां स्थितिः **कविस्थितिः**। पक्षिवर्गः प्रारभ्यते श्रीमदमरकीर्तिना-

हंसो मरालश्चक्राङ्गः

---

६. **कुलम्** (नपुं०), **कुलः** (पुं०)—इसमें सभी होते हैं अर्थात् जन्म लेते हैं इसलिए कुल है। गोत्र, अभिजन नाम भी हैं।

वंश (कुल), हंस के नाम

श्लोकार्थ—ओघ, वर्ग, सन्तान ये वंश समूह के नाम हैं। काव्य, कविस्थिति काव्य के नाम हैं। हंस, मराल, चक्राङ्ग ये हंस के नाम हैं। हंस के नामों में वाह जोड़ने से सनातन(ब्रह्मा) के नाम होते हैं॥१२५॥

भाष्यार्थ—समूह के तीन नाम हैं। समूह अर्थात् वंश के और अन्य भेद।

१. **ओघः** (पुं०)—सभी ओर से विचार-विमर्श होता है इसलिए ओघ है।

२. **वर्गः** (पुं०)—विजातीय को पृथक् किया जाता है इसलिए इसे वर्ग कहा है।

३. **सन्तानः** (पुं०)—विस्तार को प्राप्त होता है इसलिए सन्तान है। विकर आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

काव्य के दो नाम हैं।

१. **काव्यम्** (नपुं०)—कवि का भाव काव्य है। जैसा कि यशस्तिलक में कहा है-

''दुर्जनों के विनोद के लिए, विद्वानों को बुद्धि उत्पन्न करने के लिए और मध्यस्थों के मौन के लिए यह काव्य रचना होती है, ऐसा मैं मानता हूँ।''

२. **कविस्थितिः** (स्त्री०)—कवियों की स्थिति अर्थात् मनोदशा को कविस्थिति कहते हैं।

अब श्रीमान् अमरकीर्ति के द्वारा पक्षि वर्ग का प्रारम्भ किया जाता है।

हंस के तीन नाम हैं।

त्रयो हंसे। विसं हन्ति खण्डयति, चारुगत्या हन्ति गच्छति वा **हंसः**। हन्तेः सः। मरं मलं कमलमण्डिततडागमियर्ति गच्छतीति **मरालः**। चक्रमङ्गति चक्राण्यङ्गानि वा यस्य **चक्राङ्गः**। मानसौकाः। श्वेतच्छदः।

हंसवाहः सनातनः॥१२५॥

हंसशब्दाद् वाहशब्दे प्रयुज्यमाने ब्रह्मणो नामानि भवन्ति। **हंसवाहः**। मरालवाहः। चक्राङ्गवाहः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

मयूरो बर्हिणः केकी शिखी प्रावृषिकस्तथा ।
नीलकण्ठः कलापी च शिखण्डी तत्पतिर्गुहः॥१२६॥

अष्टौ मयूरे। मह्यां रौति **मयूरः**। मीनाति वाऽहीन् मयूरः। उणादौ। मीञ् हिंसायाम्। मयते इति मयूरः। ''मयते रूरोः खौ''। बर्हस्यास्ति बर्ही। ''फल बर्हाभ्यामिनच्''। केका वाणी अस्त्यस्य **केकी**। शिखाऽस्त्यस्य **शिखी**। प्रावृषि वर्षाकाले प्रयुक्तः **प्रावृषिकः**। नीलं कण्ठे यस्य स **नीलकण्ठः**। कलापोऽस्त्यस्य **कलापी**। शिखण्डोऽस्त्यस्य **शिखण्डी**। प्रचलाकी। सर्पाशनः। शिखावलः।

---

१. हंसः (पुं०)—कमल की नाल को नष्ट करता है, खण्डित करता है अथवा मनोहर गति से चलता है इसलिए हंस है।

२. मरालः (पुं०)-कमलों से भरे तालाब के पास चलता है इसलिए मराल है।

३. चक्राङ्गः (पुं०)—चक्र में घूमकर चलता है अथवा जिसके अंग घुमावदार हैं इसलिए चक्राङ्ग है।

मानसौक, श्वेतच्छद नाम भी हैं।

हंस शब्द से वाह शब्द जोड़ने पर ब्रह्मा के नाम होते हैं। हंसवाह आदि। देखें भाष्य।

ब्रह्मा, मयूर, हंसिनी, भेड़िया के नाम

श्लोकार्थ—मयूर, बर्हिण, केकी, शिखी, प्रावृषिक, नीलकण्ठ, कलापी और शिखण्डी ये मयूर के नाम हैं। मयूर के नामों में 'पति' वाची शब्द जोड़ने से 'गुह' के नाम होते हैं ॥१२६॥

भाष्यार्थ—मयूर के आठ नाम हैं।

१. मयूरः (पुं०)—पृथ्वी पर रोता है इसलिए मयूर है अथवा सर्पों को मारता है इसलिए मयूर है।

२. बर्हिणः (पुं०)—इसके पंख होते हैं इसलिए बर्हिण है।

३. केकिन् (पुं०)—इसकी केका-वाणी होती है इसलिए केकी है।

४. शिखिन् (पुं०)—इसकी शिखा (कलगी) होती है इसलिए शिखी है।

५. प्रावर्षिकः (पुं०)—वर्षाकाल में प्रयुक्त (उदित) होता है इसलिए प्रावर्षिक है।

६. नीलकण्ठः (पुं०)—जिसका कण्ठ नीला होता है इसलिए वह नीलकण्ठ है।

७. कलापिन् (पुं०)—कलाप-मयूर पंख इसके होते हैं इसलिए कलापी है।

श्यामकण्ठः। चन्द्रकी। शुक्लापाङ्गः।

तत्पतिर्गुहः

तस्य पतिस्तत्**पतिर्गुहः** कार्तिकेयः। मयूरशब्दात् पतिशब्दे प्रयुज्यमाने कार्तिकेयपर्यायनामानि भवन्ति। मयूरपतिः। बर्हिणपतिः। केकिपतिः। शिखिपतिः। प्रावृषिकपतिः। नीलकण्ठपतिः। कलापिपतिः। शिखण्डि-पतिः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

वरटा वारली हंसी कोक ईहामृगो वृकः।
हरिणो मृगश्च पृषतः-तदङ्कः शर्वरीकरः॥१२७॥

त्रयो हंसभार्यायाम्। वरं विशिष्टमटति गच्छति **वरटा**। वरलस्य भार्या **वारली**। स्वार्थेऽणि। वरला च। हन्तीति **हंसी**।

कोक ईहामृगो वृकः।

अजादिकं कोकते आदत्ते **कोकः**। ईहा मृगेष्वस्य **ईहामृगः**। ईहां मृगयते वा ईहामृगः। कुक वृक आदाने। वकृते **वृकः**। अरण्यश्वा।

---

८. **शिखण्डिन्** (पुं०)—कलगी, शिखा इसके होती है इसलिए शिखण्डी है।

प्रचलाकी आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

मयूर शब्द से पति वाचक शब्दों को जोडने से कार्तिकेय के पर्यायवाची नाम हो जाते हैं। मयूरपति इत्यादि। देखें भाष्य।

हंसी, हरिण, चन्द्रमा, गरुण, सर्प, इन्द्रिय के नाम

श्लोकार्थ—वरटा, वारली, हंसी ये हंसिनी के नाम हैं। कोक, ईहामृग और वृक ये भेड़िये के नाम हैं। हरिण, मृग, पृषत ये हरिण के नाम हैं। इन नामों में अङ्क जोड़ने से चन्द्रमा के नाम होते हैं। ॥१२७॥

भाष्यार्थ—हंस स्त्री के तीन नाम हैं।

१. **वरटा** (स्त्री०)—विशिष्ट रूप से चलती है इसलिए वरटा है।

२. **वारली** (स्त्री०)—वरल-हंस की पत्नी है इसलिए वारली है। 'वरला' भी कहते हैं।

३. **हंसी** (स्त्री०)—सर्प आदि मारती है अथवा चलती है इसलिए हंसी है।

भेड़िये के तीन नाम हैं।

१. **कोकः** (पुं०)—बकरी आदि को पकड़ लेता है इसलिए कोक है।

२. **ईहामृगः** (पुं०)—मृगों-हिरनों की जिसे इच्छा बनी रहती है इसलिए ईहामृग है अथवा ईहा-इच्छित पदार्थ को ढूँढ़ता रहता है इसलिए ईहामृग है। सम्पादक के अनुसार—अन्यत्र कहा है कि—बहुत प्रयास से शिकार इससे किया जाता है इसलिए ईहामृग है।

३. **वृकः** (पुं०)—बकरी आदि को मारने के लिए पकड़ता है इसलिए वृक है।

हरिणो मृगश्च पृषतः-

त्रयो मृगे। गीतेन ह्रियते **हरिणः**। व्याधैर्मृग्यते **मृगः**। पर्षति सिंचति मूत्रेण **पृषतः**। तान्तोऽपि पृषत्। एणः। कुरङ्गः। कुरङ्गम्। सारङ्गः। ऋश्यः। रिश्यः। ऋश्यश्च। रुरुः। न्यङ्कुः। वातप्रमी। शम्बरः। शबलः। कृष्णसारः। कालसारोऽपि।

तदङ्कः शर्वरीकरः॥

हरिणपर्यायादङ्कपर्याये प्रयुज्यमाने चन्द्रस्य नामानि भवन्ति। हरिणाङ्कः। मृगाङ्कः। पृषताङ्कः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

पन्नगोऽहिर्विषधरो लेलिहानो भुजङ्गमः।
नागोरगौ फणी सर्पः-तद्वैरी विनतात्मजः॥१२८॥

नव सर्पे। पद्भ्यां न गच्छतीति **पन्नगः**। नभ्राण्नपादित्यस्योपलक्षत्वात्। अंहत्य (तेऽ) **हिः**। ''अंहिकम्प्योर्नलोपश्च'' नलोपः। विषं धरति **विषधरः**। लिलेहेति **लेलिहानः**। भुजाभ्यां गच्छति **भुजङ्गमः**। न गच्छतीति **नागः**। उरसा गच्छतीत्**युरगः**। ''उरो विहायसो रूरविहौ च''। उरो विहायसोरुपपदयोर्गमश्च

अरण्यश्वा नाम भी है।

मृग के तीन नाम हैं।

१. **हरिणः** (पुं०)—गीत से जिसका हरण किया जाता है इसलिए वह हरिण है।

२. **मृगः** (पुं०)—व्याध (शिकारी) इसे खोजता है इसलिए मृग है।

३. **पृषतः** (पुं०), **पृषत्** (नपुं०)—मूत्र से सिंचन करता है इसलिए पृषत है।

सम्पादक रामाश्रम ने कहा है—पृषत बिन्दु को कहते हैं। इसके शरीर पर बिन्दु सदृश चिह्न होते हैं इसलिए पृषत कहा है। क्षीर स्वामी ने भी पृषत का बिन्दु चित्र अर्थात् धब्बे, चित्तीदार होने से इसे पृषत कहा है। एण। कुरंग आदि नाम भी हैं देखें भाष्य।

हरिण के पर्यायवाची शब्दों में अंक के पर्यायवाची शब्द जोड़ने से शर्वरीकर (चन्द्र) के नाम होते हैं। हरिणांक इत्यादि। देखें भाष्य।

श्लोकार्थ—पन्नग, अहि, विषधर, लेलिहान, भुजंगम, नाग, उरग, फणी, सर्प ये सांप के नाम हैं। इन नामों में वैरी जोड़ने से विनतात्मज (गरुण) के नाम बनते हैं॥१२८॥

भाष्यार्थ—सर्प के नौ नाम हैं।

१. **पन्नगः** (पुं०)—पैरों से नहीं चलता है इसलिए पन्नग है। सम्पादक के अनुसार—गिरता हुआ जैसे-तैसे चलता है इसलिए पन्नग है। ऐसा रामाश्रम ने कहा है।

२. **अहिः** (पुं०)—वेग से चलता है इसलिए अहि है।

३. **विषधरः** (पुं०)—विष को धारण करता है इसलिए विषधर है।

४. **लेलिहानः** (पुं०)—लप-लप करके चाटता है इसलिए लेलिहान है।

५. **भुजङ्गमः** (पुं०)—भुजाओं से चलता है इसलिए भुजङ्गम है। सम्पादक के अनुसार—कुटिलता

संज्ञायां खो भवति तयोश्च उरविहौ यथासंख्यं भवतः। फणाऽस्त्यस्य **फणी**। सर्पति गच्छति **सर्पः**। पृदाकुः। भुजगः। आशीविषः। चक्री। व्यालः। सरीसृपः। कुण्डली। गूढपात्। द्विरसनः। चक्षुःश्रवाः। काकोदरः। दर्वीकरः। दीर्घपृष्ठः। दन्दशूकः। विलेशयः। भोगी। जिह्मगः। पवनाशनः। गोकर्णः। कुम्भीनसः। कञ्चुकी। राजसर्पः। भुजङ्गभुक्। दृक्श्रुतिः।

तद्वैरी विनतात्मजः॥१२८॥

तस्य पन्नगस्य **वैरी** शत्रुः **विनतात्मजः** गरुडः। पन्नगवैरी। अहिरिपुः। विषधरारातिः। लेलिहानरिपुः। भुजङ्गशत्रुः। नागद्विट्। भुजङ्गसपत्नः। फणिद्विट्। सर्पहृत्। सर्पद्वेषी। इत्यादीनि गरुडनामानि स्युः।

सुपर्णो गरुडस्ताक्ष्र्यो गरुत्मान् शकुनीश्वरः।
इन्द्रजिन्मन्त्रपूतात्मा वैनतेयो विषक्षयः॥१२९॥

नव गरुडे। शोभनं स्वर्णमयं पर्णमस्य **सुपर्णः**। तथा च–''सुपर्णो हेमपक्षत्वात्।'' डीङ् विहायसा गतौ। गरुत्पूर्वः। गरुद्भिः पक्षैर्डयते **गरुडः**।

''वर्णागमो गवेन्द्रादौ सिंहे वर्णविपर्ययः।
षोडशादौ विकारस्तु वर्णनाशः पृषोदरे॥''

से टेढ़ा-मेढ़ा चलता है अथवा अन्यत्र यह भी कहा है कि भुजा के समान चलता है, घूमता है इसलिए भुजङ्गम है।

६. नागः (पुं०)—चलता नहीं है इसलिए नाग है। सम्पादक के अनुसार—नग-पर्वत पर उत्पन्न होता है इसलिए नाग है। अन्यत्र ऐसा भी कहा है–चलता नहीं है वह अग है। जो अग नहीं है वह नाग है।

७. उरगः (पुं०)—छाती के बल चलता है इसलिए उरग है।

८. फणिन् (पुं०)—इसके फणा होते हैं इसलिए फणी है।

९. सर्पः (पुं०)—दौड़ता है, सरकता है इसलिए सर्प है।

पृदाकु आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

सर्प का वैरी विनतात्मज गरुड़ कहलाता है। पन्नगवैरी आदि नाम के लिए देखें भाष्य।

गरुड़ के नाम

श्लोकार्थ—सुपर्ण, गरुण, ताक्ष्र्य, गरुत्मान्, शकुनीश्वर, इन्द्रजित्, मन्त्रपूतात्मा, वैनतेय, विषक्षय ये गरुण के नाम हैं ॥१२९॥

गरुड़ के नौ नाम हैं।

१. सुपर्णः (पुं०)—इसके पंख स्वर्णमय होते हैं इसलिए सुपर्ण है। कहा भी है–'हेमपंख वाला होने से सुपर्ण है।'

२. गरुडः (पुं०)—पंखों से उड़ता है इसलिए गरुड़ है।

इत्यनेन श्लोकेन गरुत्शब्दस्य तकारस्य लोपः। लत्वे गरुलः। गरुटश्च। तृक्षस्यापत्यं **तार्क्ष्यः**। गरुतः पक्षाः। सन्त्यस्य **गरुत्मान्**। शकुनीनां विहङ्गानामीश्वरः स्वामी **शकुनीश्वरः**। इन्द्रं जितवान् **इन्द्रजित्**। मन्त्रेण पूतः पवित्र आत्मा यस्य स **मन्त्रपूतात्मा**। विनताया अपत्यं **वैनतेयः**। विषं क्षयतीति **विषक्षयः**। काश्यपनन्दनः। विष्णुरथः। पन्नगाशनः। नागान्तकः।

खमिन्द्रियं हृषीकं च श्रो (स्रो) तोऽक्षं करणं विदुः।
पुण्यं भाग्यं च सुकृतं भागधेयं च सत्कृतम्॥१३०॥

षडिन्द्रिये। स्वर्गमोक्षौ खनति विदारयतीति **खम्**। इन्द्रस्यात्मनो लिङ्ग**मिन्द्रियम्**। हृष्यति हर्षे प्राप्नोति विषयेषु शब्दस्पर्शरूपरसगन्धेषु **हृषीकम्**। शृणोत्यनेन सान्तम् **श्रोतः**। तालव्यादिः। अक्ष्णोति विषयं व्याप्नोति

''गवेन्द्र आदि में वर्ण का आगम होता है, सिंह में वर्ण विपर्यय है, षोडश आदि में वर्ण विकार है और पृषोदर में वर्ण नाश होता है।'' इस सूत्र से यहाँ गरुत् शब्द के तकार का लोप हुआ। लवर्ण होने पर गरुल, गरुट भी बनता है।

३. **तार्क्ष्यः** (पुं०)—तृक्ष का पुत्र होने से तार्क्ष्य है।

४. **गरुत्मान्** (पुं०)—गरुत् अर्थात् पक्ष-पंख। पंख इसके होते हैं इसलिए गरुत्मान् है।

५. **शकुनीश्वरः** (पुं०)—शकुनी-पक्षी। पक्षियों का ईश्वर-स्वामी है इसलिए शकुनीश्वर है।

६. **इन्द्रजित्** (पुं०)—इन्द्र को जीत चुका है इसलिए इन्द्रजित् है।

७. **मन्त्रपूतात्मन्** (पुं०)—मन्त्र से जिसकी आत्मा पवित्र है इसलिए वह मन्त्रपूतात्मा है।

८. **वैनतेयः** (पुं०)—विनता (गरुड की माँ) का पुत्र है इसलिए वैनतेय है।

९. **विषक्षयः** (पुं०)—विष का नाश कर देता है इसलिए विषक्षय है।

काश्यपनन्दन आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

इन्द्रिय, पुण्य के नाम

श्लोकार्थ—ख, इन्द्रिय, हृषीक, श्रोतस्, अक्ष, करण ये इन्द्रियों के नाम हैं। पुण्य, भाग्य, सुकृत, भागधेय, सत्कृत ये पुण्य के नाम हैं ॥१३०॥

भाष्यार्थ—इन्द्रिय के छह नाम हैं।

१. **खम्** (नपुं०)—स्वर्ग और मोक्ष का नाश करती हैं इसलिए ख है। सम्पादक के अनुसार—उस-उस इन्द्रिय के स्थान को खाई की तरह खोदती है इसलिए ख है।

२. **इन्द्रियम्** (नपुं०)—इन्द्र अर्थात् आत्मा। आत्मा का लिंग अर्थात् पहचान का चिह्न है इसलिए इन्द्रिय है।

३. **हृषीकम्** (नपुं०)—शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध विषयों में हर्ष को प्राप्त होती हैं इसलिए हृषीक हैं।

अक्षम्। क्रियते मनोऽनेन विषयेषु **करणम्**। शेवं [विषयि] कम्बलम्।

पुण्यं भाग्यं च सुकृतं भागधेयं च सत्कृतम्॥१३०॥

पञ्च पुण्ये। पुण शोभे। पुणति शोभते पवते वा **पुण्यम्**। ''पर्जन्यपुण्ये''। भगस्यैश्वर्यादेरिदं [कारणम्] भागम्। भागमेव। **भाग्यम्**। ''भागाद्यच्च''। सुष्ठु क्रियते **सुकृतम्**।

''ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशसः श्रियः।
वैराग्यस्याथ मोक्षस्य षण्णां भग इति स्मृतिः॥''

भगस्येदं भागं भागमेव **भागधेयम्**।''नामरूपभागेभ्यो धेयः''। सत्समीचीनं क्रियते (स्म) **सत्कृतम्।**

अघमंहश्च दुरितं पाप्मा पापं च किल्विषम्।
वृजिनं कलिलं ह्येनो दुष्कृतम् तज्जयी जिनः॥१३१॥

---

४. श्रोतस् (नपुं०)—इससे सुनते हैं इसलिए श्रोतस् है। आदि में तालव्य (श) है।

सम्पादक के अनुसार—तालव्य श्रोतस् शब्द कर्ण इन्द्रिय का वाचक है और दन्त्य स्रोतस् शब्द इन्द्रियवाची है। यहाँ दन्त्य 'स' वाला स्रोतस् शब्द पढ़ना चाहिए। कहा भी है–''हृषीक, अक्ष, करण, स्रोत, खं, विषयी, इन्द्रिय ये इन्द्रिय के नाम हैं।'' (अ० चि०) अमरकोश में भी स्रोतस् इन्द्रिय के लिए है।

५. अक्षम् (नपुं०)—विषय को व्याप्त कर लेती है इसलिए अक्ष है।

६. करणम् (नपुं०)—इससे मन विषयों में कर दिया जाता है इसलिए करण है।

शेव, विषयि, कम्बल भी नाम हैं। सम्पादक के अनुसार—कम्बल नाम इन्द्रिय का है इसमें कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

पुण्य के पाँच नाम हैं।

१. पुण्यम् (नपुं०)—पुण धातु शोभा अर्थ में है। शोभा को प्राप्त होता है अथवा पवित्र करता है वह पुण्य है।

सम्पादक के अनुसार—पुण धातु शुभ कर्म में है। शुभ कर्म की योग्यता रखता है वह पुण्य है।

२. भाग्यम् (नपुं०)—भग-ऐश्वर्य आदि। ऐश्वर्य आदि का यह कारण है इसलिए भाग है। भाग ही भाग्य है।

३. सुकृतम् (नपुं०)—अच्छी तरह से किया जाता है इसलिए सुकृत है।

४. भागधेयम् (नपुं०)—''ऐश्वर्य, समग्र धर्म, यश, श्री, वैराग्य और मोक्ष इन छहों को भग कहा जाता है।'' भग का यह भाग है। भाग ही भागधेय है।

५. सत्कृतम् (नपुं०)—सत् अर्थात् समीचीन रूप से किया जाता है इसलिए सत्कृत है।

पाप और जिनेन्द्र भगवान् के नाम

श्लोकार्थ—अघ, अंहस्, दुरित, पाप्मा, पाप, किल्विष, वृजिन, कलिल, एनस्, दुष्कृत ये पाप के नाम हैं। इनको जीतने वाले जिन कहलाते हैं ॥१३१॥

भाष्यार्थ—पाप के दश नाम हैं।

दश पापे। न जहाति प्राणिनम् **अघम्**। अंहति गच्छति नरकादिकमनेन **अंहः**। सान्तम्। **दुरितम्**। दुर् सौत्रोऽयं धातुः। पाति सुगतेर्वारयति **पाप्मा**। पुंसि। ''सर्वधातुभ्यो मन्।'' पाति सुगतेर्वारयति **पापम्**। ''पातेः पः''। निन्द्यत्वेन कल्यते मुहुर्मुहुः, किरति सङ्गति वा **किल्विषम्**। ''किल्विषा व्याथिषौ'' एतौ टिषप्रत्ययान्तौ निपात्येते। वृज्यतेऽपनीयतेऽनेन **वृजिनम्**। कलयति **कलिलम्**। ''कलेरिलः''। एति गच्छति [सुखम्] अनेन **एनः**। सान्तम्। दुष्क्रियते स्म **दुष्कृतम्**। तमः। कल्कम्। कल्मषम्। अशुभम्। प्रतिकिट्टम्। पङ्कम्। किण्वम्। मलः। अनेकार्थे।

तज्जयी जिनः।

तस्य पापस्य जयी **तज्जयी**। अघजयी। दुरितजयी। पापजयी। इत्यादीनि जिनस्य नामानि भवन्ति।

सदनं सद्म भवनं धिष्ण्यं वेश्माथ मन्दिरम्।
गेहं निकेतनागारं निशान्तं निवृतं गृहम्॥१३२॥

---

१. अघम् (नपुं०)—प्राणियों को नहीं छोड़ता है इसलिए अघ है। सम्पादक के अनुसार—दान आदि के द्वारा जो चला जाता है इसलिए अघ है।

२. अंहस् (नपुं०)—इससे नरक आदि में चला जाता है इसलिए अंहस् है।

३. दुरितम् (नपुं०)—सम्पादक के अनुसार—इससे दुष्ट-बुरी जगह पर गमन होता है इसलिए दुरित है।

४. पाप्मन् (पुं०)—सुगति में जाने से रोकता है, रक्षा करता है इसलिए पाप्मा है।

५. पापम् (नपुं०)—सुगति में जाने से बचाता है इसलिए पाप है।

६. किल्विषम् (नपुं०)—जिससे बार-बार निन्दनीय जाना जाता है अथवा जो संगति को नष्ट कर देता है इसलिए किल्विष है।

७. वृजिनम् (नपुं०)—इससे आदमी अलग कर दिया जाता है अर्थात् अच्छे कार्य में रोक दिया जाता है इसलिए वृजिन है।

८. कलिलम् (नपुं०)—दुःख रचता है या उत्पन्न करता है इसलिए कलिल है।

९. एनस् (नपुं०)—इससे सुख चला जाता है इसलिए एनस् है।

१०. दुष्कृतम् (नपुं०)—इससे दुष्कार्य किया गया इसलिए दुष्कृत है।

तमः, कल्क आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

इन पापों को जीतने वाले जिन कहलाते हैं। पाप के नामों में 'जयी' शब्द जोड़ने से जिन के नाम बन जाते हैं। अघजयी आदि। देखें भाष्य।

मकान, खाई, बधान के नाम

श्लोकार्थ—सदन, सद्म, भवन, धिष्ण्य, वेश्म, मन्दिर, गेह, निकेतन, आगार, निशान्त, निवृत, गृह, वसति, आवसथ, आवास, स्थान, धाम, आस्पद, पद, निकाय, निलय, पस्त्य, शरण, आलय

वसत्यावसथावासं स्थानं धामास्पदं पदम्।
निकायं निलयं पस्त्यं शरणं विदुरालयम्॥१३३॥

चतुर्विंशतिर्गृहे। जनाः सीदन्त्यत्र **सदनम्**। क्लीबे। सीदन्ति सुखं गच्छन्त्यत्र **सद्म**। ''सर्वधातुभ्यो मन्'' प्रायेण। भवति भूतान्यत्र **भवनम्**। घिष शब्दे। देधेष्टि शब्दं करोत्यत्र **धिष्ण्यम्**। ''धिषेर्न्यक्'' प्रत्ययो भवति। विशन्त्यत्र **वेश्म**। नान्तम्। माद्यन्ति जना अत्र **मन्दिरम्**। स्त्रीक्लीबे। मन्दिरा। गेहः सौत्रो निवारणग्रहयोः। गेहति शीतवातातपादिकं निवारयतीति गेहम्। गृह्णाति वा **गेहम्**। ''गेहे त्वक्''। सुखं निकितन्ति जानन्त्यत्र **निकेतनम्**। अङ्गन्ति गच्छन्त्यत्र **आगारम्**। अगारं च। निशाम्यन्त्यत्र **निशान्तम्**। निव्रियते आच्छाद्यते **निवृतम्**। गृह्णाति नरेणोपार्जितं धनं **गृहम्**। वसनं **वसतिः**। **आ**वसन्त्यत्र जना **आवसथम्**।

ये आलय के नाम हैं॥१३२-१३३॥

भाष्यार्थ—घर के चौबीस नाम हैं।

१. **सदनम्** (नपुं०)—इसमें लोग रहते हैं इसलिए सदन है।

२. **सद्म** (नपुं०)—इसमें सुख पाते हैं इसलिए सद्म है।

३. **भवनम्** (नपुं०)—इसमें भूत-प्राणी रहते हैं इसलिए भवन है।

४. **धिष्ण्यम्** (नपुं०)—इसमें आवाज होती रहती है इसलिए धिष्ण्य है।

५. **वेश्मन्** (नपुं०)—इसमें रहते हैं इसलिए वेश्म है।

६. **मन्दिरम्** (नपुं०)—इसमें लोग मस्त रहते हैं इसलिए मन्दिर है। मन्दिरा (स्त्री०) भी है।

७. **गेहम्** (नपुं०)—शीत, वायु, आतप आदि को रोकता है इसलिए गेह है अथवा ग्रहण करता है, रखता है इसलिए गेह है।

८. **निकेतनम्** (नपुं०)—इसमें रहकर सुख को महसूस करता है, जानता है इसलिए निकेतन है।

९. **आगारम्** (नपुं०)—यहाँ लोग जाते हैं, पहुँचते हैं इसलिए आगार है। अगार भी कहते हैं।

१०. **निशान्तम्** (नपुं०)—इसमें रहकर सब देखते हैं, जानते हैं इसलिए निशान्त है। सम्पादक के अनुसार-अन्यत्र कहा है कि—रात्रि का अन्त यहीं पर होता है। इसलिए निशान्त कहा है। रामाश्रम ने कहा है कि—रात्रि में आया जाता है इसलिए निशान्त है।

११. **निवृतम्** (नपुं०)—आवरित रहता है, ढका होता है इसलिए निवृत है।

११. **गृहम्** (नपुं०)—मनुष्य के द्वारा उपार्जित धन को ग्रहण करता है इसलिए ग्रह है अर्थात् इसमें धन लगाते रहो लगता जाता है।

१३. **वसतिः** (स्त्री०)—इसमें रहना होता है इसलिए वसति है।

१४. **आवसथम्** (नपुं०)—इसमें लोग आकर ठहरते हैं इसलिए आवसथ है।

१५. **आवासः** (पुं०)—इसमें सब जगह रहा जाता है इसलिए आवास है।

आ समन्तादुष्यतेऽत्रा**वासः**। स्थीयते जनेनात्र **स्थानम्**। दधाति धनादि **धाम**। नान्तम्। अदन्तं च धामम्। क्लीबे। आस्प(प)द्यतेऽत्रा**स्पदम्**। पद्यते गम्यते **पदम्**। निचीयतेऽसौ **निकायः**। ''शरीरनिवासयोः कश्चादेः'' घञ्। निलीयते आश्लिष्यते (अत्र) निलयम्। पसिः सौत्रो निवासे। जनाः पसन्ति वसन्त्यत्र **पस्त्यम्**। वस्तौ वासे साधु वस्त्यत्। क्लीबे वासे साधु वस्त्यमिति श्रीभोजः। शीर्यते हिंस्यते शीताद्यत्र **शरणम्**। आलीयते जनेनात्रा**लयः**। पुंसि। **विदुः** कथयन्ति। पुरम्। कुलम्। संस्त्यायः।

खेयं शातं च परिखा वप्रं स्याद्धूलिकुट्टिमम्।
प्राकारः परिधिः सालःप्रतोली गोपुराकृतिः॥१३४॥

त्रयः परिखायाम्। खनु अवदारणे। खन्। खन्यते **खेयम्**। ''आत्खनोरिच्च'' यप्रत्ययो नकारस्येकारः। ''अवर्णइवर्णे ए'' अवर्णेवर्णयोरेकारः। खन्यते [स्म] **खातम्**। परिखायते **परिखा**।

वप्रं स्याद्धूलिकुट्टिमम्।

---

१६. स्थानम् (नपुं॰)—मनुष्य इसमें आकर ठहरता है इसलिए स्थान है।

१७. धामन् (नपुं॰)—धन आदि धारण करता है इसलिए धाम है। धाम शब्द भी बनता है।

१८. आस्पदम् (नपुं॰)—यहाँ रहते हैं इसलिए आस्पद है।

१९. पदम् (नपुं॰)—इसे प्राप्त किया जाता है, या इसमें पहुँचा जाता है इसलिए पद है।

२०. निकायः (पुं॰)—यह बनाया जाता है, इकट्ठा किया जाता है या चिना जाता है इसलिए निकाय है।

२१. निलयम् (नपुं॰)—इसमें आकर मनुष्य लीन हो जाता है या इससे चिपक जाता है अर्थात् यहीं रहता है इसलिए निलय है।

२२. पस्त्यम् (नपुं॰), **वस्त्यम्** (नपुं॰)—लोग इसमें आकर एक साथ समूह में रहते हैं इसलिए पस्त्य है। इसमें अच्छी तरह वास होता है इसलिए वस्त्य श्री भोज ने कहा है।

२३. शरणम् (नपुं॰)—शीत आदि इसमें रहने से नष्ट हो जाती है इसलिए शरण है।

२४. आलयः (पुं॰)—लोग इसमें आकर रह जाते हैं या लीन हो जाते हैं इसलिए इसे आलय कहते हैं। पुर, कुल, संस्त्यायः भी गृह के नाम हैं।

श्लोकार्थ—खेय, खात, परिखा ये खाई के नाम हैं। वप्र और धूलिकुट्टिम ये कूट/बधान के नाम हैं। प्राकार, परिधि, साल ये दुर्ग के नाम हैं। प्रतोली, गोपुराकृति, ये गोपुर के नाम हैं॥१३४॥

भाष्यार्थ—परिखा के तीन नाम हैं।

१. खेयम् (नपुं॰)—इसे खोदा जाता है इसलिए खेय है।

२. खातम् (नपुं॰)—खुदी हुई रहती है इसलिए खात है।

३. परिखा (स्त्री॰)—परिखा के जैसी रहती है इसलिए परिखा कहा है।

प्राकार के दो नाम हैं।

द्वौ प्राकारे। शुल्कादिकं वपन्त्यत्र **वप्रम्**। धूल्याः कुट्टिमं **धूलिकुट्टिमम्**। बद्धभूमिकम्। धुलिकुट्टिमम्।

त्रयो दुर्गे। प्रकुर्वन्ति तमिति **प्राकारः**। ''अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्'' घञ्। परि समन्ताद् धीयते **परिधिः**। श्यति तनूकरोति स्वनगरपर्यतं शालं **सालं** च।

प्रतोली गोपुराकृतिः।

द्वौ विशिखायाम्। प्रविशन् जनः प्रतोल्यते परिमीयतेऽत्र **प्रतोली**। गोप्यते रक्ष्यते गोपुरं तस्याकृतिः **गोपुराकृतिः**।

प्रासादसौधहर्म्याणि निर्व्यूहो मत्तवारणः।
वातायनं मतालम्बमालम्ब्यसुखमासनम् ॥१३५॥

प्रासादसौधहर्म्याणि

त्रयः सौधे। प्रासादश्च सौधं च हर्म्यं च **प्रासादसौधहर्म्याणि**। प्रसीदन्त्यस्मिन्नयनमनांसीति **प्रासादः**।

---

१. **वप्रम्** (नपुं०)—यहाँ शुल्क आदि दिये जाते हैं इसलिए वप्र है।

२. **धूलिकुट्टिमम्** (नपुं०)—धूलि का खंडजा या फर्श होता है इसलिए धूलिकुट्टिम है। बद्धभूमिक नाम भी है।

प्राकार (दुर्ग) के तीन नाम हैं।

१. **प्राकारः** (पुं०)—उस नगर आदि की रक्षा करता है इसलिए प्राकार है। सम्पादक के अनुसार—जो विशेष रूप से बनाया जाता है इसलिए प्राकार है।

२. **परिधिः** (स्त्री०)—चारों ओर से घेरा जाता है इसलिए परिधि है।

३. **सालः, शालः** (पुं०)—अपने नगर पर्यन्त तक कवच बना लेता है इसलिए साल है।

विशाखा (गली) के दो नाम हैं।

१. **प्रतोली** (स्त्री०)—नगर में प्रवेश करते हुए लोग यहाँ पर गिन जाते हैं इसलिए प्रतोली है।

२. **गोपुराकृतिः** (स्त्री०)—गोपुर की रक्षा की जाती है। उसकी आकृति को गोपुराकृति कहते हैं। सम्पादक के अनुसार—नगर का द्वार गोपुर होता है जो योद्धाओं से रक्षित होता है। उस गोपुर की आकृति की तरह इस गली की भी आकृति रहती है इसलिए गोपुराकृति कहते हैं।

दुर्ग, गोपुर, महल आदि के नाम

श्लोकार्थ— प्रासाद, सौध, हर्म्य ये बड़े महल के नाम हैं। निर्व्यूह, मत्तवारण अपाश्रय के नाम हैं। वातायन, मतालम्ब ये खिड़की के नाम हैं, आलम्ब्यसुख और आसन ये बैठने के आसन के नाम हैं ॥१३५॥

भाष्यार्थ—बड़े महल के तीन नाम हैं।

१. **प्रासादः** (पुं०)—इसमें रहकर लोगों के नेत्र और मन प्रसन्न रहते हैं इसलिए प्रासाद है।

२. **सौधम्** (नपुं०)—सुधा-चूना से लिप्त होकर बना होता है इसलिए सौध है। सम्पादक के

''अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्''। सुधायां लिप्तायां भवं **सौधम्**। चन्द्रकरान् हरति **हर्म्यम्**।

निर्व्यूहो मत्तवारणः।

द्वौ अपाश्रये। निर्व्यूह्यते **निर्व्यूहः**। मत्ताः प्रमादिनः पतन्तो वार्यन्तेऽनेन **मत्तवारणः**।

आलम्ब्यसुखमासनम्।

द्वौ गवाक्षे। वातस्यायनं मार्गो **वातायनम्**। उभयम्। मतमभीष्टम् आलम्बम् **मतालम्बम्**। जालकम्। जालम्।

आलम्ब्यसुखमासनम्।

राज्ञामवष्टम्भे द्वौ। आलम्ब्यस्य अवलम्बनस्य सुखम् **आलम्ब्यसुखम्**। सुखेनास्यते **आसनम्**।

अनुसार-सुधा से लिप्त होता है इसलिए सौध (पुं॰) भी है।

३. हर्म्यम् (नपुं॰)—चन्द्रमा की किरणों का भी हरण करता है इसलिए हर्म्य है अर्थात् अपनी उज्ज्वलता से चन्द्र किरणों को भी फीका करता है। सम्पादक के अनुसार—अन्यत्र कहा है कि जो मन का हरण करता है इसलिए हर्म्य है। यहाँ प्रासाद, सौध और हर्म्य को सामान्य रूप से ग्रहण किया गया है। किन्तु उसमें कुछ विशेष है जिसे भूलना नहीं चाहिए। कहा है–''हर्म्य आदि धनी लोगों का निवास स्थान है, प्रासाद देवता और राजाओं का निवास स्थान कहलाता है, राजमहल का नाम सौध है। यह सौध शब्द पुं॰, नपुं॰ दोनों में है।'' यह अमरकोश में कहा है।

अपाश्रय के दो नाम हैं।

१. निर्व्यूहः (पुं॰)—इससे बाँध दिया जाता है इसलिए निर्व्यूह (खूंटी) है।

२. मत्तवारणः (पुं॰)—प्रमादी लोग गिरते हुए इससे रोक लिए जाते हैं इसलिए यह मत्तवारण है। इसे छज्जे के नीचे की छपरी भी कहते हैं।

गवाक्ष (झरोखे) के दो नाम हैं।

१. वातायनम् (नपुं॰), **वातायनः** (पुं॰)—हवा के आने का मार्ग है इसलिए वातायन है। यह दोनों लिंगों में है।

२. मतालम्बम् (नपुं॰)—सभी को अभीष्ट आलम्बन है अर्थात् सभी लोग झरोखे को इष्ट मानते हैं इसलिए मतालम्ब है। जालक और जाल ये दो नाम भी हैं।

राजाओं के आश्रय के दो नाम हैं।

१. आलम्ब्यसुखम् (नपुं॰)—इससे अवलम्बन, सहारा लेने में सुख होता है इसलिए आलम्ब्य सुख है।

२. आसनम् (नपुं॰)—इस पर सुख से बैठा जाता है इसलिए आसन है।

समः सवर्णः सज्ञातिः सदृक्षः सदृशः सदृक्।
तुल्यः सधर्मरूपश्च तुला कक्षोपमा विधा॥१३६॥

एकादश समाने। समानं मातीति **समः**। समानः सदृशो वर्णोऽस्य **सवर्णः**। समाना ज्ञातिः अस्य **सज्ञातिः**। समान इव दृश्यते **सदृक्षः**। ''समानान्ययोश्च'' सक् प्रत्ययः। शस्य च षत्वम्। ''षढो कस्से'' षस्य कत्वम्। ''कषयोगे क्षः''। समान इव दृश्यते **सदृशः**। ''समानान्ययोश्च'' टक्प्रत्ययः। अमात्रः। कानुबन्धत्वाद् गुणनिषेधः। टानुबन्धत्वान्नदादौ पठ्यते। ''दृक् दृश'' इति समानस्य सभावः। समान इव दृश्यते **सदृक्**। ''समानान्ययोश्च'' क्वि प्। तुलया सम्मितस्तुल्यः। समानो धर्मो यस्य **सधर्मः**। समानं रूपं यस्य स **सरूपः**। ''रूपनामगोत्रस्थानवर्णवयोवयत्सु'' इति समानस्य सादेशः। तोलनं **तुला**। ''तोलेरुच्च'' अङ् प्रत्ययः। ओकारस्योकारश्च। कषति **कक्षा**। उपमा। विधा। प्ररव्यः। प्रकाशः। प्रतिमः। सन्निभः। प्रकारः।

खिड़की, आसन, समान, उपमा, उपमान के नाम

श्लोकार्थ—सम, सवर्ण, सज्ञाति, सदृक्ष, सदृश, सदृक्, तुल्य, सधर्म, सरूप, तुला, कक्षा समान के नाम हैं। उपमा, विधा (अभिधा) उपमा के नाम हैं ॥१३६॥

भाष्यार्थ—समान के ग्यारह नाम हैं।

१. **समः** (वि०)—समान मापता है इसलिए सम है। सम्पादक के अनुसार—यह विग्रह चिन्तनीय है।

२. **सवर्णः** (वि०)—इसका वर्ण (क्षत्रियादि) समान है इसलिए वह सवर्ण है। वर्ण का अर्थ रंग भी होता है।

३. **सज्ञातिः** (वि०)—इसका गोत्र समान है इसलिए सज्ञाति है।

४. **सदृक्षः** (वि०)—समान की तरह दिखाई देता है इसलिए सदृक्ष है।

५. **सदृशः** (वि०)—एक जैसे की तरह ही दिखाई देता है इसलिए सदृश है।

६. **सदृक्** (वि०)—समान की तरह दिखाई देता है इसलिए सदृक् है।

७. **तुल्यः** (वि०)—तुलना में समान है इसलिए तुल्य है।

८. **सधर्मः** (वि०)—समान धर्म इनका होता है इसलिए सधर्म है।

९. **सरूपः** (वि०)—इनका रूप समान है इसलिए सरूप है।

१०. **तुला** (स्त्री०)—तोलना तुला है।

११. **कक्षा** (स्त्री०)—मिला देता है इसलिए कक्षा है।

उपमा, विधा आदि नाम भी हैं, देखें भाष्य।

सम्पादक के अनुसार—यहाँ सम आदि से सरूप तक नौ शब्द समान अर्थ में हैं। तुला, कक्षा, उपमा, विध इस प्रकार चार नाम तुला वाचक हैं। इस प्रकार समान और तुला वाची शब्द अलग कहने

विन्मान्यो विद्यमानश्च गुरुस्थानाम्बुजाननाः।
सिंहादीनि च पर्यायमुपमानेषु योजयेत्॥१३७॥

योजयेत् जोटयेत्। **पर्यायं** विशेषणम् **उपमानेषु**। वित्समः। वित्सवर्णः। वित्सज्ञातिः। वित्सदृक्षः। वित्सदृशः। वित्तुल्यः। वित्सधर्मः। वित्सरूपः। वित्तुल्यः। वित्कक्षः। अनेन प्रकारेण मान्यविद्यमान-गुरुस्थानाम्बुजाननसिंहादिशब्दा उपमानेषु प्रयोजनीयाः।

व्यपदेशो निभं व्याजः पदं व्यतिकरश्छलम्।
छद्म वृत्तान्तमुत्प्रेक्षा शब्दमन्यं च निर्णयेत् ॥१३८॥

सप्त कैतवे। व्यपदेशनं **व्यपदेशः**। पुंसि। निर् अतिशयेन भाति **निभम्**। व्यज्यते **व्याजः**। पुंसि। पद्यते गम्यते कैतवेन **पदम्**। व्यतिकरणं **व्यतिकरः**। छलति **छलम्**। क्लीबे छादयति **छद्म**। नान्तम्।

पर भी उनमें समानता है, इस अभिप्राय से सभी नाम समान अर्थ में कहे हैं। कहीं पर 'अभिधा' इस प्रकार पाठ है। परन्तु यहाँ तुला अर्थ वाला विधा शब्द ही उचित है। इस प्रकार तेरह नाम कहने चाहिए। 'अभिधा' पाठ स्वीकार करने पर 'उपमाऽभिधा' इस प्रकार दोनों शब्द उपमा, अभिधा उपमा के वाचक हो जाते हैं जिससे ग्यारह शब्द समान अर्थ के लिए ठीक बैठ जाते हैं।

श्लोकार्थ—वित्, मान्य, विद्यमान, गुरु, स्थान, अम्बुज, आनन, सिंह आदि शब्द उपमान में जोड़ना चाहिए॥१३७॥

उपमानों में विशेषण जोड़ देना चाहिए। वित्समः आदि शब्दों के लिए देखें भाष्य।

छल, उत्प्रेक्षा के नाम

श्लोकार्थ—व्यपदेश, निभ, व्याज, पद, व्यतिकर, छल, छद्म ये छल के नाम हैं। वृत्तान्त, उत्प्रेक्षा ये वार्ता के नाम हैं। इसी तरह अन्य शब्दों का भी निर्णय कर लेवें ॥१३८॥

भाष्यार्थ—कैतव (छल) के सात नाम हैं।

१. **व्यपदेशः** (पुं०)—कथन करना व्यपदेश है। सम्पादक के अनुसार—अतद्रूप अर्थात् जो वस्तु जैसी नहीं है उसका उस रूप में कथन करना या कहना व्यपदेश है।

२. **निभम्** (नपुं०)—अत्यधिक शोभित होता है इसलिए निभ है। सम्पादक के अनुसार—अन्यत्र कहा है कि—जो बहुत अधिक उसकी तरह दिखाई दे इसलिए निभ है।

३. **व्याजः** (पुं०)—जाना जाता है इसलिए व्याज है। सम्पादक के अनुसार—इससे विक्षेप किया जाता है अर्थात् किसी पदार्थ के छल से उस पदार्थ को कुछ ओर कहा जाता है, इसलिए व्याज है।

४. **पदम्** (नपुं०)—छल से जाना जाता है, या प्राप्त होता है इसलिए पद है।

५. **व्यतिकरः** (पुं०)—मिला देना व्यतिकर है।

६. **छलम्** (नपुं०)—छल करना छल है। सम्पादक के अनुसार—वस्तु तत्त्व इससे छेदन भेदन को प्राप्त होता है इसलिए छल है।

क्लीबम्। कैतवम्। कपटम्। कूटम्। उपाधिः। मिषम्। लक्ष्यम्।

वृत्तान्तमुत्प्रेक्षा शब्दमन्यं च निर्णयेत् ॥१३८॥

द्वौ वार्तायाम्। वृत्तस्य चरितस्यान्तो **वृत्तान्त**। उत्प्रेक्षणम् **उत्प्रेक्षा**। वार्ता। प्रवृत्तिः। उदन्तः।

व्रातः पूगः समाजश्च समूहः सन्ततिर्व्रजः।
व्यूहो निकायो निकुरो निकुरम्बं कदम्बकम् ॥१३९॥
ओघः समुदयः सङ्घः सङ्घातः समितिस्ततिः।
निचयः प्रकरःपङ्क्तिः पशूनां समजो व्रजः॥१४०॥

विंशतिस्समूहे। वृणोति छादयति **व्रातः**। पूज्यते पूयते वा **पूगः**। संवीयते **समाजः**। घञ्। समूह्यते

---

७. **छद्मन्** (नपुं॰)—वस्तु को आवरित करता है इसलिए छद्म है। सम्पादक के अनुसार—इससे रूप ढक दिया जाता है इसलिए छद्म है।

कैतव आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

वार्ता में दो शब्द हैं।

१. **वृत्तान्तम्** (नपुं॰)—वृत्त अर्थात् चरित। चरित का अन्त इसमें होता है इसलिए वृत्तान्त है। सम्पादक के अनुसार—गवेषणीय वृत्त की समाप्ति जिसके होती है वह वृत्तान्त है।

२. **उत्प्रेक्षा** (स्त्री॰)—जिसमें उनमान–उपमेय की कल्पना की जाती है वह उत्प्रेक्षा है।

वार्ता, प्रवृत्ति आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

समूह के नाम

श्लोकार्थ—व्रात, पूग, समाज, समूह, सन्तति, व्रज, व्यूह, निकाय, निकुर, निकुरम्ब, कदम्बक, ओघ, समुदय, संघ, संघात, समिति, तति, निचय, प्रकर, पंक्ति ये समूह के नाम हैं। पशुओं के समूह को समज कहते हैं ॥१३९-१४०॥

भाष्यार्थ—समूह के बीस नाम हैं।

१. **व्रातः** (पुं॰)—समूह वरण कर लेता है, घेर लेता है इसलिए व्रात है। सम्पादक के अनुसार—चेतन, अचेतन सभी पदार्थ समूह में व्रात आदि बीस शब्द प्रयुक्त होते हैं। ओघ, वर्ग, सन्तान ये सभी वंश के अवान्तर भेद हैं। परन्तु व्यवहार में प्रयोग मिलकर भी देखा जाता है। अन्यत्र यह भी कहा है कि—एक ही राशि पर जो रुक जाते हैं इसलिए समूह व्रात है।

२. **पूगः** (पुं॰)—समूह पूजा जाता है अथवा पवित्र किया जाता है इसलिए पूग है। सम्पादक के अनुसार—राशि के रूप में माना जाता है इसलिए पूजित होने से पूग है अथवा जन समुदाय से राशि भेद से कहा जाता है इसलिए पूग है। तात्पर्य यह है–पूग शब्द राशि वाचक है। जैसे जौ की राशि, चने की राशि इत्यादि। राशि होने से जन समुदाय में पूज्यता की दृष्टि आ जाती है इसलिए पूग शब्द की व्युत्पत्ति बन जाती है।

सम्यग् ढौक्यते **समूहः**। संतन्यते **सन्ततिः**। व्रजन्त्यत्र **व्रजः**। उभयम्। विशेषेण उह्यते **व्यूहः**। निचीयतेऽसौ **निकायः**। कायश्च। निकीर्यते **निकरः**। समन्तान्निकुरन्ति वदन्ति (छिन्दन्ति) **निकुरम्बः**। कुत्सितम् अम्बते कदम्बम्। स्वार्थे के **कदम्बकम्**। द्वौ क्लीबे। उह्यते **ओघः**। ''न्यङ्क्वादीनां हश्च घः।'' समुदीयतेऽत्र **समुदयः**। समुदायश्च। संहन्यन्तेऽस्मिन्नवयवाः **सङ्घः**। संहन्यते **संघातः**। हन्तेर्घः। इण् गतौ सम्पूर्वः। समयनं **समितिः**। स्त्रियां क्तिः। तननं **ततिः**। निचीयतेऽसौ **निचयः**। उच्चयः। प्रचयः। सञ्जयः। प्रक्रियते **प्रकरः**। पचि विस्तारवचने। पञ्च्। इदनुबन्धानां धातूनां नलोपो नास्तीति। पञ्चनं **पङ्क्तिः**। स्त्रियां क्तिः।

पशूनां समजो व्रजः

---

३. समाजः (पुं०)—समूह इकट्ठा करके रखा जाता है इसलिए समाज है।

४. समूहः (पुं०)—समीचीन रूप से जहाँ पहुँचा दिया जाता है वह समूह है।

५. सन्ततिः (स्त्री०)—समूह का समीचीन विस्तार किया जाता है इसलिए सन्तति है।

६. व्रजः (पुं०)—समूह में लोग पहुँचते हैं, जाते हैं इसलिए व्रज है। व्रजम् (नपुं०) शब्द भी है।

७. व्यूहः (पुं०)—समूह को विशेष रूप से ढोया जाता है, वहन किया जाता है इसलिए व्यूह है।

८. निकायः (पुं०)—वह समूह एकत्रित किया जाता है इसलिए निकाय है। 'काय' शब्द भी समूहवाची है।

९. निकरः (पुं०)—इकट्ठा किया जाता है इसलिए निकर है।

१०. निकुरम्बम् (नपुं०)—चारों ओर से छेदन होता है इसलिए निकुरम्ब है।

११. कदम्बरम् (नपुं०)—चारों ओर से कुत्सित शब्द होता है इसलिए कदम्ब है। इसे ही कदम्बक कहा है।

१२. ओघः (पुं०)—विचार-विमर्श मिल कर किया जाता है इसलिए ओघ है।

१३. समुदयः (पुं०)—एक साथ समान रूप से समूह दिखाई पड़ता है इसलिए समुदय है। समूदाय भी कहा है।

१४. संघः (पुं०)—इसमें अवयव अपना स्वरूप खो देते हैं इसलिए संघ है।

१५. संघातः (पुं०)—समूह में एक साथ घात होता है इसलिए संघात है।

१६. समितिः (स्त्री०)—समीचीन रूप से समूह में चला जाता है या प्रवृत्ति की जाती है इसलिए समिति है।

१७. ततिः (स्त्री०)—समूह फैला रहता है इसलिए तति है।

१८. निचयः (पुं०)—समूह एकत्रित होता है इसलिए निचय है। उच्चय, प्रचय, सञ्चय भी कहते हैं।

१९. प्रकरः (पुं०)—समूह में प्रक्रिया की जाती है अर्थात् नियम आदि बनाए जाते हैं इसलिए प्रकर है।

२०. पंक्तिः (स्त्री०)—समूह का विस्तार है इसलिए पंक्ति है।

पशूनां व्रजः समूहः **समजः** कथ्यते। अज क्षेपणे। अज् सम्पूर्वः। समजनं समजः। ''समुदोरजः पशुषु'' अल्।

समीपाभ्यासमासन्नमभ्यर्णं सन्निधिं विदुः।
अविदूरं च निकटमवलग्नमनन्तरम्॥१४१॥

नव समीपे। समाप्नोति **समीपम्**। अभ्युपेत्य चास्यते **अभ्यासः**। घञ्। आसद्यते स्म। **आसन्नम्**। अर्द गतौ याचने च। अर्द अभिपूर्वः। अभ्यर्दति स्म **अभ्यर्णः**। निष्ठाक्तः। ''सामीप्येऽमे'' नेट्। ''दाद्दस्य च'' दकारतकारयोर्नत्वम्। ''रष्टः''-धातोर्नकारस्य णत्वम्। तर्वस्य० निष्ठानस्य णत्वम्। सन्निधीयते **सन्निधिः**। अ (व) विदुनोतीति **अविदूरम्**। ''दुनोतेर्दीर्घश्च'' दुनोतेरक् प्रत्ययो भवति दीर्घश्च। टुदु उपतापे। निकटति **निकटम्**। (नि)नास्ति कटोऽस्येति व निकटः। कटे वर्षाऽऽवरणयोः। अवलगति (स्म) **अवलग्नः**। न अन्तरम् **अनन्तरम्**। सनीडम्। समर्यादम्। आरात्। सदेशम्। उपकण्ठम्। अभ्यग्रम्। सन्निकटम्। आसन्नम्।

जित्या हलिर्हलं सीरं लाङ्गलम् तत्करो बलः।
रेवतीदयितो नीलवसनः केशवाग्रजः॥१४२॥

पशुओं के समूह को समज कहा जाता है।

समजः (पुं०)—यहाँ समीचीन रूप से रख दिया जाता है इसलिए समज है।

समीप के नाम

श्लोकार्थ—समीप, अभ्यास, आसन्न, अभ्यर्ण, सन्निधि, अविदूर, निकट, अवलग्न, अनन्तर ये समीप के नाम हैं ॥१४१॥

भाष्यार्थ—समीप के नौ नाम हैं।

१. **समीपम्** (नपुं०)—निकटता को या साथ को प्राप्त है इसलिए समीप है।
२. **अभ्यासः** (पुं०)—निकट आकर बैठता है इसलिए अभ्यास है।
३. **आसन्नम्** (नपुं०)—समीपता को प्राप्त हुआ हो वह आसन्न है।
४. **अभ्यर्णः** (पुं०)—निकट चला जाता है इसलिए अभ्यर्ण है।
५. **सन्निधिः** (स्त्री०)—समीप में रखा जाता है इसलिए सन्निधि है।
६. **अविदूरम्** (नपुं०)—बहुत दूर नहीं है इसलिए अविदूर है।
७. **निकटम्** (नपुं०)—जिसके बीच कोई आवरण नहीं है इसलिए निकट है।
८. **अवलग्नः** (पुं०)—पास में लगा है इसलिए अवलग्न है।
९. **अनन्तरम्** (नपुं०)—अन्तर नहीं होना अनन्तर है। सनीड आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

हल और बलभद्र के नाम

श्लोकार्थ—जित्या, हलि, हल, सीर, लाङ्गल ये हल के नाम हैं। इनमें 'कर' जोड़ देने से बलभद्र के नाम हो जाते हैं। रेवतीदयित, नीलवसन, केशवाग्रज ये भी बलभद्र के नाम हैं ॥१४२॥

पञ्च हले। जि जये। जि। जीयते **जित्या**। ''जयतेर्हलौ क्यबेव'' क्यप्। ''धातो स्तोऽन्तः पानुबन्धे।'' ''स्त्रियामादा''। हलति **हलिः**। महद्हलं हलिरुच्यते। भूमिं हलति विलिखति **हलम्**। सीयते बध्यते वरत्रया **सीरम्**। लङ्गति भूमिं गच्छति **लाङ्गलम्**।

तत्करो बलः।

हलपर्यायतः करपर्यायेषु बलभद्रनामानि भवन्ति। जित्याकरः। हलिकरः। हलकरः। सीरकरः। लाङ्गलकरः। हलपाणिः। इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

रेवतीदयितो नीलवसनः केशवाग्रजः॥१४२॥

त्रयो बलभद्रे। रेवत्या दयितो भर्ता **रेवतीदयितः**। नीलं कृष्णं वर्णं वसनं यस्य स **नीलवसनः**। केशवस्याग्रजः **केशवाग्रजः**। कालिन्दीकर्षणः। बलः। प्रलम्बघ्नः।

अर्जुनः फाल्गुनो जिष्णुः श्वेतवाजी कपिध्वजः।
गाण्डीवी कार्मुकी सव्यसाची मध्यमपाण्डवः॥१४३॥
वृषसेनः सुनिर्मोको दैत्यारिः शक्रनन्दनः।
कर्णशूली किरीटी च शब्दभेदी धनञ्जयः॥१४४॥

भाष्यार्थ—हल के पाँच नाम हैं।

१. **जित्या** (स्त्री०)—इससे जय प्राप्त की जाती है इसलिए जित्या है अर्थात् बलभद्र का मुख्य अस्त्र हल होता है इसी से वह युद्ध करते हैं।

२. **हलिः** (स्त्री०)—भूमि जोतता है इसलिए हलि है। बड़े हल को हलि कहते हैं।

३. **हलम्** ()—भूमि को जोतता है, इसलिए हल कहते हैं।

४. **सीरम्** (नपुं०)—बड़ी रस्सी से बाँधा जाता है इसलिए सीर है।

५. **लाङ्गलम्** (नपुं०)—भूमि पर चलता है इसलिए लांगल है।

हल के पर्यायवाची शब्दों से 'कर' के पर्यायवाची शब्द जोड़ने पर बलभद्र के नाम होते हैं। जित्याकर इत्यादि। देखें भाष्य।

बलभद्र के तीन नाम हैं।

१. **रेवतीदयितः** (पुं०)—रेवती का पति होने से रेवतीदयित कहा है।

२. **नीलवसनः** (पुं०)—जिसका वस्त्र नीला-काला है इसलिए वह नीलवसन है।

३. **केशवाग्रजः** (पुं०)—केशव के अग्रज—बड़े भाई हैं इसलिए केशवाग्रज कहा है।

कलिन्दीकर्षण आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

अर्जुन, भीम के नाम

श्लोकार्थ—अर्जुन, फाल्गुन, जिष्णु, श्वेतवाजी, कपिध्वज, गाण्डीवी, कार्मुकी, सव्यसाची,

सप्तदशार्जुने। अर्ज सर्ज अर्जने। अजति (कीर्तिम्) **अर्जुनः**। ''ऋकृतृवृञ्य-मिदार्यर्जिभ्य उनः।'' फल निष्पत्तौ। फलतीति **फाल्गुनः**। ''पिशुनफाल्गुनौ'' एतौ उनप्रत्ययान्तौ निपात्येते। जयतीत्येवंशीलो **जिष्णुः**। ''जिभुवोः स्नुक्''। श्वेता वाजिनो यस्य स **श्वेतवाजी**। कपिर्वानरो ध्वजे यस्य स **कपिध्वजः**। गां जीवतीत्येवंशीलो **गाण्डीवी**। कार्मुकं धनुरस्तीत्यस्य **कार्मुकी**। सव्वे साचयतीति **सव्यसाची**। मध्यमश्चासौ पाण्डवः **मध्यमपाण्डवः**। युधिष्ठिरभीमयोः सहदेव-नकुलयोर्मध्येऽर्जुनः, तेन मध्यमपाण्डवः कथ्यते। वृषं सिनोति बध्नातीति **वृषसेनः**। सुनिर्मुच्यते शत्रुभिः **सुनिर्मोकः**। दुःसाध्यत्वात्। दैत्यस्यारिः

मध्यमपाण्डव, वृषसेन, सुनिर्मोक, दैत्यारि, शक्रनन्दन, कर्णशूली, किरीटी, शब्दभेदी, धनञ्जय ये अर्जुन के नाम हैं॥१४३-१४४॥

भाष्यार्थ—अर्जुन के सत्रह नाम हैं।

१. अर्जुनः (पुं०)—कीर्ति का अर्जन करता है, इसलिए अर्जुन है।

२. फाल्गुनः (पुं०)—फल देता है, कार्य पूर्ण करता है इसलिए फाल्गुन है।

३. जिष्णुः (पुं०)—जीतता है, जयशील होता है इसलिए जिष्णु है।

४. श्वेतवाजिन् (पुं०)—जिसके हाथी सफेद होते हैं इसलिए श्वेतवाजी है।

५. कपिध्वजः (पुं०)—जिसके ध्वजा में वानर चिह्न होता है इसलिए वह कपिध्वज है।

६. गाण्डीविन् (पुं०)—गायों को जिलाने का स्वभाव वाला होने से गाण्डीवी कहलाता है। सम्पादक के अनुसार—विराट नगर में पाण्डवों को खोजने के लिए भीष्म के द्वारा गायों का आक्रमण होने पर अर्जुन द्वारा रक्षण करना महाभारत में कहा है। इसलिए गाय रक्षा करने से गाण्डीव अर्जुन का धनुष है। वह धनुष इसके पास होता है इसलिए गाञ्जीवी है। कल्पद्रुम कोष में—गाण्डीव, गाण्डिव, गाञ्जीव, गाञ्जिव ये शब्द हैं। मूल में गाण्डीवी शब्द गाण्डी-ग्रन्थि से बना है। यह ग्रन्थि जिसके पास होती है वह गाण्डीवी है।

७. कार्मुकिन् (पुं०)—इसके पास धनुष होता है इसलिए कार्मुकी है।

८. सव्यसाचिन् (पुं०)—बांये हाथ से बाण वर्षा करता है इसलिए सव्यसाची है।

९. मध्यमपाण्डवः (पुं०)—मध्यम ही वह पाण्डव है इसलिए मध्यमपाण्डव कहा है। युधिष्ठिर, भीम तथा नकुल, सहदेव के बीच अर्जुन हैं, इसलिए मध्यम पाण्डव कहे जाते हैं।

१०. वृषसेनः (पुं०)—वृष-सांड को बाँध लेता है इसलिए वृषसेन है अथवा वृष—शत्रु उसको जो बाँध लेता है वह वृषसेन-अर्जुन है।

११. सुनिर्मोकः (पुं०)—शत्रुओं से अच्छी तरह छूट जाता है अर्थात् बच जाता है इसलिए सुनिर्मोक है क्योंकि इसे पकड़ना दुःसाध्य होता है।

शत्रु**र्दैत्यारिः**। शक्रस्येन्द्रस्य नन्दनः **शक्रनन्दनः** अर्जुनः कथ्यते। यमस्य पुत्रो युधिष्ठिरः। वायोर्भीमः। इन्द्रस्यार्जुनः, अश्विनीकुमारयोर्नकुलसहदेवौ पुत्रौ। असत्यमेवं तत्। कर्णे शूलं विद्यते यस्यासौ **कर्णशूली**। किरीटं शेखरं विद्यते यस्यासौ **किरीटी**। शब्दभेदोऽस्त्यस्य **शब्दभेदी**। केचित् शब्दवेदीति पठन्ति इत्यपि स्यात्। जि जये। धनपूर्वः। धनं जितवान् धनञ्जयः। 'नाम्नि' खः। 'नाम्यन्त०' गुणः। 'ए अय्'। ''ह्रस्वा रुषोर्मोन्तः।'' धनञ्जयेति कवेर्नामाभिधानमपि ज्ञातव्यम्। स कथम्भूतः? शब्दभेदी। अतः परः कोऽपि नास्ति। पाण्डवनाम मिषेण स्वनाम कथितमस्ति।

कुरुकीचकयोर्वैरी वायुपुत्रो वृकोदरः।
समवर्ती यमः कालः कृतान्तो मृत्युरन्तकः॥१४५॥

कुरुवैरी। कीचकवैरी। कुरुशत्रुः। कीचकशत्रुः। कुरुरिपुः। कीचकरिपुः। अनिलसुतः। पवनात्मजः। इत्यादीनि भीमस्य पर्यायनामानि ज्ञातव्यानि। वृकोऽरण्यश्वा तद्वत् उदरं यस्य स **वृकोदरः**।

समवर्ती यमः कालः कृतान्तो मृत्युरन्तकः॥१४५॥

---

१२. दैत्यारिः (पुं०)—दैत्य का शत्रु होता है इसलिए दैत्यारि है।

१३. शक्रनन्दनः (पुं०)—इन्द्र का पुत्र है इसलिए शक्रनन्दन अर्जुन को कहा जाता है।

यम का पुत्र युधिष्ठिर, वायु का पुत्र भीम, इन्द्र का पुत्र अर्जुन, अश्विनीकुमार के नकुल सहदेव पुत्र हैं। यह सब असत्य है।

१४. कर्णशूलिन् (पुं०)—जिसके कान में शूल रहता है वह अर्जुन कर्णशूली है।

१५. किरीटिन् (पुं०)—जिसके पास शेखर (मुकुट) रहता है वह अर्जुन ही किरीटी कहलाते हैं।

१६. शब्दभेदिन् (पुं०)—इसके पास शब्द भेद होता है अर्थात् शब्दभेदी बाण होता है इसलिए वह शब्दभेदी है। कुछ लोग शब्दवेदी भी पढ़ते हैं।

१७. धनञ्जयः (पुं०)—धन को जीत लिया है इसलिए धनञ्जय है। इससे धनञ्जय कवि का नाम भी जानना चाहिए। वह धनञ्जय कवि भी शब्दभेदी हैं। इन धनञ्जय से बढ़कर कोई भी शब्दवेत्ता नहीं है। पाण्डव के नाम के व्याज (छल) से अपना नाम भी कह दिया है।

भीम, मृत्यु के नाम

श्लोकार्थ—कुरु और कीचक में वैरी शब्द जोड़ने से भीम के नाम होते हैं। वायुपुत्र और वृकोदर भी भीम के नाम हैं। समवर्ती, यम, काल, कृतान्त, मृत्यु, अन्तक ये काल के नाम हैं ॥१४५॥

भाष्यार्थ—कुरुवैरी इत्यादि ये भीम के पर्यायवाची नाम जानना चाहिए। देखें भाष्य।

वृकोदरः (पुं०)—जंगली कुत्ते को वृक कहते हैं। उसके समान उदर(पेट) जिसका है इसलिए वह वृकोदर है। सम्पादक के अनुसार—भयानक जठराग्नि को वृक कहते हैं। वह उसके उदर में रहती है इसलिए वृकोदर है।

षड् यमे। सर्वेषु समं तुल्यं वर्तते **समवर्ती**। नान्तः। रिपौ मित्रे च समं वर्तते इति वा। यमयति निगृह्णाति प्रजां **यमः**। यमलजातत्वाद्वा। कलयति जन्तून् विनाशहेतुत्वेन **कालः**। कृतोऽन्तो विनाशो येन स **कृतान्तः**। म्रियतेऽनेनेति **मृत्युः**। ''भुजिमृङोः युक्त्युकौ''। अन्तं करोतति **अन्तकः**। शमनः। प्रेतपतिः। पितृपतिः। कीनाशः। कालिन्दीसोदरः। धर्मराजः। दण्डधरः। हरिः। दक्षिणापतिः। श्राद्धदेवः।

तदात्मजो जातरिपुः कौन्तेयो भरतान्वयः।
कौरव्यो राजयक्ष्माऽसौ सोमवंशो युधिष्ठिरः॥१४६॥

सप्त युधिष्ठिरे। तस्य धर्मस्यात्मज**स्तदात्मजः**। समवर्तिपुत्रः। यमोद्वहः। कृतान्तपोतः। मृत्युनन्दनः। अन्तकदारकः। इत्यादीनि युधिष्ठिरपर्यायनामानि ज्ञातव्यानि। जातस्य स्वगोत्रस्य रिपुः **जातरिपुः**। कुन्त्या

यम के छह नाम हैं।

१. समवर्तिन् (पुं॰)—सभी में समान रूप से रहता है इसलिए समवर्ती है अथवा शत्रु-मित्र में समान रहता है इसलिए समवर्ती है।

२. यमः (पुं॰)—प्रजा को दण्ड देता है इसलिए यम है। यमल से उत्पन्न होने के कारण भी यम कहा है।

३. कालः (पुं॰)—विनाश का हेतु होने से जन्तुओं को समाप्त करता है इसलिए काल है।

४. कृतान्तः (पुं॰)—जिससे विनाश किया जाता है इसलिए वह कृतान्त है।

५. मृत्युः (पुं॰)—इससे मर जाता है इसलिए मृत्यु है।

६. अन्तकः (पुं॰)—अन्त कर देता है इसलिए अन्तक है।

शमन, प्रेतपति आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य। इनमें से कुछ नाम भाष्य में दिये हैं और कुछ नये नाम भी हैं।

युधिष्ठिर के नाम

श्लोकार्थ—तदात्मज, जातरिपु, कौन्तेय, भरतान्वय, कौरव्य, राजयक्ष्मा, सोमवंश, युधिष्ठिर ये युधिष्ठिर के नाम हैं ॥१४६॥

भाष्यार्थ—युधिष्ठिर के सात नाम हैं।

तदात्मजः (पुं॰)—वह धर्म के पुत्र हैं इसलिए तदात्मज हैं।

विशेष—यहाँ तत् शब्द से ऊपर आए यम शब्द की अनुवृत्ति लेनी चाहिए। समवर्तिपुत्र आदि नाम बनेंगे। देखें भाष्य।

१. जातरिपुः (पुं॰)—अपने गोत्र का शत्रु है इसलिए जातरिपु है। सम्पादक के अनुसार—कोशान्तरों के प्रमाण से, महाभारत आदि कथा के संवाद से और महाकवियों के प्रयोग से यहाँ 'अजातरिपुः' ऐसा सन्धि विच्छेद करना युक्त है। जिसके शत्रु उत्पन्न नहीं हुए वह युधिष्ठिर अजातशत्रु नाम पाते हैं। अभि॰ चि॰ में कहा भी है–अजातशत्रु, शल्यारि, धर्मपुत्र और युधिष्ठिर ये नाम हैं।

अपत्यं पुमान् **कौन्तेयः**। भरतोऽन्वयोऽस्य **भरतान्वयः**। कुरोरपत्यं पुमान् **कौरव्यः**। राजभिर्नरेन्द्रैर्यक्ष्यते पूज्यते **राजयक्ष्मा**। "सर्वधातुभ्यो मन्"। राजलक्ष्मा चेति केचित्पठन्ति। सोमो वंशोऽस्य **सोमवंशः**। युधि संग्रामे तिष्ठतीति **युधिष्ठिरः**।

श्वेतार्जुनो शुचिः श्येतोऽवलक्षं सितपाण्डुरम्।
शुक्लावदातं धवलं पाण्डुः शुभ्रं शशिप्रभम् ॥१४७॥

त्रयोदश श्वेते। श्वेतते **श्वेतः**। अर्ज्यतेऽ**र्जुनः**। शोचतीति **शुचिः**। शुच शोके। श्यायते **श्येतः**। अवलक्षयति **अवलक्षः**। वलक्षश्च। सिनोति बध्नाति (मनः) **सितः**। पण्डते याति मनोऽत्र **पाण्डुरः**। अथवा

---

२. कौन्तेयः (पुं०)—कुन्ती का पुत्र है इसलिए कौन्तेय है।

३. भरतान्वयः (पुं०)—इसका वंश भरत से जुड़ा है इसलिए भरतान्वय कहा है।

४. कौरव्यः (पुं०)—कुरुराज के पुत्र हैं इसलिए कौरव्य हैं।

५. राजयक्ष्मन् (पुं०)—राजाओं से पूजे जाते हैं इसलिए राजयक्ष्म हैं। कुछ लोग राजलक्ष्मा पाठ भी पढ़ते हैं।

६. सोमवंशः (पुं०)—इनका वंश सोम है इसलिए सोमवंश नाम है।

७. युधिष्ठिरः (पुं०)—युधि-संग्राम में ठहरते हैं इसलिए युधिष्ठिर हैं।

सफेद रंग के नाम

श्लोकार्थ—श्वेत, अर्जुन, शुचि, श्येत, अवलक्ष, सित, पाण्डुर, शुक्ल, अवदात, धवल, पाण्डु, शुभ्र, शशिप्रभ ये सफेद रंग के नाम हैं ॥१४७॥

भाष्यार्थ—सफेद रंग के तेरह नाम हैं।

१. श्वेतः (पुं०)—सफेद दिखाई देता है इसलिए श्वेत है।

२. अर्जुनः (पुं०)—लोगों के द्वारा इसका संग्रह किया जाता है इसलिए अर्जुन है।

३. शुचिः (पुं०)—शोक पैदा करता है इसलिए शुचि है। सम्पादक के अनुसार—मल रहित उज्ज्वल कर देता है इसलिए शुचि है। शुचि, उज्ज्वल वस्तुओं का संग्रह सभी लोग करते हैं यह अनुभव सिद्ध है। शुच धातु दीप्ति अर्थ में भी है जिससे प्रकाशित करता है वह शुचि है।

४. श्येतः (पुं०)—इसके आगे नील आदि रंगों का विशुद्धपना चला जाता है इसलिए श्येत है।

५. अवलक्षः (पुं०)—उठकर दिखाई देता है इसलिए अवलक्ष है। सम्पादक के अनुसार—अन्य वर्णों की अपेक्षा से उत्कृष्ट रूप से दिखाई देता है या देखा जाता है इसलिए अवलक्ष है। वलक्ष शब्द भी पढ़ा जाता है।

६. सितः (पुं०)—मन को बाँध देता है इसलिए सित है।

७. पाण्डुरः (पुं०)—इस रंग में मन चला जाता है इसलिए पाण्डुर है अथवा इसके रंग में पाण्डुत्व सफेदपन है इसलिए पाण्डुर या पाण्डु या पाण्डर है।

''नगपांशुपाण्डुभ्यो रः'' पाण्डुत्वमस्यास्तीति **पाण्डुरः**। पाण्डुः। पाण्डरः। शोकति मनोऽस्मिन् **शुक्लः**। शुक् गतौ। अवदायते शोध्यते **अवदातः**। धवति **धवलः**। पण्डते याति मनोऽस्मिन् **पाण्डुः**। शोभते **शुभ्रः**। शशिन इव प्रभा यस्य **शशिप्रभम्**। गौरः। हरिणः।

कृष्णः नीलासितं कालम् धूमं धूम्रमलिप्रभः।
तमोऽन्धकारं तिमिरं ध्वान्तं संतमसं तमम्॥१४८॥

चत्वारः कृष्णे। वर्णान् कर्षति **कृष्णः**। नीलति **नीलम्**। उभयम्। न सितम् **असितम्**। कं सुखमालाति **कालः**। कालयति वा मनः कालः। मेचकम्। श्यामलम्। श्यामं च। पालाशम्। हरित्। शिखिकण्ठाभः इति दुर्गः।

विशिष्ट कृष्णे त्रयः। धूनोति **धूमः**। धूनोत्यभिभवति रागं **धूम्रः**। धूमलश्च। अलिवत्प्रभा यस्य सोऽ**लिप्रभः**।

---

८. शुक्लः (पुं॰)—इसमें मन रहता है या चला जाता है इसलिए शुक्ल है।

९. अवदातः (पुं॰)—शोधा जाता है या शुद्ध करके पाया जाता है इसलिए अवदात है।

१०. धवलः (पुं॰)—जो अशुद्धता को दूर करता है वह धवल है। सम्पादक के अनुसार—अशोभा को दूर करता है इसलिए धवल है अथवा इसमें मन दौड़ता है इसलिए धवल है। 'धावु' धातु गति और शुद्धि में है।

११. पाण्डुः (पुं॰)—इसमें मन जाता है इसलिए पाण्डु है।

१२. शुभ्रः (पुं॰)—शोभित होता है इसलिए शुभ्र है।

१३. शशिप्रभम् (नपुं॰)—चन्द्रमा के समान जिसकी प्रभा, कान्ति होती है इसलिए वह शशिप्रभ है। गौर, हरिण नाम भी हैं।

काले रंग के नाम

श्लोकार्थ—कृष्ण, नील, असित, काल ये काले रंग के नाम हैं। धूम, धूम्र, अलिप्रभ ये विशेष काले रंग के नाम हैं। तमस्, अन्धकार, तिमिर, ध्वान्त, सन्तमस, तम ये अन्धकार के नाम हैं ॥१४८॥

भाष्यार्थ—काले रंग के चार नाम हैं।

१. कृष्णः (पुं॰)—सभी रंगों को खींच लेता है, अपने में समा लेता है इसलिए कृष्ण है।

२. नीलम् (नपुं॰), नीलः (पुं॰)—नीला करता है इसलिए नील है।

३. असितम् (नपुं॰)—श्वेत नहीं है इसलिए असित कहते हैं।

४. कालः (पुं॰)—सुख लाता है इसलिए काल कहा है अथवा मन को काला कर देता है इसलिए काल है। मेचक आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

विशिष्ट कृष्ण वर्ण के तीन नाम हैं।

१. धूमः (पुं॰)—अन्य को हटा देता है, आच्छादित कर लेता है इसलिए धूम है।

२. धूम्रः (पुं॰)—राग को (लालिमा को) दबा देता है इसलिए धूम है। धूमल शब्द भी है।

३. अलिप्रभः (पुं॰)—भौंरे के समान जिसकी प्रभा/कान्ति है वह अलिप्रभ है।

तमोऽन्धकारं तिमिरं ध्वान्तं संतमसं तमम्॥१४८॥

ताम्यति मन्दीभवति चक्षुरत्र **तमः**। सान्तम्। क्लीबे। अन्धं दृष्ट्युपघातं करोतीति **अन्धकारम्**। तिम्यते आच्छाद्यतेऽनेन **तिमिरम्**। कान्तारे ध्वन्यते **ध्वान्तम्**। सम् सम्यक् प्रकारेण तमः **सन्तमसम्**। ताम्यतीति **तममि**त्यदन्तम्। क्लीबे। अवतमसम्। अन्धतमसम्। तमिस्रम्। भूछाया। भूछायम्। दिगम्बरम्।

लोहितं रक्तमाताम्रं पाटलं विशदारुणम्।
पीतं गौरं हरिद्राभम् पालाशं हरितं हरित् ॥१४९॥

षड् रक्ते। रोहति जायते शोभाऽत्र **लोहितः**। रज्यते **रक्तम्**। आताम्यते काङ्क्ष्यते कर्णेषु **आताम्रः**। पाटयतीति **पाटलः**। पाटेरलः। विशीयते **विशदः**। ऋच्छति इयर्त्य (र्ति वाऽ) **रुणः**।

अन्धकार के छह नाम हैं।

१. **तमस्** (नपुं०)—इसमें आँख मंद पड़ जाती है अर्थात् दिखाई नहीं देता है इसलिए तमस् है।

२. **अन्धकारम्** (नपुं०)—दृष्टि का घात कर देता है या अन्धा बना देता है इसलिए अन्धकार है।

३. **तिमिरम्** (नपुं०)—इससे ढक जाता है इसलिए तिमिर है।

४. **ध्वान्तम्** (नपुं०)—जंगली स्थान में अन्धकार पूर्ण रूप से भरा रहता है इसलिए ध्वान्त है।

५. **सन्तमसम्** (नपुं०)—सम्यक् प्रकार से अन्धकार होने को सन्तमस कहते हैं।

६. **तमम्** (नपुं०)—दृष्टि मन्द करता है इसलिए तम है। अवतमस आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

लाल रंग, नीले, हरे, रक्त वर्ण और पञ्च वर्ण के नाम

श्लोकार्थ—लोहित, रक्त, आताम्र, पाटल, विशद, अरुण ये लाल रंग के नाम हैं। पीत, गौर, हरिद्राभ ये पीले रंग के नाम हैं। पालाश, हरित, हरित् ये हरे रंग के नाम हैं ॥१४९॥

भाष्यार्थ—रक्त (लाल) वर्ण के छह नाम हैं। सम्पादक के अनुसार—दो रक्त वर्ण के और तीन विशद (सफेद) अरुण (लाल) रंग के नाम हैं, ऐसा कहना चाहिए। विशद ही जिसका रूप है ऐसा श्वेत विशिष्ट रक्त पाटल है। अमर कोश में कहा भी है–श्वेत रक्त पाटल कहलाता है।

१. **लोहितम्** (नपुं०)—इस रंग में शोभा उत्पन्न होती है इसलिए लोहित है।

२. **रक्तम्** (नपुं०)—रंगा जाता है इसलिए रक्त है।

३. **आताम्रः** (पुं०)—कर्णों में चाहा जाता है इसलिए आताम्र है अर्थात् सुनने में लोग चाहने लगते हैं इसलिए आताम्र है।

४. **पाटलः** (पुं०)— रंग देता है इसलिए पाटल है। पाटेरल भी कहते हैं।

५. **विशदः** (पुं०)—सफेद रंग जैसा उज्ज्वल करता है या स्पष्ट रूप से जाना जाता है इसलिए विशद है।

६. **अरुणः** (पुं०)—अर्ति-शोक को देता है इसलिए अरुण है।

पीतं गौरं हरिद्राभम् पालाशं हरितं हरित् ॥१४९॥

हरिद्रारक्तवर्णे त्रयः। पीयते मनोऽनेन **पीतम्**। गाते गच्छति वर्णविशेषं **गौरः**। तथा च नाममालायाम्-''गौरः श्वेतेऽरुणे पीते विशुद्धे चन्द्रमस्यपि विशदे''। हरिद्रावत् आभा छविर्यस्य **हरिद्राभः**।

पालाशं हरितं हरित्।

हरिद्वर्णे त्रयः। पलाशस्य वर्णस्यायं **पालाशः**। पलाश इत्याह-''राक्षसे। किंशुके वर्णे पलाशाख्या। हरित्यपि''। हरति चित्तं **हरितम्**। **हरित्**।

हरिणी लोहिनी शोणी गौरी श्येनी पिशङ्ग्यपि।

षड् रक्तवर्णे। ''श्येतैतहरितलोहितेभ्यस्तो नः'' अनेन ईप्रत्यये तकारस्य नकारश्च। **हरिणी**। तथा च हलायुधे-''शुकाभा हरिणी स्मृता।'' हरिता च। रोहति जायते शोभाऽत्र लोहितः। रलयोरेक्यम्। ''श्येतैतहरितलोहितेभ्यस्तो नः'' अनेन ईस्तकारस्य च नकारः। **लोहिनी** जाता। हलायुधे-

---

श्लोकार्थ—हरिणी, लोहिनी, शोणी, गौरी, श्येनी, पिशंगी ये रक्त वर्ण के नाम हैं। सारंगी, शवरी, काली, कल्माषी, नीली पिञ्जरी ये पञ्च वर्ण के नाम हैं ॥१४९॥

पीले रंग के तीन नाम हैं।

१. **पीतम्** (नपुं॰)—इससे मन पी लिया जाता है इसलिए पीत है। सम्पादक के अनुसार—वर्णों को पी लेता है इसलिए पीत है।

२. **गौरः** (पुं॰)—वर्ण विशेष को चला जाता है, प्राप्त होता है इसलिए गौर है। नाममाला में भी कहा है-''गौर रंग श्वेत, अरुण, पीत और चन्द्रमा की विशुद्धि में तथा विशद अर्थ में भी है।''

३. **हरिद्राभः** (पुं॰)—हल्दी के समान आभा इसकी है इसलिए हरिद्राभ है।

हरे रंग के तीन नाम हैं।

१. **पालाशः** (पुं॰)—पलाश के रंग का यह है इसलिए पालाश है। राक्षस में, किंशुक वर्ण में, हरित् में भी पलाश कहा जाता है।

२. **हरितम्** (नपुं॰)—चित्त को हर लेता है इसलिए हरित है।

३. **हरित्** (पुं॰)—अर्थ वही।

भाषार्थ—रक्त के छह नाम हैं।

सम्पादक के अनुसार—यहाँ छह नाम स्त्रीलिंग में हैं जो कि उस-उस वर्ण विशेष में जानना चाहिए न कि केवल रक्त वर्ण के लिए हैं। उस-उस वर्ण के भेद में जैसे—हरिणी—शुक (तोते) की आभा के समान, लोहिनी—जपा कुसुम के समान, शोणी—लाल कमल की छवि, गौरी—हल्दी की आभा, श्येनी—कुमुद पत्ते की आभा, पिशङ्गी—पीत लाल रंग की आभा।

१. **हरिणी** (स्त्री॰)—तोते के रंग की आभा हरिणी कही गई है। इसे हरिता भी कहते हैं।

२. **लोहिनी** (स्त्री॰)—इस रंग में शोभा उत्पन्न होती है इसलिए लोहिनी है। हलायुध कोश में कहा

''जपाकुसुमसंकाशा लोहिनी परिकीर्तिता।''

शोणते **शोणी**। गाते गौरः। नदादित्वादीः। **गौरी**। श्यायते गच्छति श्रियं **श्येनी**। हलायुधे-''श्येनी कुमुदपत्राभा।'' श्येना च। पेशति पिशङ्गः। ईप्रत्यये **पिशङ्गी**।

सारङ्गी शवरी काली कल्माषी नीली पिञ्जरी ॥१५०॥

षट् पञ्च वर्णे। सारयति गमयति [बहुवर्णान्] **सारङ्गः**। ईप्रत्यये **सारङ्गी**। शवति याति वर्णान् शवरः शवलश्च। ईप्रत्यये **शवरी**। कालयति कालः। ईप्रत्यये **काली**। कलयति वर्णान् कल्माषः। ईः **कल्माषी**। नील गन्धे। नीलति नीलम्। ईप्रत्यये **नीली**। पिञ्जति **पिञ्जरः**। ईप्रत्यये **पिञ्जरी**।

परागं मधु किञ्जल्कं मकरन्दं च कौसुमम्।
उपचाराद्रजः पांशुरेणुधूलीश्च योजयेत्॥१५१॥

है-''जपा कुसुम की तरह आभा लोहिनी कही गई है।''

३. **शोणी** (स्त्री०)—लाल खून का रंग देती है इसलिए शोणी है।

४. **गौरी** (स्त्री०)—गौर वर्ण का रंग विशेष ही गौरी है।

५. **श्येनी** (स्त्री०)—लक्ष्मी को या शुभ को देती है इसलिए श्येनी है। हलायुध कोश में कहा है कि—'कुमुद पत्र की आभा वाला रंग होने से श्येनी है।' श्येना भी कहते हैं।

६. **पिशङ्गी** (स्त्री०)—भूरा रंग देता है इसलिए पिशङ्गी है।

पञ्च वर्ण के छह नाम हैं।

१. **सारङ्गी** (स्त्री०)—बहुत रंगों को प्राप्त होता है इसलिए सारङ्ग है। ई प्रत्यय लगाने से सारङ्गी होता है।

२. **शवरी** (स्त्री०)—रंगों को प्राप्त करता है इसलिए शवरी है।

३. **काली** (स्त्री०)—कालापन लाती है इसलिए काली है।

४. **कल्माषी** (स्त्री०)—रंगों को मिला-जुला देता है वह कल्माष है। उसी में ई प्रत्यय से कल्माषी होता है।

५. **नीली** (स्त्री०)—नीला करती है इसलिए नील है। ई प्रत्यय से नीली होता है।

६. **पिञ्जरी** (स्त्री०)—सुनहरी लगता है इसलिए पिञ्जर है। ई प्रत्यय से पिञ्जरी बनता है।

सम्पादक के अनुसार—इन नाम के रंगों में कुछ भेद हैं। सारङ्गी, शम्बरी, कल्याणी ये चित्रवर्ण अर्थात् अनेक प्रकार के मिश्रित रंगों में ये नाम प्रयुक्त होते हैं। काली नाम नीलेपन की समाप्ति में और पिञ्जरी नाम पीले-लाल रंग में प्रयुक्त होता है।

पराग और धूलि के नाम

श्लोकार्थ—पराग, मधु, किञ्जल्क, मकरन्द, कौसुम ये नाम पराग के हैं। रजस्, पांशु, रेणु, धूली ये नाम धूलि के हैं ॥१५१॥

पञ्च कुसुरेणौ। परं प्रकर्षमग्यते सम्भाव्यते पुष्पेषु **परागः**। उभयम्। मन्यते सम्भाव्यते पुष्पेषु **मधु**। उभयम्। किं जल्पति **किञ्जल्कम्**। मङ्क्यते मण्ड्यते पुष्पमनेन **मकरन्दम्**। कुसुमस्येदं **कौसुमम्**।

उपचाराद्रजः पांशुरेणुधूलीश्च योजयेत्॥१५१॥

चत्वारो धूल्याम्। रंज रागे। रजत्यनेन **रजः**। ''उषिरंजिशृभ्यो यण्वत्''। नष्क धष्क पशि नाशने। पंशयते **पांशुः**। ''बहिरहितलिपंशिभ्य उण्।'' रीङ् गतौ। रीयते **रेणुः**। ''दाभारीवृञ्भ्यो नुः''। धूयते धुनोति दृष्टिं वा **धूलिः**। **उपचारात्** पुष्परजः। सुमनःपांशुः। पुष्परेणुः। लतान्तधूलिः। प्रसवरजः। प्रसूनरेणुः। इत्यादीनि पुष्परजो नामानि ज्ञातव्यानि।

कलङ्कावद्यमलिनं किञ्जल्कं लक्ष्म लाञ्छनम्।
निबोधमधमं पङ्कं मलीमसमपि त्यजेत्॥१५२॥

भाष्यार्थ—कुसुम रेणु के पाँच नाम हैं। सम्पादक के अनुसार—पराग के नाम होते हुए भी कुछ भेद जानना। पराग और किञ्जल्क शब्द पुष्प धूलि के वाचक हैं। मधु और मकरन्द शब्द पुष्प रस के वाचक हैं। कौसुम शब्द इन दोनों का (पराग और रस) का वाचक है।

१. परागः (पुं॰), **परागम्** (नपुं॰)— पुष्पों में इससे उत्कृष्टता मानी जाती है इसलिए पराग है। परागम् (नपुं॰) में भी है।

२. मधुः, मधु (पुं॰, नपुं॰)—पुष्पों में इसकी सम्भावना की जाती है इसलिए मधु है।

३. किञ्जल्कम् (नपुं॰)—कुछ कहता है इसलिए किञ्जल्क है। सम्पादक के अनुसार—कुछ जल जाता है इसलिए अथवा कुछ जड़ीभूत हो जाता है इसलिए किञ्जल्क है।

४. मकरन्दम् (नपुं॰)—इससे पुष्प शोभित हो जाता है इसलिए मकरन्द है। सम्पादक के अनुसार—मकर—काम। काम को भी खण्डित कर देता है, क्योंकि यह कामोत्पादक है अथवा मकर को भी बाँध लेता है इसलिए मकरन्द है।

५. कौसुमम् (नपुं॰)—कुसुम का यह होता है अर्थात् कुसुम सम्बन्धी कौसुम होता है।

धूलि के चार नाम हैं।

१. रजस् (नपुं॰)—इससे रंग जाता है इसलिए रज है।

२. पांशुः (पुं॰)—चिपक जाती है इसलिए पांशु है।

३. रेणुः (पुं॰)—चली जाती है, उड़ती है इसलिए रेणु है।

४. धूलिः (पुं॰)—दृष्टि को धुँधला कर देती है, कंपा देती है इसलिए धूलि है।

उपचार से भी पुष्परज आदि पुष्पराज के नाम जानना चाहिए। देखें भाष्य।

कलंक के नाम

श्लोकार्थ—कलंक, अवद्य, मलिन, किञ्जल्क, लक्ष्म, लाञ्छन, निबोध, अधम, पंक, मलीमस ये कलंक के नाम हैं इन्हें छोड़ देवें ॥१५२॥

दश कलङ्के। कल्यते लक्षणेन **कलङ्कः**। न वद्यं समीचीनम् **अवद्यम्**। मल्यते धार्यतेऽपयशोऽनेन **मलिनम्**। किं कुत्सितं जल्पति **किञ्जलकम्**। लक्षयति परं नान्तम् **लक्ष्म**। लाञ्छयतेऽनेन **लाञ्छनम्**। निबुध्यते **निबोधम्**। नञ् पूर्वो धाञ्। न दधातीत्य**धमः**। ''धर्मसीमाग्रीष्माधमाः''। ''पञ्च्यते **पङ्कम्**।'' मलिना कदर्येण मस्यते परिमाणीक्रियते **मलीमसः**। तं त्यजेत् सत्पुरुषः।

जनोदाहरणं कीर्तिं साधुवादं यशो विदुः।
वर्णं गुणावलिं ख्याति-मवधानं तु साहसम्॥१५३॥

सप्त यशसि। जनानां लोकानामुदाहरणं, जनेन लोकेनोदाह्रियते वा **जनोदाहरणम्**। कृत संशब्दे। कृत्- ''चुरादिश्च।'' इन्। कृतः कारिते इर्। किर्ति जातः। नामिनोर्वा। कीर्ति जातम्। कीर्तनं **कीर्त्तिः**।

भाष्यार्थ—कलंक के दश नाम हैं।

१. कलङ्कः (पुं॰)—लक्षण से जाना जाता है इसलिए कलंक है। सम्पादक के अनुसार—ब्रह्मा को भी हीनता प्राप्त करा देता है इसलिए कलंक है, ऐसा अन्यत्र कहा है।

२. अवद्यम् (नपुं॰)—समीचीन, निर्दोष नहीं है वह अवद्य है। सम्पादक के अनुसार—जो कहने योग्य नहीं वह गर्हा के योग्य अवद्य है।

३. मलिनम् (नपुं॰)—इससे अपयश धारण किया जाता है इसलिए मलिन है।

४. किञ्जल्कम् (नपुं॰)—कुत्सित, बुरा कहता है इसलिए किञ्जल्क है।

५. लक्ष्मन् (नपुं॰)—दूसरे को लक्ष्य करता है अथवा उत्कृष्ट को दिखाता है इसलिए लक्ष्म है।

६. लाञ्छनम् (नपुं॰)—इससे पहचाना जाता है, चिह्नित किया जाता है या लाञ्छित किया जाता है वह लाञ्छन है।

७. निबोधम् (नपुं॰)—निश्चय से जाना जाता है इसलिए निबोध है।

८. अधमः (पुं॰)—धारण नहीं करता है इसलिए वह अधम है।

९. पङ्कम् (नपुं॰)—इससे दुःख पचता अर्थात् बढ़ता है इसलिए पंक है।

१०. मलीमसम् (नपुं॰)—काले मसे आदि से इसका परिमाण किया है इसलिए मलीमस है। सम्पादक के अनुसार—मल इसके पास होता है इसलिए मलीमस है।

इन कलंकों को सद्‌पुरुष छोड़ देवें।

यश और साहस के नाम

श्लोकार्थ— जनोदाहरण, कीर्ति, साधुवाद, यश, वर्ण, गुणावलि, ख्यात ये यश के नाम हैं। अवधान, साहस ये साहस के नाम हैं ॥१५३॥

भाष्यार्थ—यश के सात नाम हैं।

१. जनोदाहरणम् (नपुं॰)—लोगों का उदाहरण होता है अथवा लोगों से उदाहरण दिया जाता है इसलिए जनोदाहरण है।

''कीर्तीषोः क्तिश्च'' क्तिप्रत्ययः। कारितलोपः। त्रिषु व्यञ्जनेषु सञ्जातेषु स्वजातीयानां मध्ये एकव्यञ्जालोपः। एकस्तकारो लुप्यते। सिः। रेफः। साधूनां सत्पुरुषाणां वादः **साधुवादः**। कुशलो योग्यो हितश्च साधुरुच्यते। यज देवपूजादिषु। इज्यते **यशः**। ''यजः शिश्च'' अस्मादसन् प्रत्ययो भवति स च यण्वत्। जस्य शिः। इकार उच्चारणार्थः। वर्ण्यते साधुजनेन **वर्णः**। गुणानामवलिः श्रेणिः **गुणावलिः**। ख्यायते **ख्यातिः**। श्लोकः। अभिख्या। समाख्या।

अवधानं तु साहसम्।

साहसे द्वौ। अवधीयतेऽव**धानम्**। अवदानं च। साह्यते **साहसम्**।

प्रेष्यादेशनिदेशाज्ञानियोगाः शासनं तथा।
सन्देशः प्रिययोः वार्ता प्रवृत्तिः किंवदन्त्यपि॥१५४॥

षडादेशे। प्रेष्यते इति **प्रेष्यः**। आ समन्ताद् दिशती**त्यादेशः**। निदिश्यते निदिशतीति वा **निदेशः**।

---

२. **कीर्तिः** (स्त्री॰)—कीर्तन, गुणगान होता है इसलिए कीर्ति है।

३. **साधुवादः** (पुं॰)—साधु, सज्जन पुरुषों का कथन होता है इसलिए साधुवाद है। कुशल, योग्य और हित साधु अर्थ में कहा जाता है।

४. **यशस्** (नपुं॰)—पूजा की जाती है इसलिए इसे यश कहा है।

५. **वर्णः** (पुं॰)—साधु जन से वर्णन किया जाता है इसलिए वर्ण है।

६. **गुणावलिः** (स्त्री॰)—गुणों की पंक्ति, श्रेणि होती है इसलिए गुणावलि है।

७. **ख्यातिः** (स्त्री॰)—कहा जाता है, प्रसिद्ध हो जाता है इसलिए ख्याति है।

श्लोक आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

साहस के दो नाम हैं।

१. **अवधानम्** (नपुं॰)—धारण किया जाता है इसलिए अवधान है। अवदान भी कहते हैं।

२. **साहसम्** (नपुं॰)—बल दिखाया जाता है इसलिए साहस है। सम्पादक के अनुसार—बल में होना साहस है।

आज्ञा, वार्ता के नाम

श्लोकार्थ—प्रेष्य, आदेश, निदेश, आज्ञा, नियोग, शासन ये आज्ञा के नाम हैं। प्रिय स्त्री पुरुषों की बात को सन्देश कहते हैं। वार्ता, प्रवृत्ति, किंवदन्ती ये नवीन बात के नाम हैं ॥१५४॥

भाष्यार्थ—आदेश के छह नाम हैं।

१. **प्रेष्यः** (पुं॰)—भेजा जाता है इसलिए प्रेष्य है।

२. **आदेशः** (पुं॰)—सभी ओर से कथन करता है, आदेश देता है इसलिए आदेश है।

३. **निदेशः** (पुं॰)—निर्देश दिया जाता है अथवा निर्देश देता है इसलिए निदेश है।

आजानातीत्**याज्ञा**। नियुज्यन्ते **नियोगाः**। शास्यते प्रतिपाद्यते **शासनम्**। शासु अनुशिष्टौ।

सन्देशः प्रिययोः

स्त्रीपुरुषयोः मुखवार्तायां **सन्देशः**। सन्दिशति **सन्देशः**। अमरसिंहनाममालायाम्- ''सन्देशवाग्वाचिकं स्यात्।''

वार्ता प्रवृत्तिः किंवदन्त्यपि।

त्रयो नवीनवार्तायाम्। वृत्तिर्लोकवृत्तं विद्यतेऽस्या **वार्ता**। ''प्रज्ञाश्रद्धाऽर्चावृत्तिभ्यो णः'' स्त्रीक्लीबे वार्त्तं च। प्रवर्तते जनोऽनया **प्रवृत्तिः**। स्त्रियाम्। किं कुत्सितं वदत्यत्र **किंवदन्ती**। वृत्तान्तः। उदन्तः।

कठोरं कठिनं स्तब्धं कर्कशं परुषं दृढम्।
अश्लीलं काहलं फल्गु कोमलं मृदु पेशलम्॥१५५॥

षड् दृढे। कठति कृच्छ्रेण जीवति **कठोरः**। कठति **कठिनः**। स्तभ्नोति स्म **स्तब्धः**। कर्कः सोत्रोऽयं

---

४. **आज्ञा** (स्त्री०)—आज्ञा देता है इसलिए आज्ञा है।

५. **नियोगः** (पुं०)—नियुक्त किया जाता है इसलिए नियोग है।

६. **शासनम्** (नपुं०)—कहा जाता है, प्रतिपादन किया जाता है इसलिए शासन है।

सन्देशः (पुं०)—स्त्री-पुरुषों की मुख्य वार्ता को सन्देश कहते हैं। समीचीन कथन को सन्देश कहते हैं। अमरसिंह की नाममाला में कहा है—कहे हुए को कहना सन्देश है।

नवीन वार्ता के तीन नाम हैं।

१. **वार्ता** (स्त्री०)—लोक मान्य प्रवृत्ति इसमें रहती है इसलिए वार्ता है।

२. **प्रवृत्तिः** (स्त्री०)—इससे लोग प्रवर्तन करते हैं, अर्थात् इसके अनुसार चलते हैं, आचरण करते हैं इसलिए प्रवृत्ति है।

३. **किंवदन्ती** (स्त्री०)—इसमें कुत्सित, बुरा कहा जाता है इसलिए किंवदन्ती है। सम्पादक के अनुसार—किसी प्रकार का कथन किंवदन्ती है। वृत्तान्त, उदन्त ये नाम भी हैं।

कठोर और कोमल के नाम

श्लोकार्थ—कठोर, कठिन, स्तब्ध, कर्कश, परुष, दृढ़ ये कठोर के नाम हैं। अश्लील, कलह, फल्गु ये असार वचन के नाम हैं। कोमल, मृदु, पेशल ये कोमल के नाम हैं ॥१५५॥

भाष्यार्थ—दृढ़ के छह नाम हैं।

१. **कठोरः** (पुं०)—कष्ट के साथ जीता है इसलिए कठोर है।

२. **कठिनः** (पुं०)—अर्थ वही।

३. **स्तब्धः** (पुं०)—स्तम्भ (खम्बे) के जैसा बना देता है इसलिए स्तब्ध है।

धातुः कर्कति करोति निर्दयत्वं **कर्कशः**। परुष्यति कुप्यतीति **परुषः**। कुप क्रुध रुष रोषे। दृह दृहि वृद्धौ। दृहति स्म **दृढः**। ''परिवृढदृढौ प्रभुबलवतोः।'' क्रूरः। कक्खढः। खरः। चण्डः। निष्ठुरः। जरठः। मूर्तिमत्। मूर्तम्। प्रवृद्धम्। प्रौढम्। एधितम्। सर्वे त्रिषु।

अश्लीलं काहलं फल्गु कोमलं मृदु पेशलम्॥१५५॥

निस्सारे वचसि त्रयः। न श्लीयते न श्लिष्यते सतां चित्तम् **अश्लीलम्**। वचनम्। कं शिरः आ समन्तात् हलति अशोभमानं करोतीति **काहलम्**। लोहलञ्च। लुहः सौत्रः। फल निष्पत्तौ। फलति **फल्गुः**। ''रज्जुतर्कुवल्गुफल्गुशिशुरिपुपृथुलघवः।''

कोमलं मृदु पेशलम्।

त्रयः कोमले। कौ पृथिव्यां मलते **कोमलम्**। मृद क्षोदे। मृद्नातीति **मृदु**। पिंशति **पेशलम्**। सुकुमारः।

---

४. **कर्कशः** (पुं॰)—निर्दयपना करता है इसलिए कर्कश है।

५. **परुषः** (पुं॰)—कुपित होता है इसलिए परुष है। सम्पादक के अनुसार—बुद्धि को भर देता है, रोक देता है इसलिए परुष है। –रामाश्रम।

६. **दृढ़ः** (पुं॰)—वृद्धि को प्राप्त है, बलवत्ता को प्राप्त है वह दृढ़ है।

क्रूर आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

निस्सार वचन में तीन शब्द हैं।

१. **अश्लीलम्** (नपुं॰)— सज्जनों के चित्त को नहीं लगाता है, नहीं रुचता है, वह वचन अश्लील है। सम्पादक के अनुसार—जो शोभा नहीं लाता है वह अश्लील है।

२. **काहलम्** (नपुं॰)—कम्-शिर। शिर को चारों ओर से अशोभनीय करता है इसलिए काहल है। अस्पष्ट वचन को काहल कहा है। लोहल शब्द भी है।

३. **फल्गु** (नपुं॰)—फलता है वह फल्गु है। सम्पादक के अनुसार—फलने का अर्थ नष्ट हो जाने से है अर्थात् व्यर्थ चला जाता है वह फल्गु है ऐसा अन्यत्र कहा है।

कोमल के तीन नाम हैं।

१. **कोमलम्** (नपुं॰)—पृथिवी में धारण करता है अर्थात् पृथिवी में मिल जाता है वह कोमल है।

२. **मृदु** (नपुं॰)—एकमेक होता है, मिल जाता है इसलिए मृदु है।

३. **पेशलम्** (नपुं॰)—संघटित होता है इसलिए पेशल है। सम्पादक के अनुसार—एक देश से सभी को करता है, सब कुछ करता है इसलिए पेशल है। रामाश्रम—पिश समाधि अर्थ में है। एकाग्रचित्तता जहाँ होती है वह पेशल है। पेशल शब्द दक्ष अर्थ में मुख्य है और कोमल अर्थ में गौण है। अमरकोश में कहा भी है–दक्ष में चतुर, पेशल, पटु शब्द कहा है। अभि.चि. में भी दक्ष (निपुण, चतुर) को पेशल कहा है।

मृदुलम्।

प्रत्यग्रं साम्प्रतं नव्यं नवं नूतनमग्रिमम्।
पुराणं जठरं जीर्णं प्राक्तनं सुचिरन्तनम्॥१५६॥

षड् नवीने। प्रत्यग्रगति **प्रत्यग्रम्**। सम्प्रति भवं **साम्प्रतम्**। नूयते **नव्यम्**। नौति नवम्। नूयते **नूतनम्**। अग्रे भवम् **अग्रिमम्**। ''पृथ्यादिभ्य इमन्वा''। अभिनवम्। नूत्नश्च। सर्वे त्रिषु।

पुराणं जठरं जीर्णं प्राक्तनं सुचिरन्तनम्॥१५६॥

पञ्च पुरातने। पुरा भवम् **पुराणम्**। जठ इति सौत्रोऽयं धातुः। जठतीति **जठरम्**। जीर्यते **जीर्णम्**। प्राक् पूर्वं भवम् **प्राक्तनम्**। सुष्ठु चिरं भवं **सुचिरन्तनम्**। प्रतनम्। प्रत्नम्।

सुकुमार, मृदुल शब्द भी हैं।

नवीन और पुराने के नाम

श्लोकार्थ—प्रत्यग्र, साम्प्रत, नव्य, नव, नूतन, अग्रिम ये नये के नाम हैं। पुराण, जठर, जीर्ण, प्राक्तन, सुरिन्तन ये पुराने के नाम हैं ॥१५६॥

भाष्यार्थ—नवीन (नयी वस्तु) के छह नाम हैं।

१. **प्रत्यग्रम्** (त्रिषु)—आगे-आगे, नयी उत्पत्ति होना प्रत्यग्र है।

२. **साम्प्रतम्** (त्रिषु)—सम्प्रति—अभी हाल में ही होता है इसलिए साम्प्रत है।

३. **नव्यम्** (त्रिषु)—नया कहा जाता है इसलिए नव्य है।

४. **नवम्** (त्रिषु)—नवीन कहा जाता है इसलिए नव है।

५. **नूतनम्** (त्रिषु)—नवीन ही नूतन है।

६. **अग्रिमम्** (त्रिषु)—आगे होता है इसलिए अग्रिम है।

अभिनव, नूत्न शब्द भी हैं। सभी शब्द तीनों लिंगों में हैं।

पुराने के पाँच नाम हैं।

१. **पुराणम्** (नपुं॰)—पुराना है, पहले हुआ है इसलिए पुराण है।

२. **जठरम्** (नपुं॰)—पुराना होता है इसलिए जठर है। सम्पादक के अनुसार—यद्यपि जठर शब्द जीर्ण अर्थ में प्रसिद्ध है और जठर शब्द उदर के लिए होता है फिर भी कहीं जठर शब्द भी जीर्ण अर्थ में पढ़ा जाता है। इसी आशय से यहाँ जठर कहा है।

३. **जीर्णम्** (नपुं॰)—जीर्ण-शीर्ण हो चुका है वह जीर्ण है अर्थात् फटा-टूटा जीर्ण है।

४. **प्राक्तनम्** (नपुं॰)—पूर्व में हुआ है इसलिए प्राक्तन है।

५. **सुचिरन्तनम्** (नपुं॰)—बहुत पहले हुआ है इसलिए सुचिरन्तन है।

प्रतन, प्रत्न भी पुराने के लिए शब्द हैं।

भो रे हं हो हयामन्त्रे कश्चित् किञ्चन संशये।
द्राक्क्षणेऽह्नाय सपदि निषेधे मा न खल्वलम्॥१५७॥

एते शब्दा आमन्त्रणार्थे वर्तन्ते। भू सत्तायाम्। **भोः**। रेपृ प्लवगतौ। **रे**। हनु हिंसागत्योः। **हं**। हु दाने। **हो**। हि गतौ। **हे**।

कश्चित् किञ्चन संशये।

सन्देहार्थे द्वौ शब्दौ वर्तेते। अविशेषाभिधाने चिञ्चनशब्दौ अवगन्तव्यौ। तथा चोक्तम्- ''किमः सर्वविभक्त्यन्ताच्चिच्चिनौ।'' कश्चित्। कश्चन। कौचित्। कौचन। केचित्। केचन इत्यादि। स्त्रियां काचित् काचन इत्यादि। क्लीबे किञ्चित्। किञ्चन। इत्यादि।

द्राक्क्षणेऽह्नाय सपदि

शीघ्रर्थे त्रयः शब्दा वर्तन्ते।

निषेधे मा न खल्वलम्॥१५७॥

निषेधे चत्वारः शब्दा वर्तन्ते।

उच्चैरुच्चावचं तुङ्गमुच्चमुन्नतमुच्छ्रितम्।
नीचं न्यगातनं कुब्जं नीचैर्ह्रस्वं नयेत्परम्॥१५८॥

आमन्त्रण, संशय, शीघ्र और निषेध के नाम

श्लोकार्थ—भो, रे, हं, हो, हे बुलाने के लिए हैं। कश्चित्, किञ्चन संशय के नाम हैं। द्राक्क्षण, अह्नाय, सपदि शीघ्र के नाम हैं। मा, न, खलु, अलम् ये निषेध के नाम हैं॥१५७॥

भाष्यार्थ—आमन्त्रण अर्थ में—भोः, रे, हं, हो, हे ये शब्द हैं। सम्पादक के अनुसार—हं, हो ये दोनों पृथक् संबोधन कहे हैं। परन्तु नाटक आदि में 'हंहो' यह अखण्ड ही संबोधन में प्रयुक्त होता है। जैसे—हंहो! तिष्ठ सखे।

सन्देह अर्थ में दो शब्द हैं। चित्, चन शब्द सामान्य रूप से कहे जाते हैं। कहा भी है–किम् की सभी विभक्तियों के अन्त में चित्, चन जुड़ जाते हैं। जैसे—पुं॰ में कश्चित्, कश्चन। कौचित्, कौचन। केचित्, केचन। एकव॰, द्विव॰ एवं बहुवचन में जानना। स्त्री लिंग में—काचित्, काचन इत्यादि और नपुं. लिंग में—किञ्चित्, किञ्चन आदि।

शीघ्र अर्थ में तीन शब्द हैं।

निषेध अर्थ में चार शब्द हैं।

ऊँचे और नीचे के नाम

श्लोकार्थ—उच्चैस्, उच्चावच, तुङ्ग, उच्च, उन्नत, उच्छ्रित ये ऊँचे के नाम हैं। नीच, न्यच्, आनत, कुब्ज, नीचस्, ह्रस्व ये नीचे के नाम हैं॥१५८॥

षड् दीर्घे। उच्चीयते **उच्चैस्**। अव्ययः। उच्चं च अवचं च **उच्चावचम्**। तुजति दैर्घ्यमादत्ते **तुङ्गम्**। उच्चीयते **उच्चम्**। उन्नमत्य**ुन्नतम्**। उच्छ्रीयते **उच्छ्रितम्**। प्रांशुः तालव्यः। उदग्रम् दीर्घम्। आयतं च।

नीचं न्यगातनं कुब्जं नीचैर्ह्रस्वं नयेत्परम्॥१५८॥

षड् ह्रस्वे। निचीयते **नीचम्**। न्यञ्चतीतिन्**यक्**। आतन्यते **आतनम्**। कौति व्याधिं **कुब्जः**। न्युबजश्च। निचीयते **नीचैस्**। ह्रसति **ह्रस्वः**।

अमा सह समं साकं सार्द्धं सत्रा सजूः समाः।
सर्वदा सततं नित्यं शश्वदात्यन्तिकं सदा॥१५९॥

भाष्यार्थ—दीर्घ के छह नाम हैं।

१. **उच्चैस्** (अव्यय)—ऊपर की ओर बढ़ता है इसलिए उच्चैस् है।

२. **उच्चावचम्** (नपुं०)—जो ऊँचा और नीचा दोनों रूप है इसलिए उच्चावच है।

३. **तुङ्गम्** (नपुं०)—दीर्घता—लम्बाई को पाता है इसलिए तुंग है।

४. **उच्चम्** (नपुं०)—ऊपर उठता है इसलिए उच्च है।

५. **उन्नतम्** (नपुं०)—ऊपर की ओर उठा हुआ है इसलिए उन्नत है।

६. **उच्छ्रितम्** (नपुं०)—ऊपर की ओर का आश्रय लेता है इसलिए उच्छ्रित है।

प्रांशु, उदग्र, दीर्घ और आयत नाम भी हैं।

ह्रस्व के छह नाम हैं।

१. **नीचम्** (नपुं०)—वृद्धि को प्राप्त नहीं होता है इसलिए ह्रस्व है। सम्पादक के अनुसार—निकृष्ट लक्ष्मी को चुनता है–ऐसा रामाश्रम ने कहा है। निम्न को प्राप्त होता है अथवा इसको नीच-निम्नता होती है इसलिए नीच है।

२. **न्यक्** (त्रिषु)—नीचे की ओर जाता है इसलिए न्यक् है।

३. **आतनम्** (नपुं०)—विस्तार को पाता है इसलिए आतन है।

४. **कुब्जः** (पुं०)—व्याधि को कहता है इसलिए कुब्ज है। सम्पादक के अनुसार—पृथिवी पर सरल होकर बढ़ता है इसलिए कुब्ज है। न्युब्ज शब्द भी है।

५. **नीचैस्** (नपुं०)—नीचे की ओर बढ़ता है इसलिए नीचैस् है।

६. **ह्रस्वः** (पुं०)—घटता है इसलिए ह्रस्व है।

साथ और हमेशा के नाम

श्लोकार्थ—अमा, सह, सम, साक, सार्द्ध, सत्रा, सजू, समा ये साथ के नाम हैं। सर्वदा, सतत, नित्य, शश्वत्, आत्यन्तिक, सदा ये हमेशा के नाम हैं ॥१५९॥

अष्टौ सार्धे। अमति **अमा**। सह हन्ति गच्छति **सह**। सह मिनोति **समम्**। सह अकति गच्छति **साकम्**। सह ऋद्धम् **सार्द्धम्**। सह त्रायते **सत्रा**। जुषी प्रीतिसेवनयोः। जुष् सहपूर्वः। सह जुषते **सजूः**। क्विप् च वेर्लोपः। सिः। सिलोपः। समन्ति **समाः**। सह मान्ति वर्तन्ते ऋतवो यासां वा। स्त्रीबहुत्वे।

सर्वदा सततं नित्यं शश्वदात्यन्तिकं सदा॥१५९॥

षट् नित्ये। सर्वस्मिन् काले **सर्वदा**। ''काले किं सर्वयदेकान्येभ्यः एष दा''। संतन्यतेस्म **सततं** सन्ततम् च। नियच्छति **नित्यम्**। श्वसतीति **शश्वत्**। अत्यन्ते भव**मात्यन्तिकम्**। सदा इति निपातः। सर्वशब्दात्परो दाप्रत्ययो भवति सर्वस्य सभावश्च। सर्वस्मिन् काले **सदा**। सनातनं सदातनम्। ध्रुवम्। शाश्वतम्। शाश्वतिकम्। अनश्वरम्। अविनश्वरम्। सर्वे त्रिषु।

भाष्यार्थ—साथ के आठ नाम हैं।

१. **अमा** (अव्यय)—रहता है इसलिए अमा है। सम्पादक के अनुसार—माप करने वालों का अनेकपना होने से साथ में मापने योग्यपना नहीं रहता है इसलिए अमा है।

२. **सह** (अव्यय)—साथ चलता है इसलिए सह है।

३. **समम्** (अव्यय)—साथ रहता है इसलिए सम है।

४. **साकम्** (अव्यय)—साथ में चलता है इसलिए साक है।

५. **सार्धम्** (अव्यय)—साथ बढ़ता है इसलिए सार्ध है।

६. **सत्रा** (अव्यय)—साथ रक्षा करता है इसलिए सत्रा है।

७. **सजूष्** (स्त्री)—जुष धातु प्रीति और सेवन अर्थ में है। इसलिए साथ में जो प्रीति अथवा सेवन करते हैं इसलिए सजू है।

८. **समा** (स्त्री, अव्यय)—समान रहता है इसलिए समा है। जिसमें ऋतु साथ रहती है वह समा है। स्त्री॰ बहु॰ में समाः बनता है।

नित्य के छह नाम हैं।

१. **सर्वदा** (अव्यय)—सभी काल में होता है इसलिए सर्वदा कहा है।

२. **सततम्** (नपुं॰, अव्यय)—सभी ओर फैला रहता है इसलिए सतत है। सन्तत भी कहते हैं।

३. **नित्यम्** (नपुं॰, अव्यय)—नियत होता है इसलिए नित्य है।

४. **शश्वत्** (अव्यय)—जीता है, हमेशा रहता है इसलिए शश्वत् है।

५. **आत्यन्तिकम्** (अव्यय)—अत्यन्त रूप से होना ही आत्यन्तिक है।

६. **सदा** (अव्यय)—यह निपात शब्द है।

सर्व शब्द के आगे दा प्रत्यय होता है। सर्व का स रह जाता है। सब काल में रहता है इसलिए सदा है। सनातन आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

वियोगं मदनावस्थां विरहं पल्लकं विदु:।
प्रेमाभिलाषमालभ्यं रागं स्नेहमत: परम्॥१६०॥

चत्वारो विरहे। वियोजनं **वियोग:**। मदनस्य कन्दर्पस्यावस्था **मदनावस्था**। विरहणं **विरह:**। मल मल्ल धारणे। मल्लस्थाने केचित्पल्ल इति पठन्ति। पल्लते पल्ल:। स्वार्थे क: **पल्लक:**।

प्रेमाभिलाषमालभ्यं रागं स्नेहमत: परम्॥१६०॥

पञ्च स्नेहे। प्रियस्य भाव: कर्म वा **प्रेमा**। प्रिय स्थिरेति प्रादेश:। अभिलष्यतेऽ**भिलाष:**। लष श्लेषणक्रीडनयो:। आलभ्यते **आलभ्यम्**। ''सकिसहिपवर्गान्ताच्च''। रञ्च रागे। रञ्ज्। रञ्जनं **राग:**। भावेघञ्।''रञ्जेर्भावकरणयो:'' पञ्चमलोप:। अस्यो॰ दीर्घ:।''चजो: कगौ धुट् घानुबन्धयो:।'' जकारगकार:। प्र॰ सि:। रेफ:। अथवा रज्यतेऽनेन **राग:**।''व्यञ्जनाच्च''। करणे घञ्। प्र॰ ''रञ्जेर्भावकरणयो:'' पञ्चमलोप:। अस्यो॰ दीर्घ:। चजो: कगाविति जकारगकार:। स्निह्यते **स्नेह:**।

संहितं सहितं युक्तं संपृक्तं संभृतं युतम्।
संस्कृतं समवेतं च प्राहुरन्वीतमन्वितम्॥१६१॥

विरह और स्नेह के नाम

श्लोकार्थ—वियोग, मदनावस्था, विरह, पल्लक को विरह कहते हैं। प्रेम, अभिलाष, आलभ्य, राग, स्नेह ये स्नेह के नाम हैं॥१६०॥

भाष्यार्थ—विरह के चार नाम हैं।

१. **वियोग:** (पुं॰)—बिछुड़ना वियोग है।

२. **मदनावस्था** (स्त्री॰)—मदन—काम की अवस्था होने से इसे मदनावस्था कहते हैं।

३. **विरह:** (पुं॰)—रहित होना, दूर होना विरह है।

४. **पल्लक:** (पुं॰)—वियोग धारण करता है इसलिए पल्लक है। मल्ल के स्थान पर कितने ही लोग पल्ल पढ़ते हैं। पल्ल में क प्रत्यय से पल्लक: बनता है। सम्पादक के अनुसार—मल्लक, पल्लक शब्दों का इस अर्थ में कोई प्रमाण नहीं है।

स्नेह के पाँच नाम हैं।

१. **प्रेमन्** (नपुं॰)—प्रिय का भाव अथवा कर्म प्रेम है।

२. **अभिलाष:** (पुं॰)—चाहा जाता है इसलिए अभिलाष है।

३. **आलभ्यम्** (नपुं॰)—सब ओर से प्राप्त किया जाता है इसलिए आलभ्य है। सम्पादक के अनुसार—आलभ्य शब्द का राग अर्थ में कोई कोष में कथन नहीं उपलब्ध नहीं है।

४. **राग:** (पुं॰)—घुलना—मिलना राग है।

५. **स्नेह:** (पुं॰)—स्नेह किया जाता है इसलिए स्नेह है।

सहित के नाम

श्लोकार्थ—संहित, सहित, युक्त, संप्रक्त, संभृत, युत, संस्कृत, समवेत, अन्वीत और अन्वित

दश सहिते। संहीयते **संहितम्**। **सहितम्**।

''लुम्पेदवश्मः कृत्ये तुम्काममनसोरपि।
समो वा हिततयोर्मांसस्य पचि युङ्घञोः॥''

योजनं **युक्तम्**। पृची सम्पर्के। पृच्। सम्पृणक्ति स्म **सम्पृक्तम्**। ''गत्यर्थाकर्मक०'' इति कर्तरि क्तप्रत्ययः। ''चजोः कगौ''- चस्य कः। सम्भ्रियते स्म **सम्भृतम्**। यौतिस्म **युतम्**। संस्क्रियते स्म **संस्कृतम्**। समवेयते स्म **समवेतम्**। अन्वीयते स्म **अन्वीतम्**। **अन्वितम्**।

वर्त्माऽध्वा सरणिः पन्थाः मार्गः प्रचरसञ्चरौ।
त्रिमार्गनामगा गङ्गा घोषो गोमण्डलं व्रजः॥१६२॥

सहित के नाम हैं ॥१६१॥

भाष्यार्थ—सहित के दश नाम हैं।

१. संहितम् (त्रि०)—समीचीन रूप से छोड़ा जाता है इसलिए संहित है। सम्पादक के अनुसार—'संहीयते' इस प्रकार विग्रह करना ठीक नहीं है क्योंकि सम् पूर्वक हाक् धातु त्याग करने अर्थ में होने से प्रासंगिक अर्थ की प्रतीति नहीं होती है। इसलिए 'सन्धीयते स्म' ऐसा विग्रह करना चाहिए अर्थात् समीचीन रूप से जो धारण किया जाता है वह संहित है।

''कृत्य प्रक्रिया में आवश्यम् के मकार का लोप हो जाता है। तुम्बकाम् में अमनस् के पर होने पर मकार लोप। हित और मांस के अर्थ परे होने पर 'सम्' के मकार लोप और पच् का प्रयोग कृत्य प्रक्रिया में चुङ् और घम् प्रत्यय में होता है। पचनम् = चुङ्।''

२. सहितम् (त्रि०)—हित (धारण) युक्त सहित है।

३. युक्तम् (त्रि०)—जुड़ जाता है इसलिए युक्त है।

४. सम्पृक्तम् (त्रि०)—सम्पर्क को प्राप्त है इसलिए सम्पृक्त है।

५. सम्भृतम् (त्रि०)—समीचीन रूप से रखा होता है इसलिए सम्भृत है।

६. युतम् (त्रि०)—जो जुड़ा हुआ हो वह युत है।

७. संस्कृतम् (त्रि०)—संस्कार किया जाता है इसलिए संस्कृत है।

८. समवेतम् (त्रि०)—अच्छी तरह मिला हुआ हो वह समवेत है।

९. अन्वीतम् (त्रि०)—उसी के साथ रहता हो वह अन्वीत है।

१०. अन्वितम् (त्रि०)—अर्थ वही।

विशेष—ये सभी विशेषण शब्द हैं इसलिए तीनों लिंग में प्रयुक्त होते हैं।

मार्ग, गंगा और व्रज के नाम

श्लोकार्थ—वर्त्म, अध्व, सरणि, पन्था, मार्ग, प्रचर, सञ्चर ये मार्ग के नाम हैं। मार्ग के नामों के प्रारम्भ में 'त्रि' जोड़ने से गंगा के नाम होते हैं। घोष, गोमण्डल, व्रज ये गायों के समूह के नाम हैं ॥१६२॥

सप्त मार्गे। वर्तन्ते प्रतिपद्यन्ते जना येन तत् **वर्त्म**। नान्तम्। ''सर्वधातुभ्यो मन्''। **गच्छति** अतति चलति अनेन नान्तोऽ**ध्वा**। सरत्यनया **सरणिः**। दन्ततालव्यः। सृतिश्चास्त्रियाम्। द्वौ। पतन्ति गच्छन्ति अनेन **पन्थाः**। नान्तः। इदन्तोऽपि। पथिः। पथः। पथानः। पन्थ इत्यपि। एते पुंसि। मार्जनं मार्गयन्त्यनेन वा **मार्गः**। पुंसि। प्रकर्षेण चरत्यनेनेति **प्रचरः**। सञ्चरत्यनेनेति **सञ्चरः**। पद्धतिः। एकपदी। वर्तनी। अयनम्। पदवी। पद्या। निगमः।

त्रिमार्गनामगा गङ्गा

मार्गपूर्व **त्रि**शब्दे प्रयुज्यमाने **गङ्गा**नामानि भवन्ति। त्रिवर्त्मा। त्र्यध्वा। त्रिसरणिः। त्रिपथा। त्रिप्रचरा। त्रिसञ्चरा।

घोषो गोमण्डलं व्रजः।

त्रयो गवां स्थाने। घोषन्ते गावोऽत्र **घोषः**। गवां मण्डलम् **गोमण्डलम्**। गावो। व्रजन्त्यत्र **व्रजः**।

भाष्यार्थ—मार्ग के सात नाम हैं।

१. **वर्त्मन्** (नपुं०)—इससे लोग वर्तन (आना-जाना) करते हैं, बार-बार प्राप्त करते हैं इसलिए वर्त्म है।

२. **अध्वन्** (पुं०)—इससे चलते हैं इसलिए अध्वा है।

३. **सरणिः** (स्त्री०)—इससे होकर चला जाता है इसलिए सरणि है। शरणिः भी कहते हैं। सृतिः नाम भी है। पुं० और नपुं० लिं० में है।

४. **पथिन्** (पुं०) (एकव० में पन्थाः)—इससे चलते हैं इसलिए पन्था है। पथिः, पथः, पथानः, पन्थ इत्यादि रूप भी चलते हैं। सभी रूप पुं० लिंग में हैं।

५. **मार्गः** (पुं०)—मार्जन किया जाता है अथवा इससे खोज की जाती है इसलिए मार्ग है। सम्पादक के अनुसार—'मृज्' धातु शुद्धि अर्थ में है, तब इसका अर्थ होता है कि—पैरों से इसे तृण रहित बना दिया जाता है इसलिए मार्ग है अर्थात् चलते रहने से मार्ग पर तृण आदि नहीं रहते हैं। दूसरा मार्ग धातु अन्वेषण अर्थ में है।

६. **प्रचरः** (पुं०)—इससे प्रकर्ष रूप से चलता है इसलिए प्रचर है।

७. **सञ्चरः** (पुं०)—इससे सञ्चरण, गमन करता है इसलिए सञ्चर है।

पद्धति आदि नाम भी हैं, देखें भाष्य। मार्ग के नामों में पहले त्रि शब्द जोड़ने से गंगा के नाम होते हैं। त्रिवर्त्मा आदि। देखें भाष्य।

पशुओं के स्थान के तीन नाम हैं।

१. **घोषः** (पुं०)—यहाँ पर गायें शब्द करती हैं इसलिए घोष है।

२. **गोमण्डलम्** (नपुं०)—गायों का समूह यहाँ रहता है इसलिए गोमण्डल है।

३. **व्रजः** (पुं०)—यहाँ गायें चलती हैं इसलिए व्रज है। गोकुल, गोष्ठ नाम भी हैं।

गोकुलम्। गोष्ठम्।

शृङ्गो दृतिहर्निाथहरिस्तिर्यक्च शृङ्गिणः
गौश्चतुष्पात्पशुः तत्र महिषी नाम देहिका॥१६३॥

पञ्च महिषादिके। परं शृणाति हिनस्तीति **शृङ्गः** (म्)। त्रिषु। हृञ्। हरणे। **हृ दृति** पूर्वः। दृतिं चर्मप्रसेवकं जलभाण्डं हरति वहति **दृतिहरिः**। ''हरतेर्दृतिनाथयोः पशौ'' इप्रत्ययः। नाम्यन्तगुणः। नाथं स्वामिनं हरतीति **नाथहरिः**। ''हरतेर्दृतिनाथयोः पशौ''। तिरोऽञ्चयतीति **तियञ्चः**। शृणतीति शृङ्गम्। ''शृङ्गभृङ्गाङ्गानि'' एतेऽङ्गप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। शृङ्गानि विद्यन्ते येषां ते **शृङ्गिणः**।

गौश्चतुष्पात्पशुः

त्रयो गवि। पूजां गच्छतीति **गौः**। चत्वारः पादा यस्यासौ **चतुष्पात्**। स्पश इति सौत्रो धातुः। स्पशते

पशु के नाम

श्लोकार्थ—शृङ्ग, दृतिहरि, नाथहरि, तिर्यक् शृंगिण ये सींग वाले पशु के नाम हैं। गो, चतुष्पात्, पशु ये पशु के नाम हैं। महिषा, देहिका भैंस के नाम हैं ॥१६३॥

भाष्यार्थ—महिष (भैंसा) आदि के पाँच नाम हैं।

१. शृङ्गः (पुं॰)—दूसरे की हिंसा करता है इसलिए शृङ्ग है। तीनों लिंगों में यह शब्द है।

२. दृतिहरिः (पुं॰)—दृति—चर्म का बना जल पात्र है। इसको ढ़ोता है इसलिए दृतिहरि है।

३. नाथहरिः (पुं॰)—मालिक को ले जाता है इसलिए नाथहरि है।

४. तिर्य् (पुं॰)—तिरछा चलता है इसलिए तिर्यक्, तिर्यच् है। सम्पादक के अनुसार—'तिर्यच' इस प्रकार अकारान्त पाठ चिन्तनीय है। 'तिरि' आदेश होने पर चकारान्त पाठ ही उचित है। अर्थात् 'तिर्यच्' यह पाठ उचित है। चकारान्त इस पाठ को मान लेने पर आठ अक्षर वाले श्लोक के एक पाद में एक अक्षर कम हो जाने से मूल श्लोक में छन्द भंग होगा। और अकारान्त तिर्यञ्च शब्द किसी भी कोशकार के द्वारा पशु अर्थ में स्वीकृत नहीं है। अ॰ चि॰ में कहा है–पशु, तिर्यङ्, चरि ये शब्द हैं।

विशेषार्थ—मेरे अनुसार यह तिर्यञ्चः शब्द बहुवचनान्त रूप मानना चाहिए। व्युत्पत्ति देखते हुए अञ्चयति क्रिया एकवचन की है। यह भाष्यकार की त्रुटि हो सकती है। मूल में 'तिर्यक्च ' शब्द पशु अर्थ में मान्य हो जाएगा।

५. शृंगिणः (पुं॰, बहुव॰)—मारते हैं, हिंसा करते हैं इसलिए सींग को शृंग कहते हैं। ये सींग इनके होते हैं, इसलिए शृंगिण कहलाते हैं। शृङ्गिन् का यह बहुवचनान्त रूप है।

पशु अर्थ में तीन शब्द हैं–

सम्पादक के अनुसार—त्रयो गवि ऐसा भाष्यकार ने लिखा है। यहाँ पशु शब्द सामान्य विशेष दोनों अर्थ वाला होने से यह 'गवि' पाठ चिन्तनीय है। गो शब्द तो पशु विशेष बैल आदि के लिए

[बाधते] इति **पशुः**। अपष्ट्वादयः-"अपष्टुदुष्टुसुष्टुहरिद्रुमितद्रुश-तद्रुशंकुधनुमयुपशुदेवयुजटायुकुमारयु-मृगयवः" एते शब्दाः कुप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते।

तत्र महिषी नाम देहिका।

द्वौ महिष्याम्। तत्र तस्मिन् मह्यते महिषः। नदादित्वादीः। **महिषी**। दिह्यते उपचीयते दुग्धेन **देहिका**।

कृती नदीष्णो निष्णातः कुशलो निपुणः पटुः।
क्षुण्णः प्रवीणः प्रगल्भः कोविदश्च विशारदः॥१६४॥

एकादश कुशले। प्रशस्तं कृतं कर्मास्य **कृती**। नद्यां स्नातीति **नदीष्णः**। "निनदीभ्यो स्नातेः कौशले" इति षत्वम्। नितरां संस्नाति स्म शुचित्वमाप्नोति स्म **निष्णातः**। कुत्सितं श्यति **कुशलः**। अथवा कुशान्

है और चतुष्पात्, पशु शब्द पशुओं के लिए है, यह भेद करना चाहिए।

१. **गौः** (स्त्री०)—पूजा को प्राप्त है इसलिए गौ है।

२. **चतुष्पात्**—चार पैर जिसके होते हैं वह चतुष्पात् है।

३. **पशुः**—बाधा पहुँचाता है इसलिए पशु है।

महिषी के दो नाम हैं।

१. **महिषी** (स्त्री०)—उसमें वृद्धि देखी जाती है इसलिए महिष है। ई प्रत्यय लगने से महिषी होता है। सम्पादक के अनुसार—विशाल काय वाली होने से जो बढ़ती जाती है वह महिषी है।

२. **देहिका** (स्त्री०)—दुग्ध से जो बहुत बढ़ी होती है अर्थात् बहुत दूध देती है इसलिए देहिका है। सम्पादक के अनुसार अन्य कोश में यह शब्द नहीं है।

कुशल के नाम

श्लोकार्थ—कृती, नदीष्ण, निष्णात, कुशल, निपुण, पटु, क्षुण्ण, प्रवीण, प्रगल्भ, कोविद, विशारद ये कुशल के नाम हैं ॥१६४॥

भाष्यार्थ—कुशल के ग्यारह नाम हैं।

१. **कृतिन्** (पुं०)—इसके द्वारा किया कार्य प्रशस्त(अच्छा, श्रेष्ठ) होता है इसलिए कृती है।

२. **नदीष्णः** (पुं०)—नदी में स्नान करता है इसलिए नदीष्ण है अर्थात् नदी में तैरने वाले को यहाँ कुशल कहा है।

३. **निष्णातः** (पुं०)—बहुत स्नान किया है, पवित्रता को प्राप्त हुआ है वह निष्णात है।

४. **कुशलः** (पुं०)—कुत्सित, बुरेपन को दूर करता है वह कुशल है अथवा कुश (एक प्रकार की घास) को लाता है वह कुशल है।

५. **निपुणः** (पुं०)—शोभनीय कर्म करता है इसलिए निपुण है।

६. **पटुः** (पुं०)—जानता है वह पटु है।

७. **क्षुण्णः** (पुं०)—अच्छी तरह पिसा हुआ हो, अभ्यस्त हो वह क्षुण्ण है।

लाति कुशलः। निपुणतीति **निपुणः**। शोभनकर्मत्वात्। पटति जानातीति **पटुः**। क्षुणत्ति स्म **क्षुण्णः**। क्षुदिर् सम्पेषणे। प्रकृष्टा वीणास्य **प्रवीणः** इति मुख्यार्थे परित्यज्य निपुणे रूढा। तदाहुः–

''निरूढा लक्षणा कैश्चित्सामर्थ्यादभिधानवत्।
क्रियतेऽद्यतनैःकैश्चित्कैश्चिन्नैव त्वशक्तितः॥''

प्रगल्भते **प्रगल्भः**। गल्भ धाष्ट्र्ये। को वेत्ति तदभिप्रायमिति निरुक्त्या कवते **कोविदः**। विशेषेण पापं शृणाति **विशारदः**। क्षेत्रज्ञः। कृतहस्तः। कृतसुखः। कृतकर्मा। दक्षः। शिक्षितः।

विदग्धश्चतुरः धूर्तश्चाटुकृत् कितवः शठः।
क्वापि नागरिको ज्ञेयः गोत्रसंज्ञाङ्कनाम तत् ॥१६५॥

द्वौ चतुरे। विदह्यते **विदग्धः**। पुरुषार्थान् याचते **चतुरः**।

---

८. प्रवीणः (पुं०)—इसके पास प्रकृष्ट वीणा होती है इसलिए प्रवीण है। यह शब्द अपने मुख्य अर्थ को छोड़कर निपुण अर्थ में रूढ़ हो गया है। कहा भी है–

''अभिधान की तरह कितने ही शब्द अपनी सामर्थ्य से निरूढ़ लक्षण वाले होते हैं। कुछ शब्द आजकल के लोगों के द्वारा कर दिये जाते हैं और सामर्थ्य रहित होने से रूढ़ होते हैं।''

विशेष—कुछ निरूढ लक्षणायें प्रयोग—सामर्थ्य से अभिधान के समान ही होती हैं। लावण्यादि प्रयुक्त शब्द की तरह जो लवण आदि से युक्त अर्थ में न होकर सौन्दर्य अर्थ में है। ऐसी लक्षणा कुछ वर्तमान के साहित्यकारों ने की है। कुछ के द्वारा अशक्ति से ऐसी लक्षणा नहीं की गई है अर्थात् लावण्यादि शब्द में अपने विषय से अन्यत्र प्रयुक्त होकर सौन्दर्य अर्थ में भी ध्वनि के विषय नहीं होते हैं।

९. प्रगल्भः (पुं०)—धाष्ट्र्य ढीठ होता है इसलिए प्रगल्भ है अर्थात् कुशल व्यक्ति कार्य अवश्य करता है।

१०. कोविदः (पुं०)—उसके अभिप्राय को कौन जानता है? इस निरुक्ति से कोविद कहा है।

११. विशारदः (पुं०)—विशेष रूप से पाप का नाश करता है इसलिए विशारद है।

क्षेत्रज्ञ आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

चतुर, धूर्त, नाम के नाम

श्लोकार्थ—विदग्ध, चतुर ये चतुर के नाम हैं। धूर्त, चाटुकृत्, कितव, शठ ये धूर्त के नाम हैं। कहीं-कहीं नागरिक भी धूर्त का नाम जानना। गोत्र, संज्ञा, अंक, नाम ये नाम के नाम हैं॥१६५॥

भाष्यार्थ—चतुर के दो नाम हैं।

१. विदग्धः (पुं०)—विशेष रूप से जला दिया जाता है इसलिए विदग्ध है। सम्पादक के अनुसार—मूर्ख के चित्त को नष्ट कर दिया है इसलिए विदग्ध है।

२. चतुरः (पुं०)—पुरुषार्थों की याचना करता है इसलिए चतुर है।

धूर्तश्चाटुकृत् कितवः शठः।

चत्वारो धूर्ते। धूर्तति स्म हिनस्ति स्म सदाचारं **धूर्तः**। चाटुं करोतीति **चाटुकृत्**। कितवोऽस्त्यस्येति **कितवः**। शठयतीति **शठः**। दाण्डाजिनकः। कुहकः। कार्पटिकः। जालिकः। कौसृतिकः। व्यञ्जकः। मायावी। मायी।

क्वापि नागरिको ज्ञेयः गोत्रसंज्ञाङ्कनाम तत् ॥१६५॥

क्वापि कुत्रापि **ज्ञेयः** ज्ञातव्यः। नगरे भवो **नागरिकः**।

गोत्रसंज्ञाङ्कनाम तत् ।

चत्वारो नाम्नि। गवा वाण्या स्वाचारेण त्रायते रक्षति पालयति **गोत्रम्**। संज्ञानं **संज्ञा**। अङ्क च नाम च समाहारत्वादेकवचनम्। अङ्क्यते लक्ष्यते **अङ्कम्**। नमनम् **नाम**।

धूर्त पुरुष के चार नाम हैं।

१. **धूर्तः** (पुं॰)—सदाचार को नष्ट करता है इसलिए धूर्त है।

२. **चाटुकृत्** (पुं॰)—चाटु कार करता है इसलिए चाटुकृत् है।

३. **कितवः** (पुं॰)—इसके पास कपट होता है इसलिए कितव है।

४. **शठः** (पुं॰)—शठ बना देता है इसलिए शठ है।

दाण्डाजिनकः आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

नागरिकः (पुं॰)—नगर में उत्पन्न होता है वह नागरिक है। कहीं-कहीं पर यह नागरिक शब्द धूर्त सामान्य के अर्थ में प्रचलित है।

नाम के चार शब्द हैं।

१. **गोत्रम्** (नपुं॰)—वाणी से और अपने आचरण से रक्षा करता है, पालन करता है इसलिए गोत्र है। सम्पादक के अनुसार—वचन और आचरण से अपने रूप, स्वरूप की रक्षा करता है। नाम भी अपने अनुरूप आचरण और वचन से अपनी प्रतिष्ठा करता है। रामाश्रम तो कहते हैं कि—कहा जाता है, उच्चारण किया जाता है इसलिए नाम को गोत्र कहते हैं।

२. **संज्ञा** (स्त्री॰)— संज्ञान पहचान होती है इसलिए संज्ञा है। सम्पादक के अनुसार—अमरकोश में संज्ञा चेतना नाम और हस्त आदि से अर्थ की सूचना करना है।

३. **अङ्कम्** (नपुं॰)—पहचाना जाता है इसलिए अङ्क है। सम्पादक के अनुसार—नाम से मनुष्य पहचाना जाता है।

४. **नामन्** (नपुं॰)—नमन होना नाम है। सम्पादक के अनुसार—'नमनं' यह व्युत्पत्ति ठीक नहीं है। अर्थ इससे कहा जाता है। 'म्ना अभ्यासे' इस धातु से विग्रह करना न्यायोचित है। नामन्, सीमन् ये शब्द निपात सिद्ध हैं।

विशेषार्थ—नाम यह व्युत्पत्ति नाम कर्म की व्युत्पत्ति से साम्य रखती है। जब तक नाम कर्म

मुग्धो मूढो जडो नेडो मूको मूर्खश्च कद्वदः।
स देवानां प्रियोऽप्राज्ञो मन्दः धीनामवर्जितः॥१६६॥

सप्त मूर्खे। धर्मकार्येषु मुह्यति संशयं प्राप्नोतीति **मुग्धः**। मुह वैचित्ये। मुह्यति स्म **मूढः**। गत्यर्थेत्यादिना क्तः। हो ढः। तवर्ग०। ढे ढो लोप०। सिः। रेफः। जडति न पुण्यं गच्छति **जडः**। जाल्मश्च। न ईड्यते न स्तूयते केनापि **नेडः**। मूङ् बन्धने। मूयते **मूकः**। मूकादयः– ''मूकयूकअर्भकपृथुकवृकसृकभूकाः'' एते कप्रत्ययान्ता निपात्यन्ते। मुह वैचित्ये। मुह्यति कार्येषु **मूर्खः**। ''मुहेर्मूर्च''। कुत्सितं वदति **कद्वदः**। विधेयः। वालिशः। वाडिशः। बालः। वद्धरः। सलिः। नालीकः। पशुः।

स देवानां प्रियोऽप्राज्ञो मन्दः

त्रयो मन्दे। **देवानां प्रियः**। ग्रथि (न्थि)ल इत्यर्थः। न प्राज्ञः **अप्राज्ञः**। कार्येषु मन्दते स्वपितीवेति **मन्दः**।

धीनामवर्जितः॥१६६॥

है, आत्मा को झुकाता है। उसी तरह नाम भी आत्मा को झुकाता है इसलिए नमनं नाम कहा हो यह सम्भव है।

श्लोकार्थ—मुग्ध, मूढ़, जड़, नेड़, मूक, मूर्ख, कद्वद ये मूर्ख के नाम हैं। देवानांप्रिय, अप्राज्ञ, मन्द ये मन्द बुद्धि पुरुष के नाम हैं। धी आदि नामों में वर्जित शब्द जोड़ने से मूर्ख के नाम होते हैं॥१६६॥

भाष्यार्थ—मूर्ख के सात नाम हैं।

१. मुग्धः (पुं०)—धर्म कार्यों में मोह को प्राप्त है और संशय को प्राप्त करता है इसलिए मुग्ध है।

२. मूढ़ः (पुं०)—मोह को प्राप्त हुआ है वह मूढ़ है।

३. जड़ः (पुं०)—पुण्य को नहीं पाता है वह जड़ है। जाल्म नाम भी है। सम्पादक के अनुसार—इस व्युत्पत्ति में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

४. नेडः (पुं०)—किसी के द्वारा स्तुति या प्रशंसा नहीं पाता है इसलिए वह नेड़ है।

५. मूकः (पुं०)—बन्धन को पाया है इसलिए मूक है।

६. मूर्खः (पुं०)—कार्यों में भ्रमित होता है इसलिए मूर्ख है।

७. कद्वदः (पुं०)—बुरा बोलता है इसलिए कद्वद है।

बालिश आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

मन्द के तीन नाम हैं।

१. देवानां प्रियः (पुं०)—यह मूर्ख का नाम है।

२. अप्राज्ञः (पुं०)—प्राज्ञ (बुद्धिमान) नहीं है इसलिए अप्राज्ञ है।

धीवर्जितः। बुद्धिवर्जितः। प्रतिभावर्जितः। प्रज्ञावर्जितः। मनीषावर्जितः। धिषणावर्जितः। मतिवर्जितः। संख्यावर्जितः। इत्यादीनि मूर्खानामानि भवन्ति।

षाष्ठिकः कलमः शालिः ब्रीही स्तम्बकरिस्तथा।
वत्सः शकृत्करिर्जातः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥१६७॥

चत्वारः शालिभेदे। षष्टिरात्रेण पच्यन्ते **षाष्टिकाः**। षष्टिदिवसैरुत्पन्ना इत्यर्थः। कलयति पुष्टिमनेन **कलमः**। शालते धान्येषु **शालिः**। अथवा सहालिना भ्रमरेण युतः सालिः। वर्हति वर्धते **व्रीहिः**। **स्तम्बकरिः**।

वत्सः शकृत्करिर्जातः षोडन् षड्दशनः स्मृतः ॥१६७॥

चत्वारो वत्से। मातरमभीक्ष्णं वदति **वत्सः**। शकृत् करोतीति **शकृत्करिः**। (इः)। ''स्तम्बशकृतोरिति'' ब्रीहिवत्सयोरुपसंख्यानादिन्। षड् दन्ता यस्य स **षोडन्**। ''समासे दन्तदशधासु षष उत्वं दधोर्डढौ'' षड् दशनाः यस्य स **षड्दशनः**।

शौण्डीरो गर्वितः स्तब्धो मानी चाहंयुरुद्धतः।
उद्ग्रीव उद्धरो दृप्तः नीचश्च पिशुनोऽधमः॥१६८॥

---

३. मन्दः (पुं॰)—कार्यों में मन्द रहता है या सोते हुए के समान है इसलिए मन्द है।

धीवर्जित आदि शब्द मूर्ख के जानना चाहिए। देखें भाष्य।

धान, बछड़े के नाम

श्लोकार्थ—षाष्टिक, कलम, शालि, व्रीहि, स्तम्बकरि ये धान के नाम हैं। वत्स, शकृत्करि, जात, षोडन्, षड्दशन ये बछड़े के नाम हैं ॥१६७॥

भाष्यार्थ—शालिभेद के चार (पाँच) नाम हैं।

१. षाष्टिकः (पुं॰)—साठ रात में पकता है इसलिए षाष्टिक है। साठ दिन में यह उत्पन्न हो जाता है यह अर्थ है।

२. कलमः (पुं॰)—इससे पुष्टि(पोषण) होता है इसलिए कलम है।

३. शालिः (पुं॰)—धान्यों में प्रशंसा पाता है इसलिए शालि है अथवा **सालिः** (पुं॰)—भ्रमरों से सहित होता है इसलिए सालि है।

४. ब्रीहिः (पुं॰)—बढ़ती है इसलिए ब्रीहि है।

५. स्तम्बकरिः (पुं॰)—डंठल पैदा करता है, इसलिए स्तम्बकारि है।

वत्स (बछड़े) के चार नाम हैं।

१. वत्सः (पुं॰)—निरन्तर माँ-माँ कहता है इसलिए वत्स है।

२. शकृत्करिः (पुं॰)—गोबर करता है इसलिए शकृत्करि है।

३. षोडन् (पुं॰)—जिस बछड़े के छह दाँत होते हैं वह षोडन् है।

४. षड्दर्शनः (पुं॰)—जिसके छह दाँत होते हैं उसे षड्दशर्न कहा है।

नव गर्विते। शौण्डतीति **शौण्डीरः**। ''कृशृशौण्ड्भ्य ईरः''। गर्वोऽहंकारः संजातोऽस्य **गर्वितः**। तारकितादिदर्शनात्संजातेऽर्थे इतच्। स्तभ्यते स्म **स्तब्धः**। मानः पूजादिलक्षणो गर्वो विद्यते अस्य **मानी**। अहम् अहंकारोऽस्त्यस्य **अहंयुः**। ''उर्णाऽहंशुभंभ्यो युः''। उद्धन्यते रूपेण **उद्धतः**। उद् ऊर्ध्वा ग्रीवा यस्य स **उद्ग्रीवः**। उद्धरति गर्वेणान्यम् **उद्धरः**। दृप्यते **दृप्तः**।

नीचश्च पिशुनोऽधमः।

त्रयो दुर्जने। नितरां पापं चिनोति **नीचः**। मैत्री पिंशति मैत्रीं पेशयति वा **पिशुनः**। तालव्यः। पिनष्टि वा पिशुनः। ''पिशुनफाल्गुनौ'' नञ्पूर्वो धाञ्। न दधातीत्य**धमः**। ''धर्मसीमाग्रीष्माधमाः''। दुर्जनः। क्षुद्रः। कर्णजपः। दोषग्राही। द्विजिह्वः।

अहंकारी और नीच के नाम

श्लोकार्थ—शौण्डीर, गर्वित, स्तब्ध, मानी, अहंयु, उद्धत, उद्ग्रीव, उद्धर, दृप्त ये अहंकारी के नाम हैं। नीच, पिशुन, अधम ये नीच के नाम हैं ॥१६८॥

भाष्यार्थ—गर्वित पुरुष के नौ नाम हैं।

१. शौण्डीरः (पुं०)—घमण्ड करता है इसलिए शौण्डीर है।

२. गर्वितः (पुं०)—इसके गर्व-अहंकार उत्पन्न होता है इसलिए गर्वित है।

३. स्तब्धः (पुं०)—स्तम्भित होता है इसलिए स्तब्ध है।

४. मानिन् (पुं०)—पूजा आदि होने का गर्व इसके पास होता है इसलिए मानी है।

५. अहंयुः (पुं०)—इसके पास अहं—अहंकार भाव रहता है इसलिए अहंयु है।

६. उद्धतः (पुं०)—रूप से उद्धत होता है इसलिए उद्धत है। सम्पादक हेमचन्द्र ने उत्कण्ठा को प्राप्त होता है इसलिए उद्धत कहा है।

७. उद्ग्रीवः (पुं०)—जिसकी गर्दन उठी रहती है इसलिए वह उद्ग्रीव कहलाता है।

८. उद्धरः (पुं०)—अन्य को गर्व से ऊपर धारण कर लेता है इसलिए उद्धर है।

९. दृप्तः (पुं०)—दर्प करता है इसलिए दृप्त है।

दुर्जन के तीन नाम हैं।

१. नीचः (पुं०)—हमेशा पाप को चुनता है इसलिए नीच है। सम्पादक के अनुसार—यह शब्द ह्रस्व अर्थ में है। 'वहाँ नीचे की ओर जाता है।' यह विग्रह कहा है। यहाँ पिशुन अर्थ के आग्रह से विग्रह भेद हो जाता है।

२. पिशुनः (पुं०)—मैत्री को खण्डित करता है अथवा करा देता है इसलिए पिशुन है।

३. अधमः (पुं०)—(मैत्री) धारण नहीं करता है इसलिए अधम है।

दुर्जन आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

चौरेकागारिकस्तेनास्तस्करः प्रतिरोधकः।
निशाचरो गूढनरो हेरिकः प्रणिधिश्च सः॥१६९॥

नव चौरे। चोरयतीति **चोरः**। स्वार्थेऽणि चौरश्च। एकागरं प्रयोजनमस्येत्यै**कागारिकः**। स्तेनयति स्त्यायति वा **स्तेनः**। उभयम्। तस्यति परद्रव्यं क्षयं नयति **तस्करः**। ''तसेः करः''। अथवा कृञ् तत्पूर्वः। तत्करोति तस्करः। तदाद्यङ्। नाम्यन्तगुणः। रूढित्वात्तस्य सकारः। प्रतिरुणद्धि मार्गं **प्रतिरोधकः**। निशां चरतीति **निशाचरः**। गूढश्चासौ नरः **गूढनरः**। हिनोति परराष्ट्रं गच्छति **हेरिकः**। प्रकर्षेण नितरां गुप्तो धीयते ध्रियते वा **प्रणिधिः**। दस्युः। परास्कन्दी। मलिम्लुचः। मोषकः। प्रतिमोषकः।

प्रस्तरोपलपाषाणदृषद्धातुः शिला घनः।
तत्र जातमयो लोहम् शातकुम्भं नयेत्परम्॥१७०॥

चोर के नाम

श्लोकार्थ—चौर, एकागारिक, स्तेन, तस्कर, प्रतिरोधक, निशाचर, गूढनर, हेरिक, प्रणिधि ये चोर के नाम हैं ॥१६९॥

भाष्यार्थ—चौर के नौ नाम हैं।

१. **चौरः** (पुं॰)—चुराता है इसलिए चोर है। यही चौर है।

२. **एकागारिकः** (पुं॰)—एक घर का ही इसका प्रयोजन रहता है इसलिए एकागारिक है।

३. **स्तेनः** (पुं॰)—चोरी करता है अथवा कराता है इसलिए स्तेन है। स्तेनम् भी नपुं॰ में शब्द है।

४. **तस्करः** (पुं॰)—दूसरे के धन को लूट लेता है इसलिए तस्कर है। 'तत्करोति इति तस्करः' काः सू॰ से यह विग्रह है। वह करता है इसलिए तत्कर ऐसा पहले कहा जाता था। रूढ़ि से वह तस्कर शब्द हो गया है।

५. **प्रतिरोधकः** (पुं॰)—मार्ग को बन्द कर देता है इसलिए इसे प्रतिरोधक कहा है।

६. **निशाचरः** (पुं॰)—रात्रि में गमन करता है इसलिए निशाचर है।

७. **गूढनरः** (पुं॰)—छिपा हुआ मनुष्य होता है इसलिए गूढनर है।

८. **हेरिकः** (पुं॰)—दूसरे देश में चला जाता है इसलिए हेरिक है।

९. **प्रणिधिः** (पुं॰)—बहुत अधिक छुप कर रहता है इसलिए प्रणिधि है।

दस्यु आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

विशेषार्थ—इस श्लोक के अन्तिम पद में पाठ भेद है–'प्रणिधिश्च सः' की जगह 'पारिपन्थिकः' पढ़ा जाता है।

पत्थर और लोहा के नाम

श्लोकार्थ—प्रस्तर, उपल, पाषाण, दृषत्, धातु, शिला, घन ये पत्थर के नाम हैं। उसमें उत्पन्न होने से तथा अय और लोह ये लोहे के नाम हैं ॥१७०॥

प्रस्तृणात्याच्छादयति **प्रस्तरः**। काठिन्यमुपलाति **उपलम्**। उभयम्। पिनष्टि सर्वं **पाषाणः**। पासानश्च। दृणाति चूर्णयति द्रियते आद्रियते वा कार्यार्थं **दृषत्**। स्त्रियाम्। दधाति **धातुः**। शिनोति तनूकरोति **शिला**। शिली च। स्त्रियाम्। हन्यते **घनः**। अश्मन्। ग्रावन्। पुलकश्च।

तत्र जातमयो लोहम्

द्वौ लोहे। तत्र तस्मिन् पाषाणे जातम् उद्भवम् **तत्रजातम्**। प्रस्तरोद्भवः। उपलोद्भवः। धातूद्भवः। दृषदुद्भवः। शिलोद्भवः। घनोद्भवः। इत्यादि लोहनामानि भवन्ति। अयते सर्वविकारं सान्तम्। **अयः**। लुनाति सर्वं **लोहम्**।

शातकुम्भं नयेत्परम् ॥१७०॥

तत्र पाषाणे उद्भवानि सुवर्णनामानि भवन्ति।

क्षामं शान्तं कृशं क्षीणं हीनं जीर्णं च वैरिणाम्।
शीर्णावसानं दूनं च धैर्यं शौर्यं च पौरुषे॥१७१॥

भाष्यार्थ—पत्थर के सात नाम हैं।

१. **प्रस्तरः** (पुं॰)—ढक देता है इसलिए प्रस्तर है।

२. **उपलम्** (नपुं॰)—काठिन्य को ग्रहण करता है इसलिए उपल है। उपलः पुं॰ में भी है।

३. **पाषाणः** (पुं॰)—सभी कुछ पीस देता है इसलिए पाषाण है। पासानः भी कहते हैं।

४. **दृषत्** (स्त्री॰)—चूर्ण कर देता है अथवा कार्य के लिए आदर पाता है इसलिए दृशत् है।

विशेष—स्वर्ण पाषाण को दृषत् कहते हैं इसीलिए आदर पाता है, ऐसी व्युत्पत्ति है।

५. **धातुः** (पुं॰)—धारण करता है (स्वर्ण आदि को) इसलिए धातु है।

६. **शिला** (स्त्री॰)—छोटा कर देती है, चूर कर देती है इसलिए शिला है। शिली भी कहते हैं।

७. **घनः** (पुं॰)—पीटा जाता है इसलिए घन है।

अश्मन् आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

लोहे के दो नाम हैं। उस पाषाण में उत्पन्न होता है इसलिए तत्रजातम् कहा है।

प्रस्तरोद्भव आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

१. **अयस्** (नपुं॰)—सभी विकारों को प्राप्त है इसलिए अय है।

२. **लोहम्** (पुं॰)—सभी कुछ कूट देता है इसलिए लोह है।

उस पाषाण में उत्पन्न होने वाले के सुवर्ण के नाम होते हैं।

दुबले और पौरुष के नाम

श्लोकार्थ—क्षाम, शान्त, कृश, क्षीण, हीन, जीर्ण, शीर्ण, अवसान, दून ये वैरी को हों। धैर्य, शौर्य और पौरुष ये पौरुष के नाम हैं ॥१७१॥

नव कृशे। क्षायति स्म **क्षामम्**। शाम्यति स्म**शान्तम्**। **कृशम्**। **क्षीणम्**। **हीनम्**। जीर्यते स्म **जीर्णम्**। शीर्यते स्म **शीर्णम्**। अवस्यते **अवसानम्**। दूयते स्म **दूनं** च। हे राजेन्द्र, तव वैरिणां शत्रूणां भवतु इति प्रयोजनीयम्।

धैर्यं शौर्यं च पौरुषे।

त्रयः पौरुषे। धीरस्य भावो **धैर्यम्**। शूरस्य भावः **शौर्यम्**। पुरुषस्य भावः **पौरुषम्**। युष्माकं भवतु इत्यध्याहार्यम्।

क्षिप्राशुमङ्क्ष्वरं शीघ्रं सहसा झटिति द्रुतम्।
तूर्णं जवः स्यदो रंहो रयो वेगस्तरो लघुः॥१७२॥

षोडश वेगे। क्षिपति निरस्यति **क्षिप्रम्**। रक्प्रत्यय उणादौ ज्ञातव्यः। अश्नुते **आशु**। कृवापाजीति

भाष्यार्थ—कृश के नौ नाम हैं।

१. **क्षामम्** (नपुं०)—क्षय, नाश को प्राप्त हुआ हो वह क्षाम है।

२. **शान्तम्** (नपुं०)—शान्त हुआ हो वह शान्त है।

३. **कृशम्**, ४. **क्षीणम्**, ५. **हीनम्**,

६. **जीर्णम्**—जर्जर हुआ है वह जीर्ण है।

७. **शीर्णम्** (नपुं०)—घट गया हो वह शीर्ण है।

८. **अवसानम्** (नपुं०)—अन्त होता है इसलिए अवसान है। सम्पादक के अनुसार—यहाँ अवसान तक आठ शब्द विशेष्य के आश्रित होने से 'कुटुम्ब' इस विशेष को अध्याहार करके करें। हे राजेन्द्र! आपके वैरियों का कुटुम्ब क्षय हो, कृश हो इत्यादि तथा आपके वैरियों का अवसान नाश हो। इस प्रकार भेद करना चाहिए।

९. **दूनम्** (नपुं०)—नाश हुआ हो वह दून है।

हे राजेन्द्र आपके शत्रुओं का क्षाम आदि होवे, इस प्रकार प्रयोजनीय है।

पौरुष के तीन शब्द हैं।

१. **धैर्यम्** (नपुं०)—धीर का भाव धैर्य है।

२. **शौर्यम्** (नपुं०)—शूर का भाव पौरुष है।

३. **पौरुषम्** (नपुं०)—पुरुष का भाव पौरुष है।

''आप लोगों को होवे'', यह अध्याहार्य करना है।

वेग के नाम

श्लोकार्थ—क्षिप्र, आशु, मंक्षु, अर, शीघ्र, सहसा, झटिति, द्रुत, तूर्ण, जव, स्यद, रंहस्, रय, वेग, तर, लघु ये वेग के नाम हैं॥१७२॥

भाष्यार्थ—वेग के सोलह नाम हैं।

उण्। मज्जति महति वा **मङ्क्षुः**। इयर्ति मान्तमव्ययम् **अरम्**। अदन्तं च अरम्। शेते कार्ये शीघ (शिङ्घ) ति व्याप्नोति वा **शीघ्रम्**। सहते **सहसा**। अव्ययम्। झटति संघातीभवति इदन्तमव्ययम्। **झटिति**। द्रवति स्म **द्रुतम्**। त्वरते स्म **तूर्णम्**। जवनं **जवः**। जु गतौ। स्यन्दते **स्यदः**। ''स्यदो जवः'' इति साधुः। रंहयत्यनेन **रंहः**। रयते रीणाति वाऽनेन **रयः**। वीय (विज्य) ते **वेगः**। तरत्यनेन **तरः**। ''सर्वधातुभ्योऽसुन्''। लङ्घते भूमिं **लघुः**। संवेगः। गतिवचनो जवो धर्म वचना आशुशीघ्रादय इत्यर्थभेदः।

सदागतिप्रस्तावादाह-

साधीयोऽत्यर्थमत्यन्तं नितान्तं सुष्टु वै भृशम्।
स्फुटं साधु खलु स्पष्टं विशदं पुष्कलामलौ॥१७३॥

---

१. **क्षिप्रम्** (अव्यय)—विलम्ब को दूर कर देता है इसलिए क्षिप्र है।

२. **आशु** (अव्यय)—(तुरन्त) प्राप्त करता है इसलिए आशु है।

३. **मंक्षु** (अव्यय)—बहुत जल्द निमग्न हो जाता है अथवा शुद्ध हो जाता है इसलिए मंक्षु कहा है।

४. **अरम्** (अव्यय)—शीघ्र करता है इसलिए अर है। अरम् अव्यय पद है। और अरः भी है।

५. **शीघ्रम्** (अव्यय)—कार्य में ही सोता है अथवा व्याप्त हो जाता है इसलिए शीघ्र है।

६. **सहसा** (अव्यय)—मर्षण करता है अर्थात् घसीट देता है इसलिए सहसा है।

७. **झटिति** (अव्यय)—इकट्ठा हो जाता है, एक साथ होता है इसलिए झटिति है।

८. **द्रुतम्** (अव्यय)—तेज गया हो वह द्रुत है।

९. **तूर्णम्** (अव्यय)—शीघ्र चला हो वह तूर्ण है।

१०. **जवः** (पुं०)—गति करता है इसलिए जव है।

११. **स्यदः** (पुं०)—तेजी से बहता है इसलिए स्यद है।

१२. **रंहस्** (पुं०)—इससे शीघ्र चलता है इसलिए रंह है।

१३. **रयः** (पुं०)—इससे तेज दौड़ता है इसलिए रय है।

१४. **वेगः** (पुं०)—चलता है इसलिए वेग है।

१५. **तरः** (पुं०)—इससे तैरता है इसलिए तर है।

१६. **लघुः** (पुं०)—भूमि को लाँघता है इसलिए लघु है। संवेगः शब्द भी है।

इनमें कुछ शब्द सामान्य गतिवाची हैं। और कुछ शीघ्र गमन धर्म बताने वाले हैं जैसे आशु, शीघ्र आदि। इस प्रकार अर्थ भेद है।

बहुत और स्पष्ट के नाम

श्लोकार्थ—साधीयस्, अत्यर्थ, अत्यन्त, नितान्त, सुष्ठु, वै, भृश ये बहुत के नाम हैं। स्फुट, साधु, खलु, स्पष्ट, विशद, पुष्कल, अमल ये निर्मल के नाम हैं ॥१७३॥

सप्त भृशे। साधुभ्यो हितः **साधीयः**। ईयसुः। अतिक्रान्तोऽर्थे वेलां मात्राम् अन्तं च **अत्यर्थम्**। **अत्यन्तम्**। अतिवेलम्। अतिमात्रं च। नितान्म्यति स्म **नितान्तम्**। सुष्टौति **सुष्टु**। अपष्ट्वादयः-अपष्टु दुष्टु सुष्टु हरिद्रु मितद्रु शतद्रु शङ्कु धनु इत्यादयः। **वै** अव्ययम्। बिभर्ति **भृशम्**।

स्फुटं साधु खलु स्पष्टं विशदं पुष्कलामलौ॥१७३॥

सप्त निर्मले। स्फुरत्यभिप्रायोऽस्मात् **स्फुटम्**। साध्यतीति **साधु**। खलतीति **खलु**। स्पश्यते स्म **स्पष्टम्**। विशति चित्ते **विशदम्**। पुष्णातीति **पुष्कलम्**। न मलमस्मिन् **अमलम्**। प्रकाशम्। प्रकटम्।

चित्राश्चर्याद्भुतं चोद्यं विस्मयः कौतुकोऽप्यहो।
अभियोगोद्यमोद्योगा उत्साहो विक्रमो मतः॥१७४॥

भाष्यार्थ—बहुत के सात नाम हैं।

१. **साधीयस्** (नपुं०)—साधु के लिए हित है इसलिए साधीयस् है। सम्पादक के अनुसार—अतिशय रूप से साधु अथवा होता है इसलिए साधीय है। टीका में जो विग्रह किया है वह नहीं बैठता है, क्योंकि अतिशय अर्थ में ईयस् प्रत्यय है।

२. **अत्यर्थम्** (विशेषण)—अर्थ से अतिक्रान्त हुआ है, पार हुआ है इसलिए अत्यर्थ है।

३. **अत्यन्तम्** (अव्यय)—अन्त को अतिक्रान्त किया है इसलिए अत्यन्त है। अतिवेल, अतिमात्र शब्द भी हैं।

४. **नितान्तम्** (अव्यय)-पूरी तरह से अपने कार्य को चाहता है, इसलिए नितान्त है।

५. **सुष्ठु** (अव्यय)—अच्छा कहता है इसलिए सुष्ठु है। अपष्टु आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

६. **वै** (अव्यय) है।

७. **भृशम्** (अव्यय)—धारण करता है, इसलिए भृश है।

निर्मल के सात नाम हैं।

१. **स्फुटम्** (अव्यय)—इससे अभिप्राय प्रकट होता है इसलिए स्फुट है।

२. **साधु** (विशेषण)—साधता है इसलिए साधु है।

३. **खलु** (अव्यय)—संघर्ष करता है इसलिए खलु है।

४. **स्पष्टम्** (अव्यय)—दिखा हुआ है, स्पष्ट है।

५. **विशदम्** (नपुं०)—चित्त में रहता है इसलिए विशद है।

६. **पुष्कलम्** (नपुं०)—पुष्ट करता है इसलिए पुष्कल है।

७. **अमलम्** (नपुं०)—इसमें मल नहीं होता है इसलिए अमल है। प्रकाश, प्रकट शब्द भी हैं।

कौतुक और उद्यम के नाम

श्लोकार्थ—चित्र, आश्चर्य, अद्‌भुत, चोद्य, विस्मय, कौतुक, अहो ये कौतुक के नाम हैं। अभियोग, उद्यम, उद्योग, उत्साह, विक्रम ये उत्साह के नाम माने गये हैं ॥१७३॥

षट् कौतुके। चिञ् चयने। चिनोतीति **चित्रम्**। आचरतीत्**याश्चर्यम्**। पारस्करादित्वात्सुट्। भू सत्तायाम्। अद् पूर्वः। अद् विस्मितो भवत्यत्र **अद्भुतः**। ''अदि भुवो डुतः''। चोद्यते इति **चोद्यम्**। विस्मीयते इति **विस्मयः**। कुतुकस्य भावः **कौतुकम्**। अहो लोका आश्चर्यम् इति प्रयोजनीयम्।

अभियोगोद्यमोद्योगा उत्साहो विक्रमो मतः॥१७४॥

पञ्चोद्यमे। अभियोजनम् **अभियोगः**। यमु उपरमे। यम् उद्पूर्वः। ''चुरादेश्च''- इन्। ''अस्योप॰''- दीर्घः। उद्यामि इति जातम्। ''मानुबन्धानां'' ह्रस्वः। उद्यमि जातम्। उद्यमन**मुद्यमः**। भावे घञ्। ''कारितस्य॰।'' उद्योजनम् **उद्योगः**। उत्सहन**मुत्साहः**। विक्रमणं **विक्रमः**।

रहोऽनुरहसोपांशु रहस्यं च भिनत्ति कः।
कीनाशः कृपणो लुब्धो गृध्नुर्दीनोऽभिलाषुकः॥१७५॥

भाष्यार्थ—कौतुक के छह नाम हैं।

१. **चित्रम्** (नपुं॰)—चयन करता है इसलिए चित्र है। सम्पादक के अनुसार—चित्र धातु चित्र बनाने में है। इसलिए चित्र बनाता है अतः चित्र है।

२. **आश्चर्यम्** (नपुं॰)—आचरण करता है इसलिए आश्चर्य है।

३. **अद्भुतः** (पुं॰)—इसमें विस्मित होता है इसलिए अद्भुत है।

४. **चोद्यम्** (नपुं॰)—कहता है, आश्चर्य करता है इसलिए चोद्य है। ''चोद्य शब्द प्रेय, प्रश्न, अद्भुत अर्थ में भी है।''

५. **विस्मयः** (पुं॰)—विस्मय को प्राप्त होता है इसलिए विस्मय है।

६. **कौतुकम्** (नपुं॰)—कुतुक का भाव कौतुक है। अहो लोगों को आश्चर्य है, यह प्रयोजनीय है अर्थात् ऐसा मानना।

उद्यम के पाँच नाम हैं।

१. **अभियोगः** (पुं॰)—योजना के अनुरूप करना अभियोग है।

२. **उद्यमः** (पुं॰)—उद्यम करना उद्यम है।

३. **उद्योगः** (पुं॰)—खूब योजना बनाना उद्योग है।

४. **उत्साहः** (पुं॰)—उत्साहित होना उत्साह है।

५. **विक्रमः** (पुं॰)—पराक्रम दिखाना विक्रम है।

रहस्य और कंजूस के नाम

श्लोकार्थ—रहस्, अनुरहस्, उपांशु, रहस्य इनको कौन भेदता है? कीनाश, कृपण, लुब्ध, गृध्नु, दीन, अभिलाषुक ये कृपण के नाम हैं॥१७५॥

भाष्यार्थ—एकान्त के चार नाम हैं।

चत्वार एकान्ते। रहति त्यजति जनः सङ्गं यत्र सान्तं **रहः**। क्लीबे। अव्ययं च। अनुगतं रहः **अनुरहसम्**। ''अन्ववतप्तेभ्यो रहस्''। उपाश्नुते अव्ययमुदन्तम् **उपांशुः**। रहसि भवं **रहस्यम्**। **कः** पुमान् **भिनत्ति** विदारयति। प्रच्छन्नम्। एकान्तम्। निःशलाकम्। उपह्वरम्। विजनम्। विविक्तम्। जनान्तिकम्।

कीनाशः कृपणो लुब्धो गृध्नुर्दीनोऽभिलाषुकः॥१७५॥

षट् कृपणे। लोभेन क्लिश्यति बाध्यते **कीनाशः**। कीं वाणीं याचकानां नाशयति विनाशयतीति कीनाशः। कल्पते रक्षितुं न तु दातुं **कृपणः**। लुभ्यति स्म **लुब्धः**। गृध्नाति गृध्नः। **गृध्नु**रित्यपि स्यात्। **लोभेन** द्योतते शोभते (दीयते क्षयति) **दीनः**। दीङ् क्षये। क्वचित् हानः इति पठन्ति। लष कान्तौ। अभिपूर्वः। अभिलषतात्येवंशीलः **अभिलाषुकः**। ''शृकमगमहनवृषभूस्थालसपतपदामुकङ्''। कदर्यः। किम्पचानः। मितम्पचः। क्षुल्लः। क्षुल्लकः। क्लीबः। क्षुद्रः। वराकश्च।

पाशनीतः सितो बद्धः सन्धानीतो नियन्त्रितः।
नियामितः शृङ्खलितः पिनद्धः पाशितो रिपुः॥१७६॥

---

१. रहस् (नपुं०, अव्यय)—जहाँ लोग सङ्ग छोड़ देते हैं वह रहस् है।

२. अनुरहस् (नपुं०)—एकान्त के साथ रहने वाला होने से अनुरह है।

३. उपांशु (अव्यय)—निकट प्राप्त होता है इसलिए उपांशु है।

४. रहस्यम् (त्रि०)—एकान्त में होता है वह रहस्य है।

इनको कौन मनुष्य दूर करता है? प्रच्छन्न आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

कृपण के छह नाम हैं।

१. कीनाशः (पुं०)—लोभ से पीड़ित होता है इसलिए कीनाश है। तथा याचकों की वाणी को नष्ट कर देता है अर्थात् महत्त्वहीन कर देता है इसलिए कीनाश है।

२. कृपणः (पुं०)—(धनादि की) रक्षा करने के लिए कल्पना करता है न कि किसी को देने के लिए इसलिए कृपण है।

३. लुब्धः (पुं०)—लोभ को प्राप्त होता है इसलिए लुब्ध है।

४. गृध्नः, गृध्नुः (पुं०)—गृद्धता रखता है अर्थात् धन से अति आसक्ति रखता है इसलिए गृध्न है।

५. दीनः (पुं०)-लोभ से शोभा पाता है अथवा लोभ से नष्ट होता है इसलिए दीन है। कहीं पर 'हानः' पाठ पढ़ा जाता है।

६. अभिलाषुकः (पुं०)—हमेशा इच्छा रखता है इसलिए अभिलाषुक है।

कदर्य आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

बंधे हुए के नाम

श्लोकार्थ—पाशनीत, सित, बद्ध, सन्धानीत, नियन्त्रित, नियामित, शृंखलित, पिनद्ध, पाशित ये बँधे हुए शत्रु के नाम हैं॥१७६॥

नव बद्धे। पाशं नीतः **पाशनीतः**। सीयते स्म **सितः**। बध्यते स्म **बद्धः**। सन्धां प्रतिज्ञां नीतः प्रापितः **सन्धानीतः**। नियन्त्रं संजातमस्य **नियन्त्रितः**। नियामो जातोऽस्य **नियामितः**। शृङ्खला संजाताऽस्येति **शृङ्खलितः**। तारकितादिदर्शनादितच्। पिनह्यते स्म **पिनद्धः**। पाशः संजातोऽस्य **पाशितः**। कः **रिपुः** शत्रुः।

कान्तं च कमनं कम्रं कमनीयं मनोहरम्।
अभिरामं र(रा)मणीयं रम्यं सौम्यं च सुन्दरम् ॥१७७॥

दश वरिष्ठे (अतिसुन्दरे)। काम्यते **कान्तम्**। काम्यते **कमनम्**। कामयते इत्येवंशीलं **कम्रम्**। काम्यते वाञ्छ्यते **कमनीयम्**। ''तव्यानीयौ''। मनोहरति **मनोहरम्**। मनोहारी। **मनोरमम्**। अभिरमणम् **अभिरामम्**।

भाष्यार्थ—बद्ध के नौ नाम हैं।

१. **पाशनीतः** (पुं०)—पाश-जाल या बंधन। बंधन को प्राप्त हुआ है इसलिए पाशनीत है।

२. **सितः** (पुं०)—बँधा हुआ है इसलिए सित कहा है।

३. **बद्धः** (पुं०)—बँधा हुआ है इसलिए बद्ध है।

४. **सन्धानीतः** (पुं०)—सन्धा-प्रतिज्ञा। प्रतिज्ञा को प्राप्त किया है इसलिए सन्धानीत है।

५. **नियन्त्रितः** (पुं०)—इसको नियन्त्रण में रखा जाता है इसलिए नियन्त्रित है।

६. **नियामितः** (पुं०)—इसके लिए नियम-कानून होते हैं इसलिए नियामित है।

७. **शृङ्खलितः** (पुं०)—इसके साँकलें होती हैं इसलिए शृंखलित है।

८. **पिनद्धः** (पुं०)—बाँधा जाता है इसलिए पिनद्ध है।

९. **पाशितः** (पुं०)—इसको पाश जाल में रखा जाता है इसलिए पाशित है।

कौन के साथ ऐसा होता है? शत्रु के साथ।

सुन्दर के नाम

श्लोकार्थ—कान्त, कमन, कम्र, कमनीय, मनोहर, अभिराम, रमणीय, रम्य, सौम्य और सुन्दर ये सुन्दर के नाम हैं ॥१७७॥

भाष्यार्थ—वरिष्ठ (अति सुन्दर) के दश नाम हैं।

१. **कान्तम्** (नपुं०)—चाहा जाता है इसलिए कान्त है।

२. **कमनम्** (नपुं०)—चाहा जाता है इसलिए कमन भी है।

३. **कम्रम्** (नपुं०)—प्रार्थना की जाती है इस प्रकार के स्वभाव वाला होता है अर्थात् लोग जिसको माँगें वह कम्र है।

४. **कमनीयम्** (नपुं०)—इसकी वांछा करते हैं इसलिए कमनीय है।

५. **मनोहरम्** (नपुं०)—मन को हर लेता है इसलिए मनोहर है। मनोहारी और मनोरमम् शब्द भी हैं।

६. **अभिरामम्** (नपुं०)—इसमें रमण करता है इसलिए अभिराम है।

रमणस्य (णाय) हितं **रमणीयम्**। रम्यते **रम्यम्**। सोमस्य भावः **सौम्यम्**। सुन्दः सौत्रोऽयं सुन्दति सुष्टु नन्दयति इति निरुक्त्या **सुन्दरम्**।

चारु श्लक्ष्णं च रुचिरं प्रशस्तं हृद्यबन्धुरम्।
दर्शनीयं मनोज्ञं च चित्तपर्याय - हारि च॥१७८॥

अष्टौ मनोज्ञे। चरन्ति नेत्राण्यत्र **चारु**। शिष्यते युज्यतेऽनेन **श्लक्षणः**। रोचते सर्वेभ्यो **रुचिरम्**। प्रशस्यते स्म **प्रशस्तम्**। हृदयस्य प्रियम् **हृद्यम्**। चित्तं बध्नाति **बन्धुरम्**। दृश्यते **दर्शनीयम्**। मनो जानातीति **मनोज्ञम्**।

चित्तपर्यायहारि च॥१७८॥

चित्तहारि। मनोहारि। इत्यादीनि मनोहरनामानि ज्ञातव्यानि।

अवश्यायं तुषारं च प्रालेयं तुहिनं हिमम्।
नीहारं तत्करं विद्धि मृगाङ्क रोहिणीपतिम् ॥१७९॥

---

७. **रमणीयम्** (नपुं०)—रमण के लिए है इसलिए रमणीय है। सम्पादक के अनुसार—रमणाय हितम् ऐसा विग्रह करना उचित है क्योंकि 'इसके लिए हित में है' इस प्रकार चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग होता है। मूल श्लोक में छन्द भंग के दोष को दूर करने के लिए 'रमणीय' शब्द जानना। रमणीय ही रामणीय है, स्वार्थे अण् प्रत्यय लग जाने से।

८. **रम्यम्** (नपुं०)—रमण किया जाता है इसमें इसलिए रम्य है।

९. **सौम्यम्** (नपुं०)—सोम का भाव सौम्य है। ऐसा विग्रह ठीक नहीं है। ''प्रकृतिजन्य ज्ञान में प्रकारी भूत भाव होता है।'' इस सिद्धान्त से सौम्य को सोमत्व अर्थापत्ति से सिद्ध होता है। इसलिए सोम इसका देवता है इस प्रकार व्युत्पत्ति होना चाहिए अथवा सोम के समान सोम है। इसलिए ष्यण् प्रत्यय से 'सौम्य' बनता है ऐसा रामाश्रम ने कहा है।

१०. **सुन्दरम्** (नपुं०)—बहुत अच्छी तरह प्रसन्न करता है इसलिए सुन्दर है। सम्पादक के अनुसार—अच्छी तरह आदर पाता है इसलिए सुन्दर है। द्रु धातु से अप् प्रत्यय होकर पृषो. से नुम् हो जाता है अथवा सु पूर्वक 'उन्दी' धातु क्लेदन अर्थ में है। इससे सुन्दर शब्द बनता है। चित्त को अच्छी तरह भिगो देता है इसलिए सुन्दर है।

विशेष—ये सभी शब्द विशेषण के रूप में हैं अतः तीनों लिंगों में प्रयुक्त होते हैं।

मनोज्ञ के नाम

श्लोकार्थ—चारु, श्लक्ष्ण, रुचिर, प्रशस्त, हृद्य, बन्धुर, दर्शनीय, मनोज्ञ ये मनोज्ञ वस्तु के नाम हैं। चित्त के पर्यायवाची शब्दों में हारि जोड़ने से भी मनोहर के नाम होते हैं ॥१७८॥

भाष्यार्थ—मनोज्ञ के आठ नाम हैं।

षड् हिमे। अवश्यायते **अवश्यायः**। ''दिहिलिहिश्लिषिश्वसिव्यध्यतीण्श्याऽऽतां च'' णप्रत्ययः। तुष्यन्त्यनेन **तुषारः**। प्रलयादागतं **प्रालेयम्**। तोहयत्यर्दयति **तुहिनम्**। तुहिर् अर्दने। हिनोति वर्धते जलमनेन **हिमम्**। निह्रियते **नीहारः**। मिहिका। धूमिका। देश्याम्।

तत्करं विद्धि मृगाङ्क रोहिणीपतिम्।

तस्य करस्तत्करस्तम्। हिमशब्दात्करशब्दे प्रयुज्यमाने चन्द्रनामानि भवन्ति। अवश्यायकरः। तुषारकरः। प्रालेयकरः। तुहिनकरः। हिमकरः। नीहारकरः। मृगाङ्कः। रोहिणीपतिः। अष्टौ नामानि **विद्धि** जानीहि।

---

१. **चारु** (नपुं॰)—इसमें नेत्र चलते हैं अर्थात् आँखें इसे देखती हैं। इसलिए चारु है।

२. **श्लक्ष्णः, श्लक्ष्णम्** (पुं॰, नपुं॰)—मन अथवा नेत्र इससे जुड़ जाते हैं इसलिए श्लक्ष्ण है।

३. **रुचिरम्** (नपुं॰)—सभी के लिए रुचता है, अच्छा लगता है इसलिए रुचिर है।

४. **प्रशस्तम्** (नपुं॰)—उत्कृष्ट रूप से अच्छा कहा है इसलिए प्रशस्त है।

५. **हृद्यम्** (नपुं॰)—हृदय को प्रिय होता है इसलिए हृद्य है।

६. **बन्धुरम्** (नपुं॰)—चित्त को बाँध लेता है इसलिए बन्धुर है।

७. **दर्शनीयम्** (नपुं॰)—देखा जाता है इसलिए दर्शनीय है।

८. **मनोज्ञम्** (नपुं॰)—मन जानता है इसलिए मनोज्ञ है।

विशेष—ये भी सभी विशेषण शब्द हैं, अतः तीनों लिंगों में प्रयुक्त होते हैं। चित्तहारी, मनोहारी। चित्त के पर्यायवाची शब्द मन आदि में 'हारि' जोड़ने से मनोहर के नाम जानना।

हिम के और चन्द्रमा के नाम

श्लोकार्थ—अवश्याय, तुषार, प्रालेय, तुहिन, हिम, नीहार ये बर्फ के नाम हैं। इनमें 'कर' जोड़ने से चन्द्रमा के नाम होते हैं। मृगांक, रोहिणीपति भी चन्द्रमा के नाम हैं ॥१७९॥

भाष्यार्थ—बर्फ के छह नाम हैं।

१. **अवश्यायः** (पुं॰)—भीतर तक जम जाता है इसलिए अवश्याय है।

२. **तुषारः** (पुं॰)—इससे सन्तुष्ट हो जाते हैं इसलिए तुषार है।

३. **प्रालेयम्** (नपुं॰)—प्रलय से आता है इसलिए प्रालेय है। सम्पादक के अनुसार—इसमें पदार्थ पूरी तरह लीन, विलीन हो जाते हैं इसलिए प्रलय हिमालय को कहते हैं। उस हिमालय से आता है इसलिए प्रालेय है।

४. **तुहिनम्** (नपुं॰)—दुःखित कर देता है इसलिए तुहिन है।

५. **हिमम्** (नपुं॰)—इससे जल बढ़ता है इसलिए हिम है।

६. **नीहारः** (पुं॰)—निश्चित ही हरण कर लेता है, जला देता है इसलिए नीहार है।

मिहिका आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

हिम के शब्दों में 'कर' जोड़ देने से चन्द्र के नाम होते हैं। अवश्यायकर आदि। देखें भाष्य में आठ नाम बनाए हैं।

पुन्नागं सन्नरं प्राहुः तिलकं च विशेषकम्।
ललाटिका ललामापि पूर्णवाहं तथा द्रुमम् ॥१८०॥

द्वौ प्रधानपुरुषे। पुमाँश्चासौ नागः श्रेष्ठः **पुन्नागः**। संश्चासौ नरः **सन्नरः**। प्राहुः ब्रुवन्ति।

तिलकं च विशेषकम्।

ललाटिका ललामापि पूर्णवाहं तथा द्रुमम् ॥१८०॥

षट् तिलके। तिलकाकृतिः तिलकः। तिलतीति **तिलकम्**। विशिनष्टीति विशेषः। स्वार्थे कः। **विशेषकः**। लल्यते ललाटम्। के प्रत्यये **ललाटिका**। लल्यते **ललामा**। पूर्णं वाहयतीति **पूर्णवाहः**। द्रवति वृद्धिं गच्छति **द्रुमः**। तमालपत्रम्। चित्रकम्।

प्रधान पुरुष, तिलक के नाम

श्लोकार्थ—पुन्नाग, सन्नर, को प्रधान पुरुष कहते हैं। तिलक, विशेषक, ललाटिका, ललामा, पूर्णवाह, द्रुम ये तिलक के नाम हैं ॥१८०॥

भाष्यार्थ—प्रधान पुरुष के दो नाम हैं।

१. **पुन्नागः** (पुं०)—पुरुष ही वह नाग, श्रेष्ठ है इसलिए पुन्नाग है।

२. **सन्नरः** (पुं०)—सत् (सज्जन) ही वह मनुष्य है इसलिए सन्नर है।

तिलक के छह नाम हैं।

१. **तिलकः** (पुं०)—तिलक की आकृति को तिलक कहते हैं। तिल के समान होने से तिलक है।

२. **विशेषकः** (पुं०)—विशिष्ट होता है वह विशेष है। स्वार्थे क प्रत्यय लग जाने से विशेषक होता है।

३. **ललाटिका** (स्त्री०)—लालित होता है या शोभित होता है वह ललाट है। क प्रत्यय होने पर ललाटिका होता है।

४. **ललामा** (स्त्री०)—शोभित होता है इसलिए ललामा है।

५. **पूर्णवाहः** (पुं०)—पूर्णता को धारण कराता है इसलिए पूर्णवाह है।

६. **द्रुमः** (पुं०)—वृद्धि को प्राप्त होता है इसलिए द्रुम है।

तमालपत्र और चित्रक नाम भी हैं। सम्पादक के अनुसार—ललाट पर बनाए गए तिलक के भूषण में तिलक, विशेषक और टीका में कहे हुए तमाल पत्र और चित्रक के नाम प्रयुक्त होते हैं। कहा भी है–''तमालपत्र, चित्र, पुण्ड्र, विशेषक ये तिलक के अर्थ में है। (अ० भि० चि०)'' पत्रसमूह से किये गए ललाट के भूषण को ललाटिका कहा है। कहा भी है—पत्रपाश्या ललाटिका है। मरुस्थल की रमणी—स्त्रियों के द्वारा (मस्तिष्क के ऊपरी भाग पर) धारण किया जाने वाला रत्न आदि का बना भूषण ललामा है। आगे रखा गया ललामक है। अ० भि० चि० में कहा है। पूर्णवाह और द्रुम शब्दों का किसी अन्य कोश में पाठ उपलब्ध नहीं है।

अञ्जनं कज्जलं नागं गजपाटलमारुणम्।
सालं परिधि वृक्षं च कुल्यां स्त्रीं सारणीं विदुः ॥१८१॥

षट् कज्जले। अज्यतेऽनेनेत्य**ञ्जनम्**। कषति नेत्रवैरूप्यं **कज्जलम्**। न शोभाम् अगति गच्छति **नागम्**। गजति शोभया माद्यति **गजम्**। पाटलाया इदम् **पाटलम्**। ऋच्छति गच्छति शोभाम् **आरुणम्**।

सालं परिधि वृक्षं च कुल्यां स्त्रीं सारणीं विदुः ॥१८१॥

त्रयः प्राकारे। सरति गच्छति कालान्तरं **सालः**। परिधीयते वेष्ट्यते अनेन **परिधिः।** वृणोति नगरमाच्छादयति **वृक्षम्**।

काजल, प्राकार और प्याऊ के नाम

श्लोकार्थ—अञ्जन, कज्जल, नाग, गज, पाटल, आरुण ये काजल के नाम हैं। साल, परिधि और वृक्ष प्राकार के नाम हैं। कुल्या, स्त्री, सारणी ये प्याऊ के नाम हैं ॥१८१॥

भाष्यार्थ—काजल के छह नाम हैं।

१. **अञ्जनम्** (नपुं०)—इससे सुन्दर लगता है इसलिए अञ्जन है।

२. **कज्जलम्** (नपुं०)—नेत्रों की कुरूपता को कष देता है, रोक देता है इसलिए कज्जल है।

३. **नागम्** (नपुं०)—शोभा नहीं पाता है इसलिए नाग है।

४. **गजम्** (नपुं०)—शोभा से मद उत्पन्न करता है इसलिए गज है।

५. **पाटलम्** (नपुं०)—पाटला सम्बन्धी पाटल है। पाटला अर्थात् लाल गोंद उसके रंग का होने से पाटल है।

६. **आरुणम्** (नपुं०)—शोभा पाता है इसलिए आरुण है।

सम्पादक के अनुसार—टीकाकार यह कहना विचार सही नहीं है कि कज्जल के अर्थ में छह नाम हैं। अञ्जन, कज्जल तो समान अर्थ वाले हैं। नाग, गज, पाटल, अरुण ओठ, गाल आदि को रंगने वाले लाल रंग विशेष के वाचक हैं। अनेकार्थ संग्रह में वैसा ही कहा है–''नाग शब्द—मतंगज, सर्प, पुन्नाग और नागकेसर अर्थ में हैं।'' पाटल तो कुसुम और श्वेत रक्त(हल्का लाल, गुलाबी) अर्थ में है। अरुण शब्द अनूरु (सूर्य का सारथि अरुण) और सूर्य अर्थ में है। तथा सन्ध्या राग, बुध, कुष्ठ, निःशब्द, अव्यक्त राग में है। अरुण ही आरुण है।

प्राकार अर्थ में तीन शब्द हैं।

१. **सालः** (पुं०)—कालान्तर में चली जाती है, ढह जाती है इसलिए साल है। साल से तात्पर्य यहाँ दीवाल से है।

२. **परिधिः** (पुं०)—इससे घेरा जाता है इसलिए परिधि है।

३. **वृक्षम्** (नपुं०)—नगर को घेर लेता है, ढक देता है इसलिए वृक्ष है।

कुल्यां स्त्रीं सारणीं विदुः ॥

त्रयः पानीयनिर्गमनमार्गे। कुले गृहे साधुः **कुल्या**। स्तृणाति वैरूप्यमाच्छिनत्ति **स्त्री**। सरत्यनया **सारणी**। तां **विदुः** कथयन्ति धनञ्जयकवयो भाष्यकर्तारोऽमरकीर्त्याचार्यश्च।

[❋ अत्यन्ताय चिरायेति प्राह्लेऽकस्माद् बलादिति॥
प्रायेणेति कृते चेति विभक्ति प्रतिरूपकम्।
रम्भास्त्री कदली चिह्नं मोचा सारतरुश्च सा॥

सम्पादक के अनुसार—वृक्ष शब्द साल अर्थ में अन्य कोष में उपलब्ध नहीं होता है।

पानी निकलने के रास्ते (प्याऊ) के तीन नाम हैं।

१. **कुल्या** (स्त्री०)—कुल अर्थात् गृह। गृह में यह होता बहुत अच्छा है इसलिए कुल्या है।

२. **स्त्री** (स्त्री०)—विरूपता को दूर कर देती है इसलिए स्त्री है अर्थात् पानी नहीं पीने से चेहरे पर जो कुरूपता आ जाती है उसे दूर कर देती है इसलिए स्त्री कहा है।

३. **सारणी** (स्त्री०)—इससे जल निकलता है इसलिए सारणी है अथवा इसे पीकर आदमी दौड़ता है इसलिए भी सारणी कहा है। इसलिए भी सारणी कहा है।

ये नाम धनञ्जय कवि और भाष्यकार आचार्य अमरकीर्ति कहते हैं।

[❋अत्यन्ताय (अ०) यह बहुत का नाम है। चिराय (अ०) यह बहुतकाल काल का नाम है। प्राह्ले (अ०) यह प्रातःकाल का नाम है। अकस्मात् (अ०) यह अचानक का नाम है। बलाद् (अ०) यह जबर्दस्ती का नाम है।

प्रायेण—यह बहुधा अर्थात् प्रायः का नाम है। कृते यह के लिये का नाम है। ये सातों विभक्तिप्रतिरूपक (विभक्ति के समान मालूम होने वाले) अव्यय हैं।

रम्भा (स्त्री०)—यह स्त्री और कदली अर्थात् केले के वृक्ष का नाम है। कदली(स्त्री०)–यह चिह्न अर्थात् ध्वजा और मोचा अर्थात् सेमर और केले के वृक्ष का नाम है तथा मोचा (स्त्री०)–यह सारतरु अर्थात् सेमर के वृक्ष और कदली केले के वृक्ष का नाम है।

भावार्थ—रम्भा, कदली और मोचा ये ३ केले के वृक्ष के नाम हैं। रम्भा–यह स्त्री, वेश्या और देवांगना का भी नाम है। कदली–यह ध्वजा और सेमर के वृक्ष का भी नाम है। चिह्न–यह ध्वजा का नाम है। मोचा–यह सेमर के वृक्ष का भी नाम है। सारतरु–यह भी सेमर के वृक्ष का नाम है।

❋ये श्लोक अन्य प्रतियों में मिलते हैं। इनके भाष्य उपलब्ध नहीं हैं।

कीचको ध्वनिमद्वेणुस् तालो गेयक्रमोद्भवः।
पुष्करं मुरजं पद्मं हस्तिहस्ताग्रनामकम्॥]

रम्भा, कदली और मोचा आदि शब्दों के अर्थ

चारोऽवसर्पः प्रणिधिर्निगूढपुरुषश्चरः।
तद्वानुक्तः सहस्राक्षः सत्यार्थे सूनृतं ऋतम्॥१८२॥

पञ्च **चारे**। चरति शत्रुमण्डले **चारः**। अवसर्पति **अवसर्पः**। अपसर्पश्च। प्रकर्षेण नितरां धीयते **प्रणिधिः**। निगूढश्चासौ पुरुषः **निगूढपुरुषः**। चरतीति **चरः**। स्पशः। यथार्थवर्णः। मन्त्रज्ञश्च।

तद्वानुक्तः सहस्राक्षः

तस्मात् पूर्वोक्तशब्दात् परं **वान्** इति प्रयुज्यमाने **सहस्राक्ष**नामानि भवन्ति। निगूढपुरुषवान्। चरवान् इत्यादीनि ज्ञातव्यानि।

सत्यार्थे सूनृतं ऋतम्।

सत्यार्थे द्वौ। सु सुष्टु ऋतं सत्यं **सूनृतम्**। पृषोदरादित्वान्नाडागमः। ऋच्छति गच्छति जनः प्रत्ययमत्र **ऋतम्**। तथा चामरकोषे-''सत्यं तथ्यमृतं सम्यक्।''

बजने वाले बांस, गायन के शब्द आदि के नाम

बजने वाले बांस को कीचक (पु०) कहते हैं। गाने की आवाज के क्रम (चढ़ा उतार) से जो शब्द निकलता है उसे ताल (पु०) कहते हैं। पुष्कर (न०) शब्द–मृदङ्ग, कमल और हाथी की सूँड़ के अग्रभाग का नाम है।]

गुप्तचर, सत्यार्थ के नाम

श्लोकार्थ—चार, अवसर्प, प्रणिधि, निगूढ—पुरुष, चर ये नाम गुप्तचर के हैं। इनमें वान् जोड़ने से सहस्राक्ष के नाम होते हैं। सत्यार्थ में सूनृत, ऋत दो नाम हैं॥१८२॥

भाष्यार्थ—गुप्तचर के पाँच नाम हैं।

१. **चारः** (पुं०)—शत्रुओं के समूह में घूमता है इसलिए चार है।

२. **अवसर्पः** (पुं०)—किसी के पीछे—पीछे चलता है इसलिए अवसर्प है। अपसर्पः भी कहते हैं।

३. **प्रणिधिः** (पुं०)—प्रकर्ष रूप से गुप्त होकर रहता है इसलिए प्रणिधि है।

४. **निगूढ पुरुषः** (पुं०)—छुपा हुआ ही यह पुरुष रहता है इसलिए निगूढ—पुरुष है।

५. **चरः** (पुं०)—चलता—फिरता रहता है इसलिए चर है। स्पशः आदि शब्द भी हैं। देखें भाष्य।

इन कहे शब्दों के आगे 'वान्' जोड़ने पर सहस्राक्ष (इन्द्र) के नाम हो जाते हैं। निगूढपुरुषवान्, चरवान् आदि।

सत्यार्थ के दो नाम हैं।

१. **सूनृतम्** (नपुं०)—बहुत अच्छी तरह सत्य होता है इसलिए सूनृत है।

निस्तलं वर्तुलं वृत्तं स्थपुटं विषमोन्नततम्।
दीर्घं प्रांशु विशालं च बहुलं पृथुलं पृथु ॥१८३॥

त्रयो वर्तुलं। निर्गतं तलं प्रतिष्ठाऽस्य **निस्तलम्**। अथवा निर्गतं तलादधोभागान्निस्तलम्। भूमौ न तिष्ठति वा। वर्तते भ्रमति **वर्तुलम्**। वृत्यते स्म **वृत्तम्**। सर्वे त्रिषु।

स्थपुटं विषमोन्नततम्।

विषमोन्नते **स्थपुटम्**। स्थापयत्यात्मनो विषमोन्नतत्वे स्थपुटम्। प्रायः क्लीबे।

दीर्घं प्रांशु

द्वौ दीर्घे। दृणाति **दीर्घम्**। प्राश्नुते व्याप्नोतीति **प्रांशु**।

विशालं च बहुलं पृथुलं पृथु ॥१८३॥

चत्वारो विस्तीर्णे। विस्तारं विशति **विशालम्** बहुन् लातीति **बहुलम्**। प्रथते वर्धते **पृथुलम्**।

---

२. **ऋतम्** (नपुं०)—इसमें मनुष्य विश्वास प्राप्त करता है इसलिए ऋत है। अमर कोष में भी कहा है–''सत्य, तथ्य, ऋत, सम्यक् एकार्थवाची हैं।''

गोले के, दीर्घ और विस्तीर्ण के नाम

श्लोकार्थ—निस्तल, वर्तुल, वृत्त ये गोल के नाम हैं। विषम—उन्नत को स्थपुट कहते हैं। दीर्घ, प्रांशु ये दीर्घ के नाम हैं। विशाल, बहुल, पृथुल, पृथु ये विस्तीर्ण के नाम हैं ॥१८३॥

भाष्यार्थ—वर्तुल के तीन नाम हैं।

१. **निस्तलम्** (नपुं०)—इसका तल आधार निकल गया होता है इसलिए निस्तल है अथवा तल या अधोभाग जिसका निकला हो वह निस्तल है अथवा भूमि पर नहीं टिकता है इसलिए निस्तल है।

२. **वर्तुलम्** (नपुं०)—वर्तन करता है, भ्रमण करता है, घूमता है इसलिए वर्तुल है।

३. **वृत्तम्** (नपुं०)—घुमावदार गोल होता है इसलिए वृत्त है।

सभी शब्द तीनों लिंग में हैं।

स्थपुटम् (प्रायः नपुं०)—अपने को विषम नीचे-ऊँचे पर स्थापित करता है ऐसे ऊँचे-नीचे स्थान को स्थपुट कहते हैं।

दीर्घ के दो नाम हैं।

१. **दीर्घम्** (नपुं०)—ह्रस्व छोटे को हटाता है, विदीर्ण करता है इसलिए दीर्घ है।

२. **प्रांशु** (नपुं०)—व्याप्त होता है इसलिए प्रांशु है। सम्पादक के अनुसार—वस्तुतः प्रांशु, दीर्घ दोनों शब्दों में अर्थ भेद है। दीर्घ, विस्तृत, लम्बा (आयत) ये शब्द एकार्थवाची हैं। प्रांशु उन्नत ऊँचे को कहते हैं।

विस्तीर्ण के चार नाम हैं।

१. **विशालम्** (नपुं०)—विस्तार को पाता है इसलिए विशाल है।

गुणमात्रवृत्तेर्लः। पर्थते **पृथु**। बृहत्। उरुः। गुरुः। विस्तीर्णः।

उल्वणं दारुणं तिग्मं घोरं तीव्रोग्रमुत्कटम्।
शीतलं तिमिरं याथं मन्दं विद्धि विलम्बितम् ॥१८४॥

सप्त घोरे। उल्वणत्युल्वणम्। पृषोदरादित्वात्पक्षे लः। दारयति **दारुणम्**। तितिक्षतीति **तिग्मम्**। घुरति **घोरम्**। तीवति **तीव्रम्**। तीव स्थौल्ये रक्। उच्यति **उग्रम्**। उत्कट्यते **उत्कटम्**। प्रतिभयम्। भीमम्। भयानकम्। आभीलम्। भीषणम्। भीष्मम् भैरवम्।

शीतलं तिमिरं याथं मन्दं विद्धि विलम्बितम् ॥१८४॥

पञ्च कार्यविलम्बे(म्बिते)। शीतं लाति मन्दो भवति कार्ये **शीतलम्**। ताम्यति स्वकार्यमिच्छति

---

२. **बहुलम्** (नपुं॰)—बहुत, अधिकता को लाता है इसलिए बहुल है।

३. **पृथुलम्** (नपुं॰)—फैलता है, बढ़ता है इसलिए पृथुल है।

४. **पृथुः** (नपुं॰)—फैला होता है इसलिए पृथु है। बृहत् आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

घोर और देर के नाम

श्लोकार्थ—उल्वण, दारुण, तिग्म, घोर, तीव्र, उग्र, उत्कट ये घोर के नाम हैं। शीतल, तिमिर, याथ, मन्द, विलम्बित ये देरी के नाम जानो ॥१८४॥

भाष्यार्थ—घोर के सात नाम हैं।

१. **उल्वणम्** (नपुं॰)—भय उत्पन्न करता है, इसलिए उल्वण है।

२. **दारुणम्** (नपुं॰)—खण्डित करता है इसलिए दारुण है।

३. **तिग्मम्** (नपुं॰)—सहनशील होता है इसलिए तिग्म है। सम्पादक के अनुसार—क्षमा अर्थ में यह व्युत्पत्ति यहाँ ठीक नहीं है। 'तिज निशाने' इस धातु से तीक्ष्ण करता है, धारदार करता है इसलिए तिग्म है।

४. **घोरम्** (नपुं॰)—भयंकर होता है इसलिए घोर है।

५. **तीव्रम्** (नपुं॰)—सब जगह फैला होता है, स्थूल होता है इसलिए तीव्र है।

६. **उग्रम्** (नपुं॰)—क्रोध से जुड़ता है इसलिए उग्र है।

७. **उत्कटम्** (नपुं॰)—बहुत तीक्ष्ण होता है इसलिए उत्कट है।

प्रतिभय आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

विशेष—ये शब्द भी तीनों लिंगों में प्रयुक्त होते हैं।

कार्य के विलम्ब में पाँच शब्द हैं।

१. **शीतलम्** (नपुं॰)—ठंडा रहता है, कार्य करने में मन्द होता है इसलिए शीतल है।

तिमिरम्। स्तिमितं स्थिमितं वा पाठः। यथा भवं **याथम्**। मन्द्यते **मन्दम्**। विलम्ब्यते स्म **विलम्बितम्**। **विद्धि** जानीहि।

स्वभावः प्रकृतिः शीलं निसर्गो विश्वसो निजः।
योग्या गुणनिकाऽभ्यासः स्यादभीक्ष्णं मुहुर्मुहुः ॥१८५॥

पञ्च स्वभावे निजे। स्वः स्वकीयो भावः **स्वभावः**। प्रकरणं **प्रकृतिः**। शील्यते शीलयति वा **शीलम्**। निसृज्यते **निसर्गः**। विश्वसितीति **विश्वसः**। विश्वासश्च। विश्रम्भः।

योग्या गुणनिकाऽभ्यासः

त्रयोऽभ्यासे। युज्यते **योग्या**। गुण्यतेऽहर्निशं **गुणनिका**। अभ्यसनम**भ्यासः**।

---

२. तिमिरम् (नपुं॰)—अपने काम की इच्छा करता है इसलिए तिमिर है। यहाँ अपने काम से अर्थ खाना-पीना समझना। सम्पादक के अनुसार—आर्द्र, गीला होता है इसलिए तिमिर है। विलम्ब स्वभाव वाला व्यक्ति हमेशा गीले के समान ठण्डा या स्फूर्ति रहित होता है इसलिए तिमिर कहा है। स्तिमित अथवा स्थिमित पाठ भी है।

३. याथम् (नपुं॰)—जैसा होता है, वैसा ही रहता है इसलिए याथ है।

४. मन्दम् (नपुं॰)—मन्दता को प्राप्त होता है इसलिए मन्द है।

५. विलम्बितम् (नपुं॰)—देरी को प्राप्त हुआ है वह विलम्बित है।

स्वभाव, अभ्यास, बारंबार के नाम

श्लोकार्थ—स्वभाव, प्रकृति, शील, निसर्ग, विश्वस , निज ये स्वभाव के नाम हैं। योग्य, गुणनिका, अभ्यास ये अभ्यास के नाम हैं। अभीक्ष्ण, मुहुर्मुहु बारंबार के नाम हैं ॥१८५॥

भाष्यार्थ—अपने स्वभाव के पाँच नाम हैं।

१. स्वभावः (पुं॰)—स्वकीय अपना भाव स्वभाव है।

२. प्रकृतिः (स्त्री॰)—प्रकरण अर्थात् उसका विषय प्रकृति है।

३. शीलम् (नपुं॰)—बार-बार किया जाता है अथवा बार-बार करता है इसलिए शील है।

४. निसर्गः (पुं॰)—निश्चित ही उसी से बना होता है अर्थात् उस मय होता है इसलिए निसर्ग है।

५. विश्वसः (पुं॰)—विश्वास करता है इसलिए विश्वस है। विश्वास, विश्रम्भ शब्द भी हैं।

सम्पादक के अनुसार—विश्वस शब्द इस प्रासंगिक अर्थ में प्रमाणित नहीं है। इसी तरह विश्वास और विश्रम्भ शब्द भी नहीं हैं। विश्वस शब्द का व्याख्यान भी व्याकरण से अस्पष्ट है। इसलिए इस अर्थ में तीनों शब्द मूलटीका से ही प्रमाण मानना।

विशेष—विश्वसः की जगह विप्रसा शब्द अव्यय रूप होना चाहिए। निजः शब्द की व्याख्या भी करनी चाहिए थी सो टीका में नहीं है। इस तरह छह शब्द स्वभाव अर्थ में हो जाते।

स्यादभीक्ष्णं मुहुर्मुहुः ॥१८५॥

मुहुर्मुहुर्वारं वारं **स्यात्** भवेत्। अभीक्ष्णम्। अभीक्ष्णम् अभीक्ष्णम्। अभिमुखमीक्षते वा **अभीक्ष्णम्**। नितराम्।

मृषालीकं मुधा मोघं विफलं वितथं वृथा।
विधुरं व्यसनं कष्टं कृच्छ्रं गहनमुद्धरेत् ॥१८६॥

चत्वारो ऽलीके। मृष्यते सहते नारकं दुःखमनेन **मृषा**। आदन्तमव्ययम्। अलति स्वस्वाङ्गा (स्वर्गा)न्निवारयति **अलीकम्**। मुञ्चति त्यजति निमित्तं **मुधा**। आदन्तमव्ययम्। मुह्यतेऽत्र चित्तं **मोघम्**।

विफलं वितथं वृथा।

निष्फलवचने त्रयः। विगतं फलं **विफलम्**। विगतं तथा सत्यं यस्मात् **वितथम्**। वृणोत्याच्छादयति गुणान् **वृथा**। अव्ययम्।

अभ्यास के तीन नाम हैं।

१. **योग्या** (स्त्री०)—जुड़ा रहता है या जोड़ा जाता है इसलिए योग्या है।

सम्पादक के अनुसार—चित्त की एकाग्रता में योग्य शब्द ठीक है।

२. **गुणनिका** (स्त्री०)—रात दिन गुना जाता है, विचारा जाता है इसलिए गुणनिका है।

३. **अभ्यासः** (पुं०)—अभ्यास करना अभि—निकट-पास रहना अर्थात् समीपता होना अभ्यास है।

मुहुर्मुहुः अर्थात् बारंबार। अभीक्ष्णम्, अभीक्ष्णम्—अभिमुख होकर देखता है इसलिए अभीक्ष्ण है। नितराम् भी इसी अर्थ में है।

झूठ, निष्फल, कष्ट के नाम

श्लोकार्थ—मृषा, अलीक, मुधा, मोघ झूठ के नाम हैं। विफल, वितथ, वृथा व्यर्थ के नाम हैं। विधुर, व्यसन, कष्ट, कृच्छ्र, गहन ये कष्ट के नाम हैं ॥१८६॥

भाष्यार्थ—झूठ के चार नाम हैं।

१. **मृषा** (अव्यय)—इससे नरकों के दुःख सहता है इसलिए मृषा है।

२. **अलीकम्** (नपुं०)—स्वर्ग से बचाता है इसलिए अलीक है।

३. **मुधा** (अव्यय)—निमित्त को छोड़ देता है इसलिए मुधा है।

४. **मोघम्** (अव्यय)—इसमें चित्त मोहित होता है इसलिए मोघ है।

निष्फल वचन के तीन नाम हैं।

१. **विफलम्** (नपुं०)—फल रहित है इसलिए विफल है।

२. **वितथम्** (नपुं०)—तथा-सत्य को कहते हैं। सत्य जिससे चला गया है वह वितथ है।

३. **वृथा** (अव्यय०)—गुणों को ढाक देता है इसलिए वृथा है।

विधुरं व्यसनं कष्टं कृच्छ्रं गहनमुद्धरेत् ॥१८६॥

पञ्च कष्टे। कष्टेन विधुनोति शरीरं **विधुरम्**। व्यस्यते अनेन **व्यसनम्**। कष्यते (कषति) **कष्टम्**। कृणोति छिनत्ति दुःखेन कृच्छ्रम्। गाह्यते **गहनम्**। **उद्धरेत्** निस्तरेत्।

समस्तं सकलं सर्वं कृत्स्नं विश्वं तथाऽखिलम्।
शकलं विकलं खण्डं शल्कं लेशं लवं विदुः ॥१८७॥

षट् समस्ते समस्यते एकीकरोति **समस्तम्**। समं ग्रसते **समग्रम्**। समानं कलयतीति **सकलम्**। सरति **सर्वम्**। कृन्तति वेष्टति व्याप्नोति **कृत्स्नम्**। विशति तिष्ठति सर्वत्र **विश्वम्**। नास्ति खिलं शून्यमस्या**खिलम्**। निखिलं च।

कष्ट के पाँच नाम हैं।

१. **विधुरम्** (नपुं०)—कष्ट के साथ शरीर को कपाता है इसलिए विधुर है।

२. **व्यसनम्** (नपुं०)—इससे विशेष रूप से (सुख से) दूर फेंका जाता है इसलिए व्यसन है।

३. **कष्टम्** (नपुं०)—कसा रहता है, पीडित होता है इसलिए कष्ट है।

४. **कृच्छ्रम्** (नपुं०)—दुःख से छिद जाता है या छेदा जाता है इसलिए कृच्छ्र है।

५. **गहनम्** (नपुं०)—डुबोया जाता है अर्थात् उसी में डूब कर रह जाता है इसलिए गहन है। इन कष्टों से निस्तार हो।

समस्त, खण्ड के नाम

श्लोकार्थ—समस्त, सकल, सर्व, कृत्स्न, विश्व, अखिल ये सम्पूर्ण के नाम हैं। शकल, विफल, खण्ड, शल्क, लेश, लव ये खण्ड के नाम कहे हैं ॥१८७॥

भाष्यार्थ—समस्त के छह नाम हैं।

१. **समस्तम्** (नपुं०)—समास (संक्षेप) करता है, या एक रूप करता है इसलिए समस्त है।

समग्रम् (नपुं०) भी है। एक साथ सभी को ग्रहण कर लेता है इसलिए समग्र है। सम्पादक के अनुसार—इसका अग्र भाग एक साथ होता है इसलिए समग्र है।

२. **सकलम्** (नपुं०)—समान रचना करता है या समान जानता है इसलिए सकल है। सम्पादक के अनुसार—कलाओं के साथ रहता है इसलिए सकल है।

३. **सर्वम्** (नपुं०)—(एक साथ) चलता है इसलिए सर्व है।

४. **कृत्स्नम्** (नपुं०)—सभी को घेर लेता है, व्याप्त कर लेता है इसलिए कृत्स्न है।

५. **विश्वम्** (नपुं०)—सर्वत्र रहता है इसलिए विश्व है।

६. **अखिलम्** (नपुं०)—इसके पास शून्य नहीं है इसलिए अखिल है। निखिल शब्द भी है।

शकलं विकलं खण्डं शल्कं लेशं लवं विदुः ॥१८७॥

षड् खण्डे। शक्नोति काये **शकलम्**। **शल्कं च**। विगता कला यस्मात् वद् **विकलम्**। खण्ड्यते **खण्डः**। लिश्यते **लेशः**। लिश विच्छ गतौ। ''अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्''। रौति शब्दं करोति **लवः**। **विदुः** कथयन्ति। अर्धम्। नेमः। सामि। असम्पूर्णम्। **दलं** च।

मर्म कोषं च कलहं परिवादं छलं नयेत्।
शोणितं लोहितं रक्तं रुधिरं क्षतजासृजम् ॥१८८॥

द्वौ मर्मणि। म्रियतेऽनेन **मर्म**। नान्तम्। कुष्यते **कोषम्**।

कलहं परिवादं छलं नयेत्।

विशेष—ये सभी छहों शब्द तीनों लिंग में विशेषण की तरह प्रयुक्त होते हैं।

खण्ड के छह नाम हैं।

१. **शकलम्** (नपुं॰)—काया में (या काय रूप में) समर्थ है इसलिए शकल है अर्थात् शकल भी काया की तरह बहुप्रदेशी है।

२. **शल्कम्** भी कहते हैं।

३. **विकलम्** (नपुं॰)—जिससे कला (भाग, अंश) निकल गया है वह विकल है।

४. **खण्डः** (पुं॰)—खण्ड किया है इसलिए खण्ड है।

५. **लेशः** (पुं॰)—थोड़ा अल्प भाव हुआ है इसलिए लेश है।

६. **लवः** (पुं॰)—शब्द करता है इसलिए लव है। सम्पादक के अनुसार—''लूयते छिद्यते लवः'' अर्थात् छेदा जाता है तब लव होता है। टीका में कहा विग्रह लवन (छेदन, टुकड़े) अर्थ का कहने वाला नहीं है। अर्ध, नेम आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

मर्म, कलह, रुधिर के नाम

श्लोकार्थ—मर्म, कोष मर्मस्थान के नाम हैं। कलह, परिवाद, छल झगड़े के नाम हैं। शोणित, लोहित, रक्त, रुधिर, क्षतज, असृक् ये खून के नाम हैं ॥१८८॥

भाष्यार्थ—मर्म के दो नाम हैं।

१. **मर्मन्** (नपुं॰)—इससे मरण होता है इसलिए मर्म है।

२. **कोषम्** (नपुं॰)—खींचा जाता है, फाड़ा जाता है इसलिए कोष है। सम्पादक के अनुसार—मेदिनी शब्द कोश में कोष शब्द मांसपेशी के अर्थ में है। ये पेशियां मर्मस्थान के रूप में आयुर्वेद में मानी गयी हैं। इसलिए उपचार से कोष भी मर्म अर्थ में ले जाना चाहिए। कहा भी है–''कोष शब्द कुड्मल, पात्र, दिव्य, म्यान, जाति कोष, अर्थ समूह, पेशी, शब्द आदि के संग्रह में प्रयुक्त होता है।'' (षा॰ वर्ग॰ ६)

करेण हन्त्यत्र **कलहः**। परिवदनं **परिवादः**। छलयती (त्यत्रे)ति **छलम्**।

शोणितं लोहितं रक्तं रुधिरं क्षतजासृजम् ॥१८८॥

षड् रुधिरे। शोण्यते वर्ण्यते देहोऽनेन **शोणितम्**। तालव्यः। रोहति देहे जायते **लोहितम्**। रजति रसं **रक्तम्**। रुणद्धि **रुधिरम्**। क्षताद् व्रणाज्जायते **क्षतजम्**। अस्यते क्षिप्यते असृक्।

सन्ततानारताजस्रान्वहं कन्यापतिर्वरः।
उद्वाहः परिणयनं विवाहश्च निवेशनम् ॥१८९॥

त्रयः (चत्वारः) सन्तते। सन्तन्यते स्म **सन्ततम्**। न आरतम् **अनारतम्**। न जस्यतीत्येवंशील**मजस्रम्**। **अन्वहम्**। **कन्यापतिर्वरः** नन्दतु इति प्रयोजनीयम्।

कलह के तीन नाम हैं।

१. **कलहः** (पुं०)—इसमें हाथ से मारा जाता है इसलिए कलह है।

२. **परिवादः** (पुं०)—अपवाद करना परिवाद है।

३. **छलम्** (नपुं०)—छल करता है इसलिए छल है।

रुधिर के छह नाम हैं।

१. **शोणितम्** (नपुं०)—इससे शरीर को रंगा जाता है इसलिए शोणित है।

२. **लोहितम्** (नपुं०)—देह में उत्पन्न होता है इसलिए लोहित है।

३. **रक्तम्** (नपुं०)—रस (जो शरीर में रस धातु बनती है) उसको रंग देता है इसलिए रक्त है।

४. **रुधिरम्** (नपुं०)—रोकता है अर्थात् देह को बनाए रखता है इसलिए रुधिर है।

५. **क्षतजम्** (नपुं०)—क्षत—व्रण, घाव को कहते हैं। व्रण से उत्पन्न होता है अर्थात् घाव से दिखाई देता है इसलिए क्षतज है।

६. **असृक्** (नपुं०)—रखा जाता है या देह में बिखरा रहता है इसलिए असृक् है।

निरन्तर, वर, विवाह के नाम

श्लोकार्थ—सन्तत, अनारत, अजस्र, अन्वह निरन्तर के नाम हैं। कन्या का पति वर है। उद्वाह, परिणयन, विवाह, निवेशन ये ब्याह के नाम हैं ॥१८९॥

भाष्यार्थ—निरन्तर के चार नाम हैं।

१. **सन्ततम्** —समीचीन रूप से व्याप्त हो वह सन्तत है।

२. **अनारतम्** —रुकावट नहीं होना अनारत है।

३. **अजस्रम्** —रुकने का स्वभाव नहीं होना अजस्र है।

४. **अन्वहम्** —प्रतिदिन—निरन्तर।

ये चारों शब्द अव्यय के रूप में प्रयुक्त होते हैं।

कन्या का पति वर कहलाता है। वह हमेशा बढ़ता रहे, जीवे इसलिए 'नन्दतु' क्रिया यहाँ

उद्वाहः परिणयनं विवाहश्च निवेशनम् ॥१८९॥

चत्वारो विवाहे। उद्वहनं **उद्वाहः**। परिणीयते **परिणयनम्**। विवाह्यते **विवाहः**। निवेश्यते **निवेशनम्**।

शुषिरं विवरं रन्ध्रं छिद्रं गर्ता च गह्वरम्।
श्वभ्रं रस्यं च पातालं नरकं यान्त्यमेधसः ॥१९०॥

चत्वारश्छिद्रे। शुष्यति जलमत्र **शुषिरम्**। उषशुषीति रः। विव्रियते भूमध्यमनेन **विवरम्**। रणति वातेन रध्यति हिनस्ति प्राणिनं वा **रन्ध्रम्**। छिद्यते तत् **छिद्रम्**। कुहरम्। विलम्। निर्व्यथनम्। रोकम्। श्वभ्रम्। वपा। शुषिः।

गर्ता च गह्वरम्।

गर्तायां द्वौ। पतितं प्राणिनं गिरति गर्ता। **गर्तः**। गूहतीति **गह्वरम्**।

श्वभ्रं रस्यं च पातालं नरकं यान्त्यमेधसः ॥१९०॥

प्रयोजनीय है।

विवाह के चार नाम हैं।

१. **उद्वाहः** (पुं०)—उठाये रखना विवाह है अर्थात् पति-पत्नी एक दूसरे को सहारा दें वह विवाह है।

२. **परिणयनम्** (नपुं०)—पूरी तरह से ले जाया जाता है अर्थात् वर दुल्हन को ले जाता है इसलिए परिणयन है।

३. **विवाहः** (पुं०)—वि—विशेष रूप से धारण किया जाता है, ढोया जाता है इसलिए विवाह है।

४. **निवेशनम्** (नपुं०)—आदान-प्रदान किया जाता है इसलिए निवेशन है।

छिद्र, गड्ढा और नरक के नाम

श्लोकार्थ—शुषिर, विवर, रन्ध्र, छिद्र ये छेद के नाम हैं। गर्ता, गह्वर ये गड्ढे के नाम हैं। श्वभ्र, रस्य, पाताल, नरक इनमें मूर्ख पुरुष जाते हैं ॥१९०॥

भाष्यार्थ—छिद्र के चार नाम हैं।

१. **शुषिरम्** (नपुं०)—इसमें जल सूख जाता है इसलिए शुषिर है।

२. **विवरम्** (नपुं०)—इससे धरती के मध्य भाग को जाना जाता है इसलिए विवर है।

३. **रन्ध्रम्** (नपुं०)—हवा से शब्द करता है अथवा प्राणी को मारता है (जिसमें फँसकर प्राणी मर जाता है) इसलिए रन्ध्र है।

४. **छिद्रम्** (नपुं०)—छेदा जाता है इसलिए छिद्र है। कुहर आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

गड्ढे के दो नाम हैं।

१. **गर्ता** (स्त्री०)—गिरे हुए प्राणी को निगल लेता है इसलिए गर्ता है। गर्तः (पुं०) में भी है।

२. **गह्वरम्** (नपुं०)—छिपा लेता है इसलिए गह्वर है।

चत्वारो नरके। श्वयते वर्धतेऽत्रोपरि चरतो शङ्का, श्वभिर्भ्रान्तं वा **श्वभ्रम्**। रसायां भवं **रस्यम्**। पतन्त्यस्मिन् **पातालम्**। नराः कायन्त्यत्र **नरकः**। नारकः। पुंसि। **अमेधसः** बुद्धिरहिताः सम्यक्चारित्ररहिता **यान्ति** गच्छन्ति नरकम्। निरयः। दुर्गतिः।

अदभ्रं भूरि भूयिष्ठं बंहिष्ठं बहुलं बहु।
प्रचुरं नैकमानन्त्यं प्राज्यं प्राभूतपुष्कलम् ॥१९१॥

द्वादश प्रभूते। न दभ्र**मदभ्रम्**। भवति प्राचुर्यमत्र **भूरि**, भूरिष्ठं च। अतिशयेन बहु **भूयिष्ठम्**। ''बहो र्लोपो भू च बहोः'' ''इष्ठस्य यिट्चेति'' भूरादेशो यिडागमश्च। अतिशयेन बहुलो **बंहिष्ठः**। वहति प्राचुर्य **बहुलम्**। प्रचुरति **प्रचुरम्**। न एकं **नैकम्**। अनन्तस्य भाव **आनन्त्यम्**। प्राज्यते प्रकर्षेण वीयतेऽनेन वा

नरक के चार नाम हैं।

१. श्वभ्रम् (नपुं०)—जिस भूमि पर चलते हुए नारकी की शंका या भय बढ़ता जाता है अथवा जो स्थान कुत्तों (कुत्तों की आवाज) से भ्रान्त हुआ है वह श्वभ्र है।

२. रस्यम् (नपुं०)—रसा-नारकीय स्थान को या पृथिवी को कहते हैं। उस रसा में होता है इसलिए रस्य है।

३. पातालम् (नपुं०)—इसमें गिरते हैं इसलिए पाताल है अर्थात् नरक में जीव जन्म लेते ही गिरता है इसलिए पाताल है।

४. नरकः (पुं०), **नारकः** (पुं०)—यहाँ मनुष्य निरन्तर शब्द करते हैं या चिल्लाते हैं इसलिए नरक है। इन नरकों में बुद्धिरहित, सम्यक्चारित्र से रहित जीव जाते हैं। निरय, दुर्गति नाम भी हैं।

बहुत के नाम

श्लोकार्थ—अदभ्र, भूरि, भूयिष्ठ, बंहिष्ठ, बहुल, बहु, प्रचुर, नैक, आनन्त्य, प्राज्य, प्राभूत, पुष्कल ये बहुत के नाम हैं ॥१९१॥

भाष्यार्थ—प्रभूत (बहुत) के बारह नाम हैं।

१. अदभ्रम् (नपुं०)—अल्प नहीं है, वह अदभ्र है।

२. भूरि—इसमें प्राचुर्य होता है इसलिए भूरि है। भूरिष्ठ भी कहते हैं।

३. भूयिष्ठम् (नपुं०)—अतिशय रूप से बहुत को भूयिष्ठ कहते हैं।

४. बंहिष्ठम् (नपुं०)—अतिशय बहुल होने से बंहिष्ठ है।

५. बहुलम् (नपुं०)—प्राचुर्य (अधिकता) को कहता है इसलिए बहुल है।

६. बहु (नपुं०)—टीका नहीं है।

७. प्रचुरम् (नपुं०)—प्रकृष्ट रूप से धारण करता है इसलिए प्रचुर है।

८. नैकम् (नपुं०)—एक नहीं है इसलिए नैक है।

९. आनन्त्यम् (नपुं०)—अनन्त का भाव आनन्त्य है।

प्राज्यम्। प्राभवति स्म **प्राभूतम्**। प्रभूतं च। पुष्यति **पुष्कलम्**। पुष्कं च। पुरुजम्। पुष्टम्।

भवो भावश्च संसारः संसरणं च संसृतिः।
तत्त्वज्ञश्चतुरो धीरस्त्यजेज्जन्माजवं जवम् ॥१९२॥

अष्टौ संसारे। भवतीति **भवः**। भवतीति **भावः**। ''वा ज्वलादिदुनीभुवो णः''। संसरति अस्मिन् **संसारः**। संस्रियते अस्मिन् **संसरणम्**। संसरणं **संसृतिः**। जनयतीति **जन्म**। आजवतीति **आजवम्**। जवति चतुर्गत्यां भ्रमति (अत्र) **जवः**।

ऊर्जस्फुर्स्वी तरस्वी तेजस्वी च मनस्व्यपि।
भास्वरो भासुरः शूरः प्रवीरः सुभटो मतः ॥१९३॥

---

१०. प्राज्यम् (नपुं०)—बहुत अधिक चला जाता है (अर्थात् विस्तार को प्राप्त है) अथवा प्रकर्ष रूप से इससे जाना जाता है इसलिए प्राज्य है।

सम्पादक के अनुसार—प्राज्यते काम्यते—चाहा जाता है। अञ्ज् धातु से अर्थ होता है कि जो दिखाया जाता है, प्रकट किया जाता है, वह प्राज्य है अथवा अज् धातु गति, क्षेपण अर्थ में है उससे-प्रकर्षता से रखा है, बिखरा है वह प्राज्य होता है।

११. प्राभूतम् (नपुं०)—बहुत अधिक मात्रा में हुआ है इसलिए प्राभूत है। प्रभूत भी कहते हैं।

१२. पुष्कलम् (नपुं०)—पुष्ट होता है अर्थात् अधिक मात्रा में होता है इसलिए पुष्कल है। पुष्क आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

संसार के नाम

श्लोकार्थ—भव, भाव, संसार, संसरण, संसृति, जन्म, आजव, जव इसे तत्त्वज्ञ, चतुर धीर पुरुष छोड़ देता है ॥१९२॥

भाष्यार्थ—संसार के आठ नाम हैं।

१. भवः (पुं०)—होता है, अर्थात् संसार में उत्पन्न होता है इसलिए भव है।

२. भावः (पुं०)—होता है, रहता है इसलिए भाव कहा है।

३. संसारः (पुं०)—इसमें संसरण करता है, घूमता है इसलिए संसार है।

४. संसरणम् (नपुं०)—इससे बार—बार भ्रमण किया जाता है इसलिए संसरण है।

५. संसृतिः (स्त्री०)—पुनः पुनः आना—जाना होता है इसलिए संसृति है।

६. जन्मन् (नपुं०)—उत्पन्न होता है या करता है इसलिए जन्म है।

७. आजवम् (नपुं०)—सभी ओर इसमें घूमता है इसलिए आजव है।

८. जवम् (नपुं०)—यहाँ चार गतियों में भ्रमण करता है इसलिए जव है।

विशेष—आजवम्, जवम् इन दोनों को मिलाकर आजवञ्जवम् बनता है। यह भी संसार के लिए प्रयुक्त होता है।

चत्वार (पञ्च) स्तेजोयुक्तपुरुषे। ऊर्क् ऊर्जा वाऽस्त्यस्येति **ऊर्जस्वी**। स्फुर्जोऽस्यास्तीति **स्फूर्जस्वी**। तरोऽस्यास्तीति **तरस्वी**। तेजोऽस्यास्तीति **तेजस्वी**। मनोऽस्यास्तीति **मनस्वी**।

भास्वरो भासुरः शूरः प्रवीरः सुभटो मतः ॥१९३॥

पञ्च सुभटे। भासते इत्येवंशीलो **भास्वरः**। **भासुरः**। ''भिदि भासिभंजां घुरः''। शूरयति **शूरः**। शूर वीर विक्रान्तौ। प्रवीरयते **प्रवीरः**। सुष्टु भटः **सुभटः**। विक्रान्तः।

तनुत्रं वर्म कवचमावृतिर्वाणवारणम्।
कूर्पासं कञ्चुकं छत्रमातपत्रोष्णवारणम् ॥१९४॥

पञ्च कवचे। तनुं शरीरं त्रायते रक्षति **तनुत्रम्**। वृणोत्यङ्गं **वर्म**। कच्यते वध्यते शरीरम् अनेन **कवचम्**।

तेजस्वी और सुभट के नाम

श्लोकार्थ—ऊर्जस्वी, स्फूर्जस्वी, तरस्वी, तेजस्वी, मनस्वी ये प्रतापी पुरुष के नाम हैं। भास्वर, भासुर, शूर, प्रवीर, सुभट ये शूरवीर के नाम हैं ॥१९३॥

भाष्यार्थ—तेज युक्त पुरुष के पाँच नाम हैं।

१. **ऊर्जस्विन्** (पुं०)—इसके पास ऊर्जा होती है इसलिए ऊर्जस्वी है।

२. **स्फूर्जस्विन्** (पुं०)—इसके पास स्फूर्जा होती है इसलिए स्फूर्जस्वी है।

३. **तरस्विन्** (पुं०)—तर—इसके पास तर होता है इसलिए तरस्वी है।

४. **तेजस्विन्** (पुं०)—इसके पास तेज होता है इसलिए तेजस्वी है।

५. **मनस्विन्** (पुं०)—मन इसके पास होता है इसलिए मनस्वी है।

सुभट के पाँच नाम हैं।

१. **भास्वरः** (पुं०)—दमकता है, तेज स्वभाव वाला होने से भास्वर है।

२. **भासुरः** (पुं०)—चमकता है इसलिए भासुर है।

३. **शूरः** (पुं०)—पराक्रम रखता है इसलिए शूर है।

४. **प्रवीरः** (पुं०)—प्रकृष्ट वीर होता है इसलिए प्रवीर है।

५. **सुभटः** (पुं०)—अच्छा योद्धा होता है इसलिए सुभट है।

विक्रान्त नाम भी हैं।

कवच, कञ्चुक, छत्र के नाम

श्लोकार्थ—तनुत्र, वर्म, कवच, आवृति, वाणवारण ये कवच के नाम हैं। कूर्पास, कञ्चुक ये अंगरखा (कुरता) के नाम हैं। छत्र, आतपत्र, उष्णवारण ये छत्ते के नाम हैं ॥१९४॥

भाष्यार्थ—कवच के पाँच नाम हैं।

१. **तनुत्रम्** (नपुं०)—शरीर की रक्षा करता है इसलिए तनुत्र है।

२. **वर्मन्** (नपुं०)—अङ्ग—शरीर का आलिंगन करता है अर्थात् शरीर पर चिपका रहता है इसलिए

आवरण**मावृतिः**। वाणानां वारणं निषेधनं **वाणवारणम्**।

कूर्पासं कञ्चुकम्

द्वौ कञ्चुके। करोति शोभां **कूर्पासम्**। कर्पासं च। कञ्चयते बध्यते **कञ्चुकः**।

छत्रमातपत्रोष्णवारणम् ॥१९४॥

त्रयश्छत्रे। वर्षातपौ छादयतीति **छत्रम्**। त्रिषु। छत्रः, छत्री। आतपात् त्रायते **आतपत्रम्**। उष्णस्य वारणम् **उष्णवारणम्**। नृपलक्ष्म।

केशं शिरोरुहं वालं कचं चिकुरमीहयेत्।
चूडापाशं च धम्मिल्लं कबरी केशबन्धनम् ॥१९५॥

पञ्च केशे। के मस्तके शेते **केशः**। शिरसि रोहति **शिरोरुहः**। वल्यते संव्रियते **वालः**। मस्तके चीयते कचति वा **कचः**। चीयते यत्नेन चिङ्कुरः। **चिकुरश्च**। मूर्धजः। शिरसिजः। वृजिनः। कुन्तलः।

वर्म है।

३. कवचम् (नपुं०)—इससे शरीर को बांधा जाता है इसलिए कवच है।

४. आवृतिः (स्त्री०)—आवरण करता है इसलिए आवृति है।

५. वाणवारणम् (नपुं०)—बाणों को रोकता है इसलिए वाण-वारण है।

कञ्चुक के दो नाम हैं।

१. कूर्पासम् (नपुं०)—शोभा करता है इसलिए कूर्पास है। कर्पास भी कहते हैं।

२. कञ्चुकः (पुं०)—शरीर में बंध जाता है इसलिए कञ्चुक है।

छत्र के तीन नाम हैं।

१. छत्रम् (नपुं०)—वर्षा और आतप को रोकता है इसलिए छत्र है। यह तीनों लिंगों में है। छत्र, छत्री भी बनता है।

२. आतपत्रम् (नपुं०)—आतप से रक्षा करता है इसलिए आतपत्र है।

३. उष्णवारणम् (नपुं०)—उष्ण को (गर्मी को) रोकता है, दूर करता है इसलिए उष्णवारण है। यह राजा का लक्षण है।

केश और केशबन्धन के नाम

श्लोकार्थ—केश, शिरोरुह, बाल, कच, चिकुर ये बाल के नाम जानो। चूड़ापाश, धम्मिल्ल, कबरी, केशबन्धन ये चोटी के नाम हैं ॥१९५॥

भाष्यार्थ—केश के पाँच नाम हैं।

१. केशः (पुं०)—क—मस्तक को कहते हैं। मस्तक पर रहते हैं इसलिए केश हैं।

२. शिरोरुहः (पुं०)—शिर पर उगते हैं इसलिए शिरोरुह है।

३. बालः (पुं०)—घुमाव रहता है, घेरे रहते हैं (शिर को) इसलिए बाल हैं।

चूडापाशं च धम्मिल्लं कबरी केशबन्धनम् ॥१९५॥

चत्वारः केशबन्धने। चुद संचोदने। ''चुरादेश्च'' इन्। नामिनो गुणः। चोदनं चूडा। ''ऊन चूदपीडमृगयतिभ्य इनन्तेभ्यः संज्ञायाम्'' अङ् प्रत्ययः। कारितलोपः। निपातनात् उपधाया ह्रस्वत्वम्। दस्य डत्वम्। चूडायाः शिखायाः पाशः बन्धनं **चूडापाशः**। धम्मिः सौत्रः। धम्यन्ते केशा बध्यन्ते **धम्मिल्लः**। कं मस्तकं वृणोति कबरो नदादित्वादीः। **कबरी**। इदन्तोऽपि कबरिः। आबन्तो वा कबरा। केशस्य बन्धनं **केशबन्धनम्**। वेणी। प्रवेणी। वीणा च।

उरीकृतमप्यूरीकृतमङ्गीकृतं तथा।
अस्तुंकारोऽभ्युपगमे सत्यङ्कारः पणार्पणे ॥१९६॥

त्रयोऽङ्गीकारे। ऊरीप्रभृतीनां कृञा सह समासो वा भवति। तथाहि–ऊरी उररी अङ्गीकरणे विस्तारे च। आश्रुतम्। प्रतिज्ञातम्। उपगतम्।

अस्तुंकारोऽभ्युपगमे

अभ्युपगमे अङ्गीकारे अस्तुङ्कारः कथ्यते। अस्तु करोतीति (करणम्) **अस्तुङ्कारः**। ''कर्मण्यण्'' अण् प्रत्ययः। अस्योप० वृद्धिः। व्यंजनम। ''सत्यागदास्तूनां कारे''। मकारागमः।

---

४. **कचः** (पुं०)—मस्तक पर इकट्ठे रहते हैं अथवा बंधते हैं इसलिए कच हैं।

५. **चिङ्गुरः, चिकुरः** (पुं०)—यत्न से बढ़ते जाते हैं इसलिए चिकुर है।

मूर्धज आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

केशबन्ध के चार नाम हैं।

१. **चूडापाशः** (पुं०)—चूडा, शिखा का बन्धन है इसलिए चूडापाश है।

२. **धम्मिल्लः** (पुं०)—केशों को बांधा जाता है इसलिए धम्मिल्ल है।

३. **कबरी** (स्त्री०)—मस्तक को ग्रहण करता है इसलिए कबरी है। 'कबरि' शब्द भी है। 'कबरा' भी है।

४. **केशबन्धनम्** (नपुं०)—केश का बन्धन होता है इसलिए केशबन्धन है।

वेणी आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

अंगीकार, शपथ के नाम

श्लोकार्थ—उररीकृत, ऊरीकृत, अंगीकृत ये अंगीकार करने में और स्वीकारने में अस्तुंकार तथा वादा करने में सत्यंकार कहा जाता है ॥१९६॥

भाष्यार्थ—अंगीकार अर्थ में तीन नाम हैं। उरी आदि का कृञ् के साथ समास होता है। ऊरी, उररी इनका प्रयोग अंगीकार करने और विस्तार अर्थ में है। आश्रुतम् आदि नाम भी हैं। देखें भाष्य।

अंगीकार अर्थ में ही अस्तुंकार भी कहा जाता है। ठीक है, स्वीकार है, ऐसा करना अस्तुंकार है।

सत्यङ्कारः–सत्य करता है इसलिए सत्यंकार है।

सत्यङ्कारः पणार्पणे ॥१९६॥

सत्यापणे सत्यं करोतीति **सत्यङ्कारः**।

सौहार्दं सौहृदं हार्दं सौहृद्यं सख्यसौरभम्।
मैत्री मैत्रेयिकाजर्यं सहाय्यं संगतं मतम् ॥१९७॥

दश (एकादश) सख्ये। सुहृदां भावः **सौहार्दम्**। **सौहृदम्**। **हार्दम्**। **सौहृद्यमे**कमेव वाक्यम्। सख्युर्भावः **सख्यम्**। सुरस्येदं (भेरिदं) **सौरभम्**। मित्रस्य भावो **मैत्री**। मैत्र्यां नियुक्तो **मैत्रेयिकः**। न जीर्यते **अजर्यम्**। सहाजी (य्य) ते **सहाय्यम्**। संगमनम् **सङ्गतम्**।

क्षेमं कल्याणमभयं श्रेयो भद्रं च मङ्गलम्।
भावुकं भविकं भव्यं श्वोवसीयं शिवं तथा ॥१९८॥

दश (एकादश) कल्याणे। क्षिणोति क्लेशान् **क्षेमम्**। कल्यते ज्ञायते **कल्याणम्**। कल्यं नीरुजत्वमनिति

मैत्री के नाम

श्लोकार्थ—सौहार्द, सौहृद, हार्द, सौहृद्य, सख्य, सौरभ, मैत्री, मैत्रेयिक, अजर्य, सहाय्य, संगत ये मित्रता के नाम हैं ॥१९७॥

भाष्यार्थ—सख्य के ग्यारह नाम हैं।

१. **सौहार्दम्** (नपुं०)—सुहृद अर्थात् श्रेष्ठ हृदय वाले व्यक्तिओं के पास होता है इसलिए सौहार्द है।

२. **सौहृदम्** (नपुं०)—देखें भाष्य।

३. **हार्दम्** (नपुं०)—देखें भाष्य।

४. **सौहृद्यम्** (नपुं०)—ये सभी इसी अर्थ में हैं।

५. **सख्यम्** (नपुं०)—सखा का भाव सख्य है।

६. **सौरभम्** (नपुं०)—सुरभि का यह भाव है इसलिए सौरभ है।

७. **मैत्री** (स्त्री०)—मित्र का भाव मैत्री है।

८. **मैत्रेयिक** (नपुं०)—मैत्री में नियुक्त है इसलिए मैत्रेयिक है।

९. **अजर्यम्** (नपुं०)—नष्ट नहीं होती है इसलिए अजर्य है।

१०. **सहाय्यम्** (नपुं०)—सहायता करता है इसलिए सहाय है।

११. **सङ्गतम्** (नपुं०)—साथ गमन करना या रहना होता है इसलिए सङ्गत है।

कल्याण के नाम

श्लोकार्थ—क्षेम, कल्याण, अभय, श्रेयस्, भद्र, मङ्गल, भावुक, भविक, भव्य, श्वोवसीय, शिव ये कल्याण के नाम हैं ॥१९८॥

भाष्यार्थ—कल्याण के ग्यारह नाम हैं।

१. **क्षेमम्** (नपुं०)—क्लेशों को नष्ट करता है इसलिए क्षेम है।

२. **कल्याणम्** (नपुं०)—जाना जाता है इसलिए कल्याण है अथवा इससे रोग रहितपना जाना

वा कल्याणम्। प्रकृष्टं प्रशस्यं **श्रेयस्**। सान्तम्। भदते ह्लादते सुखीभव्त्यनेन **भद्रम्**। मं पापं गालयतीति **मङ्गलम्।** भवनशीलं **भावुकम्**। ''शृकमगमहनवृषभूस्थालषपतपदामुकञ्''। प्रशस्तो भवोऽस्यास्तीति **भविकम्**। पुण्यकृतो भवितव्यं भवति **भव्यम्**। श्वः शोभनञ्च वसीयः **श्वोवसी**यः। श्वोवसीयसं च। 'श्वसो वसीयस्'। शीयते तनूक्रियते दुःखमनेन **शिवम्**। भाष्यविधातृणां श्रीमदमरकीर्तीनां शिवं भवतु।

वक्ता वाचस्पतिर्यत्र श्रोता शक्रस्तथापि तौ।
शब्दपारायणस्यान्तं न गतौ तत्र के वयम् ॥१९९॥

अस्य श्लोकस्य सुगमव्याख्या।

तथापि किञ्चित् कस्मैचित् प्रतिबोधाय सूचितम्।
बोधयेत्कियदुक्तिज्ञो मार्गज्ञः सह याति किम् ॥२००॥

तथापि मया धनञ्जयकविना सूचितं कथितम् कस्मैचित् प्रतिबोधाय ज्ञानाय। उक्तिज्ञो बोधयेत् ज्ञापयेत्।

जाता है इसलिए कल्याण है।

३. अभयम् (नपुं॰)—इसकी टीका नहीं है।

४. श्रेयस् (नपुं॰)—प्रकृष्ट रूप से प्रशंसा योग्य है इसलिए श्रेयस् है।

५. भद्रम् (नपुं॰)—इससे सुखी होता है इसलिए भद्र है।

६. मङ्गलम् (नपुं॰)—पाप गला देता है इसलिए मङ्गल है।

७. भावुकम् (नपुं॰)—(अच्छा) होने का जिसका स्वभाव है वह भावुक है।

८. भविकम् (नपुं॰)—इसका जन्म या उत्पत्ति प्रशस्त होती है इसलिए भविक है।

९. भव्यम् (नपुं॰)—पुण्य किया हुआ होता है इसलिए भव्य है।

१०. श्वोवसीयः (पुं॰, नपुं॰)—आने वाला कल जिसका सुन्दर है वह श्वोवसीय है। श्वोवसीयस शब्द भी है जो नपुं॰ लिंग में है।

११. शिवम् (नपुं॰)—इससे दुःख कम किया जाता है इसलिए शिव है।

भाष्य रचने वाले श्रीमद् अमरकीर्ति का शुभ हो।

ग्रन्थकार की अन्तिम भावना

श्लोकार्थ—जहाँ वाचस्पति वक्ता हो, इन्द्र श्रोता हो फिर भी दोनों शब्द पारायण के अन्त को नहीं पाते हैं। वहाँ हम जैसे कैसे पा सकते हैं? ॥१९९॥

श्लोकार्थ—फिर भी थोड़ा सा किसी के प्रतिबोध (समझाने) के लिए कहा है। जानकार पुरुष थोड़ा सा बता देता है किन्तु रास्ता बताने वाला क्या साथ चलता है? अर्थात् नहीं चलता है ॥२००॥

भाष्यार्थ—मुझ धनञ्जय कवि ने ज्ञान के लिए थोड़ा सा कहा है। जैसे रास्ता बताने वाला इशारा कर देता है किन्तु साथ तो नहीं जाता है।

विशेष—इसी तरह मैंने कुछ शब्दों को कह दिया है, ज्यादा स्वयं बुद्धिमान समझ लें।

मार्गज्ञः किं सह याति गच्छति, अपि तु न गच्छति।

प्रमाणमकलङ्कस्य पूज्यपादस्य लक्षणम्।
द्विःसन्धानकवेः काव्यं रत्नत्रयमपश्चिमम् ॥२०१॥

एतद्रत्नत्रयमपश्चिमं नवीनमपूर्वं वर्तते।

कवेर्धनञ्जस्येयं सत्कवीनां शिरोमणेः।
प्रमाणं नाममालेति श्लोकानां हि शतद्वयम् ॥२०२॥

धनञ्जयस्य कवेः सत्कवीनां शिरोमणेः इति अमुना प्रकारेण इयं नाममाला श्लोकानां शतद्वयं (२००) प्रमाणमस्ति।

ब्रह्माणं समुपेत्य वेदनिनदव्याजात् तुषाराचल-
स्थानस्थावरमीश्वरं सुरनदीव्याजात् तथा केशवम्।
अप्यम्भोनिधिशायिनं जलनिधिध्वानोपदेशादहो
फूत्कुर्वन्ति धनञ्जयस्य च भिया शब्दाः समुत्पीडिताः ॥२०३॥

अहो लोकाः धनञ्जयस्य च भिया कृत्वा शब्दाः समुत्पीडिताः सम्यक् प्रकारेण पीड़िताः फूत्कुर्वन्ति। किं कृत्वा पूर्वं वेदनिनदव्याजात् मिषात् ब्रह्माणं समुपेत्य प्राप्य, ईश्वरं तुषाराचलस्थानस्थावरं सुरनदीव्याजात् प्राप्य, केशवं श्रीविष्णुं किं विशिष्टं अम्भोनिधिशायिनं जलनिधिध्वानोपदेशात् समुपेत्य सुगमोऽयं श्लोकः।

इति महापण्डितश्रीमदमरकीर्तिना त्रैविद्येन श्रीसेन्द्रवंशोत्पन्नेन शब्दवेधसा कृतायां धनञ्जयनाममालायां प्रथमं काण्डं व्याख्यातम्।

श्लोकार्थ—अकलंकदेव का प्रमाण, पूज्यपाद का लक्षण (व्याकरण) द्विसन्धान काव्य रचने वाले कवि का काव्य ये तीनों अपूर्व रत्नत्रय हैं ॥२०१॥

भाष्यार्थ—यह तीनों रत्न नवीन हैं, अपूर्व हैं।

श्लोकार्थ—श्रेष्ठ कवियों के शिरोमणि धनञ्जय कवि की यह नाममाला है। इसका प्रमाण दो सौ (२००) श्लोक प्रमाण है ॥२०२॥

भाष्यार्थ—सुगम है।

श्लोकार्थ—भाष्यार्थ—अहो! लोक में धनञ्जय कवि के शब्दों से पीड़ित हुए शब्द वेद ध्वनि के बहाने से ब्रह्मा के पास, सुरनदी (गंगा) के बहाने से हिमालय के स्थान पर रहने वाले ईश्वर के पास तथा समुद्र के शब्दों के बहाने से श्रीविष्णु केशव के पास जाकर फूत्कार करते हैं अर्थात् अपना दुःख प्रकट करते हैं ॥२०३॥

इस प्रकार आचार्य श्रीविद्यासागरजी महाराज के शिष्य मुनि प्रणम्यसागर द्वारा यह नाममाला की संस्कृत टीका का अनुवाद सिवनी (म० प्र०) में ग्रीष्मप्रवास के दौरान २०१० में पूर्ण हुआ।

इस प्रकार श्री सेन्द्र वंश में उत्पन्न शब्द वेध करने वाले महापण्डित श्रीमत् अमरकीर्ति त्रैविद्य ने धनञ्जय नाममाला में प्रथमकाण्ड को व्याख्यात किया है।

परिशिष्ट-१

अनेकार्थ नाममाला

श्रीमद् धनञ्जय कवि विरचिता

मंगलाचरण

जिनेन्द्रं पूज्यपादं च चैलाचार्यं शिवायनम्।
अर्हन्तं शिरसा नत्वाऽनेकार्थं विवृणोम्यहम्॥१॥
गम्भीरं रुचिरं चित्रं विस्तीर्णार्थप्रसाधकम्।
शाब्दं मनाक् प्रवक्ष्यामि कवीनां हितकाम्यया॥२॥

अन्वयार्थ—(जिनेन्द्रं) जिनेन्द्र भगवान् को **(पूज्यपादं च)** आचार्य पूज्यपाद **(चैलाचार्यं)** और ऐलाचार्य को **(शिवायनम्)** मोक्षमार्ग को और **(अर्हन्तं)** अर्हन्त भगवान् को **(शिरसा)** सिर से **(नत्वा)** नमस्कार करके **(अनेकार्थं)** अनेकार्थ का **(अहम्)** मैं **(विवृणोमि)** विवरण करूँगा।

(गम्भीरं) गम्भीर **(रुचिरं)** मनोज्ञ **(चित्रं)** विचित्र **(विस्तीर्णार्थप्रसाधकम्)** विस्तार अर्थ को साधने वाले **(शाब्दं)** शब्द शास्त्र को **(कवीनां)** कवियों के **(हितकाम्यया)** हित की इच्छा से **(मनाक्)** थोड़ा **(प्रवक्ष्यामि)** कहूँगा।

टीका—गम्भीरं रुचिरं मनोज्ञं चित्रं विस्तीर्णार्थप्रसाधकम्। सुगमव्याख्याऽस्ति।

टीकार्थ—इस श्लोक की व्याख्या सुगम है।

अनेकार्थ नाममाला

अर्हत्पिनाकिनौ शम्भू जिनावर्हंत्तथागतौ।
वेदसूर्यौ विवस्वन्तौ विष्णुरुद्रौ वृषाकपी॥३॥

अर्थ—१. शम्भु (पु॰)—अर्हत् और पिनाकिन् का वाची। **२. जिन** (पु॰)—अर्हंत् और तथागत (बुद्ध) का वाची। **३. विवस्वत्** (पु॰)—वेद और सूर्य का वाची। **४. वृषाकपि**—विष्णु और रुद्र का वाची है।

टीका—शम्भू इति द्विवचनान्तं पदम्। जिनौ कथ्येते। वेदश्च सूर्यश्च **वेदसूर्यौ विवस्वन्तौ** सूर्यौ कथ्येते।

टीकार्थ—यहाँ 'शम्भू' यह द्विवचनान्त पद है।

विशेष—जिनसे शं अर्थात् कल्याण होता है वह शम्भू हैं। शम्भू शब्द ब्रह्म, शिव, अर्हत् तथा तथागत को जिन कहते हैं। 'जिनस्त्वर्हति बुद्धेऽतिवृद्धजित्वरयोस्त्रिषु' (वि॰ लो॰ नाम॰ ८) इस श्लोक के अनुसार 'जिन' शब्द अर्हत्, बुद्ध, अतिवृद्ध और जित्वर अर्थ में आता है। सम्पादक के अनुसार– ''विवस्वान् देवसूर्ययोः'' (अने॰ स॰ ३/३१७) अतः यहाँ 'देव' पाठ होने पर भी 'देव' शब्द ही युक्त प्रतीत होता है। शेष शब्द का अर्थ धरणेन्द्र है।

वैकुण्ठाविन्द्रगोविन्दावनन्तौ शेषशार्ङ्गिणौ।
जीमूतौ तु करिक्रीडौ पर्जन्यौ शक्रवारिदौ॥४॥

अर्थ—१. वैकुण्ठ (पु॰)–इन्द्र एवं विष्णु का वाची। **२. अनन्त** (पु॰)–शेषनाग और विष्णु का वाची। **३. जीमूत** (पु॰)–मेघ और कील (कीली) अथवा करि–हाथी और कुत्कील–पर्वत् का वाची। **४. पर्जन्य** (पु॰)–इन्द्र और मेघ का वाची है।

टीका—शेषश्च धरणेद्रः, शाङ्‍र्गी च विष्णु शेष शार्ङ्गिणौ।

वनमम्भसि कान्तारे भुवनं विष्टपेऽर्णसि।
घृतं सर्पिषि पानीये, विषं हलाहले जले॥५॥
तल्पं दारेषु शय्यायां, ज्योतिश्चक्षुषितारके।
धवले सुन्दरे रामो, वामो वक्रे मनोहरे॥६॥

अर्थ—१. वन (नपुं॰)–जल और जंगल का वाची। **२. भुवन** (नपुं॰)–संसार और जल का वाची। **३. घृत** (नपुं॰)–घी और पानी का वाची। **४. विष** (नपुं॰)–हलाहल (जहर) और जल का वाची।

अर्थ—१. तल्प (नपुं॰)–स्त्री और शय्या का वाची। **२. ज्योतिष्** (नपुं॰)–नेत्र और आँख की पुतली का वाची। **३. राम** (पु॰)–उज्ज्वल और सुन्दर। **४. वाम** (पु॰)–टेढ़े और मनोहर का वाची।

टीका—अभ्यसि कान्तारे वनम्।

टीकार्थ—वन शब्द जल और जंगल अर्थ में है। अन्य की व्याख्या सुगम है।

नक्षत्रे मन्दिरे धिष्ण्यं वसने गगनेऽम्बरम्।
परिधौ पादपे सालः, सिन्धुः स्त्रोतसि योषिति॥७॥

अर्थ—१. धिष्ण्य (नपुं॰)–नक्षत्र और मकान का वाची। **२. अम्बर** (नपुं॰)–वस्त्र और आकाश का वाची। **३. साल** (पु॰)–काठ और वृक्ष का वाची। **४. सिन्धु** (पु॰)–नदी और स्त्री का वाची है।

टीका—देधेष्टि शष्दं करोत्यत्र जनो धिष्णयम्। नपुंसकम्। धिष शब्दे। **वसने गगने अम्बरं** वर्तते। **अम्बं** शब्दं राति ददातीति **अम्बरम्। परिधौ पादपे सालो** वर्तते। सां लक्ष्मीं लातीति **सालः**। ''सालः शर्जतरौ वृक्षमात्रप्राकारयोरपि'' इति हैमः। **स्त्रोतसि सोषिति सिंधुः**। स्यन्दते **सिन्धुः**।

टीकार्थ—धिष्ण्यम्–यहाँ जन शब्द करता है इसलिए मंदिर के लिए 'धिष्ण्यम्' शब्द है। **अम्बरम्—**अम्ब अर्थात् शब्द देता है इसलिए गगन को अम्बर कहते हैं। **सालः—**'सा' लक्ष्मी को कहते हैं, उस लक्ष्मी को लाता है इसलिए 'साल' है। हैम. श. के अनुसार–शर्ज वृक्ष, वृक्ष मात्र तथा प्राकार अर्थ में ही साल शब्द आता है। **सिन्धुः**-आवाज करता है इसलिए सिन्धु है।

सारसः शकुनौधूर्ते, के तनं दीधितौ ध्वजे।
मयूखः कीलके दीप्तौ, पतंगः शलभे रवौ॥८॥

अर्थ—१. सारस (पु०)–पक्षी और धूर्त का नाम। **२. केतन** (नपुं०)–किरण और ध्वज का वाचक है। **३. मयूख** (पु०)–कीलक (खूँटी) और दीप्ति (किरण) का वाची। **४. पतंग** (पु०)–शलभ और सूर्य का वाची।

टीका—सरसि तडागे भवः **सारसः**। केतन्ति जानन्त्यत्र **केतनम्**। तथा च–''कृत्ये निमन्त्रणे चिह्ने मन्दिरे केतनं विदुः।'' मयते विस्तारं यातीति **मयूखः**। पततीति **पतङ्गः**। पत्लृ गतौ।

टीकार्थ—सारसः-'सरस्' अर्थात् तालाब पर रहता है इसलिए सारस है। **केतनम्**-यहाँ है, ऐसा जानते हैं, जिनसे इसलिए केतन है। तथा-''कृत्य, निमन्त्रण, चिह्न और मंदिर अर्थ में केतन शब्द जानना।'' **१. मयूखः**- विस्तार को प्राप्त होता है इसलिए मयूख है। **२. पतङ्गः**-'पत्लृ' धातु गति अर्थ में है इसलिए जो गिरता है, वह पतङ्ग है।

अञ्जनः कज्जले नागे, सारङ्गः पृषते गजे।
सरलः प्रगुणे वृक्षे, पुन्नागः सन्नरे तरौ॥९॥

अर्थ—१. अञ्जन (पु०)–कज्जल (काजल) और हाथी का वाचक। **२. सारङ्ग** (पु०) हरिण और हाथी का वाचक। **३. सरल** (पु०)–सीधा और वृक्ष का वाची। **४. पुन्नाग** (पु०)–सज्जन और वृक्ष का वाची।

टीका—कज्जले नागे अञ्जनो वर्तते। अञ्जू व्यक्तिम्रक्षणकान्तिसु। विक्रमेण अज्यते प्रकटीक्रियते अञ्जनः। सरतीति **सारङ्गः**। ऋजुत्वात्**सरलः**। पुमाँश्चासौ नागः श्रेष्ठः।

टीकार्थ—कज्जल और नाग अर्थ में अञ्जन है। विक्रय से जो प्रकट किया जाता है वह अञ्जन है। सम्पादक के अनुसार 'गज' भी विक्रय शब्द से जाना जाता है। **सारसः**-चलता है वह सारंग है। **सरलः**-ऋजुपना होने से सरल है। **पुन्नागः**-जो पुरुष श्रेष्ठ है वह पुन्नाग है।

पाञ्चजन्योऽनले शंखे, कम्बुः शंखे मतङ्गजे।
कस्वरो द्युभवे द्युम्ने, स्यन्दनं शकटेऽम्बुनि॥१०॥

अर्थ—१. पाञ्चजन्य (पु०)–अग्नि और शंख का वाची। **२. कम्बु** (पु०)–शंख और हाथी का वाचक। **३. कस्वर** (पु०)–देव और धन का वाचक। **४. स्यन्दन** (नपुं०)–गाड़ी, रथ और जल का वाची है।

टीका—पञ्चजने पाताले भवः **पाञ्चजन्यः**। कम्बुः सौत्रः कम्ब्यते वर्ण्यते **कंबुः**। अथ वा कवृ वर्णे उणादित्वादत्मादेव नकारागमश्च। **द्युभवे** स्वर्गोद्भवे **द्युम्ने** सुवर्णे कस्वरः। कुत्सितं स्वरति **कस्वरः**। स्यदन्ते **स्यन्दनम्**।

टीकार्थ—पाञ्चजन्यः-जो पाताल में होता है वह पाञ्चजन्य है। **कंबुः**-कम्बु यह सौत्र (सूत्र सम्बन्धी) धातु शब्द है। रंग से जाना जाता है इसलिए कंबु (शंख) है। **कस्वरः**-कुत्सित स्वर करता है इसलिए कस्वर है। **स्यन्दम्**-बहता है इसलिए स्यन्द है।

अद्रिर्गिरिवनस्पत्योः शिखरीतरुभूध्रयोः।
राजा चन्द्र महीपत्योः द्विजो दशन विप्रयोः॥११॥

अर्थ—१. अद्रि (पु०)–पर्वत एवं वृक्ष का वाची। **२. शिखरिन्** (पु०)–वृक्ष और पर्वत् का वाची। **३. राजन्** (पु०)–चन्द्रमा और राजा का वाची। **४. द्विज** (पु०) दाँत और विप्र (ब्राह्मण) का वाची है।

टीका—गिरिश्च वनस्पतिश्च गिरिवनस्पती तयो**र्गिरिवनस्पत्योः**। अति आकाशमित्यद्रिः। शिखरमस्तकास्तीति (शिखरमस्यास्तीति) शिखरी। राजते इति **राजा**। द्विर्जातो **द्विजः**।

टीकार्थ—अद्रिः-आकाश को खाता है इसलिए अद्रि है। **शिखरी**-शिखर इसके होता है इसलिए शिखरी है। **राजा**-शोभित होता है इसलिए राजा है। **द्विज**-दो बार उत्पन्न होता है इसलिए द्विज है।

मोचामरस्त्रियो रम्भा, कदली ध्वजमोचयोः।
अशोकः सुमनस्तर्वोः, सुमनाः सुरपुष्पयोः॥१२॥

अर्थ— १. रम्भा (स्त्री०)–केला और देवांगना का वाची (मोचा–केला, अमरस्त्रि–देवांगनाएँ। **२. कदली** (स्त्री०)–ध्वज और मोचा का वाची। **३. अशोक** (पु०)–पुष्प (सुमनस्) और वृक्ष का वाची। **४. सुमनस्** (पु०)–देव और पुष्प का वाची।

टीका—ब्रह्मर्षीनपि रमयतीति **रम्भा**। केन वायुना दल्यते विदार्यते **कदली**। न शोको यस्माद्यस्य वा **अशोकः**। सुरश्च पुष्पं च सुरपुष्पे तयोः **सुरपुष्पयोः**। शोभनचित्तः **सुमनाः**।

टीकार्थ—१. रम्भा-ब्रह्मर्षियों को भी रमाती है इसलिए रम्भा है। **२. कदली**-क अर्थात् वायु उससे दलन किया जाता है या फाड़ दिया जाता है इसलिए कदली है। **३. अशोकः**-जिससे अथवा जिसको शोक नहीं होता है वह अशोक है। **४. सुमनः**-शोभनीय चित्त वाला सुमनः है।

मुक्ता रजतयोस्तारः भूरि भूयः-सुवर्णयोः।
पानीय दुग्धयोः क्षीरं, पयः सलिलदुग्धयोः॥१३॥

अर्थ—१. तार (पु०)–मोती और चाँदी का वाची। **२. भूरि** (नपुं०)–बहुत्व (बाहुल्य) और सुवर्ण का वाची। **३. क्षीर** (नपुं०)–पानी और दुग्ध का वाची। **४. पयस्** (नपुं०)–जल और दूध का वाची है।

टीका—तीर्यते **तारः**। पुण्यवत्सु भवतीति **भूरि**। क्लीबे। घस्लृ अदने। सौत्रोऽयम्। पीयते **पयः**।

टीकार्थ—तारः-जिससे तैरा जाता है वह तार है। **भूरि**-पुण्यवान जीवों के पास होता है। इसलिए सुवर्ण को भूरि कहते हैं। यह शब्द नपुंसकलिंग में है। **क्षीरम्**-खाया जाता है इसलिए क्षीर है। **पयः**-पीया जाता है इसलिए पानी है।

कालप्रकर्षयोः काष्ठा, कोटिः संख्याप्रकर्षयोः।
रन्ध्रसंश्लेषयोः सन्धिः, सिन्धुर्नदसमुद्रयोः॥१४॥

अर्थ—१. काष्ठा (स्त्री॰)—काल और प्रकर्ष का वाची। **२. कोटि** (स्त्री॰)—संख्या और प्रकर्ष का वाची। **३. सन्धि** (पु॰)—छिद्र और मिलाप का वाची। **४. सिन्धु** (स्त्री॰)—नदी और समुद्र का वाची।

टीका—कालश्च त्रुट्यादिलक्षणः।

"स्वस्थे नरे सुखासीने यावत्स्पन्देत लोचनम्।
तस्य त्रिंशत्तमो भागस्त्रुटिरित्यभिधीयते॥"

अथवा— "सर्षपस्य प्रयत्नेन क्षिप्तस्य पततोऽम्बरात्।
द्वियवं यावदध्वानं कालः स (च) त्रुटिः स्मृतः॥"

प्रकर्षश्च प्रकर्षता उत्कृष्टता वा। कालश्च प्रकर्षश्च कालप्रकर्षौ तयोः **कालप्रकर्षयोः काष्ठा** कथ्यते। काशते भासते **काष्ठा**। प्रान्तोऽयम्।

कुटतीति **कोटिः**।

"कियती पञ्चसहस्त्री कियती लक्षा च कोटिरपि कियती।
औदार्योन्नतमनसां रत्नवती वसुमती कियती॥"

सन्धानं **सिन्धुः**।

"सन्धिर्योनौ सुरङ्गायां नाट्येऽङ्गे श्लेषभेदयोः" इति हैमी।

स्यन्दते सिन्धुः।

टीकार्थ—कालः-काल त्रुटि आदि लक्षण वाला है। "सुख से बैठे हुए, स्वस्थ मनुष्य में नेत्र का जितने समय में स्पन्दन होता है, उसका तीसवाँ भाग 'त्रुटि' कहा जाता है।"

अथवा-"प्रयत्नपूर्वक फेंकी गई सरसों के दाने का आकाश से गिरने का जो काल है या दो यवों का जितना अध्वान (आपस में गुजरने का समय) है वह काल त्रुटि कहा जाता है।" **प्रकर्ष**-उत्कृष्टता के अर्थ में है। **काष्ठा**-प्रकाश समान होता है इसलिए काष्ठा है। **कोटिः**-विभक्त करता है इसलिए कोटि है।

"औदार्य और उन्नत मन वालों के लिए पाँच हजार की भूमि कितनी सी है, लाखों की भूमि कितनी सी है और करोड़ की भी भूमि कितनी सी है तथा रत्नवान भूमि कितनी सी है।"

"**सन्धिः**-मिलाने का नाम सन्धि है। सन्धि शब्द योनि में, सुरङ्ग में, नाट्य में, शरीर में, श्लेष और भेद में होता है।" **सिन्धुः**-कहता है इसलिए सिन्धु है।

निषेधदुःखयोर्बाधा, व्यामोहो मूर्खमौढ्ययोः।
कौपीनाकार्ययोर्गुह्यं, कीलालं रुधिराम्भसोः॥१५॥

अर्थ—१. बाधा (स्त्री॰)–निषेध और दु:ख का वाची। **२. व्यामोह** (पु॰)–मूर्ख और मूर्खता का वाची। **३. गुह्य** (नपुं॰)–लँगोटी और अकार्य (पाप) का वाची। **४. कीलाल** (नपुं॰)–रुधिर और जल का वाची।

टीका—बन्धनं (वाधनं) **बाधा**। वाधृ प्रतिघाते। व्यामुह्यते **व्यामोह:**। गुह्यते **गुह्यम्**। गुहू संवरणे। ''गुह्यमुपस्थे रहस्ये च'' इति हैमी। कीलां लातीति **कीलालम्**। ''कीलालं रुधिरे नीले'' इति हैमी।

टीकार्थ—बाधा-बन्धन करता है इसलिए बाधा है। **व्यामोह:**-विशेष रूप से मोहित किया जाता है इसलिए व्यामोह है। **गुह्यम्**-छिपाया जाता है इसलिए गुह्य है। **गुह्य** शब्द उपस्थ (लिंग) और रहस्य अर्थ में है। **कीलालम्**-ज्वाला (स्फूर्ति, तेज) को लाती है इसलिए कीलाल है।

सम्पादक के अनुसार–कीला अर्थात् ज्वाला को जो बुझाता है वह कीलाल है। कीलाल शब्द की यह व्युत्पत्ति जल अर्थ में है तथा टीका में की गई व्युत्पत्ति रुधिर अर्थ में है।

''कीलाल शब्द रुधिर और नील अर्थ में है।'' (हैमी॰)

मूल्यसत्कारयोरर्घ:, जात्य: श्रेष्ठकुलीनयो:।
मेघवत्सरयोरब्द:, तार्क्ष्यो हयगरुन्मतो:॥१६॥

अर्थ—१. अर्घ (पु॰)–मूल्य और सत्कार का वाची। **२. जात्य** (पु॰)–श्रेष्ठ और कुलीन का वाची। **३. अब्द** (पु॰)–मेघ और वत्सर (वर्ष) का वाची। **४. तार्क्ष्य** (पु॰)–हय–घोड़ा और गरुत्मत् (गरुड़) का वाची है।

टीका—अर्ह्यते पूज्यतेऽनेनेत्य**र्घ:**। ''व्यञ्जनाच्च'' घञ्। होपधत्वाद्दीर्घो न। ''न्यङ्क्वादीनां हश्च घ:।'' **श्रेष्ठकुलीनयोर्जात्य:**। जात्यां भवो **जात्य:**। अवतीति अब्द:। ''कुन्दादय:–कुन्दवृन्दमन्दाब्दा:।'' ''अब्द: संवत्सरे मेघे पुस्तके (मुस्तके) गिरिभिद्यपि।'' तृक्षस्यात्पयं **तार्क्ष्य:**। पुंसि।

टीकार्थ—अर्घ:-इससे पूजा जाता है इसलिए अर्घ है। **जात्य:**-जाति में (श्रेष्ठ जाति में) उत्पन्न होने वाला जात्य है। **अब्द:**-रक्षा करता है इसलिए अब्द है। ''अब्द शब्द संवत्सर, मेघ, पुस्तक और गिरिभिद् इन अर्थों में है।'' (हैमी॰) **तार्क्ष्य:**-तृक्ष का पुत्र तार्क्ष्य है। यह शब्द पुंलिंग में है।

स्तब्धतास्थूणयो: स्तम्भ:, चर्चा चिन्ता–वितर्कयो:।
हरकीलकयो: स्थाणु: स्वैर: स्वच्छन्दमन्दयो:॥१७॥

अर्थ—१. स्तम्भ (पु॰)–धीरज और खम्भा का वाची। **२. चर्चा** (स्त्री॰)–चिंता और वितर्क (विचार) का वाची। **३. स्थाणु** (पु॰)–हर (महादेव) और कीलक (कील) का वाची। **४. स्वैर** (पु॰) स्वच्छन्द और मन्द धीर–सुस्त का वाची।

टीका—स्तम्भु इति सौत्रोऽयं धातु:। चर्चणं **चर्चा**। तिष्ठतीति **स्थाणु:**। स्वस्य ईर: **स्वैर:**। स्वस्यात ऐतमीरेरिणोरपि वक्तव्यम्। तथा चालङ्कारे–

''स्वैरं विहरति स्वैरं शेते स्वैरं च जल्पति।
भिक्षुरेकः सुखी लोके राजचौरभयोज्झितः॥''
''स्वैरो मन्दे स्वतन्त्रे च'' इति हैमी।

टीकार्थ–स्तम्भः-'स्तम्भु' यह धातु सौत्र (सूत्र विशेष से सम्बन्ध रखने वाली) है। उससे यह शब्द बना है। **चर्चा**-चर्चण (महीन) करना चर्चा है। **स्थाणुः**-ठहरता है इसलिए स्थाणु है। **स्वैरः**-स्वयं का चलना स्वैर है। अलंकार में कहा है-''स्वतंत्रता से विहार करता है, स्वतंत्रता से सोता है, स्वतंत्रता से बात करता है, ऐसा भिक्षु ही राजा और चोर के भयों से रहित लोक में एक मात्र सुखी है।'' स्वैर शब्द मन्द तथा स्वतंत्र अर्थ में है। (हैमी॰)

शङ्कुः संकीर्णविवरे, पलालाग्नौ च कीलके।
संख्यायां काननोद्भूते, वह्नौ दावो दवोऽपि च॥१८॥

अर्थ–१. शङ्कु (पु॰)–छोटा (सकरा), विवर–छिद्र, भूसे की आग, कीलक और संख्या का वाची। **२. दाव और दव** (पु॰)–जंगल में लगी अग्नि के वाचक हैं।

टीका–शंकायति कूयते वा **शङ्कुः**। **काननोद्भूते वह्नौ दावो दवोऽपि च**। दुनोतीति **दवः**। **दावः**। ''वा ज्वलादिदुनीभुवो णः।''

टीकार्थ–शङ्कुः-'शं' की आवाज करता है इसलिए शङ्कु है। **दावः, दव**-जंगल में उत्पन्न हुई अग्नि है। कष्ट देती है इसलिए दव है। दाव भी।

कीनाशः कृपणे भृत्ये, कृतान्ते पिशिताशिनी।
तथा पुण्यजनान् प्राहुः, सज्जनान् राक्षसानपि॥१९॥

अर्थ–कीनाश (पु॰)–कंजूस, नौकर, यम, मांसभक्षी, पुण्यात्मापुरुष, सज्जन और राक्षस का वाची है–७ अर्थ में प्रयुक्त है।

टीका–लोभेन क्लिश्यते बाध्यते **कीनाशः**। तालव्यः।

टीकार्थ–कीनाशः-लोभ से क्लेश प्राप्त करता है या बाधा को प्राप्त होता है इसलिए कीनाश है। इसमें तालव्य 'श' ही आता है।

विरोचनो रवौचन्द्रे, दनुसूनौ हुतासने।
हंसो नारायणे ब्रघ्ने, यतावश्वे सितच्छदे॥२०॥

अर्थ–१. विरोचन (पु॰)–रवि (सूर्य), चन्द्र, प्रद्युम्न और अग्नि इनका ४ का वाची है। **२. हंस** (पु॰)–नारायण, सूर्य, साधु, घोड़ा और हंस पक्षी (श्वेत कमल) का वाची है।

टीका–विरोचते इत्येवं शीलो **विरोचनः**। हन्तीति **हंसः**।

टीकार्थ–विरोचनः-विशेष रूप से रुचिकर है, इस स्वभाव वाला होने से विरोचन है। **हंसः**-मारता है इसलिए हंस है।

सोमश्चन्द्रोऽमृतं सोमः, सोमोराजा युगादिभूः।
सोमः प्रताननीभेदः, सोमपोऽगस्त्यदिग्पतिः॥२१॥

अर्थ—सोम (पु०)—चन्द्रमा, अमृत, सोम-राजा, ब्रह्मा, लता, सोमरस, वरुण का वाची है। यहाँ पर युगादि भू—ब्रह्मा—आदिनाथ और सोमप—सोमरस पीने वाला, अगस्त्यदिग्पति वरुण है।

टीका—षुञ् अभिषवे। अनेन सर्वेषां साधनिका ज्ञातव्या।

टीकार्थ—'षुञ्' धातु अभिषव अर्थ में है, इसी से सोम शब्द का सभी अर्थ साधने चाहिए।

अजो विधिरजो विष्णुरजः शम्भुरजस्तमः।
अजस्त्रैवार्षिको व्रीहिरजो रामपितामहः॥२२॥

अर्थ—अज (पु०) ब्रह्मा (भाग्यवादी), विष्णु, महादेव, अंधकार, तीन वर्ष पुराना धान, राम के पितामह (बब्बा) का नाम अज था।

टीका—न जायते नोत्पद्यते **अजः**।

टीकार्थ—अजः—जो उत्पन्न न होवे वह अज है।

शुद्धेऽनुपहते वह्नौ, ब्राह्मणे सचिवोत्तमे।
आषाढेऽध्यात्मसंवित्तौ, ब्रह्मचर्ये शुचिर्मतः॥२३॥

अर्थ—शुचि (त्रि० लिंगों में)—शुद्ध, अनुपहत, अग्नि, ब्राह्मण, उत्तम-मंत्री, आषाढ़-मास, अध्यात्म ज्ञान और ब्रह्मचर्य—इन आठ अर्थों में शुचि शब्द है।

टीका—मतः कथितः। एतेष्वर्थेषु शुचिशब्दः। शोचति जनो देहलग्नेऽत्र **शुचिः**। तथा च यशस्तिलकचम्पूकाव्ये—

"न स्त्रीभिः सङ्गमो यस्य सर्वद्वन्द्वविवर्जितः।
तं शुचिं सर्वदा प्राहुः मारुतं च हुताशनम्॥"

टीकार्थ—शुचिः—इस देह में लग जाने पर मनुष्य शोक करता है, खिन्न होता है वह अग्नि शुचि है।

यशस्तिलकचम्पू में कहा है—"जिसका स्त्री से संगम नहीं है, जो सभी द्वन्द्वों से रहित है, उसको सर्वदा शुचि कहते हैं, वायु और अग्नि भी शुचि है।"

अर्थोऽभिधेयरै वस्तु प्रयोजन निवृत्तिषु।
भावः पदार्थ चेष्टात्म-सत्ताभिप्रायजन्मसु॥२४॥

अर्थ—१. अर्थ (पु०)—अभिधेय (वाच्य), धन, वस्तु, प्रयोजन, निवृत्ति ये पाँच अर्थ हैं। **२. भाव** (पु०)—पदार्थ, चेष्टा, आत्मा, सत्ता, अभिप्राय और जन्म इन ६ अर्थों में प्रयुक्त होता है।

टीका—अर्थशब्दः पठ्यते। अभिधेयश्च शब्दो वाचकः, शब्दमध्ये योऽसावर्थः स वाच्यः अभिधेयश्च कथ्यते। राः सुवर्णम्। वस्तु—अस्थ्यादिर्लोहितादिर्वा। गैरिकान्वितं (दिकं च) वस्तु।

प्रयोजनं कार्यम्। निवृत्तिश्च मुक्तिः। तासु। ऋ गतौ। अर्यते **इत्यर्थः**। एतेष्वर्थेषु **भावः** पठ्यते। भवतीति **भावः**। ''वा ज्वालादिदुनीभुवो णः।''

टीकार्थ–अभिधेय-शब्द में जो अर्थ है वह वाच्य और अभिधेय कहा जाता है। **राः**-सुवर्ण अर्थ में है। **वस्तु**-अस्थि आदि या रुधिर आदि वस्तु है और गेरु आदि वस्तु भी है। **कार्यम्**-प्रयोजन कार्य है। **निवृत्तिः**-मुक्ति को कहते हैं।

इन सभी शब्दों में जो जाना जाता है वह **अर्थ** है। इन अर्थों में भाव शब्द पढ़ा जाता है। जो होता है वह **भाव** है।

प्रायो भूमोपमाऽतर्क्यं प्रभृत्यन्ननिवृत्तिषु।
अन्तः पदार्थसामीप्यधर्मसत्वव्यतीतिषु॥२५॥

अर्थ–प्रायस् (अ)–बाहुल्य (भूमन्), तुल्य (उपमा), अतर्क्य और अन्न त्याग इन ५ अर्थों का वाची है। **अन्त** (पु॰)–पदार्थ, सामीप्य, धर्म, बल (सत्व), बीतना (व्यतीत) इन ५ अर्थों में है।

टीका–एतेष्वर्थेषु **प्रायः** शब्दः। एतेष्वर्थेषु **अन्तः**।

टीकार्थ–व्याख्या सुगम है।

अक्षो द्यूते वरूथांगे, नयनादौ विभीतके।
सारः श्रेष्ठे बले वित्ते, कोशे जलचरे स्थिरे॥२६॥

अर्थ–अक्ष (पु॰)–जुआ, वरुथांग रथ के चक्र का अवयव, नेत्र और विभीतक (भयानक) और गाड़ी का धुरा और व्यवहार। **सार** (त्रि॰)–श्रेष्ठ, बल, वित्त (धन), कोश, जलचर और स्थिर इन ६ अर्थों का वाची है।

टीका–द्यूते वरूथाङ्गे रथचक्रावयवे **नयनादौ विभीतके** पूतनायाम् **अक्षो** वर्तते। श्रेष्ठे बले वित्ते कोशे क्रोशे वा पाठः। जलचरे स्थिरे सारो वर्तते। सरत्यनेनेति **सारः**। ''बलमत्स्ययोश्च'' इति परसूत्रेण घञ्। स्वमते ''अकर्तरि च कारके संज्ञायाम्'' इति घञ्। ''सारो मज्जस्थिरांशयोः, बले श्रेष्ठे च'' इति हैमी।

टीकार्थ-कोश के स्थान में क्रोश पाठ भी है। श्रेष्ठ आदि अर्थों में सार शब्द है। इससे गति प्राप्त करता है इसलिए सार है। सार शब्द मज्जा और स्थिर अंश में, बल में और श्रेष्ठ अर्थ में प्रयुक्त होता है। (हैमी)।

वाचि वारि पशौ भूमौ, दिशि लोम्नि रवौ दिवि।
विशिखे दीधितौ दृष्टौ एकादशसु गौर्मतः॥२७॥

अर्थ–गो (पु॰ स्त्री)–वाक् (बोली), वार् (पानी), पशु, भूमि, दिशा, लोमन् (रोम), पवि (वज्र) दिव् (आकाश), विशिख (वाण), किरण, दृष्टि ये ११ नामों का वाची गो शब्द है।

टीका–पूजां गच्छतीति **गौः**। गमेर्डोः।

टीकार्थ-पूजा को प्राप्त है इसलिए गो है।

चन्द्रे सूर्ये यमे विष्णौ, वासवे दर्दुरे हये।
मृगेन्द्रे वानरे वायौ, दशस्वपि हरिः स्मृतः॥२८॥

अर्थ—हरि (पु॰)–चन्द्र, सूर्य, यम, विष्णु, इन्द्र, मेढ़क, घोड़ा, सिंह, बन्दर और वायु इन १० अर्थों का वाचक हरि शब्द है।

टीका—हरतीति **हरिः**।

टीकार्थ—हरण करता है इसलिए हरि है।

पद्मे करिकर–प्रान्ते, व्योम्नि खड्गफले गदे।
वाद्यभाण्डमुखे तीर्थे जले पुष्करमष्टसु॥२९॥

अर्थ—पुष्कर (नपुं॰)–कमल, हाथी की सूंड का अग्रभाग, आकाश, तलवार की मूठ, गदा, बाजे का मुख, तीर्थ और जल इन ८ आठ अर्थों का वाची है।

टीका—पुष्णातीति **पुष्करम्**।

टीकार्थ—पुष्ट करता है इसलिए पुष्कर है।

शृंगारादौ कषायादौ, घृतादौ च विषे जले।
निर्यासे पारदे रागे, वीर्येऽपि रस इष्यते॥३०॥

अर्थ—रस (पु॰)–शृंगार आदि से–हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत, शान्त इन काव्य..गत रसों में। कषाय (आदि से) तिक्त, कटुक, आम्ल, मिष्ट, इन पुद्‌गल गत ५ गुणों में। घी, नमक, दूध, दही, तेल, मिठाई आदि ६ रसों में, विष, जल, निर्यास–(काढा या गोंद) पारा, राग और वीर्य इन सभी अर्थों में रस (पु॰) का प्रयोग है।

टीका—शृङ्गारादौ–

''शृङ्गारहास्यकरुणारौद्रवीरभयानकाः।
बीभत्साऽद्भुतशान्ताश्च नव नाट्ये रसाः स्मृताः॥''

कषायादौ–तिक्ताम्लमधुकटुकषायेषु। घृतादौ–दुग्धदधिघृततैललवणेक्षुरसेषु। विषे जले निर्यासे वृक्षरसविशेषे पारदे रागे वीर्यऽपि रस इष्यते।

टीकार्थ—शृंगार आदि का अर्थ इस प्रकार है–शृंगार, हास्य, करुणा, रौद्र, वीर्य, भयानक बीभत्स, अद्‌भुत और शान्त ये नौ रस नाटक में माने गये हैं। कषायादि में आदि शब्द से तिक्त, अम्ल, मधु और कटु रस भी लिये गये हैं। घृतादि में आदि शब्द से दूध, दही, घी, तैल, लवण और इक्षुरसों को लिया जाता है। निर्यास अर्थात् वृक्ष का रस विशेष।

तीर्थं प्रवचने पात्रे, लब्धाम्नाये विदाम्बरे।
पुण्यारण्ये जलोत्तारे महासत्ये महामुनौ॥३१॥

अर्थ—तीर्थ (पु० नपुं०)–शास्त्र, पात्र (वर्तन), (लब्धाम्नाये)–धर्मतीर्थ प्रवर्तक, विदाम्बर (पण्डित)। पुण्यारण्य–तीर्थस्थान, जलोत्तार–सीढ़ी, महासत्य और महामुनि इन ७ अर्थों में तीर्थ शब्द प्रयुक्त है।

धातुः पञ्चसु लोहेषु, शरीरस्य रसादिषु।
पृथिव्यादि-चतुष्के, च स्वभावे प्रकृतावपि॥३२॥

अर्थ—धातु (पु०)–सोना, चाँदी, ताँबा, पीतल, लोहा इन पाँच का वाची, शरीर के रस-रक्त, मांस, मज्जा, अस्थि, वीर्य–इन पाँच का वाची। पृथ्वी, अग्नि, तेज, वायु इन ४ भूतों का वाची, स्वभाव, प्रकृति इस प्रकार १६ अर्थों में धातु (पु०) का प्रयोग है।

टीका—पञ्चसु लोहेषु सुवर्णरजतताम्ररीतिकांस्येषु। शरीरस्य रसादिषु रसासृङ्मांसमेदोऽस्थि-मज्जशुक्रेषु। पृथिव्यादिचतुष्के च पृथिव्यप्तेजोवायु (वनस्पति) षु, स्वभावे, वातपित्तश्लेष्मादिषु एतेष्वर्थेषु **धातुः** पठ्यते। दधातीति **धातुः**।

टीकार्थ—पाँच प्रकार के लोह पदार्थ हैं–सोना, चाँदी, ताँबा, ताम्र, रीति (पीतल) और कांसा। शरीर के रस आदि में रस, रक्त, मांस, मेध, अस्थि, मज्जा, शुक्र ये सप्त धातुएँ हैं। पृथ्वी आदि चतुष्क में पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु का ग्रहण किया जाता है। वात, पित्त, श्लेष्म आदि इन अर्थों में धातु कही जाती है, धारण करती है इसलिए धातु है।

प्रधान शृंगलांगूल—भूषा—पुण्ड्र—प्रभावना।
ध्वजलक्ष्मतुरंगेषु, ललामो नवसु स्मृतः॥३३॥

अर्थ—ललाम (पु०)–प्रधान, (शृंग)–सींग, (लांगूल) पूँछ, (भूषा)–भूषण, (पुण्ड्र)–इक्षु, महिमा, ध्वजा, (लक्ष्म)–चिह्न, (तुरंग) घोड़ा–इन नौ अर्थों में ललाम शब्द प्रयुक्त है।

टीका—एतेष्वर्थेषु ललामः। ललामन्।

टीकार्थ—व्याख्या सुगम है।

आकृतावक्षरे रूपे, ब्रह्मणादिषु जातिषु।
माल्यानुलेपने चैव, वर्णः षट्सु निगद्यते॥३४॥

अर्थ—वर्ण (पु०)–आकृति, अक्षर, रूप, जाति (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र), माला और अनुलेपन–उबटन इन ६ अर्थों में वर्ण शब्द प्रयुक्त होता है।

टीका—आकृतौ, अक्षरे, रूपे, ब्राह्मणादिषु जातिषु माल्यानुलेपने च वर्णो निगद्यते।

टीकार्थ—अर्थ स्पष्ट है।

अकारादावुदात्तादौ, षड्जादौ निस्वने स्वरः।
संकेताचारसिद्धान्तकालेषु समयः स्मृतः॥३५॥

अर्थ—स्वर (पु०)–अकारादि–अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, लृ, लॄ ए, ऐ, ओ, औ, उदात्त,

अनुदात्त, स्वरित, निषाद, ऋषभ, गान्धार, षड्ज, मध्यम, धैवत और पंचम, (निस्वन)–आवाज इन अर्थों का वाची 'स्वर' शब्द है। समय (पु०) संकेत, आचार, सिद्धान्त और काल इन ४ अर्थों का वाची है।

टीका–एतेष्वर्थेषु **स्वरः** कथ्यते। अकारादौ अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ। उदात्तादौ–''उच्चैरुपलभ्यमान उदात्तः,'' ''नीचैरनुदात्तः'' ''समवृत्या स्वरितः'' षड्जादौ–

''निषादर्षभगान्धारषड्जमध्यमधैवताः।
पञ्चमश्चेत्यमी सप्त तन्त्रिकण्ठोत्थिताः स्वराः॥''

निस्वने शब्दे। समयते समयः।

टीकार्थ–अकारादि में अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ए, ऐ, ओ, औ इन स्वरों का ग्रहण किया है। जो ऊँचे रूप से उपलब्ध होता है, वह उदात्त स्वर है और जो नीचे रूप से ग्रहण होता है, वह अनुदात्त स्वर है। जो समान वृत्ति से रहता है, वह स्वरित है। यह उदात्त आदि का अर्थ। षड्ज आदि में ''निषाद, ऋषभ, गान्धार, षड्ज, मध्यम, धैवत और पंचम ये सात स्वर तंत्रीकंठ से उत्पन्न हुए माने गये हैं।'' निस्वन शब्द अर्थ में आता है। **समयः**–समीचीन रूप से प्राप्त होता है इसलिए समय है।

तन्त्रं प्रधाने सिद्धान्ते, सैन्ये तन्तौ परिच्छदे।
सत्त्वमोजसि सत्तायामुत्साहे स्थेम्नि जन्तुषु॥३६॥

अर्थ–१. तन्त्र (नपुं०)–प्रधान, सिद्धान्त, सेना, तन्तु–धागा, परिच्छेद–परिग्रह (अध्याय)। **२. सत्त्व** (नपुं०)–ओजस्–तेज, सत्ता–अस्तित्व, उत्साह, स्थेमस्–स्थिरता–इन ५ अर्थों में अर्थात् तन्त्र–५ अर्थों में और सत्य–५ अर्थों में प्रयुक्त होता है।

टीका–तन्त्र्यन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दा अनेनेति **तन्त्रम्**। अप्रत्ययः। एतेष्वर्थेषु **सत्त्वम्**।

टीकार्थ–तंत्रम्–इससे शब्द व्युत्पन्न किये जाते हैं अर्थात् शब्दों की व्युत्पत्ति होती है इसलिए तंत्र है।

रूपादौ तन्तुषु ज्यायाम्, अप्रधाने नये गुणः।
ज्ञानचारित्रमोक्षात्मश्रुतिषु ब्रह्मवाग्वरा॥३७॥

अर्थ–गुण (पु०)–रूपादि–रूप, रस, गन्ध, स्पर्श। तन्तु–धागा, ज्या–धनुष की डोरी, अप्रधान–गौण, नय इन ५ अर्थों में प्रयुक्त। ब्रह्मवाच् (स्त्री०)–ज्ञान, चारित्र, मोक्ष आत्मा, श्रुति–वेद इन ५ अर्थों में प्रयुक्त।

टीका–गुणयतीति **गुणः**। **वरा** विशिष्टा।

टीकार्थ–गुणः–सरलता को प्राप्त है इसलिए गुण है।

अवकाशे क्षणे वस्त्रे, बहिर्योगे व्यतिक्रमे।
मध्येऽन्तः करणे रन्ध्रे, विशेषे रहितेऽन्तरम्॥३८॥

अर्थ–अन्तर (नपुं०)–अवकाश–छुट्टी, क्षण, वस्त्र, बहिर्योग, व्यतिक्रम–उल्लंघन, मध्य,

अन्तःकरण–मन, छिद्र, विशेष, विरह–इन दस अर्थों में प्रयुक्त होता है।

टीका–एतेष्वर्थेषु **अन्तरः**।

हेतौ निदर्शने प्रश्ने, श्रुतौ कण्ठ–समीकृतौ।
आनन्तर्येऽधिकारार्थे, माङ्गल्ये चाथ इष्यते॥३९॥

अर्थ–अथ–हेतु, निदर्शन–दृष्टांत, प्रश्न, श्रुति, किसी पुस्तक का प्रारंभ, आनन्तर्य–अव्यवधान, अधिकार और मंगल इन आठ अर्थों में प्रयोग होता है।

टीका–**इष्यते** कथ्यते। **अथ** एष्वर्थेषु।

हेतावेवं-प्रकारादौ, व्यवच्छेदे विपर्यये।
प्रादुर्भावे समाप्तौ च, इति शब्दः प्रकीर्तितः॥४०॥

अर्थ–**इति** (अव्यय)–हेतु–करण एवं प्रकार–इस प्रकार, व्यवच्छेद–व्यवधान, विपर्यय उलटा, प्रादुर्भाव–उत्पत्ति, समाप्ति इन ६ अर्थों में प्रयुक्त होता है।

टीका–**प्रकीर्तितः** कथितः इतिशब्दः एतेष्वर्थेषु। इण् गतौ। इ। एति एवमादिकमर्थ**मिति**। ''इति अमुर्षणि प्रभृतिभ्यो यण्वत्'' इत्यनेनेतिप्रत्ययः। इति जातम्। प्रथ० सि०। ''अव्ययाच्च'' सिलोपः।

धर्मो धनुष्यहिंसादावुत्पादादावये नये।
द्रव्यं क्रियाश्रये वित्ते, जीवादौ दारुवैकृते॥४१॥

अर्थ–**१. धर्म** (पु०)–धनुष, अहिंसादि ५ व्रत–अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, उत्पादादि–उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, अय–भाग्य, नय इन पाँच अर्थों में प्रयुक्त होता है। **२. द्रव्य** (नपुं०)–क्रियाश्रय, वित्त–धन, जीवादि ६ द्रव्य, काठ से बनाए हुए मंगलद्रव्य इन चार अर्थों में प्रयुक्त होता है।

टीका–एतेष्वर्थेषु **धर्मः**। धरतीति **धर्मः**।

टीकार्थ–धर्मः–जो धारण किया जाता है वह धर्म है।

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु, संसारिण्यपि पुद्गलः।
अकर्म-कर्म-नोकर्म, जातिभेदेषु वर्गणा॥४२॥

अर्थ–**१. पुद्गल** (पु०)–मूर्तिक पदार्थ और संसारी प्राणियों में प्रयुक्त है। **२. वर्गणा** (स्त्री०)–अकर्म (कर्म से भिन्न पुद्गल स्कन्ध), कर्म–ज्ञानावरणादि आठ कर्म, नोकर्म–औदारिकादि तीन शरीर और छह पर्याप्ति, जाति भेद–इन ४ अर्थों में प्रयुक्त है वर्गणा शब्द।

टीका–एतेष्वर्थेषु पुद्गलः। (अकर्म–पुद्गलस्कन्धः) कर्म–ज्ञानावरणादि, नोकर्म–शरीरादि। जातिर्गोत्रादि। एतेषु वर्गणा वर्तते।

टीकार्थ–अकर्म अर्थात् पुद्गल स्कन्ध, कर्म अर्थात् ज्ञानावरणादि, नोकर्म अर्थात् शरीरादि और जाति गोत्रादि हैं। इन सभी अर्थों में वर्गणा शब्द प्रयुक्त होता है।

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य, वीर्यस्य यशसः श्रियः।
वैराग्यस्याव बोधस्य, षण्णां भगइति स्मृतः॥४३॥

अर्थ—भग (पु०)—ऐश्वर्य, सम्पूर्ण, वीर्य, यश, श्री, वैराग्य और अवबोध—(ज्ञान) इन ६ अर्थों में है।

टीका—भजन्त्यस्मिन्निति भगः।

टीकार्थ—इसमें सेवन करता है इसलिए भग है।

प्राहुः कैवल्यमार्हन्त्ये, विविक्ते निर्वृतावपि।
लब्धिः केवलबोधादाविष्टाप्तौ नियतौ श्रियाम्॥४४॥

अर्थ—कैवल्य (नपुं०)—आर्हन्त्य—अरहंत भगवान की अंतरंग लक्ष्मी, विविक्त—एकान्तस्थान, निर्वृत्ति—मोक्ष इन अर्थों का वाची है। **लब्धि** (स्त्री०)—केवलज्ञानादि अनंत चतुष्टय, इष्ट वस्तु की प्राप्ति, नियति (कर्म), श्री (लक्ष्मी) या शोभा इन ४ अर्थों में।

टीका—केवलस्य भावः **कैवल्यम्**। लम्भनं **लब्धिः**।

टीकार्थ—केवल का भाव कैवल्य है। प्राप्त करना लब्धि है।

अनेकांते च विद्यादौ, स्यान्निपातः श्रुते क्वचित्।
दर्शनादौ मणौ रत्नं, भव्यः शस्ते प्रसेत्स्यति॥४५॥

अर्थ—१. स्यात् (अव्यय)—अनेकांत-स्याद्वाद, विद्या और श्रुत इन अर्थों में प्रयुक्त है। **२. रत्न** (नपुं०)—सम्यग्दर्शनादि रत्नत्रय, मणि इन दो अर्थों में। **३. मध्य** (पु०)—शस्त (प्रशंसा योग्य वस्तु), **प्रसेत्स्यत्**—सम्यक्दृष्टि या सम्यक्त्व पाने की योग्यता रखने वाला इन दो अर्थों में।

टीका—स्यात् भवेत् एतेष्वर्थेषु निपातः।

परमात्मा जिने सिद्धे परमेष्ठ्यर्हदादिषु।
सिद्धः सिद्ध निषद्यायाम्, अर्हत्सिद्ध-श्रियामपि॥४६॥

अर्थ—१. परमात्मन् (पु०)—सयोग केवलि और अयोग केवलि—जिन और सिद्ध परमेष्ठी में। **२. परमेष्ठिन्** (पु०)—अर्हन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु इन अर्थों में। **३. सिद्ध** (पु०)—सिद्ध शिला में विराजमान अर्हन्त, सिद्धों की अंतरंग लक्ष्मी इन तीन अर्थों में।

अर्हत्सिद्धाविति द्वावप्यर्हत्सिद्धाभिधायिनौ।
अर्हदादीनपि प्राहुः, शरणोत्तममङ्गलान्॥४७॥

अर्थ—अर्हत् और सिद्ध—अरहन्त एवं सिद्ध परमेष्ठी के वाचक हैं। अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली प्रणीत धर्म ये ४ लोक में शरण, उत्तम और मंगल कहे गऐ हैं।

भट्टारको धर्मचन्द्रस्तत्पट्टे धर्मभूषणः।
तत्र देवेन्द्रकीर्तिः श्री कुमुच्चन्द्रस्ततः परम्॥१॥

धर्मचन्द्रस्ततो ज्ञानसागरस्तत्पदेऽभवत्।
तेन पुस्तकमेतद्धि दत्तं (लोकहितेच्छया)॥२॥

भट्टारक धर्मचन्द्र हुए हैं उनके पट्ट पर धर्मभूषण, देवेन्द्रकीर्ति, श्री कुमुदचन्द्र, धर्मचन्द्र तत्पश्चात् ज्ञानसागर हुए। उन्होंने लोकहित की इच्छा से यह पुस्तक प्रदान की।

॥ इति धनञ्जयनाममाला सटीका॥

परिशिष्ट-२
अनेकार्थ निघण्टु

गम्भीरान् रुचिराँश्चित्रान्, विस्तीर्णार्थप्रसाधनान्।
कष्टशब्दान् प्रवक्ष्यामि, कवीनां हितकाम्यया॥१॥

अर्थ—गम्भीरान्–गंभीर। रुचिरान्–मनोहर। चित्रान्–विचित्र। विस्तीर्णार्थ–विस्तार अर्थवाले। प्रसाधनान्–शोभा से सहित। कष्टशब्दान्–कठिन शब्दों को। कवीनाम्–कवियों के। हितकाम्यया–हित की इच्छा से। प्रवक्ष्यामि–कहता हूँ।

मैं धनञ्जय कवि अन्य कवियों के हित की इच्छा से एक शब्द के अनेक अर्थों को बतलाने वाले, गम्भीर, मनोहर, विचित्र और शोभा से सहित कठिन शब्दों को कहता हूँ।

वाग्दिग्भूरश्मिवज्रेषु पश्वक्षिस्वर्गवारिषु।
नवस्वर्थेषु मेधावी गोशब्दमुपलक्षयेत्॥२॥

अर्थ—वाक्–वाणी। दिक्–दिशा। भू–पृथ्वी। रश्मि–किरण। वज्र–वज्र। पशु–पशु। अक्षि–आँख। स्वर्ग–स्वर्ग। वारि–जल। नवसु–नौ। अर्थसु–अर्थों में। मेधावी–विद्वानों ने। गोशब्दम् –गोशब्द को। उपलक्षयेत्–कहते हैं।

कः प्रजापतिरुद्दिष्टो को वायुरभिधीयते।
कः शब्द स्वर्गमाख्याति क इत्यात्मा मतः क्वचित्॥३॥

अर्थ—कः (पु॰)–ब्रह्मा, वायु, स्वर्ग और आत्मा इन चार अर्थों में माना गया है।

सलिलं कमिति ज्ञेयं, शिरः कमिति चोच्यते।
देवाननिमिषानाहुर्मत्स्यानिमिषांस्तथा ॥४॥

अर्थ—कम् (नपुं॰)–पानी और शिर अर्थ में जानना चाहिए। अनिमिष (पु॰)–देव और मछली के अर्थ में है।

अग्निश्च वर्हिणः चैव वृक्षः कुक्कुट एव च।
शिखिनोऽभिहिताः शस्त्रः पृथुकश्च मतः शिखी॥५॥

अर्थ—शिखी (पु॰)–अग्नि, मोर, वृक्ष, मुर्गा, वाण, शस्त्र, पृथुक इन ७ अर्थों में शिखिन् शब्द है।

हंसो नारायणः प्रोक्तः क्वचिद्धंसो दिवाकरः।
अश्वश्चापि स्मृतो हंसो, हंसश्चापि विहंगमः॥६॥

अर्थ—हंस (पु॰)–नारायण, सूर्य, अश्व और हंस पक्षी इन ४ अर्थों में हंसः (पु॰) आता है।

सारसस्सरसिजेन्द्वोः पतत्र्यपि च सारसः।
राजाऽपि नृपतिर्ज्ञेयो राजा चोक्तो निशाकरः॥७॥

अर्थ—सारस (पु॰)—कमल, इन्दु (चन्द्रमा) और सारस पक्षी इन ३ अर्थों में जानना। राजा (पु॰)-राजा, चन्द्रमा इन दो अर्थों में जाना जाता है।

विभावसुर्हुताशः स्याच्छ्वेतच्छत्रं क्वचिद्भवेत्।
हिमारातिः स्मृतो वह्निः हिमारातिश्च भास्करः॥८॥

अर्थ—विभावसु (पु॰)—अग्नि और श्वेतछत्र इन दो अर्थों में।

हिमाराति (पु॰)—अग्नि और सूर्य इन दो अर्थों में जानना।

धनञ्जयोऽग्निर्व्याख्यातो पार्थश्चापि धनञ्जयः।
बीभत्सश्च मतः पार्थो बीभत्सो विकृतः स्मृतः॥९॥

अर्थ—धनञ्जय (पु॰)—अग्नि और अर्जुन इन दो अर्थों में। बीभत्स (पु॰)—अर्जुन और घृणित वस्तु इन दो अर्थों में जानना।

अग्निर्विरोचनः प्रोक्तो भास्करस्तु विरोचनः।
विरोचनश्च चन्द्रः स्यात्, क्वचित् दैत्यो विरोचनः॥१०॥

अर्थ—विरोचनः (पु॰)—अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा और दैत्य इन चार अर्थों में प्रयुक्त होता है (विरोचन)।

पाञ्चजन्यः क्वचिद् वह्निः क्वच्छिङ्खो निगद्यते।
कम्बुश्च गदितः शंखः, कम्बुरिष्टश्च कुञ्जरः॥११॥

अर्थ—पाञ्चजन्य (पु॰)—कहीं अग्नि और कहीं शंख अर्थ में। कम्बु: (स्त्री॰)—शंख और हाथी इन दो अर्थों में आता है।

भास्करोऽग्निः समुद्दिष्टः सहस्रांशुरपि क्वचित्।
पतङ्गो दिनकृद् ज्ञेयः, पतङ्गः शलभः स्मृतः॥१२॥

अर्थ—भास्करः (पु॰)—अग्नि और सूर्य इन दो अर्थों में। पतङ्ग (पु॰)—सूर्य और टिड्डा इन दो अर्थों में जानना।

कौशिको देवराजः स्यादुलूकश्चापि कौशिकः।
शम्भुर्ब्रह्मा च विष्णुश्च, शम्भुश्चैव महेश्वरः॥१३॥

अर्थ—कौशिकः (पु॰)—इन्द्र और उल्लु इन दो अर्थों में। शम्भुः (पु॰)—ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन तीन अर्थों में जानना।

वृषकेतुर्मतः शङ्कु शङ्कुः कील इहोच्यते।
जम्बुको वरुणो ज्ञेयः शृगालश्चापि जम्बुकः॥१४॥

अर्थ—शङ्कुः (पु॰)—वृषकेतु और कील इन दो अर्थों में। जम्बुकः (पु॰)—वरुण और श्रृगाल इन दो अर्थों में जानना।

अर्क इष्टस्तु मघवान् घर्मांशुरर्क उच्यते।
मन्थी राहुश्च चन्द्रश्च ग्रहो मन्थी निरुच्यते॥१५॥

अर्थ—अर्क (पु॰)—इन्द्र और सूर्य इन दो अर्थों में। मन्थी (पु॰)—मन्थिन् राहु, चन्द्रमा और ग्रह इन तीन अर्थों में।

केतवो रश्मयो ज्ञेयाः केतवश्च महाध्वजाः।
तमोनुदः सहस्रांशुरग्निश्चापि प्रकीर्त्यते॥१६॥

अर्थ—केतवः (पु॰)—किरण और झण्डा इन दो अर्थों में। तमोनुदः (पु॰)—सूर्य और अग्नि इन दो अर्थों में तमोनुद केतू के ४ अर्थ हैं।

मयूखाः किरणा ज्ञेया मयूखाश्चापि कीलकाः।
सप्तर्षिरुत्सवः प्रोक्तः सप्तान्ये ऋषयः क्वचित्॥१७॥

अर्थ—मयूखः (पु॰)—किरण और कील इन दो अर्थों में। सप्तर्षिः (पु॰)—उत्सव और सात ऋषि के नाम ये हैं—श्रीमनु, सुरमानु, श्रीनिचय, सर्वसुन्दर, जयवान्, विनयलालस और जयमित्र ये प्रसिद्ध ऋषि हैं।

वसवः शंवरा उक्ता देवाश्च वसवो मताः।
नक्षत्रं धिष्ण्यमित्युक्तं, गेहं धिष्ण्यं मतं क्वचित्॥१८॥

अर्थ—वसुः (पु॰)—शंवर और वसु इन दो अर्थों में। धिष्ण्यं (नपुं॰)—नक्षत्र और घर ये दो नाम जानना चाहिए।

वासोम्बरमितिख्यात मम्बरं च नभः स्थलम्।
पयः सलिलमुद्दिष्टं पयः क्षीरं मतं क्वचित्॥१९॥

अर्थ—अम्बर (नपुं॰)—वस्त्र और आकाश ये दो अर्थ अम्बर के हैं। पयः (नपुं॰)—पानी और दूध ये दो अर्थ पय के जानना।

शिवं पानीयमुद्दिष्टं, शिवं श्रेयः शिवं सुखम्।
शिवं व्योमपतिं प्राहुः शिवं श्रेष्ठं प्रचक्षते॥२०॥

अर्थ—शिवम् (नपुं॰)—पानी, कल्याण, सुख, सूर्य और श्रेष्ठ ये ५ नाम शिव के जानना चाहिए।

क्षरं जलं विजानीयात्क्वचिन्मेधं विदुः क्षरम्।
स्यन्दनं चाम्बु निर्दिष्टं स्यन्दनश्च महारथः॥२१॥

अर्थ—क्षरम् (नपुं॰)—पानी और मेध (यज्ञ) इन दो अर्थों में। स्यन्दन (नपुं॰)—पानी और बड़े रथ (महारथ) में दो अर्थों में है।

कृष्णं तमः समाख्यातं, कृष्णश्चाधोक्षजस्तथा।
अमृतं क्षीरमित्युक्तं क्वचिच्चेष्टं समुद्रजम्॥२२॥

अर्थ—कृष्णं (नपुं॰)—अंधकार, कृष्णः (पु॰)—अधोक्षज, कृष्णजी इन दो अर्थों में। क्षीरं (नपुं॰)—अमृत और पानी दो अर्थों में।

शवं च सलिलं प्रोक्तं, मृतमाहुः शवं तथा।
तोयं घृतमिति प्रोक्तं, घृतं सर्पिः क्वचिद् भवेत्॥२३॥

अर्थ—शवं (नपुं॰)—सलिल, पानी, मृतक की लाश इन ३ अर्थों में। घृतं (नपुं॰)—पानी और घी इन दो अर्थों में है।

पानीयं च विषं प्रोक्तं, क्वचिद्धालाहलं विषम्।
हस्तिहस्तः करः प्रोक्तः, करो हस्तः प्रचक्ष्यते॥२४॥

अर्थ—विषं (नपुं॰)—पानी और हलाहल इन २ अर्थों में। करः (पु॰)—हाथी की सूंड और हाथ इन दो अर्थों में।

कीलालं रुधिरं प्रोक्तं, नीरं चैव प्रशस्यते।
भुवनं सलिलं प्रोक्तं, आकाशं भुवनं स्मृतम्॥२५॥

अर्थ—कीलालं (नपुं॰)—खून और निर्मल पानी, (अमृत के समान देवताओं के पेय पानी को भी कीलाल कहते हैं।) भुवनं (नपुं॰)—पानी और आकाश इन २ अर्थों में।

प्रवालं कोमलं ज्ञेयं, कोमलं स्पष्टवाचकम्।
सदनं च स्मृतं तोयं, सदनं वेश्म उच्यते॥२६॥

अर्थ—कोमलं (नपुं॰)—प्रवाल और स्पष्ट वचन इन २ अर्थों में जानना। सदनं (नपुं॰)—पानी और घर इन दो अर्थों में जानना।

तोयं सद्मेति गदितं, निलयं सद्म निगद्यते।
संवरं च जलं प्रोक्तं, संवरः पर्वतो भवेत्॥२७॥

अर्थ—सद्मं (नपुं॰)—पानी और घर इन २ अर्थों में। संवरं (नपुं॰)—जल और पर्वत इन २ अर्थों में जानना।

संवरश्चाऽसुरः ख्यातो, यो बिभर्ति रसां प्रियाम्।
स्वरवाक्क्ष्मास्विडां प्राहुरिडा चाम्बरदेवताम्॥२८॥

अर्थ—संवरः (पु॰)—एक असुर का नाम, जो एक रस विशेष को धारण किए था। इडा (स्त्री॰)—स्वर, वाणी, क्ष्मा, पृथ्वी, अम्बर देवता (बुध) की स्त्री को भी इडा कहते हैं। इन ५ अर्थों में है इडा। संवर—इसने प्रद्युम्न का हरण किया था।

पत्नीं चन्द्रेरिडां प्राहुरिला तत्समतां गता।
अदितिः पृथिवी ज्ञेया, देवमाताऽदितिः क्वचित्॥२९॥

अर्थ—इडा (स्त्री॰)—चन्द्रमा की पत्नि को और पृथ्वी को इडा कहते हैं। अदितिः (स्त्री॰)—पृथ्वी और देवमाता इन दो अर्थों में है।

अध्यूढा भार्या परित्यक्ता, त्वद्भिदिश्च निगद्यते।
वृषो धर्म्मः क्वचिज्ज्ञेयो, गवामपि पतिर्वृषः॥३०॥

अर्थ—भिदिः (पु॰) सती को सत्पथ से डिगाना भिदि है। वृषः (पु॰)—धर्म और बैल इन दो अर्थों में है।

वृषा कर्णश्च गदितो, वृषा चोक्तः शतक्रतुः।
रौहिणेयो बलः प्रोक्तो, रौहिणेयो बुधः क्वचित्॥३१॥

अर्थ—वृषा (पु॰)—वृषन्—कर्ण और इन्द्र इन २ अर्थों में। रौहिणेयः (पु॰)—बलभद्र और बुध ग्रह इन दो अर्थों में।

बलदेवोमतः शेषो नागो वा शेष उच्यते।
रामस्तु लाङ्गली ज्ञेयो रामो दाशरथिः क्वचित्॥३२॥

अर्थ—शेषः (पु॰)—बलदेव और नाग इन २ अर्थों में जानना। रामः (पु॰)—लांगली, दशरथ के ज्येष्ठ पुत्र इन दो अर्थों में।

रामश्च शुक्लो वर्णो रामश्च क्षत्रनाशनः।
वराहः केशवः ख्यातो वराहो जलदः क्वचित्॥३३॥

अर्थ—रामः (पु॰) शुक्ल वर्ण और परशुराम इन २ अर्थों में। वराहः (पु॰)—कृष्ण और मेघ इन दो अर्थों में।

वराहः शूकरो ज्ञेयो विष्णुर्मेघो हरिस्तथा।
अजाराट्स्मरेन्दवो ज्ञेयास्त्रिनेत्रश्चाप्यजो मतः॥३४॥

अर्थ—वराहः (पु॰)—शूकर, विष्णु, हरि और बादल इन ४ अर्थों में। अजः (पु॰)—राजा, स्मर (काम), चन्द्रमा, शंकर इन अर्थों में है।

अजः पशुश्च विख्यातो तथा जौ ब्रह्मकेशवौ।
शरीरजः स्मृतो रोगः पुत्रश्चापि शरीरजः॥३५॥

अर्थ—अजः (पु॰)—पशु, यव, ब्रह्मा, श्रीकृष्ण इन ४ अर्थों में। शरीरजः (पु॰)—रोग और पुत्र ये दो अर्थ है।

ज्ञेयं पुष्करमब्जं च नाग नासाग्रमेव च।
कूलं नभः समाख्यातं कूलं रोधः प्रचक्षते॥३६॥

अर्थ—पुष्करम् (नपुं॰)—कमल, हाथी की नाक का अग्रभाग। कूलम् (नपुं॰)—आकाश, नदी के तट इन दो अर्थों में कूल शब्द है।

खं चानन्तमिति प्रोक्तमनन्तं च बलं क्वचित्।
विष्णुः क्वचिदनन्तः स्यान्नागरचानन्त उच्यते॥३७॥

अर्थ—अनन्तं (नपुं०)—आकाश, अपरिमित शक्ति, विष्णु और शेष नाग इन ४ अर्थों में अनन्त शब्द है। (उभय लिंग अनंत)

प्रजापति स्मृतो राजा ब्रह्मा चापि प्रजापतिः।
प्रजापतिः स्मृतः क्षता क्षत्ता च चर उच्यते॥३८॥

अर्थ—प्रजापतिः (पु०)—राजा, ब्रह्मा, क्षता, मूर्तिकार, क्षत्ता—द्वारपाल इन चार अर्थों में।

वामः पयोधरः प्रोक्तो वामः स्याद्द्रविणं हरः।
वामश्च मदनः प्रोक्तो वामश्च प्रतिकूलके॥३९॥

अर्थ—वामः (पु०)—स्तन, मेघ, धन, हर, कामदेव, प्रतिकूल इन अर्थों में वाम शब्द है। पयोधर स्तन एवं मेघ भी होता है। द्रविण धन।

आगोपो गोपको ज्ञेयः क्व चिदागोपको ध्वजः।
उरश्चाङ्कः समाख्यातः, स्थानमङ्कः स्मृतस्तथा॥४०॥

अर्थ—आगोपः—ग्वाला, ध्वज इन दो अर्थों में अगोप। अङ्कः (पु०)—छाती और स्थान इन २ अर्थों में अङ्क शब्द है।

वासरस्तु स्मृतो नागो वासरो दिवसो मतः।
विभावसु र्निशाज्ञेया, गन्धर्वश्च क्व चिन्मतः॥४१॥

अर्थ—वासर (पु०)—नाग और दिवस इन दो अर्थों में। विभावसुः—रात्रि और कहीं पर गन्धर्व भी कहते हैं।

शर्वर्यो रात्रयः प्रोक्ताः, शर्वर्यश्च स्त्रियो मताः।
सान्द्रं घनमिति प्रोक्तं, स्निग्धं सान्द्रं निगद्यते॥४२॥

अर्थ—शर्वरी (स्त्री०)—रात्रि और स्त्री इन २ अर्थों में। सान्द्रं (नपुं०) घन—कठोर और स्निग्ध (चिकना) इन दो अर्थों में सान्द्र शब्द है।

स्वः स्वर्गश्च मतं नाम, स्वः सुखं क्वचिदुच्यते।
स्व आत्मा चैव निर्दिष्टः स्वः प्रोक्तो गृहमूषिकः॥४३॥

अर्थ—स्वः (अव्यय)—स्वर्ग, सुख, आत्मा और गृहमूषिक इन चार अर्थों में (स्वः) शब्द का प्रयोग है।

ककुश्छन्दो विशेषज्ञो, मतः शास्त्रेऽपिनाककुप्।
ककुम्मही रुहः प्रोक्तो, ज्ञेयास्तु ककुभो दिशः॥४४॥

अर्थ—ककुः—छन्द, शास्त्र, महीरुह, दिशा इन चार अर्थों में ककुप् शब्द है।

क्षयं वेश्म समुद्दिष्टं, क्षयं रोगं प्रचक्षते।
जलदस्तु प्लवो ज्ञेयप्लवो ज्ञेयस्तथोडुपः॥४५॥

अर्थ—क्षयं (नपुं०)—घर, रोग इन दो अर्थों में। प्लवः (पु०)—मेघ और उडुप (नाव) ये दो अर्थ 'प्लव के जानना॥

प्रासादो मण्डपः प्रोक्तो, विहारश्चापि कथ्यते।
घनं घनं विजानीयाद्, घनं विपुलमुच्यते॥४६॥

अर्थ—प्रसादः (पु०)—मण्डप, घूमना इन २ अर्थों में। घनम् (नपुं०)—मेघ और अधिक विपुलता इन अर्थों में घनम् है।

प्रयुज्यते च कस्मिश्चिद्, घनं संघात वाद्ययोः।
वरूथं स्यन्दनाग्रंस्याद् वरूथं वेश्म उच्यते॥४७॥

अर्थ—घन-शब्द को कोई संघात (समूह) और वाद्य (बाजा) इन अर्थ में। वरूथम् (नपुं०)—रथ का अग्र भाग और घर इन दो अर्थों में।

चमूश्च वर्म सहसा, प्रवदन्ति मनीषिणः।
असुराश्च सुरा ज्ञेयाः क्वचिद् देवारयोऽसुराः॥४८॥

अर्थ—'वर्म' शब्द का अर्थ विद्वान लोग 'सेना' करते हैं। असुरः (पु०)—देव और देव का शत्रु इन दो अर्थों में।

नागाश्च द्विरदा ज्ञेयाः पन्नगाश्च क्व चिन्मताः।
गन्धर्वश्च तथा वायुः क्वचिद् स्याद् देव गायनः॥४९॥

अर्थ—नागः (पु०)—हाथी और सर्प इन दो अर्थों में। गन्धर्व (पु०)—हवा और गाने वाले देव इन दो अर्थों में।

ताक्ष्योंहयः समुदिष्टस्ताक्ष्यर्यश्चापि पतत्रिराट्।
बालेयानसुरानाहु र्बालेयांश्च क्वचित् खरान्॥५०॥

अर्थ—ताक्ष्यः (पु०)—घोड़ा और गरुण इन २ अर्थों में। बालेयः (पु०)—असुर और गधा इन दो अर्थों में जानना॥

तृणी वनस्पतिः प्रोक्ता, क्व चिदार्द्राश्च कथ्यते।
शिखरी वृक्षः उद्दिष्टः शिखरी पर्वतः स्मृतः॥५१॥

अर्थ—तृणी (स्त्री०)—वनस्पति और गीला इन २ अर्थों में। शिखरी (पु०)—वृक्ष और पर्वत इन अर्थों में जानना॥

द्विजो विप्रश्च दन्तश्च द्विजः पक्षी निगद्यते।
चौरो मलिम्लुचो ज्ञेयो, वातश्चापिमलिम्लुचः॥५२॥

अर्थ—द्विज. (पु०)—ब्राह्मण, दाँत, पक्षी इन ३ अर्थों में। मलिम्मुचः (पु०)—चोर और हवा इन दो अर्थों में।

आत्मजं रक्तमुद्दिष्टं सुतः कामस्तथैव च।
कीनाशः मृतको ज्ञेयः, कीनाशश्चापि राक्षसः॥५३॥
कीनाशोऽग्निः कृतघ्नश्च, कृपणो यम एव च।
कीनाशः कर्षको ज्ञेयाः, कीनाशश्च वृकोदरः॥५४॥

अर्थ—आत्मजम् (पु०)—खून, पुत्र, काम इन ३ अर्थों में। कीनाशः (पु०)—मृतक, राक्षस, अग्नि, कृतघ्न, कंजूस, यम, कर्षक, वृकोदर (भीम) इन ७ अर्थों में कीनाश शब्द है।

अवदातं प्रधानं स्यादवदातं च पाण्डुरम्।
ज्योतिर्ल्लोचन मुद्दिष्टं ज्योतिर्नक्षत्र मुच्यते॥५५॥

अर्थ—अवदातं (नपुं०)—प्रधान-मुख्य, सफेद इन २ अर्थों में। ज्योतिः (नपुं०)—लोचन-आँख, नक्षत्र ये दो अर्थ है।

ज्योतिश्च गदितो वह्निः काव्येषु मुनिपुङ्गवैः।
प्रधानं सज्जनं ज्ञेयं प्रधान श्वेत मुच्यते॥५६॥

अर्थ—ज्योतिः (नपुं०)—अग्नि, काव्य में श्रेष्ट मुनियों के द्वारा कहा है। प्रधानं (नपुं०)—सज्जन और श्वेत इन दो अर्थों में कहा है।

अब्दः संवत्सरो ज्ञेयो मेघश्चापि क्व चिन्मतः।
बलाहका महामेधाः शिखरी च बलाहकः॥५७॥

अर्थ—अब्दः (पु०)—वर्ष और मेघ ये २ अर्थ हैं। बलाहकः (पु०)—सघन मेघ और शिखरी–पर्वत ये दो अर्थ हैं।

तोयदं जलदं प्राहुस्तोयदं कथ्यते घृतम्।
जीमूतश्च मतो नागो जीमूतः क्वचिदम्बुदः॥५८॥

अर्थ—तोयदं (नपुं०)—मेघ और घी इन २ अर्थों में। जीमूत (पु०)—नाग–हाथी, सर्प, मेघ, इन तीन अर्थों में जानना।

पौलस्त्यं तु मतं युद्धं पौलस्त्यं पौरुषं विदुः।
शुचि कृद्रजकश्चैव प्रोक्तो नित्यं बुधै रसः॥५९॥

अर्थ—पौलस्त्य (नपुं०)–युद्ध, पुरुषार्थ इन दो अर्थों में। शुचिकृत् (पु०) रजक (धोबी), रस इन दो अर्थों में विद्वानों ने कहा है।

पर्जन्यं जलदं प्राहुः पर्जन्यं तु शतक्रतुः।
शिलीमुखाः स्मृता बाणा, भ्रमराश्च शिलीमुखाः॥६०॥

अर्थ—पर्जन्यं (नपुं०)—मेघ और इन्द्र इन दो अर्थों में। शिलीमुखः (पु०)—बाण और भ्रमर–भौरा इन दो अर्थों में।

लेखा सीमेति विज्ञेयाः लेखा चित्रकृतौ मता।
अम्बरीषं क्व चिद् भ्राष्ट्रं क्वचिद् युद्धं निगद्यते॥६१॥

अर्थ—लेखा (स्त्री०)–सीमा और चित्र बनाने वाला ये २ अर्थ हैं। अम्बरीषं (नपुं०)–भाण्ड जिस बर्तन में चने आदि अनाज सेंका जाता है एवं कहीं पर युद्ध भी कहा जाता है। अम्बरीष–भाण्ड और युद्ध।

पुस्त्वं चापि मतं युद्धं पुंस्त्वं पौरुषमुच्यते।
विद्वान्सोऽरिपवो ज्ञेया विद्वांसस्त्वसवो मताः॥६२॥

अर्थ—पुस्त्वं (नपुं०)–युद्ध और पुरुषार्थ। विद्वान (पु०)–सज्जन और अध्यात्मिक जीवन। (असु–अध्यात्मिक जीवन।)

मायाऽविद्येति विज्ञेया, क्वचिन्माया तु सांवरी।
मधु द्राक्षीति विज्ञेया, क्वचित्स्यान्मधुमाक्षिकम्॥६३॥

अर्थ—माया (स्त्री०)–अज्ञान और जादुगरनी ये २ अर्थ। मधु (नपुं०)–दाख अंगूर और शहद इन दो अर्थों में।

मधु चाम्बु समाख्यातं सुराश्चमधुसंज्ञका।
खं रंध्रमिति विज्ञेयं खं गृहं नभ एव च॥६४॥
खमिन्द्रियमिति ख्यातं खं च नक्षत्र मुच्यते।
धार्तराष्ट्रा महाहंसा, धृतराष्ट्रसुताः क्वचित्॥६५॥

अर्थ—मधु (नपुं०)–पानी और मधुदेव ये दो अर्थ। खम् (नपुं०)–छिद्र, घर, आकाश, इन्द्रिय और नक्षत्र इन पाँच अर्थों में।

धार्तराष्ट्रः (पु०)–महाहंस और कहीं पर धृतराष्ट्र के पुत्र का नाम भी धार्तराष्ट्र है इन दो अर्थों में।

प्रभाकरो मतः सूर्यो वह्निश्चापि प्रभाकरः।
सितं शुक्ल मितिज्ञेयं सितं बद्धं प्रचक्षते॥६६॥

अर्थ—प्रभाकरः (पु०)–सूर्य और अग्नि के नाम जानना। सित (नपुं०)–सफेद और बंधा हुआ ये दो नाम सित के हैं।

असितं कृष्णमित्युक्तं अशितं भक्षितं स्मृतम्।
वभ्रस्तु नकुलो ज्ञेयः पाण्डवो नकुलस्तथा॥६७॥

अर्थ—असित (नपुं०)–काला और खाया हुआ। नकुल (पु०)–नेवला और पाँच पाण्डवों में एक पाण्डव का नाम इस प्रकार दो-दो अर्थ हो गए।

त्रिशंकुमाहु मार्जार मृषिश्चापि तथेष्यते।
यमस्तु वायसो ज्ञेयो यमः प्रेताधिपस्तथा॥६८॥

अर्थ—त्रिशंकु (पु॰)—बिल्ली और झूठ इन दो अर्थों में। यमः (पु॰)—कौआ और यमराज इन दो अर्थों में। (प्रेतों के राजा को भी यम कहते है)

लक्ष्मणं सारसं विद्यात् तथा दशरथात्मजम्।
लक्ष्म चन्द्रस्य काष्र्ण्यं स्याल्लक्ष्मः केतुः प्रकीर्तितः॥६९॥

अर्थ—लक्ष्मणं (नपुं॰)—सारस पक्षी और राजा दशरथ के पुत्र का नाम। लक्ष्म (नपुं॰)—चन्द्रमा की कृष्णता को लक्ष्म और ध्वजा इन दो अर्थों में जानना।

केतुश्चापि मतः काव्ये लक्ष्मेति मुनिपुङ्गवैः।
आरुणेयः स्मृतो दक्षः दक्षश्चाचेतसः क्वचित्॥७०॥

अर्थ—मुनियों ने काव्य में लक्ष्म का ध्वजा अर्थ माना है। दक्षः (पु॰)—आरुणेय और अचेतस इन दो अर्थों में।

आशुकारी भवेत् दक्षः स्यादली तोमरः स्मृतः।
आदित्यं च रविं विद्याद् दैत्यश्चाप्यदिते सुतः॥७१॥

अर्थ—आशुकारी (पु॰)—निपुण, भौरा, बाण इन तीन अर्थों में। आदित्यं (नपुं॰)—सूर्य और अदिति का पुत्र।

रोगो रजस्तथा रेणू रजो लोहित मुच्यते।
स्कन्धो नितम्ब संज्ञः स्यान्नितम्बं जघनं तटम्॥७२॥

अर्थ—रजः (नपुं॰)—रोग, धूलि और खून इन तीन अर्थों में। नितम्बं (नपुं॰)—स्कन्ध और जघनतट के हैं।

हेमवस्विति विज्ञेयं वसु तेजो निगद्यते।
सारङ्गं चातकं प्राहुः स्वर्णे चापि सितासिती॥७३॥

अर्थ—वसुः (पु॰)—स्वर्ण और किरण ये २ नाम। सारंगम् (नपुं॰)—पपीहा, स्वर्ण, चितकवरा ये तीन नाम कहे जाते हैं।

रम्भाश्च कदलीः प्राहू रम्भा स्वर्गाङ्गना मता।
ग्रावाणो गिरिजाः प्रोक्ता मेघाश्चापि मनीषिभिः॥७४॥

अर्थ—रम्भा (स्त्री॰)—कदली–केला का वृक्ष और देवाङ्गना ये दो अर्थ। ग्रावाणः (पु॰)—पहाड और मेघ ये दो अर्थ बुद्धिमानों के द्वारा माने गये हैं।

.. निगद्यते।
औषणं रसमुद्दिष्टमृतं सत्यमपि क्वचित्॥७५॥

अर्थ—औषणं (नपुं॰)–रस को कहते हैं। ऋतं (नपुं॰)–सत्य को भी कहा जाता है।

अक्ष आत्मेति विज्ञेयः केचिदाहु र्विभीतकम्।
ज्ञेयमिन्द्रिय मक्षं च शाकटं कर्ष एव च॥७६॥

अर्थ—अक्षः (पु॰)–आत्मा, बहेडा का पौधा गाडी–भौंरा, इन्द्रिय, सोलह मासे की एक तौल कर्ष इन पाँच अर्थों में।

अक्षं च पाशकं विद्याद् व्यावहारिकमेव च।
पद्ममिन्द्रियमित्युक्तं पद्मं तामरसं विदुः॥७७॥

अर्थ—अक्षं (नपुं॰)–पांसा–कानूनी कार्य विधि ये सभी अक्ष शब्द के अर्थ। पद्म (नपुं॰)–कमल, इन्द्रिय ये दो अर्थ।

चैत्यमायतनं प्रोक्तं नीडमायतनं तथा।
पुष्पं लोहित मुद्दिष्टं पुष्पं च कुसुमं तथा॥७८॥

अर्थ—आयतनं (पु॰)–पुण्य स्थान, नीड–विश्राम स्थल या घोंसला ये दो अर्थ। पुष्पं (नपुं॰)–लाल रंग और कुसुम फूल ये दो अर्थ पुष्प के जानना।

वाजी तुरङ्गमो ज्ञेयो वाजी श्यनो विहङ्गमः।
विष्णि वन्द्र सिंह मण्डूक चन्द्रादित्याँस्तु वानरान्॥७९॥

अर्थ—वाजी (पु॰)–घोड़ा, वाज, पक्षी, विष्णु, इन्द्र, सिंह, मेढ़क, चन्द्रमा, सूर्य और बन्दर इन दस अर्थों में।

बभ्रुशिवानिलहयान् हरीनिच्छन्ति कोविदाः।
पुरुषध्वजः लिङ्गेषु हयभूषणलक्ष्मषु॥८०॥
रामशेषावनीन्द्रेषु ललामं नवसु स्मृतम्।
शुक्रा स्मृताऽक्षिदोषोना लवली मञ्जरी तथा॥८१॥

अर्थ—हरिः (पु॰)–भौह, शिव, अनिल (हवा), हय (घोड़ा) ये पाँच अर्थ हरि शब्द के जानना चाहिए। ललामं (नपुं॰)–पुरुष, पताका, चिह्न, घोड़ा, आभूषण, लक्षण, सुन्दर, शेषनाग और राजा ये नौ अर्थ ललाम के जानना। शुक्रा (स्त्री॰)–नेत्र विकार, लवली, मञ्जरी (आम के फूलों का मोर) ये शुक्र शब्द के अर्थ है।

वक्रवक्त्रः शुको ज्ञेयः कोकिला वचन प्रिया।
पुलिनं जल विच्छेदः पङ्कजः स्यात् कुशेशयम्॥८२॥

अर्थ—वक्रवक्त्र (पु॰)–तोता, वचन प्रिया (स्त्री॰)–कोयल। पुलिनं (नपुं॰)–पुलिया-सेतु। कुशेशयम् (नपुं॰) कमल का जानना चाहिए।

रतं पापमिति ज्ञेयं सत्वरं शीघ्र मुच्यते।
पिशङ्गंरोचनाभंस्यान् मेचकस्तिलको मतः॥८३॥

अर्थ—रंत (नपुं॰)–पाप अर्थ में। सत्वरं (नपुं॰)–शीघ्र का वाची। पिशङ्ग–रोचनाभ (प्रातकालीन सूर्य की किरणें) मेचकः (पु॰)–तिलक।

ललाटेऽवस्थितं चिह्नं विद्वद्भिस्तिलकं मतम्।
परिचर्यं च कटकं निकषस्तु कषोमतः॥८४॥

अर्थ—तिलकं (नपुं॰)–ललाट पर स्थित चिह्न को विद्वान तिलक कहते हैं। परिचर्य (नपुं॰) कटक निकषः (पु॰)–कषौटी अर्थ में आता है।

नानारत्नैरुपचिता मञ्जूष रागिणी स्मृता।
दिनकृत् वाजिसिंहेषु केसरित्वं विधीयते॥८५॥

अर्थ—रागिणी (स्त्री॰)–नाना रत्नों से निर्मित सन्दूक या पेटी को रागिणी कहते है। केसरि–सूर्य, घोड़ा और सिंह इन ३ अर्थों में केशरी शब्द है।

अव्यक्तो मधुरः शब्दः कल इत्यभिधीयते।
अलात मुल्मुकं ज्ञेयं छेदो नाम भयङ्कराः॥८६॥

अर्थ—कलः (पु॰)–अव्यक्त और मधुर शब्द। अलातम् (नपुं॰)–जलती हुई लकड़ी (उल्मुकं) मसाल अर्थ में। छेदः (पु॰)–भयंकर अर्थ में कहे जाते हैं।

भावः शृंगारमाधुर्यं भावोऽवस्थाप्ररूपणम्।
विलासः कामजो दोषस्तदेव ललितं मतं॥८७॥

अर्थ—भावः (पु॰)–मधुर शृंगार एवं अवस्था इन दो अर्थों में। विलास (पु॰)–काम से उत्पन्न दोष अर्थ में। एवं ललित अर्थ में।

उत्तमाङ्गं विना देहं कबन्धं चेति शस्यते।
शिरसो वेष्टनं यद्वै तदुष्णीषं निगद्यते॥८८॥

अर्थ—कबन्धम् (नपुं॰)–शिर के बिना धड़ मात्र। उष्णीषं (नपुं॰)–पगड़ी (शिर के वेष्टन) को कहते हैं।

आहतं समदीर्घं स्यान्निविडं पीडितोन्नतम्।
मण्डूको भेक संज्ञः स्याद्वर्षाभूश्चातको मतः॥८९॥

अर्थ—आहतं (नपुं॰)–गहरी पीड़ा। निबिडं (नपुं॰)–बड़ी हुई पीड़ा को। मण्डूक (पु॰) मेंढ़क भेकः (पु॰) मेढ़क। वर्षाभू को भी मेढ़क कहते है यहाँ पर चातकः (पु॰) का अर्थ वर्षाभू है।

शिवा पिङ्गवती ज्ञेया विशालं सबलं मतम्।
दुश्चर्मा शिपिविष्टः स्यात्कर्षकस्तु कृषीबलः॥९०॥

अर्थ—शिवा (स्त्री॰)–पार्वती, का नाम जानना चाहिए। विशालं (नपुं॰)–सबल का माना है। दुश्चर्मन् (पु॰) शंकर जी को, शिपिविष्ट (पु॰) शंकर जी को। कर्षकः (पु॰) और कृषीबलः (पु॰) ये दोनों नाम किसान के हैं।

कन्याजातश्च कानीनोषण्डः क्लीवइति स्मृतः।
उत्कृष्टः श्वसुरः स्यातां क्लिष्टमव्यक्त वाचकम्॥९१॥

अर्थ—कानीनः (पु॰)–अविवाहित लड़की के पुत्र को कानीन, षण्डः (पु॰), क्लीबः (पु॰) ये दोनों नाम नपुंसक के हैं या शक्तिहीन के। उत्कृष्ट (पु॰)–श्वसुर को उत्कृष्ट कहा है एवं अव्यक्त वचनों को क्लिष्टम् (नपुं॰) कहते हैं।

रदनो हस्तिदन्तः स्याद्दानं कटक संज्ञितम्।
तोदनं चाङ्कुशं विद्यादालानं हस्ति बन्धनाम्॥९२॥

अर्थ—रदनः (पु॰), हस्तिदन्तः (पु॰) ये दोनों नाम हाथी दाँत के है। दानं (नपुं॰), कटक (पु॰) ये दोनों नाम मदोन्मत्त हाथी के मस्तक से चूने वाले रस के हैं। तोदनं (नपुं॰)–अंकुश जानना चाहिए। आलानं (नपुं॰)–हाथी बाँधने के खूटें को आलान कहते हैं।

घनाघन इति ख्यातः शास्त्रेष्वधिक पौरूषः।
अपाचीनं मनोज्ञं च बुद्धिर्ज्ञेया तु शेमुषी॥९३॥

अर्थ—घनाघनः (पु॰)–शास्त्रों में अधिक पुरुषार्थी को कहते हैं, अपाचीनं (नपुं॰)–कर्मठ, दक्षिणी व्यक्ति और मनोज्ञ (नपुं॰) मनोहर ये तीनों नाम घनाघन के हैं। शेमुषी (स्त्री॰) बुद्धि को जानना चाहिए।

अर्कस्तु पादपे ज्ञेयो नदी स्यात्फेनवाहिनी।
अश्वारोहो मरुद्यानोऽश्वानां हृदये ध्वनिः॥९४॥

अर्थ—अर्कः (पु॰)–आक (अकौआ) के पौधे का नाम है। फेनवाहिनी (स्त्री॰)– नदी का नाम है। घोड़े के हृदय की ध्वनि को मरुद्यान (पु॰) कहते हैं।

आक्रन्द इति विज्ञेयः खुराश्च शफ संज्ञिताः।
आम मासं भवेत्क्रव्यं पक्वं पिशित मुच्यते॥९५॥

अर्थ—आक्रन्दः (पु॰)–रोना। खुराः (पु॰)–सुगन्धित द्रव्य, खाट का पाया को कहते हैं। शफः (पु॰)–घोड़े की टाप या वृक्ष की जड़ को शफ कहते हैं। क्रव्यं (नपुं॰)–कच्चा मांस। पक्वं (नपुं॰)–पके हुए मांस को पक्व कहते हैं।

शुष्कं तु विरसं ज्ञेयं मृष्टं सरसमुच्यते।
शंखजं शुक्तिजं चैव वाराहं तिमि मौक्तिकम्॥९६॥

अर्थ—शुष्कं (नपुं॰)–रसहीन या सूखा। मृष्टं (नपुं॰)–सरस या गीला को कहते हैं।

मौक्तिम् (नपुं०)–शंख से, शुक्ति से, बराह (सुअर) से, तिमि (मछली) से उत्पन्न होता है। वह मोती है।

वंशादाशीविषान्नागाज्जीमूताच्च तथाष्टमम्।
लोकज्ञो दक्षिणो ज्ञेयो दक्षिणश्चतुरः स्मृतः॥९७॥

अर्थ–वंशात्–बाँस से, आशीविषात्–मणि वाले सर्प से, नागात्–हाथी से, जीमूतात्–मेघ से, अष्टभं–(मछली) से इन चार से भी मोती उत्पन्न होता है (स्वाति नक्षत्र में सर्प के मुख में पानी की बूंद मोती बन जाती है। लोकज्ञः–देशकाल की बात को जानने वाला दक्षिण कहलाता है। दक्षिणः (पु०)–चतुर, निपुण अर्थ में जानना चाहिए।

आकूतं तु मतं विद्यात्कण्टकं गहनं मतम्।
आननं चाकुले नेत्रे चिकुरं चापि शस्यते॥९८॥

अर्थ–आकूतं (नपुं०), मतं (नपुं०)–अभिप्राय के अर्थ में दोनों को जानना। कण्टकं (नपुं०)–काँटा या गहन (वन) इन अर्थों में। आननं (नपुं०) मुख, आकुल (नेत्र), चिकुर (बाल) इन अर्थों में आनन शब्द का प्रयोग होता है।

पापः श्याम इति प्रोक्तो वभ्रुस्तु कपिलोमतः।
स्थविष्टं स्थावरे चैव दविष्टं दूरमुच्यते॥९९॥

अर्थ–श्यामः (पु०)–पाप कहलाता है। वभ्रुः (पु०)–कपिल–भूरे रंग को वभ्रु कहते है। स्थविष्टं (नपुं०) स्थावर–वृद्ध को कहते हैं और दविष्टं (नपुं०)-अत्यन्त दूर शब्द को कहते हैं।

परमेष्ठी मतः श्रेष्ठः प्रेम प्रियमुदाहृतम्।
प्रकाशः स्त्री गृहेरक्तः शैलूष इति संज्ञितः॥१००॥

अर्थ–श्रेष्ठः (पु०)–परमेष्ठी, श्रेष्ठपुरुष, प्रेम (नपुं०)–प्रेमी–स्नेही को कहते हैं। शैलूषः (पु०)–स्त्रीगृह में अत्यन्त आसक्त पुरुष को शैलूष कहते हैं। अभिनेता को भी शैलूष कहते हैं।

पद कृच्चर्मकारः स्यान्नापितस्त्व जयः स्मृतः।
लावण्य माहुर्माधुर्यं चित्रं च शुभकर्म्मजम्॥१०१॥

अर्थ–पदकृत् (पु०)–चर्मकार–चमार का नाम है। नापितः (पु०)–नाई (खवास), अजयः (पु०) न जयः इति अजयः (जिसे कोई जीत न सके)। लावण्यम् (नपुं०)–माधुर्य को कहते है, चित्रं (मनोहर), शुभकर्मजम् (शुभ कर्म से उत्पन्न होने वाले) ये तीनों नाम–लावण्य के है।

व्याधयश्चामयाः प्रोक्ताः पानीयं तु समुच्चयः।
आधयस्तु स्मृताः प्राज्ञैश्चित्तोत्पन्ना उपद्रवाः॥१०२॥

अर्थ–व्याधिः (पु०)–आमय रोग। पानीयं (नपुं०)–समुच्चय अर्थ में। आधिः (पु०)–मन से उत्पन्न होने वाले विकार (उपद्रव) को विद्वानों के द्वारा आधि कहा गया है।

रंहो वेग समाख्यातः सत्रं सच्चरितं स्मृतम्।
आलवालं स्मृतं सद्भिरपां वेग निवारणम्॥१०३॥

अर्थ—रंहः (पु॰)—वेग, (चाल, आतुरता, प्रचण्डता आदि नाम रंहः के है। सत्रम् (नपृं॰)—सच्चरित्र—सदाचार का नाम है। आलबालं (नपुं॰)—क्यारी—पानी के वेग को रोकने वाले सज्जन पुरुष को जानना।

चटकः कलविङ्कः स्यात्त तुल्यं सदृश मुच्यते।
किलासं पाण्डुरं ज्ञेयं दोला प्रेङ्खेति शस्यते॥१०४॥

अर्थ—कलविङ्कः (पु॰)—चटकः (पु॰)—चिडिया के वाची है दोनों। तुल्यं (नपुं॰)—सदृश—समानता का वाची। किलासं (नपुं॰)—पाण्डुर—सफेद रंग को कहते हैं। दोला (पु॰)—गमन अर्थ। प्रेङ्ख (पु॰)—गमन अर्थ में कहे हैं।

मन्दिरं नगरं ज्ञेयं निलयं चापि मन्दिरं।
सहस्र नयनोऽगारिः प्रधनं युद्ध मुच्यते॥१०५॥

अर्थ—मन्दिरं (नपुं॰)—नगर, निलय—घर इन दो का वाची। सहस्र नयनः—इन्द्र का। प्रधनं (नपुं॰)—युद्ध अर्थ में जानना।

पालाशो हरितो वर्णो मेचको नील पिञ्जरः।
उक्षाणं वृषभं विद्याल्लुलायो महिषो मतः॥१०६॥

अर्थ—पलाशः (पु॰)—हरित वर्ण। मेचकः (पु॰)—नीला रंग। ललाई लिए हुए खाकी रंग—नील पञ्जर है। उक्षाणम् (नपुं॰)—बैल। लुलायः (पु॰)—महिष—भैसा अर्थ में माना गया है।

उस्त्रा वंध्या वसा वेहत् पृष्ठोही गर्भिणी हि या।
व्याख्यातो मस्करो वेणुस्त्वचिसारः परिकीर्तितः॥१०७॥

अर्थ—उस्त्रा (स्त्री॰)—वन्ध्या, वसा, वेहत् ये तीनो नाम बन्ध्या स्त्री के है। पृष्ठोही—गर्भधारण किए हुए स्त्री को जानना। वेणुः (पु॰)—वेणु, मस्कर, त्वचिसार, ये तीनों नाम बांस के है।

हिलं कामं शपं चैव रोषमाहुर्मनीषिणः।
कलभोऽल्पवयो नागः कलुषं चाविलं मतम्॥१०८॥

अर्थ—हिलम् (नपुं॰)—काम, शाप, रोष (क्रोध) इन तीन अर्थों में। कलभः (पु॰)—हाथी के छोटे से बच्चे को कलभ कहते है। आविलं (नपुं॰)—कलुष—पाप अर्थ में है आविल।

वृजिनं कुटिलं विद्यात्सम्राट् राजा च भूभुजौ।
रत्नं वज्रं विजानीयात्त्रियामा क्षणदा मता॥१०९॥

अर्थ—वृजिनम् (नपुं॰)—टेडी चाल या पाप प्रवृत्ति को वृजिन कहा है। राजन् (पु॰)—सम्राट और भूभुज ये दो अर्थ राजा के है। रत्नं (नपुं॰) वज्र है। क्षणदा (स्त्री॰) त्रियामा (स्त्री॰)—रात्रि के अर्थ में है।

दीर्घं प्राशुं विजानीयात् ह्रस्वं नीचकमुच्यते।
भूरि प्रभूत मुद्दिष्टमभितः सर्व वाचकम्॥११०॥

अर्थ—प्राशुं (नपुं०)–दीर्घ-बड़ा लम्बा अर्थ में। नीचकं (नपुं०)–ह्रस्व छोटा अर्थ में। प्रभूतम् (अव्यय)–भूरि-बहुत अर्थ में। अभितः–(अव्यय) सर्वनाम चारों ओर के अर्थ में माना है।

पवनश्चानिलो ज्ञेयः पवनश्चाधमो जनः।
प्रियवाक्यो भवेदार्यः स्नातश्च परिकीर्तितः॥१११॥

अर्थ—पवनः (पु०)–हवा अर्थ में, पवनः–अधम (नीच) पुरुष अर्थ में। प्रियवाक्यः (पु०) आर्य–सज्जन और स्नात इन दो अर्थों में जानना।

आडम्बरश्च पटहो व्यञ्जनं बोधनं मतम्।
विपंची वल्लकी ख्याता वीणा चैव निगद्यते॥११२॥

अर्थ—आडम्बरः (पु०)–बाजा, व्यञ्जन, बोधन इन तीन अर्थों में। विपंची (स्त्री०)–बाजा बजाने की लकड़ी और वीणा इन दो अर्थों विपंची शब्द आया है।

मालती सुमना ज्ञेया सुमना मुदितो जनः।
वल्लरी मञ्जरी ख्याता प्रपाऽप्शाला प्रकीर्तिता॥११३॥

अर्थ—सुमना (स्त्री०)–मालती का पुष्प एवं विद्वान इन दो अर्थों में। मञ्जरी (स्त्री०)–कोमल लता एवं वल्लरी अर्थ में। अप्शाला (स्त्री०)–पानी की प्याऊ अर्थ में जानना।

आयुर्निरुच्यते तोयं तेन जीवति पद्मकम्।
तस्य पत्राक्षिमानेन रामो राजीव लोचनः॥११४॥

अर्थ—आयुः (नपुं०)–जल–पानी के अर्थ में जानना पहले भी जल को जीवन कहा है। अतः आयु का अर्थ जल भी है। पद्मकम् (नपुं०)–कमल पानी में जीवित रहता है या उत्पन्न होता है। पत्र (अव्यय)–आँख की पलक। रामः (पु०)–राजीव लोचन (कमल के समान नेत्र होने से राम को राजीव लोचन भी कहते हैं।

उत्कृत्य कवचं देहादसृग्दग्धं च यत्पुरा।
इन्द्राय दत्तवान्कर्णस्तेन वैकर्त्तनः स्मृतः॥११५॥

अर्थ—इन्द्र के लिए जो दान देता था उसे कर्ण और वैकर्त्तन (पु०) जानना चाहिए। उत्कृत्य कवचं (नपुं०) शरीर से पृथक् नहीं होता शरीर धारण करने वाला और दग्धं (जल जाता है) यत् जो पुरा (अव्यय) नगरी अर्थ में। स्पष्ट नहीं हो पाया।

तीक्ष्णश्चैव प्रचण्डश्च वृको नामानलोमतः।
स पाण्डवस्य उदरे तेन भीमो वृकोदरः॥११६॥

अर्थ—अनलः (पु०) अग्नि, तीक्ष्ण, प्रचण्ड, वृक ये तीनों नाम अग्नि के है। वह अग्नि पाण्डव भीम के उदर में थी इसलिए भीम का एक नाम वृकोदर भी है।

यस्य श्रुति सुखावाणी पुण्य श्लोकः स उच्यते।
यः खेदी चानिवर्त्ती च युद्ध शौण्डः स उच्यते॥११७॥

अर्थ—पुण्य श्लोकः (पु०)–जिसकी वाणी कानों को सुखकारी होती है वह पुण्य श्लोक है। युद्ध शौण्डः (पु०) जो युद्ध से कभी नहीं लौटता और ढाल को धारण करता है उसे युद्ध शौण्ड कहते हैं।

महासंसर्ग सङ्गतं महेष्वासं प्रचक्षते।
स्व विक्रमैस्तापयेच्च परं......यूथं तापयेत्॥११८॥
यूथं तापयेद्यस्तं विज्ञेयश्च स यूथपः।
तस्मादपि च यो वर्यः स तु यूथपयूथपः॥११९॥

अर्थ—महा+इषु+आसं=महेष्वासं (नपुं०) बहुत संसर्ग से होने वाले संघात को महेष्वास कहते हैं। स्व (अपने) विक्रमैः–पुरुषार्थ के द्वारा तापयेत् (संतप्त करता है), यूथं (समूह), विज्ञेय (जानना) (सः) वह तस्मात् (उससे) अपि (भी), च (और) यः (जो) वर्यः (श्रेष्ठ)। जो अपने पुरुषार्थ से या पराक्रम से दूसरों को सन्तप्त करता है, शत्रुओं को भी संतप्त (दुःखी) करता है अपने समूह को भी संतप्त करता है वह यूथप कहलाता है, इन से भी जो श्रेष्ठ है वह यूथपयूथपः (पु०) कहलाता है।

सिंहान्नितान्त सौवीरः स नृसिंह इति स्मृतः।
ये हि स्पष्ट प्रवक्तारो मतास्ते व्यक्त वादिनः॥१२०॥

अर्थ—नृसिंहः (पु०)–सिंह के समान वीरता जिसके पास है वह नृसिंह अथवा जो मनुष्यों में श्रेष्ठ होता है उसे भी नृसिंह कहते हैं, क्योंकि सिंह के अर्थ प्रमुख–श्रेष्ठ। व्यक्तवादी (पु०)–जो स्पष्ट बोलने वाले होते हैं उन्हें व्यक्तवादी कहते हैं।

यो यमित्थं च नाम्नाति स कीनाश इति स्मृतः।
योऽप्रबुद्धोऽल्पबुद्धिश्च स तु मन्द इति स्मृतः॥१२१॥

अर्थ—यः (जो) यम् (जिसको) इत्थं (इस प्रकार) च (और) अर्थात् यम् (नपुं०)–कीनाश जो कि नाश अर्थ में है कीनाश–कृष्ण और मृत्यु अर्थ में है। अप्रबुद्धः (पु०)–अल्पबुद्धि, अज्ञानी, मन्द ये अप्रबुद्ध के अर्थ जानना चाहिए।

उपकारं तु यो हन्ति स कृतघ्न इति स्मृतः।
हर्षे गर्वे सुखे खेदे वृद्धौ च प्रतिभासते॥१२२॥
स्नेह भाग्यक्षये चैव मन्द शब्दो निगद्यते।
नातीत्य वर्तते यत्र तदध्यात्मं प्रचक्षते॥१२३॥

अर्थ—कृतघ्नः (पु०)–उपकार को भूल जाने वाले व्यक्ति को। (कृतं हन्ति इति कृतघ्नः)। हर्ष, गर्व, सुख, खेद, वृद्धि, स्नेह और भाग्य क्षय इन सब अर्थों में (मंदः पु०) मंद शब्द है। अध्यात्म (अव्यय) जो आत्मस्वरूप को छोड़कर बाहर न जाए उसे अध्यात्म कहते हैं।

चेतसश्च समाधानं समाधिरिति गद्यते।
सर्वक्लेश विनिर्मुक्तो स हि दान्त इति स्मृतः॥१२४॥

अर्थ—समाधिः (पु०)–जिसके मन के सभी विकल्पों का समाधान हो गया है उसे समाधिः कहते हैं। दान्तः (पु०)–सर्वक्लेशों (आर्तरौद्रध्यान) से रहित व्यक्ति को दान्त कहते हैं।

निर्ममो निरहङ्कारो विज्ञेयः छिन्न संशयः।
प्रदाता देश कालज्ञः समाधिस्थः स उच्यते॥१२५॥

अर्थ—समाधिस्थः (पु०)–निर्मम, निरहङ्कार, विज्ञेय, संशय रहित, प्रदाता, देशकाल को जानने वाला ये पाँचों शब्द समाधिस्थ के हैं।

मुखरोऽल्पमतिर्यस्तु सक्रोधश्चैव कीटकः।
वृत्तिर्यत्र तु गृहयानां परोक्षे बहि तत्क्रिया॥१२६॥

अर्थ—मुखरः (पु०)–अल्पबुद्धि, अधिक बोलने वाला मुख है। सक्रोधः (पु०)–क्रोध से सहित व्यक्ति को कीटक कहते हैं। गृहस्थों के परोक्ष में जो बहिरंग क्रिया होती है उसे वृत्ति कहते हैं। वृत्ति (पु०)–अर्थ स्पष्ट नहीं हो सका।

आहार व्यवहारेषु सा प्रीतिर्निरुपस्करा।
परस्परं स्वदारेषु सतां येषां प्रवर्तते॥१२७॥

अर्थ—आहार, व्यवहार, स्वस्त्री में सज्जन पुरुषों का परस्पर में जो प्रीति भाव होता है उसे निरुपस्कार प्रीति कहते हैं।

विश्रम्भात्प्रणयाद्वापि सा प्रीतिर्निरुपद्रवा।
यशः ख्यातिरिति प्रोक्तं तद्योगात्प्राहुरुच्यते॥१२८॥

अर्थ—विश्रम्भात्–विश्वास से, प्रणयात्–स्नेह से जो प्रीति उत्पन्न होती है उसे निरुपद्रवा (स्त्री०) प्रीति कहते हैं। यशः (पु०)–ख्याति–निरुपद्रवा प्रीति से भी लोक में यशः कीर्ति होती है।

कीर्ति ख्याति यशोयोगाद् भगवन् निति चोच्यते।
प्रियदानेषु यः शुद्धः स उदार इति स्मृतः॥१२९॥

अर्थ—कीर्ति, ख्याति और यश के योग से भगवान् कहा जाता है। जो प्रिय शुद्ध दान देने में निपुण होता है उसे उदार कहते हैं।

रजस्वला तु या नारी सा चोदक्या प्रकीर्तिता।
प्रीतिर्भावक्रिये स्वच्छरक्षालिंगि तनुं विपुम्॥१३०॥

अर्थ—उदक्या (स्त्री०)–रजस्वला नारी को उदक्या कहते है। प्रीति भाव करने पर स्वच्छ रक्षा (अर्थ स्पष्ट नहीं) शरीर।

तेजो रेतसि दीप्तौ तपो हि स्याद् वृषार्थकः।
योऽन्य जातो हनो जीवः स शरारू इति स्मृतः॥१३१॥

अर्थ—तेजस् (नपुं०)–अग्नि, दीप्ति (किरण) और तप धर्म ये चार अर्थ तेजस् के हैं। जो अन्य से उत्पन्न होता है उसे हन (पु०) कहते हैं उस हन जीव को शरारू कहते हैं।

मिथ्यादृष्टी रहमानी नास्तिकः सः प्रकीर्तितः।
कामः क्रोधश्च वै पूर्वे लोभोऽसत्यं च मध्यमे॥१३२॥

अर्थ—नास्तिकः (पु०)–मिथ्यादृष्टि और अहंकारी को नास्तिक कहते हैं जिसके पूर्व में काम और क्रोध हो मध्य में लोभ और असत्य हो।

अन्ते मोहो विषादश्च यस्य ज्ञेयः स षड्वदः।
अमृते जारजः कुण्डो मृते भर्तरि गोलकः॥१३३॥

अर्थ—एवं अन्ते में मोह और विषाद है जिसके उसे षड्वद जानना चाहिए। अमृतम् (नपुं०)–जारज और कुण्ड (जिस बर्तन में अमृत रखा जाता है उसे कुण्ड कहते हैं) अर्थ में। गोलकः (पु०)–मरण और भर्ता इन दो अर्थों में गोलक शब्द जानना चाहिए?

अनयोर्योऽन्नमश्नाति स कुण्डाशी निगद्यते।
भ्रूणस्त्री गर्भिणी वाला ब्राह्मणी ब्रह्म जीविनी॥१३४॥
परचित्ते यवीयान् यो ज्येष्ठ पत्नीं परामृशन्।
यः पश्चिमश्च ज्येष्ठोऽपि परचित्तः स उच्यते॥१३५॥

अर्थ—इस पद में अमृते (अमृत में), मृते (मृत में), इन दोनों में जो अन्न को खाता है वह कुण्डाशी कहलाता है। भ्रूण स्त्री (स्त्री०), गर्भिणी (स्त्री०), वाला (स्त्री०), ब्राह्मणी (स्त्री०) ब्रह्म जीविनी (ब्रह्मचारणी) परचिते (परचित में) (शेष अर्थ स्पष्ट नहीं)।।

पुष्पजं क्षोमजं चर्म्मकोशजं भर्म्मजं तथा।
गुणजं समुद्दिष्टं तद् भेदा वस्त्र जातिषु॥१३६॥

अर्थ—पुष्पजं (नपुं०)–पुष्प-फूल से उत्पन्न वस्त्र। क्षोमजं (नपुं०)–रेशमी वस्त्र। चर्मकोशजं (नपुं०)–चर्म से उत्पन्न वस्त्र। भर्म्मजं (नपुं०)–स्वर्ण से उत्पन्न। गुणजं (नपुं०)–धागा या डोरा से उत्पन्न। इस प्रकार वस्त्र के भेद जानना चाहिए।

बिम्बारक्त धरा या स्त्री बिम्बोष्ठीं तां विनिर्द्दिशेत्।
या स्यात् संक्रीडनपरा ललनां तां विनिर्द्दिशेत्॥१३७॥

अर्थ—बिम्बोष्ठी (स्त्री०)–जिस स्त्री के ओष्ठ लाल हों वह बिम्बोष्ठी है। ललना (स्त्री०)–जो स्त्री क्रीड़ा करने में तत्पर रहती है उसे ललना कहते हैं।

दूर्व्वा काण्ड प्रतीकाशा कुंभौयस्यातनू कुचौ।
सर्वरूपविविक्ताङ्गी सा भवेद् वरवर्ण्णिनी॥१३८॥

अर्थ—घास के पूले के समान जिस स्त्री का शरीर, कुच (स्तन)–कुंभ के समान हो और सर्वरूप से एकाङ्गी हो उसे वरवर्ण्णिनी कहते है (सर्वरूप पवित्र अंग है जिसका)

लावण्य युक्ता या नारी ललितां तां विनिर्द्दिशेत्।
यामत्ता मत्तवज्योतिः सा ज्ञेया मत्तकाशिनीं॥१३९॥

अर्थ—ललिता (स्त्री॰)–लावण्य से युक्त जो नारी है उसे ललिता कहते हैं। मस्त हाथी की चाल एवं ज्योति वाली स्त्री को मत्तकाशिनी कहते हैं।

भूरिश्च भूरिमुद्दिष्टं अन्नं श्रवइति स्मृतम्।
भूरि श्रवो ददातीह तस्माद् भूरिश्रवो हि सः॥१४०॥

अर्थ—भूरिः (पु॰)–बहुत को कहते हैं, अन्नं (नपुं॰)–श्रव माना जाता है एवं बहुत श्रव (अन्न) को देने वाले दाता को भूरिश्रव कहते हैं।

चतुष्पाद विंशति भुजो लोहित ग्रीव एव च।
निसर्गाद्दारुणात्क्रूरा द्रवणाद् रावणः स्मृतः॥१४१॥

अर्थ—लोहित ग्रीवः (पु॰)–चार पैर और बीस भुजाओं वाला लोहित ग्रीव है। स्वभाव से दारुण क्रूर और प्राणियों को रुलाने वाला जो है वह रावण (पु॰) कहलाता है।

रोषणा या भवेन्नारी भामिनीं तां विनिर्द्दिशेत् ।
न्यग्रोध लक्षणं विद्याद्द्धाना परिमण्डलम्॥१४२॥

अर्थ—भामनी (स्त्री॰)–जो नारी रोष (क्रोध) करती है उसे भामिनी कहा जाता है। न्यग्रोध, परिमण्डल के लक्षण को धारण करने वाली जानो।

ताभ्यामुपेता वनिता न्योग्रोध परिमण्डला।
तत्तुल्ये चाक्षिणी यस्याः सा स्त्री राजीव लोचना॥१४३॥

अर्थ—न्यग्रोधः (पु॰)–लम्बाई का एक नाप जिसका नाप यह दोनों हाथों को फैलाने से जितना हो। (जिस स्त्री के दोनों स्तन कठोर हो, नितम्ब विशाल हो कमर पतली हो, तो वह न्यग्रोध परिमण्डला नाम की स्त्री है। न्यग्रोध और परिमण्डल से सहित को न्यग्रोध परिमण्डल कहते हैं।

(स्तनौ सुकठिनौ यस्यां नितंबे च विशालजा मध्येक्षीणा भवेद्या सा न्यग्रोध परिमण्डला) भारुय से एवं उपर्युक्त लक्षण से युक्त कमल के समान जिसके दोनों नेत्र हैं उस स्त्री को राजीव लोचना कहते हैं।

वर्ण प्रमाण निर्धोषोऽछिन्न संपद् भिरन्वितः।
राजीव मन्ये शंसन्ति स्निग्धवर्ण सितासितम्॥१४३॥

किंचिदुत्तरतद्योगात्सीता राजीव लोचना।
बलिभिर्यास्त्रिभिः युक्ता शङ्खकण्ठी उदाहृता॥१४५॥

अर्थ—स्पष्ट नहीं है ।

.......................जराकराकारं स्यन्दनाग्रमिवाग्रतः।
वस्त्वेति........तज्ज्ञेयं तस्यैवाग्रं॥१४६॥
...........तं मर्म संयुक्तं तत्तथालिनमुच्यते।
ग्रहणे धारणे सामे वाहने धर्म संयुता॥१४७॥
रमणे क्रीणने सङ्गे भार्या नाम प्रवर्त्तते।
मूढतायां सविद्यायां सप्ताश्व स्त्वंशु मालिनी॥१४८॥

अर्थ—भार्या (स्त्री०)—ग्रहण में, धारण में, साम में, वाहन में, धर्म से सहित, रमण में, क्रीडा में, संग में, मूढ़ता और सविद्या इतने अर्थों में भार्या शब्द है। अंशुमाली—सूर्य (अन्य-कवियों के अनुसार सूर्य के सात घोड़े हैं।)

विषमाक्षदरा एते ज्ञेयाग्रैतः विसंस्थिताः।
कोटरस्था इति ज्ञेयाः सर्प्प कीट खगादयः॥१४९॥

अर्थ—सर्प, कीट, खग (पक्षी आदि) को कोटरस्था (पु०)—कहते हैं क्योंकि ये वृक्षों की खोल में रहते हैं।

आताम्रपल्लवोयस्तु वृक्षाणामचिरोदगमः॥
...॥१५०॥

अर्थ—जिन वृक्षों के नवीन लाल कोंपल निकली हो उसे पल्लव कहते हैं। इतना ही श्लोक भाष्य में है।

सौकुमार्य किसलयं कोमलत्वं च तत्स्मृतम्।
शतानां च चतुर्हस्तं नल्वं तदिहसंज्ञितम्॥१५१॥

अर्थ—सुकुमार किसलय कोमलपना जिसमें पाया जाता है उसे भी पल्लव कहते हैं। एवं नल्वं (नपुं०), ४०० हाथ लम्बा हो जो उसे नल्व कहते दूरी मापने के लिए आता है।

कुम्भो वाहः प्रस्थः समं नल्वं इति विधीयते।
विपिनं शून्य मित्युक्तं विपिनं गृहमेव च॥१५२॥

अर्थ—नल्वः (पु०)—घड़ा (कुंभ), वाह—ले जाने वाला या धारण करने वाला, प्रस्थः—माप-पाई या पायली जिससे अनाज नापा जाता है उसे प्रस्थ कहते हैं, सम ये चार नाम नल्व के हैं—घड़ा, वाह, प्रस्थ, सम। विपिनं (नपुं०)—एकान्त स्थान या जंगल।

गृहं—घर शून्यघर ये दोनों नाम विपिन के हैं।

रुक्म वर्ण्णं च वामं च दर्शनीयार्थ वाचकः।
सर्वार्थश्चाप्युवर्णश्च पानीयं शीत मुच्यते॥१५३॥
नीहारं शीतमित्युक्तं प्रदोषान्तो निशीथकः।
..॥१५४॥

अर्थ—रुक्म, वर्ण्ण और वाम ये दर्शनीय अर्थ के वाचक हैं। सर्वार्थ, उवर्ण को पानीय और शीत कहते हैं। निहारं (नपुं०)—वर्फ कहा जाता हे। रात्रि के प्रारंभ को प्रदोष कहते हैं। प्रदोष के अन्त को निशीथक (पु०) कहते हैं।

इति महाकवि श्री धनञ्जय कृते निघण्टुसमये शब्दसंकीर्णे अनेकार्थ प्ररूपणो द्वितीय परिच्छेदः॥

परिशिष्ट-३

अमरकवि रचित एकाक्षरी कोशः

विश्वाभिधानकोशानि प्रविलोक्य प्रभाष्यते।
अमरेण कवीन्द्रेणैकाक्षरनाममालिका॥१॥

अर्थ—विश्वाभिधान कोश को देखकर यह अमर कवि के द्वारा रचित एकाक्षरी नाममाला को कहते हैं।

अः कृष्णः आः स्वयंभूरिः काम, ई श्रीरुरीश्वरः।
ऊ रक्षणः ऋ ॠ ज्ञेयौ देवदानवमातरौ॥२॥

अर्थ—अः (पु०)—कृष्ण। आः (पु०)—स्वयंभू, इ (पु०)—काम, ई (स्त्री०)—लक्ष्मी। श्री। उः (पु०) ईश्वर। ऊः (पु०)—रक्षा करने वाला। ऋ ॠ (पु०)—देव दानव, माता इन दो अर्थों में ऋ ॠ है।

लृर्देवसूर्लॄर्वाराहि भवेदेर्विष्णुरैः शिवः।
ओर्वेधा औरनंतः स्यादं ब्रह्मपरम्अः शिवः॥३॥

अर्थ—लृः (पु०)—देव। लॄ (पु०)—वार (पानी), अहिः (सर्प)—लॄ इन दो अर्थों में है। एः (पु०)—विष्णु। ऐः (पु०)—शंकर (मोक्ष)। ओः (पु०)—ब्रह्मा, औः (पु०) अनंत। अं–(पु०) परमब्रह्म। अः–शिव (मोक्ष) अर्थ में।

को ब्रह्मात्मप्रकाशार्के कः स्याद्वायुयमाग्निषुः।
कं शीर्षे सुसुखे कुस्तु भूमौ शब्दे च किं पुनः॥४॥

अर्थ—कः (पु०)—ब्रह्मा, आत्मा, प्रकाश, सूर्य, वायु, यम (मृत्यु) और अग्नि इन सात-सात अर्थों में जानना। कं (नपुं०)—शिर, अच्छा-सुख इन दो अर्थों में। कुः (स्त्री०)—पृथ्वी और शब्द अर्थ में जानना। किं (अव्यय)—पुनः अर्थ में जानो।

स्यात्क्षेपनिन्दयोः प्रश्ने वितर्के च खमिन्द्रिये।
स्वर्गे व्योम्नि मुखे शून्ये सुखे संविदि खो रवौ॥५॥

अर्थ—खम् (नपुं०)—क्षेप, निन्दा-आक्षेप, प्रश्न, वितर्क, इन्द्रिय, स्वर्ग, आकाश, मुख, शून्य, सुख, ज्ञान, सूर्य इन अर्थों में खम् शब्द है।

गस्तु गातरि गंधर्व्वे गा गीतौ गो विनायके।
स्वर्गे दिशि पशौ वज्रे भूमाविन्दौ जले गिरि॥६॥

अर्थ—गः (पु०)—गाने वाला (गाता) और गंधर्व इन दो अर्थों में। गा (स्त्री०)—गाने वाली। गो (पु० स्त्री०)—गणेश, स्वर्ग, दिशा, पशु, वज्र, भूमि, चन्द्रमा, पानी, पर्वत इन नौ अर्थों में गो शब्द है।

घस्तु सुघटीशे घा किंकिण्या च घुर्ध्वनौ।
ङं मञ्जने ङो वृष भेजिने चः चन्द्रचौरयोः॥७॥

अर्थ—घः (पु॰)—सुघट, अच्छा और ईश (स्वामि) अर्थ में। घा (स्त्री॰)—क्षुद्र घंटी अर्थ में। घुः (पु॰)—आवाज-ध्वनि अर्थ में। ङं (नपुं॰)—मञ्जन-साफ करना। ङः (पु॰)—धर्म अर्थ में। [वृषभेजिने] आदिनाथ भगवान चः (पु॰)—चन्द्रमा और चोर इन दो अर्थों में।

चः सूर्ये कच्छपे छं तु निर्मले जस्तु जेतरि।
विजये तेजसि वाचि पिशाच्यां जिः जवेऽपि च॥८॥

अर्थ—चः (पु॰)—सूर्य और कछुआ (कच्छप)। छं (नपुं॰)—स्वच्छ (निर्मल)। जः (पु॰)—जेता (जीतने वाला) और विजय। तेजः (पु॰)—किरण, वचन और राक्षसी (पिशाची)। जिः (पु॰)—वेग (जव)। इन्हें जानना चाहिए।

झो नष्टे रवे वायौ ञो गायने घर्घरध्वनौ।
टं पृथिव्यां करटे च ठो ध्वनौ ठो महेश्वरे॥९॥

अर्थ—झः (पु॰)—नष्ट (नाश), सूर्य, वायु इन तीन अर्थों में। ञः (पु॰)—गायन और घर्घर की ध्वनि इन २ अर्थों में। टम् (नपुं॰)—पृथिवी, करट (हाथी का गण्ड स्थल), कुसुम्भ का फूल, कौआ या पतित ब्राह्मण इन अर्थों में। ठः (पु॰)—ध्वनि और महेश्वर अर्थ में जानना।

शून्ये बृहद्ध्वनौ चन्द्रमंडले डं शिवे ध्वनौ।
ढो भये निर्गुणे शब्दे ढक्कायां णस्तु निश्चये॥१०॥

अर्थ—ठः (पु॰) शून्य, तेज आवाज, चन्द्रमण्डल इन तीन अर्थों में है। डं (नपुं॰)—शिव और ध्वनि अर्थ में ढः (पु॰)—भय, निर्गुण, ढक्का का शब्द इन अर्थों में। णः (पु॰)—निश्चय और ज्ञान अर्थ में।

ज्ञाने तस्तस्करे क्रोडपुंच्छयोस्ता पुनर्दया।
थो भीत्राणे महीध्रेदं पत्न्यां दा दातृदानयोः॥११॥

अर्थ—तः (पु॰)—तस्कर (चोर), सुअर, पूंछ इन तीन अर्थों में। ताः (स्त्री॰)—दया । थः (पु॰)—भय, रक्षा और पर्वत (महीध्रे) इन तीन अर्थों में। दं (नपुं॰)—पत्नी। दा (स्त्री॰)—दाता और दान इन अर्थों में।

बन्धे च धा गुह्ये केशे धातरि धीर्मतौ।
धूर्भार कंपचिंतासु नो नरे बन्धुबुद्धयोः॥१२॥

अर्थ—धा (स्त्री॰)—बन्ध, गुह्य (छिपाने योग्य), केश (बाल), ब्रह्मा इन चार अर्थों में। धीः (स्त्री॰)—मति-बुद्धि। धूः (पु॰)—भार, कंपन, चिन्ता इन तीन अर्थों में। नः (पु॰) नर, बन्धु और बुद्धि इन तीन अर्थों में।

निस्तु नेतरि नुः स्तुत्यां नौः सूर्ये पस्तु पातरि।
पावने जलयाने च फो झंझाजलफेनयोः॥१३॥

अर्थ—निः (पु॰)—नेता, नुः (पु॰)—स्तुति। नौः (पु॰)—नाव, सूर्य इन दो अर्थों में। पः (पु॰)—रक्षक, पवित्र (पावन), जलयान इन तीन अर्थों में। फः (पु॰)—झंझा (आँधी), जलफेन (पानी में

फसूकर) इन दो अर्थों में।

भाः कांतौ भूर्भुवः स्थाने भीर्भये मः शिवे विधौ।
चंद्रे शिरसि मा माने श्रीमात्रोर्वारणेऽव्ययम्॥१४॥

अर्थ—भाः (स्त्री०)—कान्ति। भूः (पु०)—ब्रह्मा और स्थान इन दो अर्थों में। भीः (पु०)—भय अर्थ में। मः (पु०)—शिव (कल्याण), भाग्य, चन्द्रमा, शिर इन चार चार अर्थों में। मा (अव्यय)—मान (नापना) लक्ष्मी, माता, हाथी, इन चार अर्थों में मा शब्द का प्रयोग होता है।

मुः पुंसिर्बंधने यस्तु मातरिश्वनि यं यशः।
यास्तु यातरि खट्वांगे याने लक्ष्म्यां च रो धृतौ॥१५॥

अर्थ—मुः (पु०)—बन्धन अर्थ में। यः (पु०)—हवा। यम् (नपुं०)—यश। याः (स्त्री०)—देवरानी या जेठानी, खटिया, वाहन, लक्ष्मी इन अर्थों में या शब्द है। रः (पु०)—धृति (धैर्य), तीव्र, अग्नि, काम इन पदार्थों में।

तीव्रे वैश्वानरे कामे राः स्वर्णे जलदे ध्वनौ।
री भ्रमे रुर्भये सूर्ये ल इन्द्रे चलनेऽपि च॥१६॥

अर्थ—राः (स्त्री०)—स्वर्ण, मेघ, आवाज। री (स्त्री०)—भ्रम। रुः (पु०)—भय और सूर्य अर्थ में। लः (पु०)—इन्द्र और चलन (हवा) अर्थ में।

लं तैले लीः पुनः श्लेषे ली भये वो महेश्वरे।
वः पश्चिमदिशास्वामी व इवार्थे स्मरेऽप्ययम्॥१७॥

अर्थ—लम् (नपुं०)—तैल। ली (स्त्री०)—आलिंगन, भय। वः (पु०)—महेश्वर—पश्चिम दिशा का स्वामि, वरुण और काम इन तीन अर्थों में एवं इव अर्थ में इन चार अर्थों में।

शं शुभे शा तु शोभायां शी शयने शु निशाकरे।
षः श्लिष्टे पुनर्गर्भे विमोक्षे षः परोक्षके॥१८॥

अर्थ—शम् (नपुं०)—शुभ। शा (स्त्री०)—शोभा। शी (स्त्री०)—शयन। शु (पु०)—निशाकर (चंद्रमा) इन चार अर्थों में। षः (पु०)—आलिंगन, गर्भ धारण, विमोक्ष (छोड़ना), परोक्ष इन चार अर्थों में।

सा लक्ष्म्यां हो निपाते च हुस्ते दारुणि शूलिनि।
क्षं क्षेत्र रक्षसीत्युक्ता माला प्राक्सूरिसम्मता॥१९॥

अर्थ—सा (स्त्री०)—लक्ष्मी। हः (पु०)—नीचे गिरना, नीचे उतरना, आक्रमण करना, झपटना, कूदना, फेंकना, फेंककर मारना, दागना, आकस्मिक घटना, अनियमितता। हुः (पु०)—कड़ा, कठोर, क्रूर, निर्दय आदि। शूलिन (पु०)—शंकर ये सब हुः के अर्थ है। क्षम् (नपुं०)—क्षेत्र और रक्षा इस प्रकार पूर्वाचार्यों के मतानुसार एकाक्षरी नाममाला कही गई।

॥ इति एकाक्षरी नाममाला समाप्ता ॥

परिशिष्ट-४

धनञ्जय-नाममालागतशब्दानुक्रमणिका

अकारादिशब्द

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अंशु:	४५	पु०	किरण
अंस	१००	नपुं०	बाहु
अंघ्रिप:	११	पु०	वृक्ष
अक्ष:	११२	पु०	पांसा
अक्षि	९९	नपुं०	नेत्र
अखिल	१९०	त्रि०	संपूर्ण
अग्नि:	६४	पु०	आग
अग्रज:	४३	पु०	बड़ा भाई
अग्रिम	१५७	त्रि०	नवीन वस्तु
अङ्कम्	१६८	नपुं०	नाम
अङ्गना	३०	स्त्री	स्त्री
अंङ्गीकृत्	१९७	नपुं०	स्वीकार
अचल:	८	पु०	पर्वत
अजस्रं	१९२	नपुं०	हमेशा
अञ्जनात्मज	६३	पु०	हनुमान
अटवी	१३	स्त्री	वन
अत्यर्थं	१७२	अव्यय	बहुत
अदितिसुत	५६	पु०	देव
अद्रि:	८	पु०	पर्वत
अधम	१६८	त्रि०	नीच व्यक्ति
अधिप:	१०	पु०	राजा
अध्वन्	१६३	पु०	मार्ग
अनन्तात्मन्	७३	पु०	ब्रह्मा के नाम
अनभ्राट्	१८	पु०	मेघ बादल
अनारतम्	१९२	अव्यय	हमेशा
अनिमिष:	१७	पु०	मछली
अनीकम्	८६	नपुं०	सेना
अंशुकं	११७	नपुं०	वस्त्र

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अहंस्	१३१	नपुं०	पाप
अकूपार:	२५	पु०	समुद्र
अक्षं	१३०	नपुं०	इन्द्रिय
अक्षौहिणी	८६	स्त्री०	सेना
अग:	११	पु०	वृक्ष
अग्निसूनु:	६६	पु०	कार्तिकेय
अग्रज:	११५	पु०	आदिनाथ
अज:	७२	पु०	ब्रह्मा
अङ्गं	३८	नपुं०	शरीर
अंङ्गराग:	११९	पु०	लेपन
अंघ्रि:	१०३	पु०	पैर
अजर्यम्	१८७	नपुं०	मित्रता
अजात रिपु	१४७	पु०	युधिष्ठिर
अटनी	७९	स्त्री०	धनुष का अग्रभाग
अत्यन्तम्	१७२	अव्यय	बहुत
अदभ्रं	१९४	नपुं०	बहुत
अद्भुत	१७३	नपुं०	आश्चर्य
अधम	१५२	पु० नपुं०	कलङ्क:
अधर:	१०१	पु०	ओंठ
अधोक्षज	७५	पु०	कृष्ण का नाम
अनन्तरम्	१४१	नपुं०	पास का नाम
अनन्यज	७७	पु०	कामदेव
अनल:	६५	पु०	अग्नि
अनिल:	६२	पु०	वायु के नाम
अनुकंपा	११०	स्त्री	दया
अनुक्रोश:	११०	पु०	दया
अनुचर:	२९	पु०	नौकर
अनुजा	४३	स्त्री	छोटी बहिन
अनुरहस्	१७५	नपुं०	एकांत (गुप्त)

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अनेहस्	१२४	पु॰	अवस्था
अन्तः	९	पु॰	पर्वत का समीप
अन्तकः	१४५	पु॰	काल (मौत)
अन्त्यः	१२४	पु॰	वृद्ध (बुढ़ापा)
अन्तेवासिन्	४	पु॰	शिष्य (छात्र)
अन्वयः	१२५	पु॰	कुल
अन्वह	१९२	अव्यय	हमेशा
अन्वीत	१६३	त्रि॰	सहित (युक्त)
अप्	१५	स्त्री ..	जल
अपत्यम्	३९	नपुं॰	पुत्र
अपारवारः	२५	पु॰	समुद्र
अप्सरोनाथः	५९	पु॰	इन्द्र (देवराज)
अब्जः	५१	पु॰	कमल
अभयं	२००	नपुं॰	कल्याण
अभिराम	१७९	त्रि॰	सुन्दर
अभिलाषः	१६२	पु॰	राग
अभिसारिका	३५	स्त्री॰	दूति-दूती
अभ्यर्णम्	१४१	नपुं॰	पास (निकट)
अभ्यास	१८८	पु॰	अभ्यास
अभ्रः	५३	पु॰	आकाश
अमर्षः	१०९	पु॰	क्रोध
अमा	१५९	अव्यय	साथ
अमृतं	१२३	नपुं॰	दूध
अम्बरं	५३	नपुं॰	आकाश
अनुगः	२९	पु॰	नौकर
अनुजः	४२	पु॰	छोटा भाई
अनुजीविन्	२९	पु॰	नौकर
अनेकपः	८८	पु॰	हाथी
अनोकहः	११	पु॰	वृक्ष
अन्तःकरणं	८१	नपुं॰	मन
अन्तरिक्षं	५३	नपुं॰	आकाश
अन्त्यकाश्यपः	११६	पु॰	महावीर
अन्धकारं	१४९	नपुं॰	अन्धकार
अन्वाय	१२५	पु॰	कुल
अन्वित	१६३	त्रि॰	सहित (युक्त)
अह्माय	१५७	अव्यय	तत्काल
अपघनः	३८	पु॰	शरीर
अपाङ्गः	९९	पु॰ नपुं॰	नेत्र विकार (आँख....)
अप्राज्ञः	१६६	पु॰	मूर्ख
अबला	३१	स्त्री॰	सामान्य स्त्री
अब्धि	२५	पु॰	समुद्र
अभियोगः	१७४	पु॰	उत्साह
अभिरूपः	१११	पु॰	पण्डित
अभिलाषुकः	१७६	पु॰	कंजूस
अभीक्ष्ण	१८५	अव्यय	बारम्बार
अभ्यासं	१४१	नपुं॰	पास
अभ्रं	१८	नपुं॰	मेघ
अमरः	५६	पु॰	देव
अमलं	१७३	नपुं॰	स्पष्ट
अमित्रः	४४	पु॰	शत्रु
अमृतोद्भवः	२५	पु॰	समुद्र
अम्बरं	११७	नपुं॰	वस्त्र
अम्बु	१५	नपुं॰	जल
अम्बुधिः	१६	पु॰	समुद्र
अयस्	१७२	नपुं॰	लोहा
अरण्यानीचरः	१४	पु॰	भील
अरविन्दं	२१	नपुं॰	कमल
अरि	४४	पु॰	शत्रु
अर्कः	४९	पु॰	सूर्य
अर्जुन	९४	नपुं॰	सुस्वर्ण
अर्जुन	१४७	त्रि॰	श्वेत रंग
अर्णस्	१५	नपुं॰	जल (पानी)
अर्भक	४०	पु॰	बालक (पुत्र)

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अर्वन्	५२	पु०	घोड़ा
अलका निलय	९६	पु०	कुबेर
अलिप्रभ	१४८	त्रि०	विशेष काला रंग
अवदात	११४	त्रि०	श्वेतरंग (सफेद)
अवधिः	२६	पु०	किनारा(तीर) तट
अवरजः	४२	पु०	छोटा भाई
अवसथः	१३३	पु०	मकान (घर)
अवसर्पः	१८१	पु०	गुप्तचर
अविदूर	१४१	नपुं०	पास (समीप)
अश्लील	१५७	नपुं०	व्यर्थ
अष्टापात्	९०	पु०	अष्टापद (प्राणी)
अष्टापदं	९३	नपुं० पु०	स्वर्ण (सुवर्ण)
असित	१४८	त्रि०	काला रंग
असृज्	१९१	नपुं०	खून (लहू)
अस्त्र	८३	नपुं०	हथियार
अहन्	५०	नपुं०	दिन
अहिः	१२८	पु०	सर्प (सांप)
अहो	१७३	अव्यय	आश्चर्य
अम्बु जानन	१३७	पु०	उपमान
अम्भस्	१५	नपुं०	जल
अरण्य	१३	नपुं०	वन (जङ्गल)
अरम्	१७६	नपुं०	शीघ्र
अराति	४४	पु०	शत्रु
अरुण	१४९	नपुं०	श्वेत मिश्र लाल रंग
अर्चि	४५	नपुं०	किरण
अर्जुनः	१४३	पु०	अर्जुन (नाम)
अर्णवः	२६	पु०	समुद्र
अर्थः	९५	पु०	धन
अर्यमन्	४९	पु०	सूर्य
अर्हत्	११४	पु०	जिनेन्द्र भगवान
अलि	८२	पु०	भौंरा

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अलीक	१८९	नपुं०	व्यर्थ
अवद्य	१५३	नपुं०	कलङ्क
अवनि	५	स्त्री	पृथ्वी (जमीन)
अवलग्न	१४१	नपुं०	पास (समीप)
अवसान	१७५	त्रि०	दुर्बल (पुराना)
अवश्यायः	१८०	पु०	बर्फ
अशनि	१९	स्त्री० पु०	वज्र, गाज
अश्वः	५२	पु०	घोड़ा
अष्टापदः	९०	पु०	अष्टापद (प्राणी)
असिः	८५	पु०	तलवार
असुपतिः	३७	पु०	पति का नाम
अस्तुंकारः	१९७	पु०	स्वीकार
अहंयु	१६९	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
अहन्तोक्ति	११०	स्त्री०	दया
अहितः	४४	पु०	शत्रु (वैरी)
आकालिकी	१९	स्त्री	बिजली
आकूत	८१	नपुं०	मन
आगमः	४	पु०	शास्त्र का नाम
आचार्यः	१११	पु०	पण्डित (बुद्धिमान्)
आज्ञा	१२५	स्त्री	आज्ञा के नाम
आतनं	१६०	त्रि०	नीचे के नाम
आताम्र	१४९	त्रि०	लाल रंग
आत्मभूः	७३	पु०	ब्रह्मा का नाम
आदेशः	१५५	पु०	आज्ञा का नाम
आनन्त्य	१९१	नपुं०	बहुत
आपगा	२४	स्त्री	नदी
आद्यः	११५	पु०	आदिनाथ का नाम
आयुध	८३	नपुं०	हथियार
आलम्ब्यसुख	१३३	नपुं०	झरोखा
आलभ्य	१६०	नपुं०	राग

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
आवलि	२७	स्त्री०	लहर (तरंग)
आवृत्ति	१९४	स्त्री०	वरवतर (कवच)
आशा	६१	स्त्री०	दिशा
आशुशुक्षणि	६४	पु०	अग्नि
आसन	११३	नपुं०	आसन (वैठक)
आसन्दी	११३	स्त्री०	आसन
आसवः	१२२	पु०	मदिरा (शराब)
आस्पद	१३३	नपुं०	मकान
आस्वनित	८१	नपुं०	मन
आकाश	५३	नपुं०	आकाश
आखण्डलः	५७	पु०	इन्द्र (देवराज)
आगार	१३३	नपुं०	मकान (घर)
आजि	८७	स्त्री	युद्ध
आज्य	१२३	नपुं०	घृत (घी)
आतपत्र	१९८	नपुं०	छत्र
आत्मजः	३९	पु०	बालक (पुत्र)
आत्यन्तिक	१६१	अव्यय	हमेशा का नाम
आनन	९८	नपुं०	मुख का नाम
आनंदः	१०९	पु०	हर्ष
आभरण	११९	नपुं०	गहना (जेवर)
आम्नायः	१२५	पु०	कुल
आर्या	३४	स्त्री	सदाचारिणी पतिव्रता
आलय	१३३	नपुं०	मकान (घर)
आली	४१	स्त्री०	सखी
आवासः	१३३	पु०	मकान (घर)
आशयः	११०	पु०	बुद्धि
आशु	१७२	नपुं०	शीघ्र
आश्चर्य	१७४	नपुं०	आश्चर्य
आसन	१३५	नपुं०	झरोखा
आसन्न	१४१	नपुं०	पास
आस्थानाधिपति	११२	पु०	राजा
आस्य	९८	नपुं०	मुख
इकारादि क्रमशः			
इनः	१०	पु०	राजा
इन्दुः	४६	पु०	चन्द्रमा
इनः	५०	पु०	सूर्य
इन्द्रः	१०	पु०	राजा
इन्द्रजित्	१३०	पु०	गरुड़
इभः	८८	पु०	हाथी
इला	६	स्त्री	पृथ्वी (जमीन)
इष्टः	३७	पु०	पति (स्वामि)
इन्दिरा	७६	स्त्री	लक्ष्मी (कृष्ण की स्त्री)
इन्दुमौलि	६९	पु०	महादेव (शंकर)
इन्दीवर	२२	नपुं०	सामान्य कमल
इन्द्रः	५७	पु०	इन्द्र
इन्द्रिय	१३०	नपुं०	इन्द्रिय (पाँच)
इरा	१२१	स्त्री	शराब (मदिरा)
इषु	७८	पु०	बाण (तीर)
इष्टा	३३	स्त्री	प्यारी स्त्री का नाम
ईकारादि क्रमशः			
ईरित	१०४	त्रि०	प्रेरित वस्तु का नाम
ईशितृ	१०	पु०	राजा
ईहा मृग	१२७	पु०	भेड़िया (श्रृगाल)
ईशानः	१०	पु०	राजा
उकारादि क्रमशः			
उग्रः	७०	पु०	महादेव (शंकर)
उच्च	१५९	त्रि०	ऊँचे का नाम
उच्चैस्	१५९	अव्यय	ऊँचे का नाम
उडु	४८	नपुं०	नक्षत्र
उत्कलिका	२७	स्त्री	जल की लहर (तरंग)
उत्तराशापति	९६	पु०	कुबेर

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
उत्पल	२२	नपुं०	सामान्य कमल
उत्सवः	१०९	पु०	हर्ष
उदन्वत्	२७	पु०	भँवर (भौंर)
उदश्वित्	१२३	नपुं०	छांछ (मट्ठा)
उद्ग्रीव	१६८	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
उद्धर	१७०	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
उद्योगः	१७४	पु०	उत्साह
उद्वाहः	१९२	पु०	विवाह
उपकण्ठ	२६	नपुं०	तीर (किनारा)
उग्र	१८६	त्रि०	घोर
उच्चावच	१५९	त्रि०	ऊँचाई के नाम
उच्छ्रित	१५९	त्रि०	ऊँचाई के नाम
उत्कट	१८४	त्रि०	घोर का नाम
उत्तमाङ्ग	१०४	नपुं०	शिर का नाम
उत्तानशयः	४०	पु०	बालक (पुत्र)
उत्प्रेक्षा	१३९	स्त्री०	वार्ता का नाम
उत्साहः	१७४	पु०	उत्साह का नाम
उदर	१०२	पु० नपुं०	पेट का नाम
उद्गमः	८०	पु०	पुष्प का नाम
उद्धत	१७०	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
उद्यमः	१७४	पु०	उत्साह
उद्वहः	४०	पु०	बालक (बेटा)
उन्नत	१५९	त्रि०	ऊँचाई
उपत्यका	९	स्त्री	पर्वत के पास की जमीन
उपमा	१३७	स्त्री०	उपमा का नाम
उपलः	१७०	पु०	पत्थर
उपेन्द्रः	७४	पु०	कृष्ण (नारायण)
उमापतिः	७०	पु०	महादेव

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
उररीकृत	१९७	नपुं०	स्वीकार
उर्वरा	६	स्त्री	जमीन (पृथ्वी)
उल्का	१९	स्त्री	रेखाकार तेज
उष्ट्रः	९१	पु०	ऊँट
उस्रः	४५	पु०	किरण
उपमानः	१३७	पु०	उपमान
उपांशु	१७५	अव्यय	एकांत (गुप्त)
उभय	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
उरगः	१२९	पु०	सर्प (साँप)
उरस्	१०२	नपुं०	छाती (हृदय)
उर्वी	६	स्त्री	जमीन (पृथ्वी)
उल्वण	१८६	त्रि०	घोर
उष्णवारण	१९८	नपुं०	छत्र
ऊकारादि क्रमशः			
ऊरीकृत	१९७	नपुं०	स्वीकार
ऊर्जस्विन्	१९६	पु०	प्रतापी पुरुष
ऊर्जस्	४६	नपुं०	तेज
ऋकारादि क्रमशः			
ऋक्ष	४८	नपुं०	नक्षत्र
ऋषिः	३	पु०	मुनि
ऋत	१८२	नपुं०	सत्य
एकारादि क्रमशः			
एकपत्नी	३४	स्त्री०	पतिव्रता नारी
एकागारिकः	१६९	पु०	चोर
एकपिङ्गलः	९५	पु०	कुबेर
एनस्	१३१	नपुं०	पाप
ऐकारादि क्रमशः			
ऐक्षव	८३	नपुं०	काम का धनुष
ऐक्ष्वाकुः	११५	पु०	आदिनाथ
ऐरावणाधिपः	५९	पु०	इन्द्र का नाम
ओकारादि क्रमशः			
ओघः	१२५	पु०	कुल

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
ओष्ठः	१००	पु०	ओंठ
ओघः	१४०	पु०	समूह
ओषधीश्वरः	४७	पु०	चन्द्रमा

कवर्णारादि क्रमशः

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
क	१५	नपुं०	जल (पानी)
क	१०४	नपुं०	शिर
कक्ष	१३	नपुं०	जङ्गल (वन)
कचः	१९९	पु०	बाल (केश)
कटाक्षः	९९	पु० नपुं०	नेत्र विकार
कटिसूत्रः	१२०	नपुं०	करधौनी
कणः	७८	पु०	बाण
कण्ठीरवः	९०	पु०	सिंह (शेर)
कदम्बक	१३९	नपुं०	समूह
कनक	९३	नपुं०	सुवर्ण (स्वर्ण)
कन्दर्प	८३	नपुं०	काम
कपालिन्	७०	पु०	महादेव
कपिध्वजः	१४३	पु०	अर्जुन का नाम
कमन	१७७	त्रि०	सुन्दर
कमल	२१	नपुं०	सामा. कमल
करः	४५	पु०	किरण
करण	१३०	नपुं०	इन्द्रिय
करबालकः	८५	पु०	तलवार
करिन्	८८	पु०	हाथी
करेणुः	८९	पु०	हाथी
कर्णः	९८	पु०	कान
कर्दमः	२०	पु०	कीचड़
कलङ्कः	१५२	पु०	कलङ्क (लाञ्छन)
कलधौतम्	९४	नपुं०	स्वर्ण (सुवर्ण)
कलहः	८७	पु०	युद्ध (संग्राम)
कलापिन्	१२७	पु०	मयूर
कलिलम्	१३१	नपुं०	पाप
कल्माषी	१५२	स्त्री०	पञ्चवर्ण

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
कः	७३	पु०	ब्रह्मा
ककुप्	६१	स्त्री	दिशा
कक्षा	१३७	स्त्री०	उपमा
कञ्चुकम्	१९४	नपुं०	अंगरखा (कुरता)
कटि	१०३	स्त्री	कमर
कठिन-कठोर	१५५	त्रि०	कठोर का
कण्ठः	१००	पु०	गला
कदनः	८७	पु० नपुं०	युद्ध
कद्वदः	१६८	पु०	मूर्ख
कनीयस्	४३	पु०	छोटे भाई का नाम
कपर्दिन्	७०	पु०	महादेव
कपिः	१२	पु०	वानर (बंदर)
कबरी	१९५	स्त्री	चोटी (जूड़ा)
कमनीय	१७९	त्रि०	सुन्दर
कम्र	१७९	त्रि०	सुन्दर
करः	१००	पु०	हाथ (हस्त)
करभः	९१	पु०	ऊँट
कराङ्गुलि	१०१	स्त्री०	अँगुली
करुणा	११०	स्त्री०	दया
कर्कशः	१५६	त्रि०	कठोर
कर्णशूलिन्	१४५	पु०	अर्जुन
कर्पूरः	११८	पु० नपुं०	कपूर का नाम
कलत्रम्	३२	नपुं०	विवाहित स्त्री
कलभ	१०५	नपुं०	बच्छड़ा (वच्छा)
कलहः	१९१	पु०	लड़ाई (झगड़ा)
कलाभृत	४७	पु०	चंद्रमा
कलेवरम्	३९	नपुं०	शरीर
कल्याणम्	१९८	नपुं०	मङ्गल का नाम
कल्लोलः	२७	पु०	लहर (जल तरंग)
कष्ट म्	१८६	नपुं०	कष्ट (पीडा)
कस्वरम्	९५	नपुं०	धन
कवचम्	१९५	नपुं०	बखतर (कवच)

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
कस्तूरी	११८	स्त्री	कस्तूरी
काञ्ची	१२०	स्त्री०	करधौनी (करडोरा)
कादम्बरी	१२१	स्त्री	मदिरा (शराब)
कानीनजनकः	५१	पु०	सूर्य
कान्त	१७८	त्रि०	सुन्दर
कान्तारम्	१३	नपुं०	जङ्गल (वन)
कामः	७७	पु०	कामदेव
कामिनी	३०	स्त्री०	स्त्री के नाम
कामुकी	३१	स्त्री०	स्त्री के नाम
कायः	३८	पु० नपुं०	शरीर
कार्तिकेयः	६७	पु०	कार्तिकेय
कार्मुकिन्	१४४	पु०	अर्जुन
कालम्	१४८	नपुं०	काला रंग
काली	१५२	स्त्री०	पञ्चवर्ण
काहलम्	१५७	नपुं०	व्यर्थ
काष्ठापालः	६१	पु०	दिग्पाल (दिशा रक्षक)
काञ्चनम्	९३	नपुं०	सुवर्ण (स्वर्ण)
काण्डम्	७८	पु० नपुं०	बाण (तीर)
काननम्	१३	नपुं०	वन
कान्तः	३७	पु०	पति
कान्ता	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
कान्तिमत्	४७	पु०	चन्द्रमा
कामिन्	३७	पु०	पति
कामुकः	३७	पु०	पति
कामुकी	३६	स्त्री०	वेश्या
कार्तस्वरम्	९४	नपुं०	सुवर्ण (स्वर्ण)
कार्मुकम्	७९	नपुं०	धनुष के नाम
कालः	१४६	पु०	मौत
कालशेयम्	१२३	नपुं०	छाँछ
काश्यपः	११५	पु०	आदिनाथ
काष्ठा	६१	स्त्री०	दिशा
काष्ठाम्बरः	६१	पु०	दिगम्बर मुनि
किंवदन्ती	१५४	स्त्री	नवीन बात
किंचन	१५८	अव्यय	संशय
किंजल्कः	१५३	पु०	कलङ्क
किरणः	४५	पु०	किरण का नाम
किरीटिन्	१४४	पु०	अर्जुन
कीचकशत्रु	१४५	पु०	भीम
कीनाशः	१६६	पु०	कंजूस
किंकरः	२९	पु०	नौकर
किंजल्कः	१५२	पु०	पराग का नाम
कितवः	१६७	पु०	धूर्त
किरातः	१४	पु०	भील
किल्विषम्	१३१	नपुं०	पाप
कीर्तिः	१५४	स्त्री०	कीर्ति के नाम
कु	६	स्त्री०	पृथ्वी
कुक्षि	१०२	पु०	गर्भस्थली (कोख)
कुचः	१०२	पु०	स्तन
कुब्ज	१५८	त्रि०	नीचे का नाम
कुक्कुरः	९२	पु०	कुत्ते का नाम
कुंकमम्	११७	नपुं०	केशर
कुबेरः	९५	पु०	कुबेर धनपति
कुमारः	६७	पु०	कार्तिकेय
कुमुदविप्रियः	५१	पु०	सूर्य
कुम्भिनी	६	स्त्री	जमीन (पृथ्वी)
कुलम्	१२५	नपुं०	कुल
कुल्या	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री
कुशम्	१५	नपुं०	जल
कुसुमम्	८०	नपुं०	पुष्प
कुमुदप्रियः	४७	पु०	चन्द्रमा
कुम्भिन्	८८	पु०	हाथी
कुरुशत्रु	१४५	पु०	भीम

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
कुलटा	३५	स्त्री	व्यभिचारिणी
कुवलयम्	२२	नपुं०	सा. कमल
कुशलिन्	१६४	त्रि०	चतुर के नामों
कूपारः	२५	पु०	समुद्र
कूर्पासम्	१९८	नपुं०	अँगरखा (कुर्ता)
कृतान्तः	४	पु०	शिष्य
कृतिन्	१६६	त्रि०	चतुर (कुशल)
कृपणः	८५	पु०	तलवार
कृशानु	६५	पु०	अग्नि
कृष्ण	१४८	त्रि०	काला रंग
कृच्छ्र	१८९	नपुं०	कष्ट
कृतान्तः	१४६	पु०	काल (मौत)
कृत्स्न	१९०	त्रि०	सम्पूर्ण
कृश	१७१	त्रि०	दुर्बल (पुराने)
कृष्णः	७४	पु०	कृष्ण (नारायण)
क्रोडः	९१	पु०	सुअर
केकिन्	१२५	पु०	मयूर
केवलिन्	११४	पु०	जिनेन्द्र भगवान
केशबन्धन्	१९९	नपुं०	चोटी
केशवः	७४	पु०	कृष्ण
केशिन्	७५	पु०	कृष्ण
केकरः	९९	पु०	नेत्र विकार
केतु	८४	पु०	ध्वजा
केशः	१९५	पु०	बाल का नाम
केशरिन्	९०	पु०	सिंह
केशवाग्रजः	१४२	पु०	बलभद्र
कैरवम्	२२	नपुं०	श्वेत कमल
कोकः	१२७	पु०	भेडिया
कोटि	७९	स्त्री०	धनुष की नोक
कोपः	१०९	पु०	क्रोध
कोविद	१६७	त्रि०	चतुर (कुशल)
कोकनदम्	२१	नपुं०	कमल
कोदण्डकः	७९	पु० नपुं०	धनुष का नाम
कोमल	१५७	त्रि०	कोमलता
कोशः	१९८	पु०	लड़ाई
कौक्षेयकः	८५	पु०	तलवार
कौन्तेयः	१४६	पु०	युधिष्ठिर
कौरव्यः	१४६	पु०	युधिष्ठिर
कौशिकः	६०	पु०	इन्द्र (देवराज)
कौतुकः	१७३	पु० नपुं०	आश्चर्य
कौमुदिन्	४७	पु०	चन्द्रमा
कौलेयकः	९२	पु०	कुत्ते (कुत्ता)
कौसुमम्	१५१	नपुं०	पराग
क्रेंकृतम्	१०७	नपुं०	हंस की बोली
क्रोधः	१०९	पु०	क्रोध (गुस्सा)
क्रौंच	१०७	पु०	क्रौंचपक्षी
क्रौंचभेदिन्	६७	पु०	कार्तिकेय
क्षणे	१५७	अव्यय	तत्काल
क्षणरुचि	१९	स्त्री०	बिजली
क्षपाकरः	४८	पु०	चन्द्रमा
क्षाम	१७१	त्रि०	दुर्बल (पुराना)
क्षिपा	४८	स्त्री०	रात्रि
क्षीरम्	१२३	नपुं०	दूध (दुग्ध)
क्षुण्ण	१६..	त्रि०	चतुर (कुशल)
क्षेमम्	२००	नपुं०	कल्याण
क्ष्मा	६	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
क्षणदा	४८	स्त्री०	रात्री
क्षतजम्	१९१	नपुं०	खून (लोहु)
क्षमा	५	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
क्षिति	६	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
क्षिप्र	१७६	अव्यय	शीघ्र
क्षीण	१७४	त्रि०	दुर्बल (पुराना)
क्षुरप्रः	७८	पु० नपुं०	बाण

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
क्षोणी	६	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
	'खकारादि'		
खम्	५३	नपुं०	आकाश
खगः	७८	पु०	बाण
खण्डः	१९०	पु०	टुकडा
खरदण्डम्	२१	नपुं०	सा. कमल
खला	३५	स्त्री०	व्यभिचारिणी
खलु	१७३	अव्यय	स्पष्ट
खम्	१२९	नपुं०	इन्द्रिय
खङ्ग	८५	पु०	तलवार
खन्कृतम्	१०६	नपुं०	आयुध की आवाज
खलः	४४	पु०	शत्रु
खलु	१५९	अव्यय	निषेध
खातम्	१३४	नपुं०	खाई
खेदः	१०९	पु०	क्रोध
खेचरः	५४	पु०	पक्षी,विद्याधर
खेरा	१३४	नपुं०	खाई
ख्याति	१५३	स्त्री०	कीर्ति
	'गकारादि'		
गगनम्	५३	नपुं०	आकाश
गजः	८८	पु०	हाथी
गन्धवाहः	६२	पु०	वायु
गरुडः	१२९	पु०	गरुड के नाम ...
गर्जः	१०५	पु०	हाथी की आवाज
गर्वित	१६९	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
गव्या	८२	स्त्री०	धनुष की डोरी
गहनम्	१८९	नपुं०	कष्ट
गङ्गा	७१	स्त्री	गङ्गा नदी का नाम
गणिका	३६	स्त्री	वेश्या
गभस्तिः	४५	पु०	किरण
गरुत्मत्	१२९	पु०	गरुड
गर्तम्	१९३	नपुं०	गड्ढे
गलः	१००	पु०	गले
गहनम्	१३	नपुं०	वन (जङ्गल)
गह्वरम्	१९०	नपुं०	गड्ढे के नाम
गह्वरी	५	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
गिर्	१०४	स्त्री०	वाणी
गिरिः	८	पु०	पर्वत
गिरीशः	६९	पु०	महादेव
गुणः	८२	पु०	धनुष की डोरी
गुणनिका	१८८	स्त्री०	अभ्यास का नाम
गुरु	१२३	पु०	उपाध्याय
गुणम्	११९	नपुं०	माला
गुणावलि	१५३	स्त्री०	कीर्ति
गुरुस्थानः	१३७	पु०	उपमान
गुहः	६७	पु०	कार्तिकेय
गुलिका	९४	स्त्री	चाँदी
गूढचरः	१६९	पु०	चोर
गृहम्	३२	नपुं०	विवाहिता स्त्री
गृहनु	१७६	पु०	कंजूस
गृहः	१३२	पु०	घर (मकान)
गेहम्	१३२	नपुं०	मकान
गेहिनी	३२	स्त्री	विवाहिता स्त्री
गो	६	स्त्री	पृथ्वी, जमीन
गो	१६६	स्त्री०	पशु (गाय)
गोत्रशत्रु	५८	पु०	इन्द्र (देशराज)
गोपुरः	१२४	पु०	नगर के दरवाजे का नाम
गोमिनी	७६	स्त्री०	लक्ष्मी
गोविन्दः	७६	पु०	कृष्ण
गो	४५	पु०	किरण
गोत्रम्	१६८	नपुं०	नाम
गोधा	२८	स्त्री०	मनुष्य

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
गोमण्डलम्	१६४	नपुं०	गायों के घेरे का नाम
गोलाङ्गूल:	१२	पु०	बन्दर
गौरा	१५१	त्रि०	पीला
ग्रन्थ:	४	पु०	शास्त्र
ग्रामशार्दूल:	९२	पु०	कुत्ता
गण्डीविन्	१४३	पु०	अर्जुन
गौतम:	११४	पु०	आदिनाथ
गौरी	१५१	स्त्री	रक्त वर्ण का नाम
ग्रहाधिप:	४९	पु०	सूर्य
ग्रीवा	२००	स्त्री०	गर्दन
	'घवर्णादि'		
घन:	१८	पु०	मेघ
घनसार:	११८	पु०	कपूर
घृष्टि:	९१	पु०	सुअर
घोष:	१६२	पु०	गाय का घेरा
घन:	.....	पु०	पत्थर
घनाघन	१८	त्रि०	मेघ
घोर	१८४	त्रि०	घोर
घ्राणम्	१०२	नपुं०	नासिका
	'चवर्णादि'		
चक्रधर:	७६	पु०	कृष्ण
चक्राङ्ग:	१२५	पु०	हंस
चतुर	१६७	त्रि	कुशल
चतुष्पात्	१६३	पु०	पशु
चन्द्रमस्	४७	पु०	चन्द्रमा
चमूर:	९०	पु०	तेंदूए का नाम
चरण:	१०३	पु० नपुं०	पग (पैर)
चलनम्	१०३	नपुं०	पग (पैर)
चक्रवाक:	५१	पु०	चकवा
चण्डी	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
चतुर्मुख:	७२	पु०	ब्रह्मा

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
चन्द्र:	४७	पु०	चन्द्रमा
चमू	८६	स्त्री०	सेना
चर:	१८१	पु०	गुप्तचर
चरण्यु	६३	पु०	वायु का नाम
चला	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
चाटुकृत्	१६५	पु०	धूर्त का नाम
चार:	१८१	पु०	गुप्तचर
चाप:	७९	पु० नपुं०	धनुष का नाम
चारु	१७९	त्रि०	सुन्दर का ....
चिकुर:	१९९	पु०	बाल का नाम (केश)
चित्रम्	१७४	नपुं०	आश्चर्य
चिराय	१८३	अव्यय	बहुत काल का नाम
चित्तम्	८१	नपुं०	मन
चिह्न	८४	नपुं०	ध्वज (झण्डा)
चीरम्	११७	नपुं०	वस्त्र का नाम
चीत्कृत	१०६	नपुं०	रथ के शब्द को
चूड़ापाश:	.....	पु०	चोटी
चेतस्	८१	नपुं०	मन
चेलम्	११७	नपुं०	वस्त्र
चोद्य	१७३	नपुं०	आश्चर्य
चौर:	१७०	पु०	चोर
	'छवर्णादि'		
छत्रम्	१९८	नपुं०	छत्र
छलम्	१३८	नपुं०	छल का नाम
छद्मन्	१३८	नपुं०	छल
छलम्	१९१	नपु	कपट
छिद्रम्	१९०	नपुं०	छिद्र
	'जवर्णादि'		
जगत्	११३	नपुं०	संसार
जघनम्	१०३	नपुं०	स्त्री की कमर का अगला भाग

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
जरठ	१५८	त्रि०	पुराना
जनकः	३८	पु०	पिता
जनपदः	९७	पु०	देश
जनि	३२	स्त्री०	विवाहित स्त्री
जहनु	१०३	नपुं०	जांघ/घुटना
जगती	६	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
जठरम्	१०२	नपुं०	पेट
जड़ः	१६८	पु०	मुर्ख
जननी	३८	स्त्री०	माता
जनान्तः	९७	पु०	देश
जनोदाहरणम्	१५३	नपुं०	कीर्ति
जलम्	१५	नपुं०	पानी
जलदम्	१०५	नपुं०	मेघ
जवनः	६३	पु०	वायु
जवः	१७७	पु०	शीघ्र के नाम
जातः	१६६	पु०	बछड़ा
जातवेदस्	६४	पु०	अग्नि
जाया	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री०
जाङ्गलम्	५५	नपुं०	मांस
जातरूपम्	९३	नपुं०	स्वर्ण (सुवर्ण)
जानु	१०३	नपुं०	जांघ या घुटना
जाह्नवी	७१	स्त्री	गङ्गा
जित्या	१४२	स्त्री०	हल का नाम
जिष्णुः	१४३	पु०	अर्जुन
जिनः	११३	पु०	वीतराग भगवान
जिह्वापः	९२	पु०	कुत्ता
जीमूतः	१८	पु०	मेघ
जीर्ण	१७४	त्रि०	दुर्बल
जीवा	८२	स्त्री०	धनुष की डोरी
जीर्ण	१५८	त्रि०	पुराना
जीवनम्	१५	नपुं०	जल
ज्यायज्	११४	पु०	आदिनाथ
ज्योतिष्	४६	नपुं०	तेज का नाम
ज्या	८२	स्त्री	धनुष की डोरी
ज्येष्ठः	४३	पु०	बड़े भाई (बड़ा भाई)
ज्वलनः	६५	पु०	अग्नि

'झवर्णादि'

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
झटिति	१७६	अव्यय	शीघ्र
झषकेतु	८४	पु०	कामदेव
झषः	१७	पु०	मछली
झषध्वजः	८४	पु०	कामदेव
झाङ्कृत	१०७	नपुं०	वायु का शब्द

'तवर्णादि तवर्णा'

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
तक्रम्	१२३	नपुं०	छांछ (मट्ठा)
तट	२६	त्रि०	तीर
तटोच्छ्वासः	२७	पु०	भँवर (भौंर)
तडिद्धन्वा	५६	पु०	देव
तनयः	४०	पु०	बालक
तनुत्रम्	१९४	नपुं०	कवच
तनूनपात्	६४	पु०	अग्नि
तपनीयम्	९४	नपुं०	स्वर्ण (सोना)
तमम्	१४९	नपुं०	अन्धकार
तमोरि	५०	पु०	सूर्य
तरंगः	२७	पु०	लहर (जल की)
तट	९	त्रि०	पर्वत का किनारा
तटी	९	स्त्री०	पर्वत का किनारा
तडित्	१८	स्त्री०	बिजली
तति	१४०	स्त्री०	समूह
तनु	३८	स्त्री०	शरीर
तनूदरी	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
तपनः	४९	पु०	सूर्य
तपस्विन्	३	पु०	मुनि
तमस्	१४८	नपुं०	अन्धकार
तरस्	१७९	नपुं०	शीघ्र

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
तरंगिणी	२४	स्त्री०	नदी का नाम
तरणिः	४९	पु०	सूर्य
तरस्विन्	१९३	पु०	प्रतापी पुरुष
तस्करः	१६९	पु०	चोर
तरवारि	८५	पु०	तलवार
तरुः	११	पु०	वृक्ष
तामरसम्	२०	नपुं०	कमल
तारुण्यम्	१२४	नपुं०	जवानी
तापसः	३	पु०	मुनि
तारा	४८	स्त्री०	नक्षत्र
तार्क्ष्यः	१२८	पु०	गरुड़
तिग्म	४९	त्रि०	घोर
तिमिः	१७	पु०	मछली
तिमिरम्	१८४	नपुं०	देर
तिग्म	१८४	पु०	सुर्य
तिमिरम्	१४९	नपुं०	अन्धकार
तिमिरारि	५०	पु०	सूर्य
तीरम्	२६	नपुं०	तीर
तीर्थंकरः	११६	पु०	जिनेन्द्र भगवान
तीर्थः	११५	पु०	पार
तीर्थकृत्	११६	पु०	जिनेन्द्र भगवान
तीव्र	१८४	त्रि०	घोर
तुक्	३९	पु०	बालक
तुरगः	५२	पु०	घोड़ा
तुरासाहः	६०	पु०	इन्द्र
तुलाकोटि	१०७	पु०	बिछुआ
तुषारः	....	पु०	बर्फ
तुङ्ग	१५८	त्रि०	ऊँचा
तुरंगमः	५२	पु०	घोड़ा
तुला	१३६	स्त्री०	उपमा
तुल्य	१३६	त्रि०	बराबर
तुहिनम्	१७९	नपुं०	बर्फ

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
तूर्णं	१७२	नपुं०	शीघ्रं
तेजस्विन्	१९३	पु०	प्रतापी पुरुष
तोमरः	७८	पु० नपुं०	बाण
तोषः	१०९	पु०	हर्ष
तेजस्	४५	नपुं०	किरण
तोकं	३९	नपुं०	पुत्र
तोयम्	१५	नपुं०	जल
त्रयम्बकः	६८	पु०	महादेव
त्रिककुत्	८	पु०	पर्वत
त्रिनेत्रः	६९	पु०	महादेव
त्रिपुरारि	६९	पु०	महादेव
त्रिदशः	५६	पु०	देव
त्रिपथगा	७१	स्त्री०	गङ्गा
त्रिभार्गगा	....	स्त्री०	गङ्गा
	दवर्णादि		
दंष्ट्रिन्	९१	पु०	सुअर
दक्षकन्या	६१	स्त्री०	दिशा
दण्डः	८६	पु०	सेना
दन्तः	९	पु०	निकुञ्ज
दन्तवासस्	१००	पु०	ओष्ठ
दन्तिन्	८८	पु०	हाथी
दया	११०	स्त्री०	दया
दयितः	३७	पु०	पति
दयिता	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
दर्शनीय	१७८	त्रि०	सुन्दर
दशमीस्थ	१०८	त्रि०	मरे हुआ प्राणी (मृत प्राणी)
दस्यु	१४	पु०	भील
दरीभृत्	८	पु०	पर्वत का नाम
दशनच्छदः	१००	पु०	ओष्ठ
दशा	१२४	स्त्री	अवस्था
दहनः	६५	पु०	अग्नि

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
दामोदरः	७४	पु०	कृष्ण
दारा	३२	स्त्री	विवाहिता स्त्री
दारुण	१८४	त्रि०	घोर
दारकः	४०	पु०	बालक
दारिका	३६	स्त्री०	वेश्या
दासी	३६	स्त्री०	वेश्या
दिक्-दिश्	६१	स्त्री	दिशा
दिगम्बरः	६१	पु०	दिगम्बर मुनि
दिनम्	५०	नपुं०	दिन का नाम
दिव्	५६	पु०	स्वर्ग
दिवा	५०	अव्यय	दिन
दिक्पाल	६१	पु०	दिग्पाल
दिग्गज	६१	पु०	दिग्गज
दिव्	५३	स्त्री०	आकाश
दिवसः	५०	पु०	दिन
दिव्यवाक्पति	११६	पु०	जिनेन्द्र भगवान
दीक्षितः	४	पु०	छात्र
दीधिति	४५	स्त्री०	किरण
दीनः	१७५	पु०	कंजूस
दीप्ति	४६	स्त्री०	तेज
दीर्घ	१८२	त्रि०	लम्बा-बड़ा
दुग्धम्	१२२	नपुं०	दूध
दुरितम्	१३१	नपुं०	पाप
दुर्गम्	१३	नपुं०	वन
दुर्जनः	४४	पु०	शत्रु
दुष्कृतम्	१३१	नपुं०	पाप
दुष्टः	४४	पु०	शत्रु
दुहितृ	४०	स्त्री०	पुत्री
दूती	३५	स्त्री०	दूति
दून	१७५	त्रि०	दुर्बल
दृढ़	१५५	त्रि०	कठोर
दृतिहरिः	१६३	पु०	सींग वाला पशु
दृप्त	१६८	त्रि०	अहंकारी
दृश्	९९	स्त्री०	नेत्र
दृषत्	१७०	स्त्री	पत्थर
दृष्ट	१०८	त्रि०	स्मृत (जानी हुई वस्तु)
दृष्टि	९९	स्त्री०	नेत्र
देवः	५६	पु०	देव
देवानांप्रियः	१६६	पु०	मूर्ख
देहः	३८	पु० नपुं०	शरीर
देहिका	१६३	स्त्री०	भैंस
दैत्यारि	१४४	पु०	अर्जुन
दोस्	१०१	पु० नपुं०	बाँह
दोषा	४८	स्त्री०	रात्रि का नाम
दोष्	१००	पु० नपुं०	भुजा (बाँह)
द्युति	४५	स्त्री०	किरण
द्युमणि	४९	पु०	सूर्य
द्युधुनी	७१	स्त्री०	गङ्गा
द्यूत	१२२	पु०	जुआ
द्यौ	५३	स्त्री०	आकाश
द्रव्यम्	९५	नपुं०	धन
द्रुतम्	१७२	नपुं०	शीघ्र
द्रुहिणः	७२	पु०	ब्रह्मा
द्वयम्	२	नपुं०	जोड़ा (युगल)
द्वन्द्वम्	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
द्विपः	८९	पु०	हाथी
द्विरेफः	२४	पु०	नदी
द्वितयम्	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
द्विरदः	८८	पु०	हाथी
द्विरेफ	८२	पु०	भोंरा (भ्रमर)
द्विषत्	४४	पु०	शत्र
द्विष्	४४	पु०	शत्रु
द्वेषः	१०९	पु०	क्रोध

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
द्वैत्	२	नपुं॰	युगल (जोड़ा)
द्यो	५३	स्त्री	स्वर्ग
द्रविणम्	९५	नपुं॰	धन
द्राक्	१५७	अव्यय	तत्काल
द्रुमः	११	पु॰	वृक्ष
द्वेषिन्	४४	पु॰	शत्रु
		'धवर्णादि'	
धनम्	९५	नपुं॰	धन
धनदः	९६	पु॰	कुबेर
धनुष्	७९	पु॰ नपुं॰	धनुष
धमनी	१००	स्त्री	गला
धरणी	६	स्त्री॰	जमीन
धरित्री	६	स्त्री॰	जमीन
धर्मचक्रभृत्	११६	पु॰	जिनेन्द्र भगवान
धवः	२८	पु॰	मनुष्य
धमः	१००	पु॰	गला
धनंजयः	१४४	पु॰	अर्जुन
धनदायः	९६	पु॰	कुबेर
धन्वन्	७९	नपुं॰	धनुष
धम्मिलः	१९५	पु॰	चोटी
धरा	५	स्त्री॰	जमीन
धर्मः	७९	पु॰ न॰	धनुष
धर्मात्सज	१४६	पु॰	काल (मौत)
धवल	१४७	त्रि॰	सफेद रंग
धातु	१७०	पु॰	पत्थर
धानुष्कः	१४	पु॰	भील
धामनम्	१३३	नपुं॰	आलय (मकान)
धात्री	५	स्त्री॰	जमीन
धामन्	४६	नपुं॰	तेज
धिष्ण्यम्	१३२	नपुं॰	आलय (मकान)
धिषणा	११०	स्त्री॰	बुद्धि
धी	११०	स्त्री॰	बुद्धि
धूर्त	१६५	पु॰	धूर्त
धुनी	२४	स्त्री॰	नदी
धूम	१४८	त्रि॰	काला रंग
धूर्यः	५२	पु॰	घोड़ा
धूर्जटि	६८	पु॰	महादेव
धूलि	१५१	स्त्री॰	धूल
धूलिकुट्टिम	१३४	नपुं॰	खाई
धैर्य्यम्	१७१	नपुं॰	धीरज
ध्वजिनी	८६	स्त्री॰	सेना
धेनु	१०५	स्त्री॰	गाय
ध्वजा	८४	त्रि॰	ध्वज (झंडा)
ध्वान्तारि	५०	पु॰	सूर्य
		'नवर्णादि'	
न	१५७	अव्यय	निषेध
नक्तम्	४८	अव्यय	रात्रि
नक्षत्रम्	४८	नपुं॰	नक्षत्र
नगः	११	पु॰	वृक्ष
नगरी	९७	स्त्री॰	नगरी का नाम
नदः	२४	पु॰	नदी
नदी	२४	स्त्री॰	नदी
नदीश्वरी	७१	स्त्री॰	गङ्गा
नदीष्ण	१६४	त्रि॰	चतुर
ननांदृ	४३	स्त्री॰	ननद (पति की बहिन)
नन्दनः	४०	पु॰	बालक
नभस्	५३	नपुं॰	आकाश
नमस्वत्	६३	पु॰	वायु
अनभ्राट्	१८	पु॰	मेघ
नमुचिशत्रु	५८	पु॰	इन्द्र
नयनम्	९९	नपुं॰	नेत्र
नरः	२८	पु॰	मनुष्य
नलिनम्	२०	नपुं॰	सामान्य कमल

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
नब	१५६	त्रि०	नई वस्तु
नव्य	१५६	त्रि०	नई वस्तु
नाक:	५६	पु०	स्वर्ग
नाग:	८९	पु०	हाथी
नाग:	१२८	पु०	सर्प (सांप)
नागरिक	१६५	पु०	धूर्त
नागारि	९०	पु०	सिंह
नाथ:	१०	पु०	राजा
नाथहरि	१६३	पु०	सींग वाले पशु
नाथान्वय:	११५	पु०	महावीर स्वामी
नाभिज:	११४	पु०	आदिनाथ
नामम्	१६५	नपुं०	नाम
नारद:	७३	पु०	नारद
नाराच:	७८	पु नपुं०	बाण
नारायण:	७४	पु०	कृष्ण
नारी	३०	स्त्री	सामान्य स्त्री
नासा	१०२	स्त्री०	नाक (नासिका)
निकटम्	१४१	नपुं०	पास
निकर:	१३९	पु०	समूह
निकाय:	१३३	पु०	मकान (आलय)
निकाय:	१४०	पु०	समूह
निकुरम्बम्	१४०	नपुं०	समूह
निकेतनम्	१३२	नपुं०	मकान (आलय)
निगूढपुरुष:	१८२	पु०	गुप्तचर
निचय:	१४०	पु०	समूह
निज:	१८५	पु०	स्वभाव
नितम्ब:	९	पु० नपुं०	पर्वत का मध्य भाग
नितम्ब:	१०३	पु०	कमर का पिछला भाग
नितम्बिनी	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
नितान्त	१७३	अव्यय	बहुत

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
नित्य	१६१	अव्यय	हमेशा
निदेश:	१५४	पु०	आज्ञा
निपुण	१६६	त्रि०	चतुर
निबोध	१५२	पु० नपुं०	कलङ्क
निभ	१३८	पु० नपुं०	छल
निम्नगा	२४	स्त्री	नदी
नियन्त्रित:	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु
निवेशनम्	१९२	नपुं०	विवाह
निशाचर:	१६९	पु०	चोर
निषाद:	१४	पु०	भील
निष्णात	१६६	त्रि०	चतुर
निस्तल	१८३	त्रि०	गोल
नियामित	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु
नियोग:	१५४	पु०	आज्ञा
निर्घातम्	१९	नपुं०	गाज
निर्व्यूह:	१३५	पु०	खूँटी
निलय:	१३३	पु०	आलय (मकान)
निवसनम्	११७	नपुं०	वस्त्र
निवृत्तम्	१३२	नपुं०	आलय (मकान)
निशा	४८	स्त्री०	रात्रि
निशान्त	१३२	नपुं०	आलय (मकान)
निषादिन्	८९	पु०	महावत
निसर्ग:	१८५	पु०	स्वभाव
निस्त्रिंश	८५	पु०	तलवार
नीच	१५८	त्रि०	नीचा
नीचैस्	१५८	अव्यय	नीचा
नील	१४८	त्रि०	काला रंग
नील पिङ्गली	१५०	स्त्री०	पञ्चवर्ण
नीलवसन:	१४२	पु०	बलभद्र
नीहार:	१७९	पु०	बर्फ
नीच	१६८	त्रि०	नीच
नीरम्	१५	नपुं०	जल

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
नीलकण्ठः	१२६	पु०	मयूर
नीललोहितः	६९	पु०	महादेव
नीलाम्बुजन्मन्	२२	नपुं०	नीलकमल
नूपुरम्	१०७	नपुं०	बिछुआ
नृपः	७	पु०	राजा
नृपकृतु	११२	पु०	राजयज्ञ
नेत्रम्	९९	नपुं०	नेत्र
नेडः	१६८	पु०	मूर्ख
नैकः	१९१	पु०	बहुत
नैयायिकः	१११	पु०	पण्डित
नूतन	१५६	त्रि०	नवीन (नई वस्तु)
नृ	२८	पु०	मनुष्य
नृपः	२८	पु०	राजा
न्यच्	१५८	त्रि०	नीचे। नीचा
	'पवर्णादि'		
पक्षिन्	५४	पु०	पक्षी
पङ्कः	२०	पु०	कीचड़
पङ्कः	१५२	नपुं० पु०	कलङ्क
पंक्ति	१४०	स्त्री०	समूह
पटु	१६४	त्रि०	चतुर
पट्टनम्	९७	नपुं०	नगरी
पण्डितः	१११	पु०	पण्डित
पण्यस्त्री	३६	स्त्री०	वेश्या
पतङ्गः	४९	पु०	सूर्य
पतङ्गः	५४	पु०	पक्षी
पतत्रिन्	५४	पु०	पक्षी
पताका	८४	स्त्री०	ध्वजा
पतिः	१०	पु०	राजा
पतिवत्नि	३४	स्त्री०	सदाचारिणी
पतिव्रता	३४	स्त्री०	सदाचारिणी
पत्तनम्	९७	नपुं०	नगरी
पत्ति	२९	पु०	नौकर
पत्नी	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री०
पत्रिन्	५४	पु०	पक्षी
पथिन्	१६१	पु०	मार्ग
पदम्	१०३	नपुं०	पैर
पदम्	१३३	नपुं०	मकान
पदम्	१३८	नपुं०	छल
पदगः	२९	पु०	नौकर
पदाति	२९	पु०	नौकर
पद्म	२०	न० पु०	सामान्य कमल
पद्मनाभः	७५	पु०	कृष्ण
पन्नगः	१२८	पु०	सर्प
पयस्	१५	नपुं०	जल (पानी)
पयस्	१२२	नपुं०	दूध
पयोधरः	१०२	पु०	स्तन
परागत्	१५१	नपुं०	पराग
परासु	१०८	त्रि०	मृत प्राणी (मरा हुआ)
परिखा	१३४	स्त्री०	खाई
परिचित	१०८	त्रि०	स्मृत वस्तु (जानी हुई)
परिणयनम्	१९२	नपुं०	विवाह
परिधि	१३४	स्त्री०	कोट (बाड़)
परिवादः	१८८	पु०	छल
परिवृढः	१०	पु०	राजा
परिषत्	२०	पु०	कीचड़
परुष	१५५	त्रि०	कठोर
पर्जन्यः	१८	पु०	मेघ
पर्वतः	८	पु०	पहाड़
पलम्	५५	नपुं०	मांस
पल्लकः	१६०	पु०	विरह (काम का विरह)
पवनः	६२	पु०	वायु

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
पवनपुत्रः	६३	पु०	हनुमान
पवमानः	६२	पु०	वायु
पवनसखः	६४	पु०	अग्नि
पशु	१६३	पु०	पशु
प्लवगः	१२	पु०	बन्दर
परिणयम्	१९२	पु०	विवाह
पारिपान्थिकः	१६९	पु०	चौर
पासु	१५१	पु०	धूलि
पाकशत्रु	५८	पु०	इन्द्र
पाटल	१४९	त्रि०	श्वेत मिश्रित लाल रंग
पाठीनः	१७	पु०	मछली
पाणि	१०१	पु०	हाथ
पारिपाथिकः	...	पु०	चोर
पाण्डु	१५०	त्रि०	सफेद रंग
पाण्डुर	१४९	त्रि०	सफेद रंग
पातालम्	१९०	नपुं०	नरक
पाथस्	१५	नपुं०	जल
पादः	४५	पु०	किरण
पादम्	१०३	पु० नपुं०	पैर
पादपः	११	पु०	वृक्ष
पापम्	१३१	नपुं०	पाप
पाप्मन्	१३१	पु०	पाप
पारम्	२६	नपुं०	तीर
पारावारः	२५	पु०	समुद्र
पारिषद्यः	११२	पु०	सभासदन
पार्श्वः	९	पु०नपुं०	पर्वत का पिछला भाग
पालाश	१४९	त्रि०	हरे का नाम/हरा
पाली	२७	स्त्री०	तीर
पावकः	६४	पु०	अग्नि
पाशितः	१७८	पु०	पाशबद्ध शत्रु
पाशनीतः	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु
पाषाणः	१७०	पु०	पत्थर
पितामहः	७२	पु०	ब्रह्मा
पितृ	३८	पु०	पिता
पिनद्धः	१७६	पु०	पाशवद्ध शत्रु
पिनाकिन्	६८	पु०	महादेव
पिशितम्	५५	नपुं०	मांस
पिशुन	१७०	त्रि०	नीच
पिशंगी	१५०	स्त्री०	रक्तवर्ण
पीठम्	११३	नपुं०	आसन
पीत	१४९	त्रि०	पीले
पुंश्चली	३५	स्त्री०	व्यभिचारिणी
पुटभेदनम्	९७	नपुं०	नगरी
पुण्यम्	१२९	नपुं०	पुण्य
पुण्डरीकम्	२१	नपुं०	सामान्य कमल
पुत्रः	३९	पु०	पुत्र का नाम
पुनर्भू	३५	पु० स्त्री०	व्यभिचारिणी
पुमस्	२८	पु०	मनुष्य
पुर्	९७	स्त्री०	नगरी
पुरम्	९७	नपुं०	नगरी
पुरन्दरः	५८	पु०	इन्द्र
पुरन्ध्री	३२	स्त्री०	सौभाग्यवती स्त्री
पुराण	१५६	त्रि०	पुराना
पुरी	९७	स्त्री०	नगरी
पुरु	११४	पु०	आदिनाथ
पुरुषः	२८	पु०	मनुष्य
पुरुषोत्तमः	७४	पु०	कृष्ण
पुरुहूतः	६०	पु०	इन्द्र
पुरोगति	९२	पु०	कुत्ता
पूर्णः	१२४	पु०	युवक
पुलिन्दः	१४	पु०	भील
पुलोमारि	६०	पु०	इन्द्र

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
पुष्करम्	२१	नपुं०	सामान्य कमल
पुष्करिन्	८९	पु०	हाथी
पुष्कलम्	१७३	नपुं०	बहुत
पुष्कलम्	१९४	नपुं०	बहुत
पुष्पम्	८०	नपुं०	फूल (पुष्प)
पुष्पहेति	८३	पु०	कामदेव
पूगः	१३९	पु०	समूह
पूषन्	४९	पु०	सूर्य
पृतना	८६	स्त्री०	सेना
पृथिवी	५	स्त्री०	जमीन
पृषतः	१२८	पु०	हरिण
पेशल	१५५	त्रि०	कोमल
पेशिन्	५५	स्त्री०	मांस
पोतः	४०	पु०	बालक
पोत्रिन्	९१	पु०	सुअर
पौरुषम्	१७१	नपुं०	धैर्य
प्रकरः	१४०	पु०	समूह
प्रकृतिः	१८८	स्त्री०	स्वभाव
प्रगल्भ	१६४	त्रि०	चतुर
प्रचरः	१६२	पु०	मार्ग
प्रचुरम्	१८४	नपुं०	बहुत
प्रजा	३९	स्त्री०	पुत्र
प्रजापतिः	७३	पु०	ब्रह्मा
प्रजापतिः	११५	पु०	आदिनाथ
प्रज्ञा	११०	स्त्री०	बुद्धि
प्रणयिनी	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
प्रणिधिः	१६९	पु०	चोर
प्रणिधिः	१८२	पु०	गुप्तचर
प्रतिरोधकः	१७०	पु०	चोर
प्रतीत	१०८	त्रि०	स्मृत वस्तु
प्रतोली	१३५	स्त्री०	गली
प्रत्यग्र	१५६	त्रि०	नई वस्तु

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
प्रभञ्जनः	६३	पु०	वायु
प्रभा	४५	स्त्री०	किरण
प्रभु	१०	पु०	राजा
प्रमथाधिपः	६८	पु०	महादेव
प्रमदः	१०९	पु०	हर्ष
प्रमदा	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
प्रमोदः	१०९	पु०	हर्ष
प्रवीण	१६४	त्रि०	चतुर-कुशल
प्रवीरः	१९३	पु०	शूरवीर
प्रवृत्ति	१५४	स्त्री०	नवीन बात
प्रशस्त	१७८	त्रि०	सुन्दर
प्रसन्ना	१२१	स्त्री०	मदिरा
प्रसवः	८०	पु०	पुष्प (फूल)
प्रसाधनम्	११९	नपुं०	लेपन (लेप)
प्रसूनम्	८०	नपुं०	फूल (पुष्प)
प्रस्तरः	१७०	पु०	पत्थर
प्रस्थ	९	पु० नपुं०	पर्वत की चोटी
प्रांशु	१८३	त्रि०	लम्बा। बड़ा
प्राकारः	१३४	पु०	कोट (बाड़)
प्राक्तन	१५८	त्रि०	पुराना
प्राचीन बर्हिष्	५७	पु०	इन्द्र
प्राज्यम्	१९४	नपुं०	बहुत
प्राज्ञः	१११	पु०	पण्डित
प्राभूतम्	१९१	नपुं०	बहुत
प्रायस्	१२३	नपुं०	अवस्था
प्रारभ्य	१०४	त्रि०	प्रेरित वस्तु
प्रालेयम्	१८०	नपुं०	बर्फ
प्रावृक्कि	१२६	पु०	मयूर
प्रासादः	१३५	पु०	बड़ा महल
प्रियः	३७	पु०	पति
प्रियः	१५४	पु०	पति (स्नेही)

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
प्रेष्ठा	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
प्रेष्य:	१५५	पु०	आज्ञा
प्रियाम्बिका	४३	स्त्री०	मामी
प्रीत:	३७	पु०	पति
प्रेमन्	१६०	पु०	राग
प्रेयस्	३७	पु०	पति
प्रेयसी	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
प्रेरित	१०४	स्त्री०	प्रेरित वचन
	'फवर्णादि'		
फणिन्	१२८	पु०	सर्प
फलिन्	११	पु०	वृक्ष
फलेग्राहिन्	११	पु०	वृक्ष
फल्गुम्	१५५	नपुं०	व्यर्थ
फाल्गुन	१४३	पु०	अर्जुन
फुल्लम्	८०	नपुं०	फूल
	'बवर्णादि'		
बद्ध:	१७५	पु०	पाशबद्ध शत्रु
बन्धु	४२	पु०	सगा भाई
बलम्	८६	नपुं०	सेना
बल:	१४२	पु०	बलभद्र
बलिसूदन:	७५	पु०	कृष्ण
बहुम्	१९४	नपुं०	बहुत
बहुल	१८५	त्रि०	बहुत/अधिक
बहुल	१९७	त्रि०	बहुत
बन्धकी	३५	स्त्री०	व्यभिचारिणी
बन्धुर	१७८	त्रि०	सुन्दर
बलशत्रु:	५८	पु०	इन्द्र
बलाहक:	१८	पु०	मेघ
वाण:	७८	पु०	बाण
बाणबारगम्	१९८	नपुं०	बखतर/कवच
बाणी	१०४	स्त्री०	वाणी
बाहु	१०१	स्त्री०	बांह
बाणसूदन:	७५	पु०	कृष्ण
बाल:	१९५	पु०	बाल
बाहुशिरस्	१०१	नपुं०	कन्धा
विसनी	२३	स्त्री०	कमलिनी
ब्रघ्न:	४९	पु०	सूर्य
ब्रीहि	१६७	पु०	धान
बेहिष्ठम्	१९४	नपुं०	बहुत
बुध:	११२	पु०	सभासद
ब्रह्मन्	११५	पु०	आदिनाथ
	'भवर्णादि'		
भ	४८	नपुं०	नक्षत्र
भंग	२७	पु०	जल की लहर
भट:	२९	पु०	नौकर
भट:	१०६	पु०	मल्ल
भद्रम्	१९८	नपुं०	कल्याण
भर्तृ	१०	पु०	राजा
भर्तृस्वसा	४३	स्त्री०	पति की बहिन
भर्मन्	९३	नपुं०	सुवर्ण-स्वर्ण
भरतान्वय	१४७	पु०	युधिष्ठिर
भव:	७०	पु०	महादेव
भव:	१९२	पु०	संसार
भवनम्	१३२	नपुं०	मकान/आलय
भविकम्	२००	नपुं०	कल्याण
भागधेयम्	१३०	नपुं०	पुण्य
भागीरथी	७१	स्त्री०	गङ्गा
भानु:	४५	पु०	किरण
भानु:	४९	पु०	सूर्य
भारती	१०४	स्त्री०	वाणी
भाव:	१९५	पु०	संसार
भास्	४५	स्त्री०	किरण
भास्कर:	४६	पु०	सूर्य
भाग्यम्	१३१	नपुं०	पुण्य

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
भामा	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
भामिनी	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
भार्या	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री
भावुकम्	१९८	नपुं०	कल्याण
भासुरः	१९६	पु०	शूरवीर
भास्वर	....	पु०	शूरवीर
भिक्षु	३	पु०	मुनि
भीरु	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
भुजंगमः	१२८	पु०	सर्प
भुज	१०१	स्त्री०	बाँह
भुवनम्	११३	नपुं०	संसार
भू	५	स्त्री०	पृथ्वी जमीन
भूमिधर	७६	पु०	कृष्ण
भूरि	१९१	नपुं०	बहुत
भृंग	८२	पु०	भ्रमर
भृत्यः	२९	पु०	नौकर
भो	१५७	अव्यय	आमंत्रण
भ्रातृजानी	४३	स्त्री०	बहिन
भूमि	५	स्त्री०	पृथ्वी जमीन
भूर्यिष्ठम्	१९१	नपुं०	बहुत
भूषणम्	११९	नपुं०	गहना। जेवर
भृतकः	२९	पु०	नौकर
भृशम्	१७३	अव्यय	बहुत
भ्रमरः	८२	पु०	भौंरा
भ्रातृव्य	४४	पु०	शत्रु
	'मवर्णादि'		
मकरध्वजः	७७	पु०	कामदेव
मकरन्दः	१५२	पु०	पराग
मंक्षु	१७६	नपुं०	शीघ्र
मंगलम्	१९८	नपुं०	कल्याण
मघवत्	६०	पु०	इन्द्र
मंजीरकम्	१०७	नपुं०	बिछुआ
मण्डलः	९२	पु०	कुत्ता
मण्डलाग्रः	८५	पु०	तलवार
मणितम्	१०६	नपुं०	मिथुन का शब्द
मतंगजः	८८	पु०	हाथी
मतालम्बम्	१३५	नपुं०	झरोखा
मथितम्	१२३	नपुं०	छांछ
मदनः	७७	पु०	कामदेव
मदिरा	१२१	स्त्री०	शराब
मद्यपः	१२२	पु०	शराब पीने वाला
मधुम्	१५१	नपुं०	पराग
मधुवारा	१२१	स्त्री०	शराब
मधुव्रतः	८२	पु०	भ्रमर
मधुसूदनः	७५	पु०	कृष्ण
मध्यम पाण्डवः	१४३	पु०	अर्जुन
मनस्	८१	नपुं०	मन
मनस्विन्	१९३	पु०	प्रतापी पुरुष
मनस्विनी	३४	स्त्री०	सदाचारिणी स्त्री
मनीषा	११०	स्त्री०	बुद्धि
मनुजः	२८	पु०	मनुष्य
मनुष्यः	२८	पु०	मनुष्य
मनोज्ञ	१७८	त्रि०	सुन्दर
मनोहर	१७७	त्रि०	सुन्दर
मत्तवारणम्	१३५	नपुं०	छपरी (टण्डा)
मंदः	१६६	पु०	मूर्ख
मन्दाकिनी	७१	स्त्री०	नदी
मन्दिरम्	१३२	नपुं०	मकान (घर)
मन्मथः	७७	पु०	कामदेव
मन्यु	१०९	पु०	क्रोध
मंत्रपूतात्मन्	१२९	पु०	गरुड़
मयः	९१	पु०	ऊँट
मयूखवत्	५२	पु०	सूर्य
मयूरः	१२६	पु०	मोर

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
मरालः	१२५	पु०	हंस
मरीचि	४५	पु० स्त्री०	किरण
मरुत्पति	५९	पु०	इन्द्र
मरुत्	८	पु०	पर्वत
मरुत्	६२	पु०	वायु
मरुत्वात्	५९	पु०	इन्द्र
मरुत्पुत्र	६३	पु०	हनुमान
मरुत्सखः	६०	पु०	इन्द्र
मरुत्सखः	६४	पु०	अग्नि
मर्कटः	१२	पु०	बंदर
मर्त्यः	२८	पु०	मनुष्य
मर्मः	१८८	पु०	लड़ाई
मलिनम्	१५२	नपुं०	कीचड़
मल्लिका	११३	स्त्री०	आसन
मलीमास	१५२	पु० नपुं०	कीचड़
महति	११५	पु०	महावीर स्वामी
महस्	४६	नपुं०	तेज
महावीरः	११५	पु०	महावीर स्वामी
मत्स्यः	१६	पु०	मछली
महाहवः	८७	पु०	युद्ध
महिला	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री
महिषी	१६३	स्त्री०	भैंस
मही	५	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
महेश्वरः	६८	पु०	महादेव
मर्म कोश	१९१	पु०	लड़ाई
महोत्पलम्	२१	नपुं०	सामान्य कमल
मांसम्	५५	नपुं०	मांस
मा	१५९	अव्यय	निषेध
मातंगः	८९	पु०	हाथी
मातरिश्वन्	६३	पु०	वायु
मातुलानी	४३	स्त्री०	मामी
मातृ	३८	स्त्री०	माता
मानवः	२८	पु०	मनुष्य
मानिन्	१६९	त्रि०	अहंकारी
मानिनी	३२	स्त्री०	विवाहिता स्त्री
मानुषः	२८	पु०	मनुष्य
मारः	८१	पु०	कामदेव
मार्गः	१६२	पु०	मार्ग (रास्ता)
मार्गणः	७८	पु०	बाण
मार्तण्डः	४९	पु०	सूर्य
माला	११९	स्त्री०	माला
माल्यम्	११९	नपुं०	माला
मितंगमः	८८	पु०	हाथी
मित्रम्	४१	नपुं०	मित्र (सखा)
मित्रयुक्	४१	पु०	मित्र (सखा)
मिहिरः	१८	पु०	मेघ
मीनः	१७	पु०	मछली
मीनाकरः	२५	पु०	समुद्र
मुखम्	९८	नपुं०	मुख
मुग्धः	१६६	पु०	मूर्ख
मुग्धा	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
मुक्ता	३५	स्त्री०	व्यभिचारिणी स्त्री
मुत्	१०९	स्त्री०	हर्ष
मुधा	१८६	अव्यय	व्यर्थ
मुनि	३	पु०	मुनि
मुरसूदन	७५	पु०	कृष्ण
मुहुर्मुहुः	१८५	अव्यय	बारम्बार
मूकः	१६६	पु०	मूर्ख
मूर्खः	१६६	पु०	मूर्ख
मूढ़ः	१६६	पु०	मूर्ख
मूर्ति	३९	स्त्री०	शरीर
मूर्द्धन्	१०४	पु०	शिर
मृगः	१२७	पु०	हरिण
मृगनाभिजा	११८	स्त्री०	कस्तूरी

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
मृगांकः	१७९	पु०	चन्द्रमा
मृगेन्द्रः	९०	पु०	सिंह
मृत	१०८	त्रि०	मरा हुआ प्राणी
मृत्युः	१४५	पु०	काल (मौत)
मृदु	१५५	त्रि०	कोमल
मृषा	१८६	अव्यय	व्यर्थ
मेखला	९	स्त्री०	पर्वत का मध्य भाग
मेखला	११९	स्त्री०	करधौनी
मेघः	१८	पु०	बादल (मेघ)
मेघपथः	५३	पु०	आकाश
मेदिनी	५	स्त्री०	पृथ्वी (जमीन)
मेधाविन्	१११	पु०	पण्डित (बुद्धिमान)
मैत्री	१८७	स्त्री०	मित्रता
मैरेय	१२१	नपुं०	शराब (मदिरा)
मौण्ड्य	४	पु०	छात्र
मौर्वी	८२	स्त्री०	धनुष की डोरी
मैत्रेयिक	१८७	नपुं०	मित्रता (सखा)
मोघ	१८६	नपुं०	व्यर्थ
मौक्तिक	९४	नपुं०	मोती का नाम
		'यवर्णादि'	
यज्ञारि	६९	पु०	महादेव
यमजनकः	५१	पु०	सूर्य
यमुनाजनकः	५१	पु०	सूर्य
यशस्	१५३	नपुं०	कीर्ति
यति	३	पु०	मुनि
यमम्	२	नपुं०	युगल
यमः	१४६	पु०	काल (मौत)
यमलम्	२	नपुं०	जोड़ा
यातुधानः	५५	पु०	राक्षस
याथम्	१८६	नपुं०	देर
यादस्	१७	नपुं०	मछली
युगम्	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
युग्मम्	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
युवति	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
युक्त	१८२	त्रि०	सहित
युगलम्	२	नपुं०	युगल (जोड़ा)
युत	१६१	त्रि०	सहित
युधिष्ठिरः	१४७	पु०	युधिष्ठिर
योग्या	१८८	स्त्री०	अभ्यास
योषित्	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
यौवनिकः	१२..	पु०	युवा पुरुष
योगिन्	३	पु०	मुनि
योषा	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
यौवनम्	१२४	नपुं०	जवानी
		'रवर्णादि'	
रंहस्	१७७	नपुं०	शीघ्र
रक्तम्	११८	नपुं०	केशर
रक्त	१४९	त्रि०	लाल रंग
रक्तम्	१९१	नपुं०	खून (लहू)
रक्षस्	५५	नपुं०	राक्षस
रजतम्	९४	नपुं०	चाँदी
रजनी	४८	स्त्री०	रात्री
रजस्	१५२	नपुं०	धूलि
रण	८७	पु० नपुं०	युद्ध
रत्नाकरः	२५	पु०	समुद्र
रथ्यः	५२	पु०	घोड़ा
रन्ध्रः	१९०	पु०	छिद्र
रमणः	३७	पु०	पति का नाम
रमणीय	१७७	त्रि०	सुन्दर
रय	१७६	पु०	शीघ्र
रश्मि	४६	स्त्री०	किरण

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
रस्य	१९३	नपुं०	नरक
रहस्य	१७५	त्रि०	एकांत (गुप्त का नाम)
रमणी	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री०
रम्य	१७७	त्रि०	सुन्दर
रविः	४९	पु०	सूर्य
रसना	११९	स्त्री०	करधौनी
रहस्	१७५	अ० नपुं०	एकान्त (गुप्त)
राग	१६०	पु०	राग
राजलक्ष्मन्	....	पु०	युधिष्ठिर
राजसूयः	११२	पु०	राज यज्ञ
रात्रिजागरः	९२	पु०	कुत्ता
राष्ट्रम्	९७	नपुं०	देश का नाम
राजन्	१०	पु०	राजा
राजराजः	९६	पु०	कुबेर
रामा	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री०
रिपु	४४	पु०	शत्रु
रुचि	४५	स्त्री०	किरण
रुद्रः	६९	पु०	महादेव
रुधिरम्	१९१	नपुं०	लहू (खून)
रुपाजीवा	३६	स्त्री०	वेश्या
रे	१५७	अव्यय	आमंत्रण
रेवतीदयित	१४२	पु०	बलभद्र
रोधस्	२६	नपुं०	तीर का नाम
रोहिणीपति	१८०	पु०	चंद्रमा
रुचिर	१७८	त्रि०	सुन्दर
रुच्यम्	११९	नपुं०	गहना
रुधिरम्	११८	नपुं०	केशर
रुष्	१०९	स्त्री०	क्रोध
रूप्यम्	९४	नपुं०	चाँदी
रेणु	१५१	पु०	धूलि
रै	९५	पु०	धन

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
रोपणः	७८	पु०	बाण
रोहिताश्वः	६५	पु०	अग्नि

'लवर्णादि'

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
लक्ष्मन्	१५३	नपुं०	कलङ्क
लक्ष्मी	७६	स्त्री०	कृष्ण की पत्नि
लक्ष्मीपतिः	७६	पु०	कृष्ण
लघुम्	१७६	नपुं०	शीघ्र
लंजिका	३६	स्त्री०	वेश्या
लता	२३	स्त्री०	लता का नाम
लतान्तम्	८०	नपुं०	फूल (पुष्प)
लपनम्	९८	नपुं०	मुख
लब्ध	१०८	त्रि०	जानी हुई (स्मृत वस्तु)
ललना	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री का नाम
लवः	१९०	पु०	टुकड़ा
लांगलम्	१४२	नपुं०	हल
लाञ्छनम्	१५२	नपुं०	कलङ्क
लुब्धः	१७५	पु०	कंजूस
लुब्धकः	१४	पु०	भील
लेलिहान	१२८	पु०	सर्प
लेशः	१८७	पु०	टुकड़ा
लोकः	११३	पु०	संसार
लोहः	१७०	पु० नपुं०	लोहा का नाम
लोहित	१४९	त्रि०	लाल रंग
	१८८	नपुं०	रक्त (खून)
लोहिनी	१५०	स्त्री०	रक्त वर्ण

'ववर्णादि'

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
वक्ता	१९९	पु०	बोलने वाला
वक्त्रम्	९८	नपुं०	मुख
वक्षस्	१०२	नपुं०	छाती/सीना
वक्षोज	१०२	पु०	स्तन

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
वचनम्	१०४	नपुं०	वाणी
वचस्	१०४	नपुं०	वाणी
वज्र	१९	पु० न०	गाज
वत्सः	१६७	पु०	बछड़ा
वदनम्	९८	नपुं०	मुख
वधू	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
वनम्	१३	नपुं०	जङ्गल
वनम्	१५	नपुं०	जल
वनस्पति	११	पु०	वृक्ष (पेड़)
वनिता	३०	स्त्री०	स्त्री
वनेचरः	१३	पु०	भील
वह्निः	६४	पु०	अग्नि
वपुस्	३८	नपुं०	शरीर
वप्रम्	१३४	नपुं०	खाई
वयस्	५४	नपुं०	पक्षी
वयस्	१२४	नपुं०	अवस्था
वयस्या	४१	स्त्री०	सखी
वरः	३७	पु०	पति
वरः	१८९	पु०	कन्या का पति
वरटा	११७	स्त्री०	हंसिनी
वराहः	९१	पु०	सुअर
वरुथिनी	८६	स्त्री०	सेना
वर्गः	१२५	पु०	कुल
वर्णम्	१५३	नपुं०	कीर्ति
वर्णिन्	३	पु०	मुनि
वर्तुल	१८३	त्रि०	गोल
वर्त्मन्	१६२	नपुं०	मार्ग
वर्षीयस्	११४	पु०	आदिनाथ
वर्हिण	१२६	पु०	मयूर
वलक्ष	१	त्रि०	सफेद रंग
बलिमुखः	१२	पु०	बन्दर
वल्लभः	३७	पु०	पति
वल्लभा	३३	स्त्री०	प्यारी स्त्री
वल्लरी	२३	स्त्री०	लता
वल्ली	२३	स्त्री०	लता
वसति	१३३	पु०	आलय/मकान
वसुम्	९५	नपुं०	धन
वसुधा	६	स्त्री०	जमीन/पृथ्वी
वसुन्धरा	६	स्त्री	जमीन/पृथ्वी
वसुमती	५	स्त्री	पृथ्वी जमीन
वस्तु	९५	नपुं०	धन
वस्त्यम्	१३३	नपुं०	आलय/मकान
वाग्मिन्	१११	पु०	पण्डित/बुद्धिमान
वाच्	१०४	स्त्री०	वाणी
वाचस्पतिः	१९९	पु०	विद्वान
वाजिन्	५२	पु०	घोड़ा
वातः	६२	पु०	वायु/हवा
वातायनम्	१३५	नपुं०	झरोखा
वानरः	१२	पु०	बन्दर
बाणः	७८	पु०	बाण
वाणवारणम्	१९४	नपुं०	कवच
वाणसूदनः	७५	पु०	कृष्ण
वाणी	१०४	स्त्री०	वाणी/वचन
वामलोचना	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री
वायु	६२	पु०	हवा
वायुपथः	५३	पु०	आकाश
वायुपुत्रः	१४५	पु०	भीम
वार्	१५	नपुं०	जल
वार्ता	१५..	स्त्री०	नबीन वात
वारणः	८८	पु०	हाथी
वारली	१२७	स्त्री०	हंसिनी
वारि	१५	नपुं०	पानी। जल
वारिधि	२३	स्त्री०	जलाशय
वारिराशि	२६	पु०	समुद्र

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
वारुणी	१२१	स्त्री०	शराब
वार्द्धीन	१२४	पु०	बुड्ढा/वृद्ध
वासरः	५०	पु०	दिन
वासवः	५९	पु०	इन्द्र
वासस्	११७	नपुं०	वस्त्र
वासुदेवः	७६	पु०	कृष्ण
वाहः	५२	पु०	घोड़ा
वाहिनी	८६	स्त्री०	सेना
वि	५४	पु०	पक्षी
विकलम्	१८७	नपुं०	टुकड़ा
विक्रमः	१७४	पु०	उत्साह
विचक्षणः	१११	पु०	पण्डित
विटः	३७	पु०	पति
विटपिन्	११	पु०	वृक्ष (पेड़)
विडौजस्	५९	पु०	इन्द्र
वितथम्	१८६	नपुं०	व्यर्थ
वित्तम्	९५	नपुं०	धन
विदग्ध	१६६	त्रि०	चतुर
विद्यमानः	१३७	पु०	उपमान
विद्युत्	१९	स्त्री०	बिजली
विद्वस्	१११	पु०	पण्डित/बुद्धिमान
विधातृ	७२	पु०	ब्रह्मा
विधि	७२	पु०	ब्रह्मा
विधिपुत्रः	७३	पु०	नारद
विधु	४७	पु०	चन्द्रमा
विधुरम्	१८६	नपुं०	कष्ट
विनतात्मजः	१२७	पु०	गरुड़
विन्मान्यः	१३७	पु०	उपमान
विपिनम्	१३	नपुं०	जङ्गल/जंगल
विफलम्	१८६	नपुं०	व्यर्थ
विभावसु	४६	पु०	तेज
विभावसु	६५	पु०	अग्नि
विभु	१०	पु०	राजा
विभ्रमः	२७	पु०	भँवर/भौंर
विभ्रमः	९९	पु०	नेत्र विकार/व्यसन
वियत्	५३	नपुं०	आकाश
वियोगः	१६०	पु०	विरह
विरिञ्चन्	७२	पु०	ब्रह्मन
विरहः	१६०	पु०	विरह/वियोग
विरुपाक्षः	७०	पु०	महादेव
विरोचनः	५०	पु०	सूर्य
विलम्बितम्	१८४	नपुं०	देर
विलेपनम्	११९	नपुं०	लेप
विलोचनम्	९९	नपुं०	नेत्र
विवरम्	१९०	नपुं०	छिद्र
विवाहः	१९२	पु०	विवाह
विशदः	१४९	पु०	श्वेत/सफेद
विशदः	१७३	नपुं०	स्पष्ट
विशाखः	६७	पु०	कार्तिकेय
विशारदः	१६६	त्रि०	चतुर
विशारिन्	१७	पु०	मछली
विशाल	१८३	त्रि०	लम्बा/बड़ा
विशालाक्षः	६९	पु०	महादेव
विशिखम्	८१	नपुं०	मन
विश्व	१९०	त्रि०	सम्पूर्ण
विश्वरूपः	७०	पु०	महादेव
विश्वसः	१८५	पु०	स्वभाव
विश्वभरा	५	स्त्री०	जमीन/पृथ्वी
विषम्	१५	नपुं०	जल
विषक्षयः	१२८	पु०	गरुड़
विषधरः	१२७	पु०	सर्प
विषयः	९७	पु०	देश
विष्किरः	५४	पु०	पक्षी
विष्टपम्	११३	नपुं०	संसार/लोक

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
विष्टरः	११३	पु०	आसन
विष्णु	७४	पु०	कृष्ण
विस्मयः	१७३	पु०	आश्चर्य
विहायस्	५३	पु० नपुं०	आकाश
वीचि	२७	पु० स्त्री०	जल की लहर
वीतरागः	११४	पु०	जिनेन्द्र भगवान
वीरः	११६	पु०	महावीर
वृकः	१२७	पु०	भेड़िया
वृकोदरः	१४५	पु०	भीम/ द्वितीय पाण्डव
वृक्षः	७	पु०	पेड़
वृजिनम्	१३१	नपुं०	पाप
वृत्त	१८..	त्रि०	गोल
विस्रसा	१८८	अव्यय	स्वभाव
वृतान्तम्	१३८	नपुं०	वार्ता
वृत्रहन्	५८	पु०	इन्द्र
वृथा	१८६	अव्यय	व्यर्थ का नाम
वृषन्	५९	पु०	इन्द्र
वृषभः	११४	पु०	आदिनाथ
वृषभध्वजः	६९	पु०	महादेव
वृषभेश्वरः	११७	पु०	दिगम्बर मुनि
वृषसेनः	१४४	पु०	अर्जुन
वृषाकपिः	६६	पु०	अग्नि
वृंहितम्	१०५	नपुं०	हाथी की बोली
वेगः	१७२	पु०	शीघ्र
वेधस्	७२	पु०	ब्रह्मा
वेला	२७	स्त्री०	तीर
वेश्मन्	१३२	नपुं०	मकान/घर
वेश्या	३६	स्त्री०	वेश्या
वैजयन्ती	८४	स्त्री०	ध्वजा
वैनतेयः	१२९	पु०	गरुड़
वैरिन्	४४	पु०	शत्रु
वैशारिण	१७	पु०	मछली
वैश्रवणः	९६	पु०	कुबेर
वैश्वानरः	६५	पु०	अग्नि
वंशः	१२४	पु०	कुल
व्यतिकर	१३८	पु० नपुं०	छल
व्यपदेश	१३८	पु० नपुं०	छल
व्यसनम्	१८६	नपुं०	कष्ट
व्याघ्रः	९०	पु०	तेंदुया
व्याजः	१३७	पु० नपुं०	छल
व्याधः	१४	पु०	भील
व्यूहः	...	पु०	समूह
व्रजः	१३९	पु०	समूह
व्रजः	१४०	पु०	समूह
व्रजः	१६२	पु०	गायों का घेरा
व्रतती	२३	स्त्री०	लता
व्रतिन्	३	पु०	मुनि
व्रातः	१३९	पु०	समूह
व्योमन्	५३	नपुं०	आकाश

'शवर्णादि क्रमशः'

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
शकलम्	१८७	नपुं०	टुकड़ा
शकुनि	५४	पु०	पक्षी
शकुनीश्वरः	१२९	पु०	गरुड़
शकुन्ति	५४	पु०	पक्षी
शकृत्करि	१६७	पु०	बछड़ा
शक्तिमत्	६७	पु०	कार्तिकेय
शक्रः	५७	पु०	इन्द्र
शक्रः	१९९	पु०	इन्द्र
शक्रनंदनः	१४४	पु०	अर्जुन
शंकरः	६८	पु०	महादेव
शंपा	१८	स्त्री०	बिजली
शंभु	६८	पु०	महादेव
शंभुविघ्नकरः	८४	पु०	कामदेव

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
शठः	१६५	पु०	धूर्त
शतकृतु	५७	पु०	इन्द्र
शतपत्रम्	२१	नपुं०	सामान्य कमल
शतमन्यु	६०	पु०	इन्द्र
शत्रु	४४	पु०	शत्रु
सफर	१७	पु०	मछली
शबरी	१५१	स्त्री०	पंचवर्ण
शब्दभेदिन्	१४४	पु०	अर्जुन
सरम्	१५	नपुं०	पानी/जल
शरः	७८	पु०	बाण
शरणम्	१३३	नपुं०	मकान/घर
शरभः	९०	पु०	अष्टापद
शरवणोद्भवः	६७	पु०	कार्तिकेय
शरीरम्	३९	नपुं०	शरीर
शर्वः	६७	पु०	महादेव
शर्वरी	१२६	स्त्री०	रात्री
शर्वरीकरः	१२७	पु०	चंद्रमा
शल्कम्	१९०	नपुं०	टुकड़ा
शवरः	१४	पु०	भील
शशिन्	४७	पु०	चंद्रमा
शशिप्रभ	१४७	त्रि०	सफेद रंग
शाश्वत्	१५९	अव्यय	हमेशा
शस्त्रम्	८३	नपुं०	हथियार
शस्त्रजीविन्	२९	पु०	नौकर
शाखिन्	११	पु०	वृक्ष
शातकुम्भः	१७२	पु०	स्वर्ण/सुवर्ण
शान्त	१७१	त्रि०	दुर्बल/पुराना
शारंगी	१५०	स्त्री०	पञ्चवर्ण
शार्ङ्गिन्	७४	पु०	कृष्ण/नारायण
शार्दूलः	९०	पु०	तेंदूए
शालि	१६७	पु०	धान
शासनम्	१५४	नपुं०	आज्ञा
शास्त्रम्	४	नपुं०	शास्त्र
शिखरिन्	८	नपुं०	पर्वत
शिखिन्	६४	पु०	अग्नि
शिखिन्	१२६	पु०	महादेव
शिपिविष्टः	७०	पु०	महादेव
शिरस्	१०४	नपुं०	शिर
शिरोधरः	१००	पु०	गला
शिरोरुहः	१९५	पु०	बाल
शिला	१७१	स्त्री०	पत्थर
शिलीमुखः	७८	पु०	बाण
शिलीमुख	८२	पु०	भ्रमर
शिलोच्चयः	८	पु०	पर्वत/पहाड़
शिलोद्भवम्	९४	नपुं०	सुवर्ण/स्वर्ण
शिवः	६८	पु०	महादेव
शिवम्	२(९०)	नपुं०	कल्याण
शिष्यः	४	पु०	छात्र
शीघ्रम्	१७८	नपुं०	शीघ्र/जल्दी
शीर्ण	१७१	त्रि०	दुर्बल/पुराना
शीलम्	१८५	नपुं०	स्वभाव
शुक्तिजम्	९४	नपुं०	मोती
शुक्लम्	१४७	त्रि०	सफेद रंग
शुचि	१४७	त्रि०	सफेद रंग
शुंडा-शुंड	१२२	स्त्री०	शराब/मद्य
शुंडालः	८९	पु०	हाथी
शुनासीरः	५७	पु०	इन्द्र
शुभ्र	१५७	त्रि०	सफेद रंग
शुषिरम्	१९३	नपुं०	छिद्र
शूकरः	९१	पु०	सुअर
शूरः	१९६	पु०	शूरवीर
शूलिन्	७०	पु०	महादेव
शृंखलिकः	९१	पु०	ऊँट
शृंखलितः	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
श्रृंगिन्	८	पु॰	पर्वत
श्रृंगिन्	१६३	पु॰	सींगवाला पशु
शेमुषी	११०	स्त्री॰	बुद्धि
शैलः	७	पु॰	पर्वत
शैलः	७६	पु॰	पर्वत
शैलधरः	७६	पु॰	कृष्ण
शोणितम्	१८८	नपुं॰	खून (लहू)
शोणी	१५०	स्त्री॰	रक्त वर्ण
शौंड	१२२	पु॰	शराब पीने वाला
शौंडीर	१६८	त्रि॰	अहंकारी/घमण्डी
शौरि	७५	पु॰	कृष्ण
शौर्यम्	१७१	नपुं॰	धैर्य/धीरज
श्यामा	४८	स्त्री॰	रात्रि
श्वेत	१४८	त्रि॰	सफेद रंग
श्येनी	१५१	स्त्री॰	रक्त वग्र
श्रवस्	९८	नपुं॰	कान
श्रवणम्	९८	नपुं॰	कान
श्री	७६	स्त्री॰	लक्ष्मी (कृष्ण की स्त्री)
श्रीदः	९६	पु॰	कुबेर
श्रुति	९८	स्त्री॰	कान
श्रेयस्	२००	नपुं॰	कल्याण
शिखिवाहनः	६६	पु॰	कार्तिकेय
शिखण्डिन्	१२६	पु॰	मयूर
श्रोणी	१०३	स्त्री॰	कमर
श्रोणि		स्त्री॰	कमर
श्रोणीबिंब	१२०		कमर में शोभित
श्रोतस्	१२९	नपुं॰	इन्द्रिय
श्रोता	१९९		सुनने वाला
श्रोत्र	९८	नपुं॰	कर्ण
श्लक्षण	१७८	त्रि॰	सुन्दर
श्वन्	९२	पु॰	कुत्ता

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
श्वभ्रम्	१९०	नपुं॰	नरक
श्वसन	६२	पु॰	वायु
श्वेत	१५०	त्रि॰	सफेद
श्वेतवाजिन्	१४३	पु॰	अर्जुन
श्वोवसीय	१९८	नपुं॰	कल्याण
	'षवर्णादि'		
षट्पदः	८२	पु॰	भ्रमर/भौंरा
षड्दशनः	१६७	पु॰	६ दाँत वाला बछड़ा
षडक्षीणः	१७	पु॰	मछली
षण्मुखः	६७	पु॰	कार्तिकेय
षाष्टिकः	१६७	पु॰	धान
षोडन	१६७	पु॰	६ दाँत वाला बछड़ा
	'सवर्णादि'		
संयत्	८७	स्त्री॰	युद्ध
संयमिन्	३	पु॰	मुनि
संयुगः	८७	पु॰	युद्ध
संशितः	३	पु॰	मुनि
संसरणम्	१९२	नपुं॰	संसार
संसारः	१९२	पु॰	संसार
संसृति	१९२	स्त्री॰	संसार
संस्कृत	१६३	त्रि॰	सहित
संस्तुत	१०८	त्रि॰	स्मृत (जानी हुई वस्तु)
संस्थित	१०८	त्रि॰	मृत प्राणी
संहननम्	३८	नपुं॰	शरीर
संहित	१६२	त्रि॰	सहित
सकल	१९०	त्रि॰	सम्पूर्ण
सखी	४१	स्त्री॰	सखी
सख्यम्	१९७	नपुं॰	मित्र
सगोत्रः	४२	पु॰	सगा भाई
संक्रन्दनः	६०	पु॰	इन्द्र
संगतम्	१९७	नपुं॰	मित्रता

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
संघः	१४०	पु०	समूह
संघातः	१४०	पु०	समूह
सजाति	१३६	त्रि०	समान (बराबर)
सजुष्	१५९	स्त्री०	साथ
संचरः	१६२	पु०	मार्ग
संज्ञा	१६..	स्त्री०	नाम
सततम्	१९२	अव्यय	हमेशा
सती	३४	स्त्री०	सदाचारिणी स्त्री
सत्कृतम्	१२९	नपुं०	पुण्य
सत्ता	१६०	अव्यय	साथ
सदनम्	१३२	नपुं०	मकान
सभोचितः	११२	पु०	सभासद
सदा	१६१	अव्यय	हमेशा
सदागति	६२	पु०	वायु
सदुचितः	११२	पु०	सभासद
सदृक्षम्	१३६	त्रि०	समान (बराबर)
सद्मन्	१३२	नपुं०	घर
सदृशः	१३५	पु०	समान
सदृक्षः	१३६	पु०	समान
सधर्मम्	१३६	त्रि०	समान
सध्रीची	४१	स्त्री०	सखी
सनातन	१२५	पु०	कुल
सनाभि	४२	पु०	सगाभाई
सन्तति	१२४	स्त्री०	कुल
सन्तति	१३९	पु०	समूह
सन्तमसम्	१४९	नपुं०	अन्धकार
सन्तानः	१२५	पु०	कुल
सन्देशः	१५४	पु०	मौखिक स्नेही का समाचार
सन्धानीतः	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु
सन्निधि	१४१	स्त्री०	पास
सन्मति	११५	पु०	महावीर

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
सपत्नः	४४	पु०	शत्रु
सपदि	१५७	अव्यय	तत्काल
सप्तार्चिष्	६४	नपुं०	अग्नि
सप्ति	५२	पु०	घोड़ा
सभ्यः	११२	पु०	सभासद
सम	१३६	त्रि०	समान
समा	१६०	स्त्री० अ०	साथ
समजः	१४०	पु०	पशुओं का समूह
समरः	८७	पु० नपुं०	युद्ध
समवर्तिन्	१४६	पु०	काल (मौत)
समवायिकः	४२	पु०	सहायक
समवेत	१६१	त्रि०	सहित
समस्त	१८७	त्रि०	सम्पूर्ण
समाजः	१३९	पु०	समूह
समालम्भः	११९	पु०	लेप
समितिः	१४०	पु०	समूह
समीगर्भः	६६	पु०	अग्नि
समीपः	१४१	नपुं०	पास
समीरणः	६२	पु०	वायु
समुदयः	१४०	पु०	समूह
समुद्रः	२६	पु०	समुद्र
समूहः	१३९	पु०	समूह
सम्परायः	८७	पु०	युद्ध
सम्पृक्त	१६१	त्रि०	सहित
सम्फली	३५	स्त्री०	दूती
सम्भृत	१६१	त्रि०	सहित
सम्बन्धः	४१	पु०	मित्र
सरणि	१६२	स्त्री०	मार्ग
सरसीरुहम्	२०	नपुं०	सामान्य कमल
सरस्वत्	२६	पु०	समुद्र
सरस्वती	१०४	स्त्री०	वाणी
सरित्	२४	स्त्री०	नदी

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
सरुप	१३६	त्रि०	बराबर (समान)
सरोजम्	२०	नपुं०	सामान्य कमल
सर्पः	१२८	पु०	सर्प (नाग)
सर्पिष्	१२२	नपुं०	घी (घृत)
सर्व	१८७	त्रि०	सम्पूर्ण
सर्वज्ञः	११४	पु०	जिनेन्द्र भगवान
सर्वदा	१६१	अव्यय	हमेशा
सर्ववल्लभा	३६	स्त्री०	वेश्या
सलिलम्	१५	नपुं०	जल
सवयस्	४१	स्त्री०	सखी
सवर्ण	१३६	त्रि०	समान (बराबर)
सवितृ	३८	पु०	पिता
सवितृ	५१	पु०	सूर्य
सवित्री	३८	स्त्री०	माता
सव्यसाचिन्	१४३	पु०	अर्जुन
सह	१५९	अव्यय	साथ
सहकारिन्	४२	पु०	सहायक
सहकृत्वन्	४२	पु०	सहायक
सहचरी	४१	स्त्री०	सखी
सहसा	१७२	अव्यय	शीघ्र
सहायः	४२	पु०	सहायक
सहस्रपात्	७३	पु०	ब्रह्मा
सहस्राक्षः	५८	पु०	इन्द्र
सहित	१६१	त्रि०	सहित
साकम्	१६०	अव्यय	साथ
सागरः	२६	पु०	समुद्र
साधनम्	८६	नपुं०	सेना
साधीयस्	१७३	नपुं०	बहुत
साधुः	३	पु०	मुनि
साधुम्	१..०	नपुं०	स्पष्ट
साधुवादः	१५३	पु०	कीर्ति
साध्वी	३४	स्त्री०	सदाचारिणी स्त्री
सानु	९	पु० नपुं०	पर्वत शिखर या चोटी
सानुमत्	८	पु०	पर्वत
सामजः	८९	पु०	हाथी
साम्प्रतम्	१५६	त्रि०	नवीन/नई वस्तु
सारमेयम्	९२	पु०	कुत्ता
सार्द्धं	१५९	अव्यय	साथ
सालः	१३५	पु०	कोट/बाड़
सालः	१८१	पु०	किला
साहसम्	१५५	नपुं०	साहस
साहाय्यम्	१९७	नपुं०	मित्रता
सित	१४९	त्रि०	सफेद रंग
सितः	१७६	पु०	पाशबद्ध शत्रु
सिद्धांतः	४	पु०	शास्त्र
सिन्धु	२४	स्त्री०	नदी
सिन्धुरः	८९	पु०	हाथी
सिंहः	१०५	पु०	शेर
सीत्कृतम्	१०६	नपुं०	मैथुन का शब्द
सीमन्	२६	स्त्री०	तीर
सीमन्तिनी	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री
सीरम्	१४२	नपुं०	हल
सुकृतम्	१३१	नपुं०	पुण्य
सुचिरंतनम्	१५८	त्रि०	पुराना
सुतः	३९	पु०	बालक
सुधासूति	४७	पु०	चन्द्रमा
सुनाशीरः	५७	पु०	इन्द्र
सुनिर्मोकः	१४४	पु०	अर्जुन
सुन्दरम्	१७७	त्रि०	सुन्दर
सुन्दरी	३१	स्त्री०	सामान्य स्त्री०
सुवर्णः	१२९	पु०	गुरड़
सुभटः	१९६	पु०	शूरवीर
सुमनस्	८०	स्त्री० बहु०	फूल

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
सुरः	५६	पु०	देव
सुरा	१२१	स्त्री०	मदिरा (शराब)
सुवर्णम्	९३	नपुं०	स्वर्ण (सोना)
सुष्ठु	१७३	अव्यय	बहुत
सुहृत्	४१	पु०	मित्र
सूत्रामन्	५७	पु०	इन्द्र
सूनुः	३९	पु०	बालक
सूनृत्	१८२	नपुं०	सत्य
सूरिः	१११	पु०	पण्डित
सूर्यः	५०	पु०	सूर्य
सूर्पकारि	७७	पु०	कामदेव (पाठान्तर)
सेना	८६	स्त्री०	सेना
सेनानी	६६	पु०	कार्तिकेय
सेनानीपितृ	६८	पु०	महादेव
सेन्द्रः	५६	पु०	देव
सैन्यम्	८६	नपुं०	सेना
सोदर्यः	४२	पु०	सगाभाई
सोमवंशः	१४६	पु०	युधिष्ठिर
सौदमिनी	१८	स्त्री०	बिजली
सौम्य	१७७	त्रि०	सुन्दर
सौरभम्	१८८	नपुं०	मित्रता
शौरि	७५	पु०	कृष्ण
सौधम्	१३५	पु० नपुं०	महल
सौहार्दम्	१९७	नपुं०	मित्रता
सौहृद्यम्	१९७	नपुं०	मित्रता
स्तनः	१०२	पु०	स्तन
स्तनितम्	१०५	नपुं०	मेघ की गर्जना
स्फुटम्	१७३	नपुं०	स्पष्ट (निर्मल)
स्तम्बकरिः	१६५	पु०	धान
स्तम्बेरमः	८८	पु०	हाथी
स्त्री	३०	स्त्री०	सामान्य स्त्री०
स्थविरः	१२४	पु०	वृद्ध
स्थानम्	१३३	नपुं०	मकान
स्पर्शा	३५	स्त्री०	दूती
स्मरः	८०	पु०	काम
स्यदः	१७७	पु०	शीघ्र
स्रज्	११९	स्त्री०	माला
स्रबन्ती	२४	स्त्री०	नदी
स्रोतस्विनीपतिः	२५	पु०	समुद्र
स्वभावः	१८८	पु०	स्वभाव
स्वर्गः	५६	पु०	स्वर्ग
स्वसृ	४३	स्त्री०	बहिन
स्वामिन्	१०	पु०	राजा
स्वामिन्	६७	पु०	कार्तिकेय
सौहृदम्	१९७	नपुं०	मित्रता
स्कन्दः	६६	पु०	कार्तिकेय
स्तनंधयः	४०	पु०	बालक
स्तब्धम्	१५६	त्रि०	कठोर
स्तब्धम्	१६८	त्रि०	अहंकारी (घमण्डी)
स्तेनः	१६९	पु०	चोर
स्थपुटम्	१८५	त्रि०	विषमस्थल
स्थाणुः	६८	पु०	महादेव
स्नेहः	१६०	पु०	राग
स्पष्टम्	१७३	नपुं०	स्पष्ट
स्मृतम्	१०८	त्रि०	जानी हुई वस्तु
स्यन्दनः	१०६	पु०	रथ के शब्द
स्रष्टृ	७३	पु०	ब्रह्मा
स्रोतस्विनी	२४	स्त्री०	नदी
स्वम्	९५	पु० नपुं०	धन
स्वर्	५६	अव्यय	स्वर्ग
स्वर्णम्	९३	नपुं०	सुवर्ण
स्वान्तम्	८१	नपुं०	मन

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
स्वाहापतिः	६५	पु॰	अग्नि
स्वैरिणी	३५	स्त्री॰	दूती
	हकारादि क्रमशः		
हंसः	१२६	पु॰	हंस
हंसवाहः	१२६	पु॰	ब्रह्मा
हंसी	१२७	स्त्री॰	हंसिनी
हंहो	१५८	अव्यय	आमंत्रण
हन्तोक्ति	११०	स्त्री॰	दया
हयः	५२	पु॰	घोड़ा
हरः	७०	पु॰	महादेव
हरिः	१२	पु॰	बन्दर
हरिः	५२	पु॰	घोड़ा
हरिः	५७	पु॰	इन्द्र
हरिः	७४	पु॰	कृष्ण
हरिः	९०	पु॰	सिंह
हरिणः	१२८	पु॰	हरिण
हरिणी	१५०	स्त्री॰	रक्तवर्ण
हरित्	६१	स्त्री॰	दिशा
हरित्	१४९	त्रि॰	हरे का नाम
हरित	१४९	त्रि॰	हरा
हरिद्राभ	१४९	त्रि॰	पीला
हरिवाहनः	५९	पु॰	इन्द्र
हर्म्यम्	१३५	नपुं॰	बड़ा महल। राजभवन
हर्षः	१०९	पु॰	हर्ष का नाम
हलम्	१४२	नपुं॰	हल

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
हलि	१४२	स्त्री॰	हल
हव्यवाहः	६६	पु॰	अग्नि
हस्तः	१०..	पु॰	हाथ
हस्तशाखा	१०१	स्त्री॰	अंगुली
हस्तिन्	८८	पु॰	हाथी
हाटकम्	९३	नपुं॰	सुवर्ण/स्वर्ण
हार्दम्	१९७	नपुं॰	मित्रता
हाला	१२१	स्त्री॰	मदिरा
हिमः	११८	पु॰	कपूर
हिमम्	१७९	नपुं॰	बर्फ
हिमवत्सुता	७१	स्त्री॰	गंगा
हिरण्यम्	९३	नपुं॰	स्वर्ण/सुवर्ण
हिरण्यकशिपुसूदनः	७५	पु॰	कृष्ण
हिरण्यगर्भः	७३	पु॰	ब्रह्मा
हिरण्यरेतस्	६४	पु॰	अग्नि
हीन	१७४	त्रि॰	दुर्बल। पुराना
हुताशः	६५	पु॰	अग्नि
हुताशनः	६६	पु॰	अग्नि
हुंकृतम्	१०६	नपुं॰	मंत्र/योद्धा की आवाज
हृदयम्	८१	नपुं॰	मन
हेमन्	९३	नपुं॰	सुवर्ण/स्वर्ण
हेरिकः	१६९	पु॰	चोर
हेषा	१०५	स्त्री॰	घोडे की आवाज
हैयङ्गवीनम्	१२२	नपुं॰	घृत/घी
ह्रस्वः	१५९	त्रि॰	नीचा/नीचे

परिशिष्ट-५
अनेकार्थ नाममाला

अक्षः (पु॰)–जुआ, रथचक्रावयव, नेत्र, भयानक, व्यवहार, गाड़ी का धुरा।

अजः (पु॰)–विधि (ब्रह्मा), विष्णु, शम्भु (महादेव), अन्धकार, तीन वर्ष पुरानी धान, राम के पितामह (बध्वा)।

अञ्जनः (पु॰ नपुं॰)–कज्जल, हाथी।

अर्थ (अव्यय)–हेतु, निदर्शन (दृष्टांत), प्रश्न, श्रुति, किसी पुस्तक का प्रारंभ, आनन्तर्य (अत्यवधान), अधिकार, मङ्गल (८)।

अद्रिः (पु॰)–पर्वत, वृक्ष। अनन्त (पु॰) शेषनाग, विष्णु।

अंतः (पु॰)–पदार्थ, सामीप्य, धर्म, सत्त्व (बल), वीतना (व्यतीति)

अन्तरम् (नपुं॰)–अवकाश (छुट्टी), क्षण, वस्त्र, बहिर्योग, व्यतिक्रम (उल्लंघन), मध्य, अन्तःकरण (मन), छिद्र, विशेष, विरह।

अब्द (पु॰)–मेघ, वत्सर (वर्ष)। अम्बर (पु॰)–वसन (वस्त्र), आकाश।

अर्घ (पु॰)–मूल्य, सत्कार। अर्थ (पु॰)–वाच्य, रै (धन), वस्तु, प्रयोजन, निवृति, अशोक (पु॰)–पुष्प, अशोक वृक्ष।

इति (अव्यय)–हेतु (कारण) एवं प्रकार (इस प्रकार), व्यवधान, उलटा, उत्पत्ति, समाप्ति कदली (स्त्री॰)–ध्वजा और मोचा।

कम्बु (पु॰)–शंख, हाथी। कस्वर (पु॰)–द्युभव (देव), द्युम्न (धन)

काष्ठा (स्त्री॰)–काम, प्रकर्ष (बड़प्पन)। कीनाश (पु॰)–कृपण (कंजूस), भृत्य (नौकर), कृतान्त (यम), पिशिताशिन् (मांस भक्षी), पुण्यजन (पुण्यात्मा), सज्जन, राक्षस (७ नाम)। कीलाल (नपुं॰)- रुधिर, जल। के तन (नपुं॰)–किरण, ध्वजा।

कैवल्यं (नपुं॰)–अरिहन्त भगवान की अंतरंग लक्ष्मी, एकान्त स्थान, मोक्ष (३)।

कोटी (स्त्री॰)–संख्या, प्रकर्ष। क्षीर (नपुं॰)–पानी, दुग्ध।

घृतं (नपुं॰)–घी, जल। चर्चा (स्त्री॰)–चिन्ता, वितर्क (विचार)।

जात्यः (पु॰)–श्रेष्ठ, कुलीन। जिन (पु॰)–अर्हत्, बुद्ध।

जीमूतः (पु॰)–करिकुन् (मेघ), कील–(करी) हाथी, कुत्कील (पर्वत)।

ज्योतिषं (नपुं॰)–नेत्र, आँख की पुतली।

तंत्रं (नपुं॰)–प्रधान, सिद्धान्त, सेना, धागा, परिग्रह (परिच्छेद)।

तल्पं (नपुं॰)–स्त्री, शय्या। तारः (पु॰)–मुक्ता, रजत (चाँदी)।

तार्क्ष्यं (पु॰)–हय (घोड़ा), गरुत्मत् (गरुड़)।

तीर्थं (नपुं॰)–प्रवचन, वर्तन, धर्मतीर्थ, पण्डित, तीर्थस्थान, सीढ़ी, महासत्त्व, महामुनि।

दवः (पु॰)–दमार (जंगल में लगी आग)। दावः (पु॰)–दमार।

द्रव्यं (नपुं०)–जिसमें क्रिया की जा सके, धन, छह द्रव्य, काष्ठ निर्मित मंगल द्रव्य।

द्विजः (पु०)–दशन (दांत), विप्रः (ब्राह्मण)।

धर्मः (पु०)–धनुष, पाँचों व्रत, उत्पाद्व्यय ध्रौव्य, भाग्य, नय (अय-भाग्य) ५।

धातुः (पु०)–चाँदी, सोना, लोहादि, रक्त, मांस, मज्जा, हड्डी, वीर्य।

भूत चतुष्टय–(पृथ्वी, अग्नि, तेज, वायु), स्वभाव, प्रकृति (५)।

धिष्ण्यं (नपुं०)–नक्षत्र, मकान।

पतंगः (पु०)–शलभ, सूर्य। पयस् (नपुं०)–अग्नि, शङ्ख।

पुद्गलः (पु०)–मूर्तिक पदार्थ, संसारी प्राणी।

पुन्नागः (पु०)–सज्जन, वृक्ष। पुष्करं (नपुं०)–कमल, हाथी की सूड का अग्रभाग, आकाश, तलवार की मूठ, गदा, बाजे का मुख, तीर्थ, जल।

प्रायस् (अव्यय)–भूमन् (बाहुल्य), उपमा (तुल्य), अतर्क्य, प्रभृति-आदि, ... त्याग। बाधा (स्त्री०)–निषेध और दुःख।

ब्रह्मबाच (स्त्री०)–ज्ञान, चारित्र, मोक्ष, आत्मा, श्रुति (वेद)।

भगः (पु०)–ऐश्वर्य, सम्पूर्ण, वीर्य, यश, श्री, वैराग्य।

भावः (पु०)–पदार्थ, सामीप्य, धर्म, सत्त्व (बल) व्यतीति (वीतना)।

भुवन (पु०)–संसार, जल। भूरी (नपुं०)–भूयस् (बाहुल्य), सुवर्ण।

मयूखः (पु०)–कीलक (खूँटी), दीप्ति (किरण)।

रम्भा (स्त्री०)–मोचा (केला), अमरस्त्री (देवाङ्गना)।

रसः (पु०)–शृङार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत, शान्त। घी, नमक, दूध, दही, तेल, मिठाई। कषाय, तिक्त, कटुक, आम्ल, मिष्ट। विष, जल, निर्यास् (काढ़ा) गोंद, पारद (पारा) राग और वीर्य।

राजन् (पु०)–चन्द्र और राजा। रामः (पु०)–उज्ज्वल, सुन्दर।

लब्धि (स्त्री०)–केवलज्ञानादि चतुष्टय, इष्टाप्ति (इष्टवस्तु की प्राप्ति), नियति (कर्म), श्री (लक्ष्मी), शोभा।

ललामः (पु०)–प्रधान, सींग, पूंछ, भूषण, इक्षु, प्रभावना, ध्वजा, चिह्न, तुरङ्ग।

वनं (नपुं०)–जङ्गल, जल। वर्गणा (स्त्री०)–अकर्म (कर्म भिन्न पुद्‌गल)।

कर्म (आठ), नोकर्म–(औदारिकादि तीन) तथा ६ पर्याप्ति। जातिभेद। (४)

वर्णः (पु०)–आकृति, अक्षर, रूप, जाति, माल्य, अनुलेपन (उबटन)।

वामः (पु०)–टेढा, मनोहर। विरेचन (पु०)–रवि, चन्द, दनुसूनु (प्रद्युम्न), अग्नि।

विवस्वत् (पु०)–वेद, सूर्य। विष (नपुं०)–हलाहल, जल।

वृषाकपि (पु०)–विष्णु, रुद्र। वैकुण्ड (पु०)–इन्द्र, विष्णु।

व्यामोहः (पु०)–मूर्ख, मूर्खता। शङ्कु (पु०)–छोटा, छिद्र, भूसे की आग, कीलक, संख्या।

शंभुः (पु०)–अर्हत् (जिनेन्द्र), पिनाकिन् (महादेव)।

शिखरिन् (पु॰)–वृक्ष, पहाड़। शुचि (त्रि॰)–शुद्ध, अनुपहत, वह्नि(अग्नि), ब्राह्मण, उत्तम मंत्री, आषाढ़ मास, अध्यात्म ज्ञान, ब्रह्मचर्य।

सत्त्वं (नपुं॰)–ओजस् (तेज), अस्तित्व, उत्साह, स्थिरता, जन्तु।

सन्धिः (पु॰)–छिन्द्र, मिलाप। समय (पु॰)–संकेत, आचार, सिद्धान्त, काल।

सरलः (पु॰)–सीधा, वृक्ष। सारस (पु॰)–पक्षी, धूर्त।

सालः (पु॰ नपुं॰)–काठ, वृक्ष। सिन्धु (पु॰)–नदी, स्त्री। नदी, समुद्र।

सुमनस् (पु॰)–देव, पुष्प। सोम (पु॰)–चन्द्रमा, अमृत, राजा, ब्रह्मा, लता–विशेष, वरुण। स्तंभ (पु॰)–स्तब्धता (धरिण), स्थूण (थम्मा)

स्यन्दनं (नपुं॰)–गाड़ी, रथ, जल। स्यात् (अव्यय)–अनेकांत, विद्या, शुभ।

स्वरः (पु॰)–अकारादि, उदात्तादि, षढजाति–(निषाद, ऋषभ, गान्धार, षडज, मध्यम, धैवत, पश्चिम। निस्वन (आवाज)।

स्वैरः (पु॰)–स्वच्छन्द (स्वतन्त्र), मन्द (धीर, सुस्त)

हंसः (पु॰)–नारायण, सूर्य, साधु, घोड़ा, हंस पक्षी।

हरिः (पु॰)–चन्द्र, सूर्य, यम, विष्णु, इन्द्र, दर्दुर (मेंढ़क), घोड़ा, सिंह, बन्दर, वायु।

परिशिष्ट-६

अनेकार्थ निघण्टुगत शब्दानामकरादि सूची

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
अक्ष:	७६, ७७	पु० (नपुं०)	आत्मा (पांसा)
अगारि	१०५	पु०	युद्ध-युद्ध
अङ्क:	४०	पु०	छाती-स्थान
अज:	३४-३५	पु०	यव-वकरादि
अदिति	२९	स्त्री०	पृथ्वी देवमाता
अध्यात्म	१२३	अव्यय०	आत्मस्वरूप
अध्यूढ़ा	३०	स्त्री०	परित्यक्त पत्नि
अनंत:	३७	पु०	आकाश
अनिमिष:	४	पु०	देव, मछली
अपाचीनं	९३	नपुं०	कर्मठ
अब्द:	५७	पु०	वर्ष-मेघ
अमृतं	२२	नपुं०	क्षीर-पानी
अम्बरं	१९	नपुं०	वस्त्र-आकाश
अम्बरीषं	६१	नपुं०	युद्ध-बर्तन
अर्क:	१५, ९४	पु०	इन्द्र, सूर्य
अलातं	८६	नपुं०	जलती हुई लकड़ी (मशाल)
अवदातं	५५	नपुं०	प्रधान-सफेद
अश्वारोह:	९४	पु०	घोड़े की हृदय ध्वनि
असितं	६७	नपुं०	काला-खाया हुआ
असुर:	४८	पु०	देव/देव का शत्रु
आकूतं	९८	नपुं०	अभिप्राय
आक्रन्द	९५	पु०	रोना
आगोप:	४०	पु०	ग्वाला-ध्वज
आडम्बर:	११२	पु०	बाजा-व्यंजन
आत्मज:	५३	पु०	पुत्र-खून
आदित्यं	७१	नपुं०	सूर्य-दैत्य पुत्र
आधि	१०२	अव्यय	मानसिक पीड़ा

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
आयतनं	७८	नपुं०	पुण्य स्थान
आर्य:	१११	पु०	सज्जन
आलबालं	१०३	नपुं०	क्यारी
आलानं	९२	नपुं०	हाथी बंधन का खूटा
आहतं	८९	नपुं०	पीड़ित व्यक्ति
इडा	२९	स्त्री०	पृथ्वी-चंद्रमा की पत्नि
उक्षन्	१०६	नपुं०	बैल
उदक्या	१३०	स्त्री०	रजस्वला स्त्री
उदार:	१२९	पु०	दान में निपुण
उष्णीषं	८८	नपुं०	शिर का वेस्टन
उस्रा	१०७	स्त्री०	बन्ध्या स्त्री
ऋतं	७५	नपुं०	सत्य
औषणं	७५	नपुं०	रस
क	३, ४	पु० नपुं०	ब्रह्मा-पानी
ककुप्	४४	पु०	दिशा
कबन्धं	८८	नपुं०	शिर के बिना धड़
कम्बु	११	स्त्री०	शंख-हाथी
कर:	२४	पु०	हाथी की सूंड
कर्षक:	९०	पु०	किसान
कल:	८६	पु०	अव्यक्तम धुर शब्द
कलभ:	१०८	पु०	अलप उम्र का हाथी
कलुषं	१०८	नपुं०	पाप
कानीन:	९०	पु०	अविवाहिता का पुत्र
किलास:	१०४	पु०	सफेद/दोला
कीटक:	१२६	पु०	क्रोधी पुरुष

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
कीनाशः	५३, ५४, १२१	पु०	यम/मृत्यु/कृष्ण
कीलालं	२५	नपुं०	खून/निर्मल पानी
कुण्डः	१३३	पु०	अमृत रखनेका बर्तन
कुण्डासी	१३४	पु०	मृत-में भोज करने वाला /कुण्ड में भी करने वाला
कूलं	३६	नपुं०	आकाश/नदी का तट
कृतघ्नः	१२३	पु०	उपकार को भूलने वाला
कृष्णं	२२	नपुं०	अंधकार
केतुः	१६	पु०	किरण
केसरिन्	८५	पु०	सूर्य/घोड़ा/सिंह
कोकिला	८२	स्त्री०	कोयल का नाम
कोटरस्थः	१४९	पु०	सर्प/क्रीड़ा/खग
कोमलं	२६	नपुं०	कोंपल, स्पष्टवचन
कौशिकः	१३	पु०	इन्द्र, उल्लू
क्रव्यं	९५	नपुं०	कच्चा मांस
क्षत्ता	३८	पु०	द्वारपाल
क्षयं	४५	नपुं०	घर/रोग
क्षरं	२१	नपुं०	जल, यज्ञ
खं	६४,६५	नपुं०	छिद्र, घर, इन्द्रिय आदि
गो	२	पु०	वचन, दिशा, भूमि आदि नौ
गोलकः	१३३	पु०	मरण/भर्त्ता
ग्रावाणः	७४	पु०	पहाड, मेघ
घनं	४६, ४७	नपुं०	मेघ/अधिक बहुलता
घनाघनः	९३	पु०	दक्षिणी/मनोहर
घृतं	२३	नपुं०	घी, पानी

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
चटकः	१०४	पु०	चिड़िया
चमू	४८	पु०	सेना
छेदः	८६	पु०	भयंकर
जम्बुकः	१४	पु०	वरुण/शृगाल (सियाल)
जीमूतः	५८	पु०	हाथी/सर्व/मेघ
ज्योतिम्	५५,५६	नपुं०	आँख/नक्षत्र
तपस्	१३१	पु०	धर्म
तमोनुदः	१६	पु०	सूर्य/अग्नि
ताक्ष्यः	५०	पु०	घोड़ा/गरुड़
तिलकं	८४	नपुं०	ललाट पर स्थित चिह्न
तुल्यं	१०४	नपुं०	समानता
तृणी	५१	स्त्री०	वनस्पति
तेजस्	१३१	नपुं०	अग्नि
तोदनं	९२	नपुं०	अंकुश का नाम
तोयदं	५८	नपुं०	मेघ और घी
त्रियामा	१०९	स्त्री०	रात्रि/क्षनदा
त्रिशङ्कुः	६८	पु०	बिल्ली/झूठ
दक्षः	७०-७१	पु०	अचेतस
दक्षिणः	९७	पु०	देशकाल को जानने वाला
दविष्ठं	९९	नपुं०	अत्यन्त दूर अर्थ में
दानं	९२	नपुं०	चूने वाला रस हाथी के गाल
दान्त	१२४	पु०	सर्वक्लेशों से रहित
दीर्घम्	११०	नपुं०	बड़ा/लम्बा
दुश्चर्मन्	९०	पु०	शंकरजी का नाम
दोला	१०४	स्त्री०	सफेद रंग
द्विजः	५२	पु०	ब्रह्मण, दाँत, पक्षी
धनञ्जयः	९	पु०	अग्नि/अर्जुन
धार्तराष्ट्रः	६५	पु०	महाहंस

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
धिष्ण्यं	१८	नपुं०	नक्षत्र/घट
नकुलः	६७	पु०	नेवला/पाण्डव
नल्वः	१५१, १५२	पु०	घड़ा/वाह/प्रस्थ
नागः	४९	पु०	हाथी सर्प
नापितः	१०१	पु०	नाई
नास्तिकः	१३२	पु०	मिथ्यादृष्टि/अहंकारी
निकषः	८४	पु०	कषौटी
नितम्बं	७२	नपुं०	स्कन्ध/जघनतट
निरुपद्रवा	१२८	स्त्री०	प्रीति
निरुपस्करा	१२७	स्त्री०	आहार, व्यवहार, स्वस्त्री में सज्जन पुरुषों का परस्पर में प्रीतिभाव
निविडं	८९	नपुं०	सघन
नृसिंहः	१२०	पु०	प्रभाव/प्रमुख
न्यग्रोधपरिमण्डला	१४३	स्त्री०	श्रेष्ठ स्त्री
पंकजः	८२	पु०	कमल
षण्डः	९१	पु०	नपुंसक/शक्तिहीन
पतङ्गः	१२	पु०	सूर्य/टिड्डा
पदकृत्	१०१	पु०	चमार
पद्मं	७७	नपुं०	कमल
पयं	१९	नपुं०	वस्त्र और आकाश
परचितः	१३५	पु०	परिचय में
परमेष्ठी	१००	पु०	श्रेष्ठ पुरुष
परिचर्यः	८४	पु०	कटक
पर्जन्यः	६०	पु०	मेघ/इन्द्र
पलाशः	१०६	पु०	हरित वर्ण
पवनः	१११	पु०	हवा
पानीयम्	१०२	नपुं०	समुचय वाचक
पापः	९९	पु०	श्याम/बुरा कार्य
पाञ्चजन्यः	११	पु०	शंख/अग्नि
पिशङ्गम्	८३	नपुं०	प्रातःकालीन सूर्य की किरणें

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
पिशितम्	९५	नपुं०	पके मांस का टुकड़ा
पुण्य श्लोकः	११७	पु०	कर्ण के लिए सुखकर
पुलिनम्	८२	नपुं०	पुल या सेतु
पुष्करम्	३६	नपुं०	कमल/हाथी की नाक का अग्र भाग
पुष्पम्	७८	नपुं०	फूल
पुंस्त्वम्	६२	नपुं०	युद्ध/पुरुषार्थ
पृष्ठौही	१०७	स्त्री०	गर्भिणी स्त्री
पौलस्त्यम्	५९	नपुं०	युद्ध/पुरुषार्थ
प्रजापतिः	३८	पु०	राजा, ब्रह्मा, कुम्भकार
प्रधानः	५६, १०५	पु०	मुख्य/पाण्डुरम्
प्रपा	११३	स्त्री	प्याऊँ (पानी का स्थान)
प्रभाकरः	६६	पु०	सूर्य/अग्नि
प्रासादः	४६	पु०	मण्डप/धूमना (विहार)
प्लवम्	४५	पु०	मेघ/नाव
फेनवाहिनी	९४	स्त्री०	नदी
बभ्रु	९९	पु०	कपिल-भूरा रंग
बीभत्सः	९	पु०	घृणोत्पादक/अर्जुन
भगवन्	१२९	पु०	कीर्ती/ख्याति यश के योग से
भामिनी	१४२	स्त्री०	क्रोधी स्त्री
भार्या	१४८	स्त्री०	ग्रहण/धारण/साम आदि १०
भावः	८७	पु०	शृंगार/मधुर शृंगार
भास्करः	१२	पु०	अग्नि/सूर्य
भुवनम्	२५	नपुं०	पानी/आकाश
भूरिश्रवः	१४०	पु०	बहुत अन्न देने वाली

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
मञ्जूषा	८५	स्त्री०	पेटी/सन्दूक
मण्डूकः	८९	पु०	भेक/वर्षा भू
मत्तकाशिनी	१३९	स्त्री०	मस्त हाथी के समान चाल
मधुम्	६३, ६४	नपुं०	दाख/शहद/अंगूर
मन्थिन्	१५	पु०	राहु/चंद्रमा/ग्रह
मन्दः	१२१, १२३	पु०	हर्ष/गर्व/सुख/खेद आदि
मन्दिरम्	१०५	नपुं०	नगर/घर
मयूखः	१७	पु०	किरण
मलिम्लुचः	५२	पु०	चोर/हवा
मस्करः	१०७	पु०	बांस/त्वचिसार
महेष्वासम्	११८	नपुं०	बहुत संसर्ग से संघात
माया	६३	स्त्री०	अज्ञान/जादूगरनी
मृष्टम्	९६	नपुं०	रस सहित/गीला
मेचकः	८३,१०६	पु०	नीला रंग
म्लिष्टम्	९१	नपुं०	अव्यक्त वचनों को
यमः	६८	पु०	कौआ/यमराज
युद्ध शौण्डः	११७	पु०	ढालसहित युद्ध/न लौटने वाला
यूथपः	११९	पु०	दूसरों को संतप्त करने वाला
यूथप यूथप	११९	पु०	अत्यधिक संतप्त करने वाला
रंहस्	१०३	पु०	वेग, चाल
रजस्	७२	नपुं०	रोग/धूली/खून
रतम्	८३	नपुं०	पाप
रत्नम्	१०९	नपुं०	वज्र
रदनः	९२	पु०	हाथी का दांत
रम्भा	७४	स्त्री०	केला वृक्ष/देवाङ्गना

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
राजन्	७	पु०	राजा/चंद्रमा
राजीवलोचनः	११४	पु०	राम/कमल जैसे नेत्र
राजीव लोचना	१४३	स्त्री०	कमल के समान नेत्र
रामः	३२, ३३	पु०	बलभद्र (राम)/शुक्ल वर्ण
रावणः	१४१	पु०	प्राणियों को रुलाने वाला
रौहिणेयः	३१	पु०	बलभद्र/बुध ग्रह
लक्ष्मम्	६९-७०	नपुं०	चंद्रमा की कृष्णता/ध्वजा
लक्ष्मणम्	६९	नपुं०	सारक्ष पक्षी/राम के भाई लक्ष्मण
ललना	१३७	स्त्री०	क्रीड़ा में रत स्त्री
ललामम्	८१	नपुं०	पुरुष/पताका आदि ९ अर्थों के
ललिता	१३९	स्त्री०	लावण्य से युक्त
लवली	८१	स्त्री०	आम की मंजरी/नेत्र विकार
लावण्यम्	१०१	नपुं०	माधुर्य/मधुरता
लुलायः	१०६	पु०	भैसा अर्थ में
लेखा	६१	स्त्री०	सीमा/चित्र बनाने वाला
वक्रवक्त्रः	८२	पु०	तोता
वन्ध्या	१०७	स्त्री०	संतान के अयोग्य
वरवर्णिनी	१३८	स्त्री०	सर्वरूप से पवित्र अंगवाली स्त्री
वराहः	३३-३४	पु०	कृष्ण/मेघ
वरूथम्	४७	नपुं०	रथ का अग्रभाग
वर्षाभूः	८९	पु०	चातक/मेंढ़क
वलाहकः	५७	पु०	सघन मेघ/पर्वत

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
वल्लरी	११३	स्त्री०	लता
वसा	१०७	स्त्री०	बन्ध्या स्त्री
वसु	१८–७३	पु०	तेल/किरण
वाजी	७९	पु०	घोडा
वामः	३९	पु०	मेघ/स्तन/घनादि ९
वालेयः	५०	पु०	असुर/गधा
वासरः	४१	पु०	नाग और दिवस
विद्वान्	६२	पु०	सज्जन/अध्यात्म जीवन
विपञ्ची	११२	स्त्री०	बजाने का बाजा/ वीणा
विपिनः	१५२	पु०	शून्य/एकांत
विभावसु	८, ४१	पु०	रात्रि/गंधर्व
बिम्बौष्ठी	१३७	स्त्री०	लाल औष्ठ वाली स्त्री
विरोचनः	१०	पु०	अग्नि/सूर्य/दैत्य
विलासः	८७	पु	काम से उत्पन्न दोष
विशालम्	९०	नपुं०	सवल
विषम्	२४	नपुं०	पानी/हलाहल
वृकोदरः	११६	पु०	पाण्डव भीम
वृजिनम्	१०९	नपुं०	पाप/कुटिल चाल
वृषः	३०	पु०	धर्म/बैल
वृषा	३१	पु०	कर्ण/इन्द्र
वेहत्	१०७	पु०	वंध्या स्त्री
वैकर्तनः	११५	पु०	कर्ण का नाम
व्यक्तिवादिन्	१२०	पु०	स्पष्ट बोलने वाला
व्यञ्जनम्	११२	नपुं०	आडम्बर
व्याधिः	१०२	पु०	रोग
शङ्कुः	१४	पु०	वृषकेतुः/कील
शङ्खकण्ठी	१४५	स्त्री०	शंख के समान गले वाली स्त्री
शम्भुः	१३	पु०	ब्रह्मा/विष्णु/महेश
शरारू	१३१	पु०	अन्य से उत्पन्न हुआ जीव
शरीरजः	३५	पु०	रोग/पुत्र
शर्वरी	४२	स्त्री०	रात्री/स्त्री
शवम्	२३	नपुं०	सलिल/पानी/ मृतक शरीर
शिखरिन्	५१	पु०	वृक्ष/पर्वत
शिखिन्	५	पु०	अग्नि/मोर/वृक्ष
शिवः	२०	पु०	पानी/कल्याण/ सुख
शिवा	९०	स्त्री०	पार्वती
शिलीमुखः	६०	पु०	बाण/भ्रमर
शीतम्	१५३	नपुं०	बर्फ
शुक्रा	८१	स्त्री०	नेत्रविकार/मञ्जरी आदि
शुचिकृतः	५९	पु०	धोवी/रस
शुष्कम्	९६	नपुं०	रसहीन/सुखा
शेमुषी	९३	स्त्री०	बुद्धि
शेषः	३२	पु०	बलदेव/नाग
शैलूषः	१००	पु०	स्त्री गृह में आसक्त
षट्वदः	१३३	पु०	मोही विषाद युक्त
संवरः	२७, २८	पु०	एक असुर का नाम
सत्रम्	१०३	नपुं०	सदाचार
सत्वरम्	८३	नपुं०	शीघ्र का वाची
सदनम्	२६	नपुं०	पानी/घर
सद्म	२७	नपुं०	पानी/घर
सप्तर्षि	१७	पु०	उत्सव/श्रीमनु आदि
सप्ताश्वः	१४८	पु०	सूर्य
समाधिः	१२४	पु०	मन का समाधान
समाधिस्थः	१२५	पु०	निर्मम/निरहंकार
सम्राट्	१०९	पु०	राजा
सान्द्रम्	४२	नपुं०	कठोर/चिकना
सारंगम्	७३	नपुं०	पपीहा/स्वर्ण/ चितकबरा

शब्द	श्लोक	लिङ्ग	अर्थ
सारसः	७	पु०	कमल/चंद्रमा/पक्षी
सित	६६	नपुं०	सफेद/बंधा हुआ
सुमना	११३	स्त्री०	मालती का पुष्प/ विद्वान
स्थविष्ठम्	९९	नपुं०	स्थावर/वृद्ध
स्यन्दनम्	२१	नपुं०	पानी/बड़ा रथ
स्वर्	४३	अव्यय	स्वर्ग/सुख/आत्मा
हंसः	६	पु०	नारायण/सूर्य/ अश्व
हरिः	८०	पु०	भौह/शिव/हवा
हिमाराति	८	पु०	अग्नि/सूर्य
हिलम्	१०८	नपुं०	काम/शाप/क्रोध
ह्रस्वम्	११०	नपुं०	छोटा/नीचा

सुवण्णिमसंजमोच्छववरिसे आइरिय विज्जासायर पसत्थिपत्तं

श्री-मूल-संघे स्वसमाधिमुख्ये श्री कुन्दकुन्दान्वय उत्तमेस्मिन्।
श्री शान्तिसिन्धु-र्भुवि भव्यबन्धु निरुद्धभट्टारक-राजपन्थ- ॥१॥
तत्पट्टेऽजनि वीरसागरसुधीः स्याद्वादरत्नाकरः
श्रीवीराधिपधर्म-केतुपवनः संसेव्यपादोत्पलः।
तत्पट्टेऽभवदागमार्थकुशलः सैद्धान्तिकस्तत्त्ववित्
श्रीमानाप्तपदद्वयस्य नितरां ध्याता शिवार्यो वरः ॥२॥
तस्य प्रथमः शिष्यो ज्ञानसागरश्चागमनेत्रो दिव्यः।
निस्पृहनिरीहचेता महाकविश्च जिनसेनसमः ॥३॥
विद्यार्णवस्तत्प्रथमोऽस्ति शिष्यो विख्यातनामा गुणिषु प्रमोदः।
दयाविशुद्धार्द्रमनो महार्यः सूरिप्रधानो महतां प्रसिद्धः ॥४॥

जिसमें अपनी आत्मा की समाधि मुख्य है, ऐसे श्रेष्ठ मूलसंघ श्री कुन्दकुन्द आचार्य की परम्परा में, भव्य जीवों के बन्धु आचार्य श्री शान्तिसागर जी इस धरातल पर हुए हैं, जिन्होंने भट्टारकों के राजमार्ग को रोक दिया है ॥१॥

उनके पट्ट पर श्री वीरसागर आचार्य हुए जो स्याद्वाद रत्नाकर थे, जो वीर भगवान् की धर्मध्वजा को फहराने के लिए वायु के समान थे और जिनके चरण कमल सभी से सेवा के योग्य थे। उनके पट्ट पर फिर आगम के अर्थ में निपुण, सैद्धांतिक तत्त्व को जानने वाले, श्रीमान् जिनेन्द्रदेव के चरण युगल को सदा ध्याने वाले श्रेष्ठ आचार्य श्री शिवसागरजी हुए हैं, उनके पट्ट पर श्री वीरसागर आचार्य हुए, जो स्याद्वाद रत्नाकर थे, जो वीर भगवान् की धर्मध्वजा को फहराने के लिए वायु के समान थे और जिनके चरण कमल सभी से सेवा के योग्य थे। उनके पट्ट पर फिर आगम के अर्थ में निपुण, सैद्धांतिक तत्त्व को जानने वाले, श्रीमान् जिनेन्द्रदेव के चरण युगल को सदा ध्याने वाले श्रेष्ठ आचार्य श्री शिवसागरजी हुए हैं ॥२॥

उनके प्रथम शिष्य आचार्य ज्ञानसागरजी हुए हैं, जो दिव्य, आगमचक्षु, निस्पृह और निरीह चित्त के धारक थे और जो जिनसेन आचार्य के समान महाकवि थे ॥३॥

उन आचार्य ज्ञानसागर जी के प्रथम शिष्य श्री विद्यासागर मुनि हैं। जिनका नाम संसार में विख्यात है, जो गुणी जनों में प्रमोद भाव धारण करते हैं, जिनका मन दया की विशुद्धि से भीगा है, जो महा आर्य हैं अर्थात् महापूज्य हैं, आचार्यों में प्रधान हैं और महान् व्यक्तियों में प्रसिद्ध हैं ॥४॥

अंतिमतित्थयर देवाहिदेव-सव्वण्हु-वीयरायभयवंत-वड्ढमाण-महावीर-तित्थपरंपरागदजिणसासणे आइरियकुंदकुंदपवाहिदसमणपरंपराए दक्खिणदेसियचरित्तचक्कवट्टिआइरियसंतिसायरेहिं जीविदाए समण परंपराए आइरियवीरसायर-सिवसायर-णाणसायर-पमुहाइरिय वड्ढिदाए जयोदयादिमहाकव्व रयणाए कालिदाससरिसस्स आइरियपट्टपदाणविहिणा महाकविणिरीहदियंबरणाणसायराइसियस्स पट्टे विराजमाणो अइरिओ सिरिविज्जासायरो सोहमाणो अत्थि।

जस्स देहजम्मो कण्णाटपदेसे 'बेलगाँव' जणपदे सदलगागामे विक्कमसंवच्छरस्स बेसहस्सतिगतमे (वि० सं० २००३) अस्सिणमासस्स सुक्कपक्खे पुण्णिमाए (तदणु दिणंके १० अक्टूबर १९४६ ई० तमे) गुरुवासरे रत्तीए मल्लप्पाजणगस्स सिरिमंतिजणणीए गब्भादो 'अट्टगे' कुले जादो।

राजट्ठाणपदेसस्स जयपुरणयरे खणियाजीखेत्ते विराजमाणेण आइरियदेसभूसणेण गिहीदबंभचेरवदो पुण मुणिणाणसायरेण विक्कमसंवच्छरस्स बेसहस्सपंचवीसतमे (वि० सं० २०२५) आसाढसुक्कपंचमीदिवसे (तदणु ३० जून १९६८ ई० तमे) सणिवासरे राजट्ठाणपदेसस्स अजमेरणयरे मुणिदिक्खाए दिक्खिदो। तदो विक्कमसंवच्छरस्स बेसहस्सएगुणतीसतमे (वि० सं० २०२९) मगसिरमासस्स किण्हपक्खे विदियाए (तदणु २२ नवम्बर १९७२ ई० तमे) सगाइरियपदं चत्ता णियासणे सगसिस्सं पदिट्ठय णसीरावादे (राजट्ठाणे) आइरियपदेण पदिट्ठिदो।

अंतिम तीर्थंकर देवाधिदेव सर्वज्ञ वीतराग भगवान् वर्धमान महावीर की तीर्थ परम्परा में चले आ रहे जिनशासन में, आचार्य कुन्दकुन्ददेव से प्रवाहित श्रमण परम्परा में दक्षिणदेशीय चारित्र चक्रवर्ती आचार्य शान्तिसागरजी के द्वारा जीवित हुई एवं आचार्य वीरसगरजी, आचार्य शिवसागरजी, आचार्य ज्ञानसागरजी इन प्रमुख आचार्यों के द्वारा वृद्धि को प्राप्त हुई, श्रमण परम्परा में जयोदय आदि महाकाव्य की रचना में कालिदास के समान महाकवि निरीह दिगम्बर आचार्य श्री ज्ञानसागरजी के पट्ट पर आचार्यपट्ट के प्रदान की विधि से आचार्य श्री विद्यासागर महाराज शोभायमान हैं।

जिनकी देह का जन्म कर्नाटक प्रदेश में बेलगाँव जिले के सदलगा ग्राम में विक्रम संवत् २००३ में अश्विन मास के शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा को तदनुसार दिनांक १० अक्टूबर १९४६ ई० में गुरुवार को रात्रि में मल्लप्पा पिता तथा श्रीमन्ती माता के गर्भ से अष्टगे कुल में हुआ।

राजस्थान प्रदेश के जयपुर नगर के खानियाँ क्षेत्र में विराजमान आचार्य देशभूषणजी के द्वारा जिन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत ग्रहण किया। फिर मुनि ज्ञानसागरजी से विक्रम संवत्सर २०२५ में आषाढ़ शुक्ला पंचमी के दिन तदनुसार ३० जून १९६८ ई० शनिवार को राजस्थान प्रदेश के अजमेर नगर में मुनि दीक्षा से दीक्षित हुए। तदनन्तर विक्रम संवत्सर २०२९ मगशिर मास के कृष्ण पक्ष की द्वितीया तदनुसार २२ नवम्बर १९७२ ई० में स्वआचार्य पद को छोड़कर अपने आसन पर अपने शिष्य को प्रतिष्ठित करके नसीराबाद राजस्थान में आप आचार्य पद से प्रतिष्ठित हुए।

दिक्खाकालादो पण्णासवासेसु समणसदगं भावणासदगं णिरंजणसदगं परीसहजयसदगं सुणीदिसदग चेदि चेंदण्णचंदोदओ धीवरोदयचंपूमहाकव्वं चेदि संकियभासाए, थुदिसदगं सव्वोदयसदगं पुण्णोदयसदगं सुज्जोदयसदगं दोहादोहणसदगं चेदि रट्ठभासाए रचिदं। सगरचियसंकियसदगाणां पज्जाणुवादेण सह इट्ठोवदेसो समणसुत्तं, समयसारकलसा (णिजामियपाण) दव्वसंगहो, अट्ठपाहुडं, णियमसारो, वारसाणुवेक्खा, सयंभूथुदी, देवागमथोत्तं, पत्तकेसरिथोत्तं, समाहितंतं, पंचत्थिकायो, जोगसारो, पवयणसारो, रयणकरण्डसावयायारं (रयणमंजूसा), समयसारो, अप्पाणुसासणं (गुणोदओ), सरूवसंबोहणं, भत्तिपाढो, कल्लाणमंदिरथोत्तं, एगीभावथोत्तं, गोम्मटेसथुदी इच्चेवमादिआगमगंथाणां पज्जाणुवादो रट्ठभासाए कदो।

हिंदीसाहित्ते बहुचच्चिद कालजयी 'मूकमाटी' महाकव्वस्स रयणा सव्वजगविक्खादा अत्थि। अणेयफुडकव्वरयणा हिंदी-कण्णाट-बंगला-संकिय-पागद-आग्लभासाए वि बहुभासाविदण्हुगुरुदेवेण कदा।

वीसाहियसदं मुणिदिक्खाए अट्ठपण्णास एलगदिक्खाए चउसट्ठिखुल्लयदिक्खाए बाहत्तरिअहियसदं अज्जिगादिक्खाए तिण्णि खुल्लियदिक्खाए सहस्सा बंभचेरवदधारयसावयसावियाओ दिक्खिदा ति सिससपरिवारो।

चिरं जिणसासणस्स पहावणट्ठं सिद्धोदय-तित्थखेत्तं णेमावरे (मज्झपदेसे) सव्वोदयतित्थखेत्तं अमरकण्डगे (मज्झपदेसे) कुण्डलपुरतित्थखेत्ते बड़ेबाबामंदिरस्स जिण्णोद्धारो (दमोहजणवदे मज्झपदेसे)

दीक्षाकाल से लेकर ५० वर्षों में श्रमणशतक, भावनाशतक, निरंजनशतक, परीषहजयशतक, सुनीतिशतक, चैतन्यचंद्रोदय, धीवरोदयचम्पू महाकाव्य इत्यादि ग्रन्थ संस्कृत भाषा में तथा स्तुतिशतक, सर्वोदयशतक, पुण्योदयशतक, सूर्योदयशतक, दोहादोहनशतक इत्यादि राष्ट्रभाषा हिन्दी में रचनाएँ की हैं। स्वरचित संस्कृत शतकों के पद्यानुवाद के साथ इष्टोपदेश, समणसुत्तं, समयसारकलश (निजामृतपान), द्रव्यसंग्रह, अष्टपाहुड, नियमसार, बारसाणुवेक्खा, स्वयंभूस्तोत्र, देवागमस्तोत्र, पात्रकेसरीस्तोत्र, समाधितंत्र, पंचास्तिकाय, योगसार, प्रवचनसार, रत्नकरण्डकश्रावकाचार (रयणमंजूषा), समयसार, आत्मानुशासन (गुणोदय), स्वरूपसंबोधन, भक्तिपाठ, कल्याणमंदिरस्तोत्र, एकीभावस्तोत्र, गोम्मटेशस्तुति इत्यादि आगमग्रन्थों का अनुवाद राष्ट्रभाषा हिन्दी में किया है।

हिन्दी साहित्य में बहुचर्चित, कालजयी कृति मूकमाटी महाकाव्य की रचना सर्व जगत् में विख्यात है। अनेक स्फुट काव्य रचनाएँ हिन्दी, कर्नाटक, बंगला, संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी भाषा में भी बहुभाषाविद् गुरुदेव ने की हैं।

१२० मुनि दीक्षा, ५८ ऐलक दीक्षा, ६४ क्षुल्लक दीक्षा, १७२ आर्यिका दीक्षा, ३ क्षुल्लिका दीक्षा और हजारों ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करने वाले श्रावक-श्रावकाएँ दीक्षित हुए हैं, यह आपका शिष्य परिवार है।

चिरकाल तक जिनशासन की प्रभावना के लिए सिद्धोदय तीर्थक्षेत्र नेमावर मध्यप्रदेश में, सर्वोदय तीर्थक्षेत्र अमरकंटक मध्यप्रदेश में, कुण्डलपुर तीर्थक्षेत्र बड़ेबाबा मंदिर का जीर्णोद्धार दमोह

'मढ़ियाजी' तित्त्थखेत्तं जबलपुरे (मज्झपदेसे) चंदगिरितित्त्थखेत्तं (छत्तीसगढ़े) सीयलधामतित्त्थं विदिसाए (मज्झपदेसे) रामटेकतित्त्थखेत्तं (महारट्ठे) बीणावारहा तित्त्थखेत्तं सागरे (मज्झपदेसे) पुण्णोदय-तित्त्थखेत्तं (हरियाणापदेसे) इच्चेवमादितित्त्थाणि गुरुदेवस्स मग्गदंसणे णिम्मिदाणि।

सव्वजीवाणं रोगमुत्तीए सह सुद्धोसहलाहो वि हवे त्ति भावणाए 'भग्गोदयतित्त्थखेत्तं' सागरे (मज्झपदेसे) ठवंतो, णारीसंकारसिक्खापवड्ढणुद्देसेण पडिहाट्ठलीणाणोदयविज्जापीठं जबलपुरे (मज्झपदेसे) डोंगरगढ-दि्ठदचंदिगिरिट्ठाणे (छत्तीसगढे) रामटेगे (महारट्ठे) इच्चादिट्ठाणेसु ठवंतो, देसकल्लाणभावणाए पसासणिय-पसिक्खणसंठाणं जबलपुरे (मज्झपदेसे) ठवंतो ''धम्मो दया विसुद्धो'' त्ति सुत्ताणुसारेण सयाहियं दयोदय-गोसालाणिम्माणपेरगो णियपरकल्लाणपरो सव्वजणपूजिदो जादो।

अणेयगुणगंभीरो विज्जासायरसूरिगुरू जयउ।
देसे हरिसो जादो सुवण्णिमदिक्खुच्छवे जस्स॥
॥ इति शुभं॥

मध्यप्रदेश में, मढ़िया तीर्थक्षेत्र जबलपुर मध्यप्रदेश में, चंद्रगिरि तीर्थक्षेत्र डोंगरगढ़ छत्तीसगढ़, शीतलधाम तीर्थ विदिशा मध्यप्रदेश, रामटेक तीर्थक्षेत्र नागपुर महाराष्ट्र तथा बीनाबारा तीर्थक्षेत्र सागर मध्यप्रदेश में, पुण्योदय तीर्थक्षेत्र हरियाणा में इत्यादि तीर्थ गुरुदेव के मार्गदर्शन में निर्मित हुए हैं।

सभी जीवों को रोगमुक्ति के साथ शुद्ध औषधि का भी लाभ हो इस भावना से भाग्योदयतीर्थ सागर मध्यप्रदेश में स्थापित हुआ है। नारी संस्कार की शिक्षा वृद्धि वृद्धिंगत इस उद्देश्य से प्रतिभास्थली ज्ञानोदय विद्यापीठ जबलपुर मध्यप्रदेश में, डोंगरगढ़ स्थित चंद्रगिरि छत्तीसगढ़ में, रामटेक महाराष्ट्र में इत्यादि स्थानों पर स्थापित है। देश की कल्याण की भावना से प्रशासनिक प्रशिक्षण संस्थान जबलपुर मध्यप्रदेश में स्थापित हुआ। ''धर्म दया से विशुद्ध है'' इस सूत्र के अनुसार शताधिक दयोदयगौशाला के निर्माण के प्रेरक, निज और पर कल्याण में तत्पर आप सर्वजन पूजित हुए हैं।

जिनके स्वर्णिम दीक्षा उत्सव पर देश में हर्ष व्याप्त है ऐसे अनेक गुणों से गंभीर श्रीविद्यासागर आचार्य गुरुदेव जयवंत हों।

॥ इति शुभं॥